काँच-विज्ञान

हिन्दी-समिति-ग्रन्थमाला—३६

काँच-विज्ञान

लेखक तथा अनुवादक

डाक्टर आर० चरण, बी० एससी० (इलाहाबाद)
बी० एससी० टेक० (शेफील्ड),
प्रोफेसर, काँच-प्रौद्योगिकी,
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय

प्रकाशन शाखा, सूचना विभाग
उत्तर प्रदेश

प्रथम संस्करण

१९६०

मूल्य

छः रुपया

मुद्रक

पं० पृथ्वीनाथ भार्गव,

भार्गव भूषण प्रेस, गायघाट, वाराणसी

प्रकाशकीय

विश्व के महान् राष्ट्रों की पंक्ति में भारत भी शीघ्रातिशीघ्र अपना उचित स्थान ग्रहण कर ले, इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि कृषि के साथ साथ उसके उद्योगों का भी सम्यग् विस्तार और उन्नति हो। इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर उत्तर प्रदेश प्रशासन ने हिन्दी समिति के तत्त्वावधान में कतिपय ऐसी पुस्तकों का प्रकाशन कराना भी अपना लक्ष्य निर्धारित किया है जिनके जरिए इस लक्ष्य की पूर्ति में लगे हुए लोगों को तथा इसमें दिलचस्पी लेनेवालों को यथेष्ट सहायता मिल सके। कोयला, मृत्तिका-उद्योग, शक्ति—वर्तमान और भविष्य, उद्योग और रसायन, खाद और उर्वरक आदि ग्रन्थ इसके पूर्व प्रकाशित हो चुके हैं तथा कुछ अन्य रचनाओं का प्रकाशन भी अल्पावधि के भीतर होने की संभावना है।

प्रस्तुत पुस्तक—'काँच विज्ञान'—इसी श्रेणी का ग्रन्थ है जो हिन्दी-समिति ग्रन्थ-माला का ३६वाँ पुष्प है। इसके रचयिता डाक्टर आर० चरण बनारस हिन्दू विश्व-विद्यालय में काँच प्रौद्योगिकी विभाग के अध्यक्ष हैं। आपने मूल पुस्तक अंग्रेजी में लिखी थी, जिसके तीन संस्करण अभी तक निकल चुके हैं। यह हिन्दी अनुवाद भी आपका ही किया हुआ है। आपने काँच-विज्ञान की उच्चतर शिक्षा इंग्लैण्ड के शेफील्ड विश्वविद्यालय में प्राप्त की थी। इसके सिवा समय-समय पर कितने ही देशों का भ्रमण कर आपने इस विषय का व्यावहारिक अनुभव भी प्राप्त किया है।

सन् १९४९ में (चेकोस्लाविया के) प्राग विश्वविद्यालय ने आपको डाक्टरेट से विभूषित किया था और सन् १९५४ में फुलब्राइट ट्रेवलिंग ग्राण्ट के अन्तर्गत कुछ समय तक आप संयुक्त राज्य अमेरिका में प्राध्यापक का कार्य भी कर चुके हैं। वर्षों के अध्ययन, अनुसन्धान और परिश्रम का फल इन पृष्ठों में समाविष्ट है जो काँच-वस्तुओं के निर्माण में संलग्न और इस उद्योग से सम्बद्ध व्यक्तियों के लिए विशेष रूप से तथा अन्य लोगों के लिए भी सामान्य रूप से उपयोगी प्रमाणित होगा।

भगवतीशरण सिंह

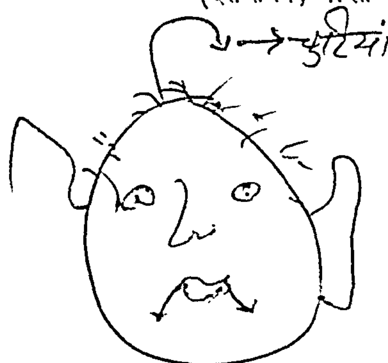
सचिव, हिन्दी-समिति

प्रस्तावना

इस विश्वविद्यालय में काँच प्रौद्योगिकी विभाग को स्थापित हुए कई वर्ष हो गये हैं और इस विभाग से कितने ही स्नातक शिक्षित होकर देश के काँच कारखानों का भार सँभाले हुए हैं। इस विभाग के विकास से काँच-निर्माण के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक विषय की पुस्तकों की माँग हो गयी है। प्रोफेसर आर० चरण ने जो कि इस विश्वविद्यालय के काँच-प्रौद्योगिकी विभाग के अध्यक्ष हैं, सन् १९४३ में इस विषय की पुस्तक लिखकर प्रकाशित की थी। मुझे विश्वास है कि यह पुस्तक इस विश्वविद्यालय के काँच प्रौद्योगिकी के विद्यार्थियों और देश के काँच-निर्माण से संबंधित जनों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

वनारस हिन्दू यूनीवर्सिटी
वाराणसी
१९४६

एस० राधाकृष्णन
कुलपति
(इस समय; भारत के उप राष्ट्रपति)



भूमिका

इस पुस्तक में प्रोफेसर आर० चरण ने काँच के इतिहास, निर्माण और विज्ञान के विषय में बहुत अधिक सामग्री संगृहीत की है। चूँकि यह पुस्तक प्रारम्भिक और व्यावहारिक समतल पर रखी गयी है, इसलिए यह विद्यार्थियों और कारखानों के कार्यकर्त्ताओं, दोनों के लिए अति उपयोगी है। विभिन्न क्रियाओं की प्राविधिक प्रणालियों और वैज्ञानिक सिद्धान्तों का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

विवादग्रस्त सिद्धान्त छोड़ दिये गये हैं। प्रोफेसर चरण यथार्थताओं में विश्वास करते हैं, कल्पनाओं में नहीं। प्रथम अध्याय में प्रारम्भ से लेकर आधुनिक काँच के इतिहास का वर्णन करने के पश्चात दूसरे अध्यायों में अनिर्मित पदार्थों, काँच मिश्रणों, रचनाओं और गुणों का वर्णन किया गया है। तदुपरान्त ईंधनों, उत्ताप मापकों, ऊष्मसह पदार्थों के वर्णन के पश्चात काँच उद्योग के विभिन्न प्रकार के निर्माणों की प्रणालियों का व्योरेवार वर्णन है। अन्तिम अध्याय में काँच की सजावट और अन्तिम उपचार का वर्णन है। वास्तव में यह बहुत ही आश्चर्य का विषय है कि लेखक ने कितने अधिक विषयों की सामग्री इस पुस्तक में संगृहीत की है। यह पुस्तक विद्यार्थियों के पूर्ण रूप से निर्दिष्ट पाठ्यपुस्तक और काँच प्रोद्योगविदों के लिए एक अनायास उपलब्ध ग्रन्थ की आवश्यकता पूर्ण करती है।

चार्ल्स एस० ग्रीन
सभापति
काँच प्रौद्योगिकी विभाग
न्यूयार्क राजकीय सेरामिक्स कॉलेज,
एलफ्रेड यूनीवर्सिटी,
एलफ्रेड, न्यूयार्क

(मार्च, १९५५)

विषय-सूची

[चित्र-संख्या ४८]

पहला अध्याय

काँच-निर्माण का इतिहास

काँच-निर्माण का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितनी कि पृथ्वी है। काँच का उपयोग प्राचीनतम काल से चला आता है जैसा कि पुरातत्त्व खोजों द्वारा ज्ञात होता है। पाषाण-युग में वाण के सिरे, भालों की नोकें, एवं चाकू के फल प्राकृतिक आव्सीडियन से वनाये जाते थे। यह पत्थर ज्वालामुखी पहाड़ से निकलता है और टूटने पर इसके टुकड़ों में तीव्र धार होती है। धातु-युग में, इसी आव्सीडियन पत्थर द्वारा शृंगार की वस्तुएँ, जैसे दर्पण, आभूषण, नकाव आदि वनायी जाती थीं। ऐसी वस्तुएँ संसार के सभी स्थानों में पायी जाती हैं। शताब्दियों तक संसार में व्यापार के लिए आव्सीडियन का प्रयोग होता रहा है।

प्रथम काल

यह कहना कठिन है कि काँच का अग्नि द्वारा प्रथम वार द्रावण कव हुआ। कुछ पुराणों और ऐतिहासिक घटनाओं में काँच का पता अकस्मात् चलने का वर्णन पाया जाता है। प्लीनी के अनुसार शोरा से लदा हुआ एक जहाज, सीरिया में फोनीसिया के तट पर अटक गया। व्यापारियों ने अपना भोजन सागरतट पर पकाना शुरू किया और शोरे के ढेलों पर भोजन के पात्र चढ़ा दिये। जव अग्नि प्रज्वलित हुई तो उन्हें द्रुत काँच की वहती हुई धारा दिखलाई दी जो कि वालू और शोरे के संयोजन से उत्पन्न हुई थी। इस घटना के पश्चात् फोनीसिया की वालू वहुत समय तक काँच-निर्माण के लिए व्यवहार में लायी गयी। एक दूसरी कथा के अनुसार, व्यापारियों ने ईंधन के लिए एक विशेष सूखे पौधे का उपयोग किया था। यह पौधा साल्टवोर्ट या सलसोला काली के नाम से विख्यात था। इस प्रकार पौधे के क्षार और वालू के संयोजन से द्रुत काँच का निर्माण हुआ था। प्लीनी के अनुसार, फोनीसिया निवासियों को स्थायी काँच वनाने का श्रेय दिया गया है। उन्होंने एक प्रकार के डोलोमाइट, मैंगनिस-लेपिस का वालू और क्षार में मिश्रण किया। उस स्थान से प्राप्त काँच के टुकड़ों के विश्लेषण द्वारा यह ज्ञात हुआ कि उन काँचों में मैंगनिशियम आक्साइड भी

है। प्लीनी की कथा असत्य भी हो सकती है, क्योंकि फोनीसिया के व्यापार के समय से सैकड़ों वर्ष पूर्व भी काँच के टुकड़े उपलब्ध हुए हैं।

सम्भव है कि प्रथम काँच का निर्माण, कुम्हार की कला यानी चीनी मिट्टी के बर्तनों के फलस्वरूप हुआ हो। ऐतिहासिक दृष्टि से, मिट्टी के बर्तनों का काचन, एवं पत्थर के मनकों का निर्माण ईसा के ४०,००० वर्ष पूर्व हुआ और सम्पूर्ण काँच की बनी वस्तुओं का निर्माण इसके पश्चात् ही हुआ। यह भी सम्भव है कि मनुष्य ने काँच का निर्माण काचन से स्वतन्त्र किया हो, क्योंकि उसे काँच और काचन[1] की समानता का ज्ञान ही न था।

पहले यह सोचा जाता था कि मिस्र में सर्वप्रथम काँच का निर्माण हुआ, परन्तु अब यह सिद्ध हो चुका है सर्वप्रथम काँच का निर्माण मेसोपोटामिया (इराक) में हुआ। फिलन्डर्स पेट्री के अनुसार मिस्र में बने मनकों के ऊपर हरे वर्ण के काचन का निर्माण, ईसा के १२,००० वर्ष पूर्व हुआ। ये मनके मिस्र के खण्डहरों में सुरक्षित मनुष्यों के शरीरों पर पाये गये हैं।

प्राचीनतम काँच, साँचे में ढले हुए तावीज के रूप में मिस्र में पाया गया है। यह ईसा से ७००० वर्ष पूर्व का निर्मित माना जाता है, जो मिस्र में एशिया महाद्वीप से लाया गया था। फिलन्डर्स पेट्री के अनुसार मिस्र में ईसा के १५०० वर्ष पूर्व तक किसी प्रकार के काँच का निर्माण नहीं हुआ।

मेसोपोटामिया के पुरातत्त्व की खोज में काँच के मनके प्राप्त हुए हैं और उनसे सिद्ध हुआ है कि काँच का निर्माण सर्वप्रथम उसी प्रदेश में हुआ। फ्रैन्कफोर्ट को, बगदाद के समीप, एक शुद्ध नीले वर्ण के काँच का सिलिन्डर प्राप्त हुआ था और उसके निर्माण का समय ईसा के प्रायः २७००-२६०० पूर्व माना जाता है। इस काँच में कोई भी दोष, जैसे रेखाएँ या पाषाण-कण, न था।

काँच-निर्माण का निश्चित काल

मिस्र का प्राचीनतम काँच एक गोलाकार बड़ा मनका है जिसका निर्माण-काल ईसा के १५५१-२७ वर्ष पूर्व है। उस समय का मिस्र में निर्मित काँच स्थायी एवं उच्च-कोटि की कला से परिपूर्ण था। मिस्रवासी अपारदर्शक काँच वंग (टिन) आक्साइड से और लाल एवं हरा काँच ताम्र के प्रयोग द्वारा तैयार करते थे। काँच एक शृंगार की वस्तु थी और वह रत्नों के समान बहुमूल्य समझा जाता था। मिस्र के एक शासक

1. Glaze

के गले की माला में रंगीन काँच के टुकड़े भी अन्य बहुमूल्य रत्नों, जैसे कि जेस्पार (सूर्यकान्त मणि) और लेपिस लैजुली (नीलम) के साथ पाये गये हैं। कुछ समय पश्चात् एक लकड़ी या लोहे की शलाका के चतुर्दिक् बालू के ऊपर तप्त श्यान काँच धीरे-धीरे लगाकर मर्तबान और फूलदान इत्यादि बनाये जाने लगे। अथवा यह भी होता था कि बालू लगी छड़ द्रुत काँच में कई बार डुबो दी जाती थी और धीरे-धीरे उसके ऊपर, आवश्यकतानुसार स्थूलता की परत लिपट जाती थी। ईसा के लगभग १२०० वर्ष पूर्व, मिस्रवासियों ने खुले साँचों में काँच का पीडन करना सीखा। फिर उससे कटोरे तथा तश्तरियाँ बनायी जाने लगीं। पारदर्शक काँच का निर्माण नगण्य था। उस काल में, मिस्र में काँच का उपयोग वैभव के लिए धनी लोग ही करते थे। मिस्र काँच-निर्माण का केन्द्र, ईसा के १५५० वर्ष पूर्व से लेकर ईसा युग के आरम्भ तक बना रहा। यह उद्योग अलेकजेन्ड्रिया में केंद्रित हो गया और यहाँ से फोनीसिया के व्यापारियों ने इसे मध्य सागर के प्रदेशों में फैलाया।

द्वितीय काल

यह काल धमनाड[1] की खोज के साथ आरम्भ होता है और यह मानव का एक महान् आविष्कार था। काँच अब वैभव की वस्तु न रहकर, आवश्यकता की वस्तु हो गया। यह कहा नहीं जा सकता कि काँच को प्रथम बार किस देश में धमनकर[2], ठोस रूप दिया गया। कीसा के अनुसार, इसका श्रेय फोनीसिया-वासियों को है और इसका आविष्कार ईसा से ३२० से २० वर्ष पूर्व की अवधि में हुआ। उस समय के और आजकल के धमनाड का परिमाण और आकार एकसमान ही है। अनेक प्रकार के सुषिर-काँच[3] के पात्र बनाये जाने लगे। पारदर्शक काँच का निर्माण इसी युग के आरम्भ में हुआ।

प्रथम स्वर्ण युग

रोम—ईसवी सन् की प्रथम चार शताब्दियाँ काँच-निर्माण के लिए स्वर्ण-युग कही जा सकती हैं। धमनाड के आविष्कार और रोमन साम्राज्य की स्थिरता के कारण, काँच का उपयोग अधिक विस्तृत रूप से होने लगा। इस उद्योग की रोम-विजित प्रदेशों में, जैसे मिस्र, शाम, ईराक, फिलस्तीन, यूनान, इटली, राइन प्रदेश, गाल और ब्रिटेनी में अति उन्नति हुई। सम्राट् नीरो के समय से (सन् ५४-५८) तरल वस्तु पीने के हेतु कुछ भद्दे प्रकार के काँच पात्रों का निर्माण शुरू हुआ। अलेक्ज़ेन्डर

1. Blow pipe 2. Blowing 3. Hollow

सिविरस ने, सन् २२० में, काँच-निर्माताओं पर एक कर भी लगाया था और रोम नगर का एक भाग इनको दे दिया गया था क्योंकि इनकी संख्या बहुत अधिक हो गयी थी। कान्स्टेनटाइन ने, सन् ३०६-३७ में, यह कर माफ कर दिया और तब काँच उद्योग ने बहुत प्रगति की। रंगीन काँच के गुलदान, जिनका मूल्य बहुमूल्य धातुओं के समान होता था, रोम में बनाये जाते थे। ये बहुत ही सुन्दर ढाँचे के नकासी किये हुए होते थे। प्रसिद्ध पोर्टलैण्ड गुलदान, जो अब ब्रिटिश संग्रहालय में है और अलेक्ज़ेन्डर सिविरस की समाधि में पाया गया था, इसी ढंग का है। उसका निर्माण सम्भवतः प्रथम शताब्दी में हुआ। गहरे नीले रंग के पट पर श्वेत अपारदर्शक काँच में काट कर दृश्य बनाये गये हैं। द्वारी काँच का उल्लेख तीसरी शताब्दी में पाया जाता है और पट्टिका काँच (प्लेट ग्लास) का सन् ४२२ में। काँच के शिल्पकारों को काँच-निर्माण का और उसमें सौन्दर्य लाने की अनेक विधियों का ज्ञान था। वे किसी उपकरण के बिना ही धमन कला में प्रवीण थे और संदंश (टांग्ज) का प्रयोग जानते थे। उन्होंने अनेक प्रकार के मोज़ेइक काँच का निर्माण किया। वे काँच के रंगने और सुनहला पानी चढ़ाने की कला भी जानते थे। हार्डेन के अनुसार उस समय के रोमन मिस्र में काँच की तश्तरियाँ, प्याले, कटोरे, बोतलें, चूड़ियाँ, चमचे, अँगूठियाँ, तावीज, लेन्स, बटन, द्वारी काँच, बीकर, फ्लास्क, दीप, मर्तबान, कुम्भी और पेयपात्र बनते थे।

तमयुग—रोमन साम्राज्य के पतन से लेकर ग्यारहवीं शताब्दी तक के समय में, काँच-निर्माण का लिखित विवरण, बहुत कम उपलब्ध हुआ है। छः शताब्दियों के इस लुप्त इतिहास का कारण, यूरोप में बढ़ता हुआ जर्मन प्रभुत्व एवं ईसाई धर्म का प्रभाव था, जिसके आदेशानुसार शव के साथ किसी बहुमूल्य वस्तु का, जैसे काँच की वस्तुओं का, गाड़ना मना था। इस युग की बनी काँच-वस्तुएँ बहुत कम पायी जाती हैं क्योंकि वे सुरक्षित नहीं रखी गयीं। तीसरी शताब्दी में बाइज़नटाइन साम्राज्य कुस्तुनतुनिया में प्रतिष्ठित हुआ और रोमन साम्राज्य के पतन के पश्चात् ही वहाँ काँच-निर्माण आरम्भ हुआ। बाइज़नटाइन के कारीगरों ने काँच में रंग और मोज़ेइक कला की उन्नति की। सम्राट जस्टीनियन ने छठी शताब्दी में कुस्तुनतुनिया के बड़े गिरजाघर के लिए काँच-कारीगरों को नियुक्त किया और अभिरंजित द्वारी काँच बनवाया। खिड़कियों के लिए, काँच का उपयोग, पहले फ्रांस में फैला और उसके पश्चात् इंगलैण्ड में। अभिरंजित द्वारी काँच का सर्वप्रथम विवरण, राईम्स नगर के पादरी का है जब कि उन्होंने एक गिरजाघर सन् ९६९–८८ में बनवाया था। मध्य युग के अंतिम भाग में अभिरंजित द्वारी काँच बहुत जनप्रिय हुआ। काँच की ये रंगीन खिड़कियाँ, अशिक्षित

जनों के लिए ईसा के सन्देश के समान थीं। तमयुग की अवधि में--सन् ३०० से १३०० तक--अरब-निवासियों ने काँच का उपयोग, तौल के बटखरों के लिए किया। प्राचीन मिस्र में "नमीनी वित्रे" नामक काँच के टुकड़े होते थे जो दसवीं से तेरहवीं शताब्दी तक सिक्कों का भार जाँचने के काम आते थे। उनमें क्षार की मात्रा अधिक और सिलिका की कम होती थी और उनमें प्राय: आठ प्रतिशत अल्युमिना और कुछ मैगनीशिया भी होता था और वे बहुत स्थायी होते थे।

द्वितीय स्वर्ण युग

वेनिस--पूर्वी साम्राज्य के पतन और फिलस्तीन युद्ध के पश्चात्, चार शताब्दियों में (सन् ११०० से सन् १५००) वेनिस, काँच-उद्योग का केन्द्र बन गया। वहाँ इस उद्योग ने बहुत उन्नति की। वेनिस-निर्मित काँच अब भी एक विशेष गुण के काँच का संकेत करता है। यह उद्योग एकाधिकार द्वारा सुरक्षित कर दिया गया। सन् १२७९ में एक उद्योग-समिति की स्थापना हुई और काँच-शिक्षार्थियों को आठ वर्ष तक काँच-निर्माण की शिक्षा दी जाने लगी। सन् १२९१ में इस उद्योग को मुरानो द्वीप और उसके पड़ोस में स्थानान्तरित कर दिया गया। वेनिस के काँच-कारीगरों को देश से बाहर जाना, टूटे हुए काँच का निर्यात और विदेशियों को यह कला सिखाना मना था। इसके उल्लंघन करने पर मृत्युदंड की सज़ा दी जाती थी। मुरानो द्वीप पर, एक मील लम्बे क्षेत्र में, बहुत-से कारखानों में, सहस्रों कारीगर द्वारी काँच, मनकों, बोतलों और शृंगारी वस्तुओं के उत्पादन में लगे थे। वेनिस के बने दर्पण इतने सुन्दर होते थे कि उस प्रकार के दर्पण और कहीं नहीं बनाये जा सकते थे। इस उद्योग की उन्नति के लिए शाम प्रदेश से कारीगर बुलाये गये थे और ये अपने साथ काँच-निर्माण के मिस्री एवं बाइज़न्टाइन सूत्र भी ले गये थे। वेनिस का काँच अपनी कला एवं सौन्दर्य के लिए विख्यात हो गया। वेनिस-निवासी अति सूक्ष्म केलासयुक्त काँच बनाने का रहस्य भी जानते थे। सोलहवीं शताब्दी में वेनिस का काँच पूर्ण श्रेष्ठता प्राप्त कर चुका था जब बिलकुल वर्णहीन एवं पारदर्शक काँच प्रथम बार निर्मित हुआ। वेनिस की काँच-निर्माण-समिति के सदस्यों का राज्य में बहुत सम्मान था। वेनिस-निवासी काँच के ऊपर सोने का पानी चढ़ाना एवं अकाचन[1] करना भी जानते थे। काँच-उद्योग का पतन तब आरम्भ हुआ जब कि वेनिस के काँच-निर्माण के गुप्त सूत्र और विधियाँ अन्य देशों को मालूम हो गयीं और उसका उत्पादन दूसरे देशों में बढ़ने लगा।

1. Enamelling

चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं शताब्दियों में शाम-निवासियों ने अपनी मसजिदों को सजाने के लिए, काँच उद्योग में बहुत उन्नति की। उनके गुलदान, प्याले, एवं मसजिदों के दीप, पारदर्शक एवं अपारदर्शक अकाचन से सज्जित और बहुत ही सुन्दर होते थे। बोहेमिया-निवासी इस समय ऐसा कठोर काँच निर्माण करते थे जो कि सहज में काटने, नक्काशी और उत्किरण के योग्य होता था। सोलहवीं शताब्दी के अन्त तक काँच-निर्माण का उद्योग यूरोप के सम्पूर्ण भागों में फैल गया।

आधुनिक काल

काँच प्रौद्योगिकी विज्ञान का आरम्भ, नेरी की प्रसिद्ध पुस्तक 'ल आर्ट विटरेरिया" यानी "काँच की कला" से होता है। इस पुस्तक का प्रथम संस्करण फ्लोरेन्स नगर से सन् १६१२ में प्रकाशित हुआ। पुस्तक में बोरेक्स, सीस आक्साइड एवं आर्सेनिक के उपयोग, रंगीन काँच एवं लाल काँच-निर्माण इत्यादि का वर्णन है।

फ्रांस—चौदहवीं शताब्दी में काँच उद्योग की उन्नति के लिए फ्रांस में कई प्रयत्न हुए। सन् १६६५ ई० में, कोलबर्ट ने शेरबर्ग नगर के समीप काँच का एक कारखाना खोला जिसमें कुछ फ्रांस-निवासी नियुक्त किये गये, जिन्होंने द्वारी काँच का निर्माण मुरानो द्वीप में सीखा था। सन् १६६८ में, थेवर्ट ने जो पेरिस-निवासी था और जिसने सॉन-गोवे नगर छोड़ दिया था, पट्टिका काँच ढालने की विधि का आविष्कार किया और इस प्रकार प्राय ७×४ फुट की काँच की चद्दरें बनायीं। सन् १७९० में स्विटज़रलैण्ड के घड़ी साज़ पियरे-लुई-गुइनान्ड ने विलोडन द्वारा समांग[1] प्रकाशीय काँच[2] का आविष्कार किया। उसका पुत्र हेनरी गुइनान्ड चोज़ी—ले—राय नगर के काँच कारखाने के संचालक, पेरिस-निवासी बान्टेम्प का साझीदार हो गया। बाद में बान्टेम्प इंगलैण्ड चला गया, किन्तु हेनरी-गुइनान्ड पेरिस में ही बना रह गया। उसके पोतों ने ई० मैण्टोइ के सहयोग से प्रसिद्ध पारा-मैण्टोइ कारखाने की उन्नति की। अट्ठारहवीं शताब्दी में, सॉन-गोवे नगर में, ताम्र की मेज पर ताम्र के बेलन द्वारा द्रुत[3] काँच को बेलकर पट्टिका[4] काँच का निर्माण किया जाता था।

इंगलैण्ड—इंगलैण्ड में सन् ६७४ में द्वारी काँच (विंडो ग्लास) का उपयोग हुआ जब कि डरहम नगर के गिरजाघर की खिड़कियों का काचन करने के लिए विदेश से कारीगर बुलाये गये। इस पर भी, चौदहवीं शताब्दी तक, इंगलैण्ड में काचित (ग्लेज्ड) खिड़कियाँ बहुत कम थीं। फ्रांस और इटली में इनका प्रचलन बहुत पहले हो चुका था।

1. Homogeneous 2. Optical glass 3. Molten glass 4. Plate glass

वारविक की काउन्टेम् ने, सन् १४३९ में, वारविक नगर के गिरजाघरों की खिड़कियों में अंग्रेजी काँच के उपयोग का निषेध कर दिया था। रानी इलीज़ाबेथ के समय में काँच उद्योग को यद्यपि प्रोत्साहन मिला, फिर भी सफलता प्राप्त न हुई। लगभग १५५७ ईसवी में सीसयुक्त स्फटिक काँच का लन्दन में आविष्कार हुआ। इस काँच ने वेनिस के काँच का महत्त्व घटा दिया क्योंकि इस सीसयुक्त काँच में अधिक उज्जवलता और चमक थी। एक और आविष्कार यह हुआ कि काँच-द्रावण के लिए, बन्द पात्रों का उपयोग किया जाने लगा। सन् १६३५ में, सर आर० मैन्सेल को सीसयुक्त काँच बनाने का एकाधिकार प्राप्त हुआ और उन्होंने भट्ठी में लकड़ी के बजाय कोयले का प्रयोग किया। सन् १६७० में, बकिंघम के ड्यूक, वेनिस के काँच-कारीगरों को लन्दन लाये जिन्होंने काँच के पान-पात्रों और बाद में चद्दरी काँच का निर्माण किया। सन् १६८१ में, सर आइज़ेक न्यूटन ने, काँच में सीस आक्साइड के स्थान पर जस्ता आक्साइड का प्रयोग किया। सन् १८४८ में, पेरिस-निवासी बानटेंप्स ने बर्मिंघम के चान्स ब्रदर्स की संस्था के साथ काम करना आरम्भ किया और यह संस्था लेन्स निर्माण के लिए बहुत प्रसिद्ध हो गयी। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में फराडे ने प्रकाशीय के काँच के संबंध में अनुसन्धान किये और बोरिक आक्साइड को काँच का एक अवयव बनाया। सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में वेनिस के काँच का आयात बहुत कम हो गया। लन्दन से, काँच का उद्योग, न्यूकैसिल-आन-टाइन, स्टौरब्रिज और ब्रिस्टल में फैला। हाउटन के कथनानुसार, सन् १६९६ में, इंगलैण्ड और वेल्स में, सब मिलाकर ९० काँच-कारखाने थे, जिनमें कई प्रकार की काँच की आकर्षक वस्तुओं, जैसे तश्तरियों, बटनों, कठौतियों, मोमबत्ती-दानों, दवातों, इत्रदानियों, चंमचों, अंगूठियों, तम्बाकू पीने की नलिकाओं (पाइपों) छड़ियों, ऋतुमापक काचों, एवं बोतलों और द्वारी-काचों का निर्माण होता था। लैंकेशायर प्रान्त में, प्रेसकाट नगर के समीप पहला पट्टिका-काँच निर्माण का कारखाना सन् १७७३ में खोला गया और वहाँ लोहे की मेज का उपयोग हुआ। कैसिल-फोर्ड निवासी ऐशले ने, सन् १८८८ में प्रथम बोतल बनानेवाले धमन यंत्र का सफल आविष्कार किया।

जर्मनी एवं बोहेमिया—इन देशों में, सबसे पहले काँच का निर्माण कब हुआ, इसका ठीक-ठीक पता नहीं है। टाशेपनर के अनुसार, दसवीं शताब्दी में, बवेरिया प्रान्त के एक गिरजाघर में रंगे हुए द्वारी काँच का प्रयोग हुआ था। आरम्भ में काँच के कारखाने जंगलों में खोले गये क्योंकि वहाँ लकड़ी और पुटाश क्षार सस्ता और अधिक मात्रा में उपलब्ध था। बोहेमिया प्रान्त, काँच उद्योग का प्रथम स्थान था। पंद्रहवीं

एवं सोलहवीं शताब्दियों में हैदास्टेन्श्नाउ में काँच के कारखाने खोले गये और वहीं से यह उद्योग थुरेन्गीया प्रान्त में फैला। सन् १६९४ में वहुत प्रकार की वस्तुएँ, जैसे कि पट्टिका काँच और सुपिर वस्तुएँ, स्टेन्श्नाउ में निर्मित होती थीं। काउन्ट किन्सकी ने सन् १७२२–८० के मध्य में एक दर्पण-निर्माण का कारखाना वर्गस्टाइन में और मनका-निर्माण का कारखाना स्वैका में खोला। अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य में, वोहेमिया प्रान्त के सफल काँच उद्योग को विदेशों में फैलने से रोका गया। अठारहवीं शताब्दी के अन्त में, नेपोलियन के युद्धों एवं अंग्रेजी और फ्रेंच उद्योगों की प्रतिद्वन्द्विता के कारण, काँच उद्योग के लिए कठोर समय आया। परन्तु आज फिर से वोहेमिया काँच उद्योग का एक मुख्य केन्द्र हो गया है।

जर्मनी ने काँच उद्योग की प्रगति में वहुत काम किया है। ड्रेसदन निवासी एफ. सीमेन्स ने, सन् १८७२ में, काँच-द्रावण के लिए प्रथम कुण्ड-भट्ठी[1] का आविष्कार किया। शाट और विंकलमान ने काँच के उन गुणों का अध्ययन किया जो काँच की रचना पर निर्भर होते हैं। शाट और एवे ने सन् १८८० में, अनेक प्रकाशीय काँचों का निर्माण किया जिसमें पुराने तत्त्वों के स्थान पर नये तत्त्वों का प्रयोग किया गया। उन्होंने लेन्सों के अवर्णक संयोजन वनाये। सन् १८८४ में, शाट एवं गेनोसेन की प्रसिद्ध संस्था येना में स्थापित हुई।

अमेरिका—अमेरिका में काँच उद्योग वहुत धीरे-धीरे स्थापित हुआ, यद्यपि लिखित विवरण यही वताते हैं कि देश का प्रथम उद्योग काँच-निर्माण ही था। वरजीनिया प्रान्त के जेम्स टाउन में, सन् १६०९ में काँच का पहला कारखाना खोला गया और इसमें वोतलें, मनके एवं सस्ते आभूषण वनाये जाते थे। समीप के जंगलों की लकड़ी का ईंधन प्रयोग किया जाता था। सन् १६२१ में, काँच का दूसरा कारखाना खोला गया। दोनों ही कारखाने अधिक दिन तक न चल सके। सन् १६५४ से १७६७ तक मनहटन द्वीप में भी काँच-निर्माण होता रहा।

सन् १७३९ में, सी. विस्टार ने न्यू जर्सी प्रान्त के सलेम काउन्टी में काँच का एक कारखाना स्थापित किया।

सन् १७६५ में, एस० डव्लू० स्टीगेल ने पेन्सिलवानिया प्रान्त के मैनहाइम नगर में काँच का एक कारखाना चलाया जो कि उसके अपव्यय एवं क्रान्ति के कारण उत्पन्न मन्दी से सन् १७७४ में ठप हो गया।

1. Tank furnace

सन् १८२५ में. डी. जारविस ने "वोस्टन ऐंड सैंडविच ग्लास कम्पनी" नाम का काँच का कारखाना स्थापित किया जो सन् १८८७ तक सफलतापूर्वक चला।

काँच का निर्माण, सन् १९०० तक वैसे ही ढंग पर होता था जैसा कि १००० वर्ष पूर्व था। वाणिज्य के रहस्यों को अति गुप्त रखा जाता था और केवल अपने वंशजों को ही पुश्त-दर-पुश्त वे वताये जाते थे। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से प्रत्येक प्रकार का काँच अधिक परिमाण में निर्माण करने के लिए कई प्रकार की पूर्णतः स्वचालित विधियाँ उपयोग में लायी जाने लगीं, जिससे सारे संसार के काँच उद्योग में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन हो गया है। काँच उद्योग की आधुनिक उन्नति का वहुत कुछ श्रेय अमेरिका-निवासियों को है। उनके कुछ महान् कार्य निम्न लिखित हैं—

१. सन् १८७९ में, न्यूयार्क प्रान्त के कार्निग नगर में प्रथम विद्युत्-दीपों का निर्माण।

२. सन् १८९९ में "ओवेन" के पूर्ण स्वचालित यंत्र का निर्माण।

३. सन् १९०५ में, कोलवर्न की विधि द्वारा चद्दरी काँच का निर्माण।

४. सन् १९०१ में, पेलर एवं ब्रुक के काँच प्रदायक यंत्र का निर्माण।

५. कार्निग ३९९ नामक "रिवन यंत्र" का निर्माण जिसके द्वारा ३०,००० विद्युत्-दीपों (वल्वों) का प्रतिघंटा निर्माण किया जा सकता है।

६. सन् १९१५ में, "पाईरेक्स" काँच का निर्माण जो कि ऊष्मा-प्रतिरोधक है।

७. सन् १९२८ में, अभय काँच (सेफ्टी ग्लास) का निर्माण।

८. सन् १९३१ में काँच-धागों का निर्माण।

९. सन् १९३९ में ९६ प्रतिशत सिलिका काँच का निर्माण, जिसका प्रसार गुणांक वहुत ही कम है।

भारत

प्राचीन भारत—प्राचीन भारतीय संस्कृति की चौदह विद्याओं और चौसठ कलाओं में काँच का कोई वर्णन नहीं आता। फिर भी दो सहस्र वर्ष के कुछ संस्कृत साहित्य में 'काच' शब्द पाया जाता है। यजुर्वेद संहिता में स्त्रियों के आभूषणों की सूची में 'काच' भी सम्मिलित है। 'महाभारत' और 'युक्ति कल्पतरु' ग्रन्थों में स्फटिक तथा काच के पात्रों में जल पीने के लाभकर गुणों का वर्णन है। 'रामायण' और 'योग वाशिष्ठ' में भी 'काच' का उल्लेख मिलता है।

गंगाजलियों का निर्माण होता था। उन्होंने बुचानन के लेख के वर्णन में कहा है कि उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में जब बुचानन मैसूर होकर मूटडेयो से मद्रास की यात्रा कर रहा था तब उसने काँच द्रावण की भट्ठियाँ देखीं जिनमें ताप बहुत कम था और उनमें उन अंग्रेजी बोतलों का, जो लार्ड कार्नवालिस के सिरंगापट्टम छोड़ने के पश्चात् एकत्र की गयी थीं, टूटा काँच नहीं गल सका। सत्रहवीं शताब्दी में अकाचन (इनैमेल युक्त) काँच के पात्र, दिल्ली में बनाये जाते थे। पंजाब के पानीपत नगर में, ढाई सौ वर्ष से काँच के चमकीले टुकड़ों का उद्योग चला आ रहा है। यह काँच पंजाब में प्राप्त लाल पत्थर (एक प्रकार का बालू-पत्थर), सज्जी मिट्टी (अशुद्ध सोडियम कार्बोनेट) और शोरा के मिश्रण से तैयार होता है। इस मिश्रण का कुण्ड-भट्ठी में, लकड़ी का ईंधन प्रयोग कर, द्रावण किया जाता है। काँच को फूंककर गोलाकार रूप दिया जाता है और सीस वंग के मिश्रण से इसको अन्दर से रंजित किया जाता है। फिर ये गोले तोड़ दिये जाते हैं और उत्तर भारत में इन चमकीले काँच के टुकड़ों की खूब बिक्री होती है। सत्रहवीं शताब्दी में, मुसलमान शासकों के संरक्षण में भारतीय काँच-निर्माण का विवरण मिलता है। वास्तव में, भारतीय काँच उद्योग में तब से आधुनिक युग तक कोई उन्नति नहीं हुई, कोई सफलता नहीं मिली, और न कोई विशेष प्रकार का काँच ही बनाया गया। वाट के अनुसार कला की दृष्टि से, काँच-निर्माण सिर्फ पटना नगर में होता था और वहाँ सुन्दर, अति कोमल रंगीन काँच की वस्तुएँ बनती थीं। उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम चतुष्पाद में काँच-निर्माण निम्न स्थानों में होता था—

पंजाब—लाहौर, करनाल, झेलम और होशियारपुर।
उत्तर प्रदेश—बिजनौर, लखनऊ और सहारनपुर।
बम्बई—अहमदाबाद, खेडा और बड़ोदा।
मध्यप्रदेश—सिवनी।
बिहार—पटना।
मद्रास—उत्तरी अरकाट।
राजस्थान—जयपुर और उदयपुर।

चूड़ियाँ, मनके, छोटी शीशियाँ और खिलौने ही मुख्य निर्मित वस्तुएँ थीं। पंजाब, राजस्थान और बर्मा की विशेषताएँ, पारे के रोपण युक्त भद्दे काँच के गोले और मोज़ेइक कला के रंगीन काँच के टुकड़े थे। राजस्थान विशेषकर कलात्मक काँच, शीशमहलों और मोजेइक की कला के लिए प्रसिद्ध था। शीशमहल में, कलईदार छोटे-छोटे काँच के

टुकड़े, दिवालों और छतों के प्लास्टर में लगा दिये जाते थे जिनमें लाखों छोटी-छोटी मूर्त्तियाँ प्रतिविम्वित होती थीं।

आधुनिक उद्योग—आधुनिक भारतीय उद्योग सिर्फ सत्तर वर्ष पुराना है और यह तीन कालों में विभाजित किया जा सकता है।

प्रथम काल, १८७०–१९१५—इस काल में पचास लाख की पूँजी से तीस से अधिक कारखाने खोले गये और प्रथम महायुद्ध के पूर्व ही वंद भी हो गये। उस युद्ध-काल के समय में सिर्फ तीन कारखाने जीवित थे और तलेगाँव कारखाने के अतिरिक्त वाकी सव घाटे पर चल रहे थे। औद्योगिक समिति ने, उस समय तक के काँच उद्योग को "असफलताओं का इतिहास" कहकर व्यक्त किया है।

सन् १८७० में, मरी शराव कारखाने के मैनेजर एस. वाइमपेर ने, झेलम नगर में 'पंजाव ग्लास वर्क्स' नाम का प्रथम काँच का कारखाना स्थापित किया। उन्होंने जर्मनी से वोतलें वनानेवाले विशेषज्ञ वुलाये। विदेशी विशेषज्ञों के स्थानीय परिस्थितियों के अज्ञान के कारण, कारखाना असफल रहा।

सन् १८७९ में, नील की खेती करनेवाले ए. स्मिथ ने दूसरा कारखाना अलीगढ़ में खोला। यह कारखाना भी दो महीने पश्चात् वन्द हो गया।

सन् १८८२ में, विलसन ने तीसरा कारखाना भागलपुर में खोला। यह स्वयं वेनिस भी गये थे और इन्हें भारत सरकार का सहयोग प्राप्त था। भट्ठी में उचित ताप न ला सकने के कारण, वह भी असफल हो गये।

सन् १८९० में, चौथा कारखाना "पायोनियर ग्लास वर्क्स" के नाम से टीटागढ़ में खोला गया। इसका संचालन भारतीयों द्वारा और भारतीय मूलधन ढाई लाख रुपये से हुआ। यह कारखाना विदेशी कारीगरों के भाग जाने के उपरान्त आठ वर्ष तक चलता रहा। इस कारखाने के नये सीखे हुए कारीगरों को अन्य कारखानेवाले भड़का कर ले गये।

सन् १९०९ में, एक यूरोप-निवासी ने, पाँचवाँ कारखाना मद्रास में खोला जो तीन वर्ष पश्चात् वन्द हो गया।

सन् १८९० से सन् १९१६ तक लगभग २५ कारखाने खोले गये और सिर्फ ५ को छोड़कर—(१) अम्वाला, (२) नैनी, (३) वहजोई, (४) तलेगाँव, (५) ओगले-वादी—वाकी सव असफल रहे। ग्वालियर, अहमदावाद, हैदरावाद (सिंध), जवलपुर और मद्रास के कारखाने भी असफल रहे, यद्यपि इनमें, विदेशी विशेषज्ञ, अच्छी पूँजी, और उत्तम साज-सामान था। कुछ कारखानों में कुण्ड भट्ठियाँ एवं गैस तापित

पात्रवाली भट्ठियाँ भी थीं। बुरा उत्पादन, प्रबन्ध में अधिक व्यय, प्राविधिक अज्ञान, कारीगरों का भाग जाना, भट्ठियों में दोष, प्रबन्धक और विशेषज्ञों के आन्तरिक झगड़े इत्यादि इनकी असफलता के कारण थे।

द्वितीय काल, १९१५–२०–प्रथम महायुद्ध के पश्चात् असामान्य वातावरण के कारण, काँच उद्योग को खूब प्रोत्साहन मिला। जापानी विशेषज्ञों ने जापानी पात्र (पाट) भट्ठी को खूब प्रचलित किया और कुछ काँच फूंकने के कारीगर तैयार किये। फिरोज़ाबाद की मुख्य निर्मित वस्तु चड़ियाँ थीं। सर एलफ्रेड चैटरटन के अनुसार, सन् १९१७ में, बीस लाख रुपयों की चूड़ी और बीस लाख रुपये की काँच की अन्य वस्तुएँ भारत में निर्मित हुईं। यद्यपि युद्ध काल में रेल के डिब्बे, कोयला और कुछ रासायनिक पदार्थ मिलना कठिन हो गया था तथापि आयात में कमी होने के कारण, कारखानों ने खूब लाभ उठाया।

तीसरा काल, १९२०-४५–युद्धोपरान्त की उक्त लाभ की स्थिति सन् १९२० तक ही रही। उन्हीं दिनों में, अधिक लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से, लगभग तीस नये कारखाने और खुले। युद्ध के अन्त में आयात ने खूब जोर पकड़ा और तब सब युद्ध-लाभ समाप्त हो गया तथा भारतीय बाजार जापान, जर्मनी और आस्ट्रिया के माल से भर गया। फलतः दस काँच के कारखाने शीघ्र ही बन्द हो गये। सन् १९२० और १९३० के स्वदेशी आंदोलनों के कारण इस उद्योग को कुछ बल मिला, परन्तु फिर भी १९२०-३० में कुछ और कारखाने बन्द हुए। सन् १९३२ में, काँच उद्योग की जाँच के लिए एक समिति का निर्माण किया गया। उसने अपने ज्ञापन में बतलाया कि काँच उद्योग इस देश का मुख्य उद्योग है और उसको सरकार का संरक्षण प्राप्त होना चाहिए। उसकी तथा उत्तर प्रदेश सरकार की औद्योगिक पुनःसंगठन समिति की सिफारिश पर, काँच कारखानों द्वारा उपयोग में लाये जानेवाले सोडा ऐश पर लगा हुआ कर कारखानों को वापस दे दिया गया। सन् १९३८ में, उत्तर प्रदेश सरकार ने एक काँच–विधिज्ञ की नियुक्ति की। सन् १९३७ में, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में एक काँच प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना हुई, जो कि भारत में अपने ढंग का सर्व-प्रथम था और जिसका उद्देश्य भारत के नवयुवकों को काँच का वैज्ञानिक और प्राविधिक ज्ञान प्राप्त कराना था। नये ढंग की पुनराप्त्र[1] भट्ठियाँ, सरकार की सहायता द्वारा कई जगह बनी और काँच-निर्माण के लिए अर्द्ध स्वचालित यंत्र कारखानों में लगाये गये। द्वितीय

1. Recuperative glass furnaces

महायुद्ध का भारत के काँच उद्योग पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा और युद्ध के सफल परि-चालन के लिए भारत काँच निर्मित वस्तुओं का केन्द्र बन गया। सन् १९५० में भारत सरकार ने केन्द्रीय काँच एवं सिरामिक अन्वेषण संस्था कलकत्ता नगर में स्थापित की। अब बहुत से कारखानों ने पूर्ण स्वचालित यंत्र यूरोप एवं अमेरिका से मँगवा लिये हैं जिनके द्वारा बोतलें, काँच की चद्दरें बनायी जा रही हैं और देश के बहुत-से भागों में काँच-उद्योग पूर्ण रूप से आधुनिकता पर आ रहा है। भारत का काँच-उत्पादन अब युद्ध पूर्व के उत्पादन से चार गुना अधिक हो गया है।

आधुनिक विकास

पहले, काँच-उद्योग कारीगर की कुशलता पर निर्भर था जिसको काँच-निर्माण के रासायनिक पदार्थों के गुणों का अधूरा ज्ञान था और वह भद्दे तरीकों से कार्य करता था। अब काँच-उत्पादन वैज्ञानिक ढंग से और अविश्रान्त चलनेवाले यंत्रों द्वारा हो रहा है।

स्वचालित यंत्र—सन् १८८८ में, इंगलैण्ड के कैसिल फोर्ड निवासी ऐशले ने बोतल-निर्माण के लिए प्रथम सफल यंत्र का आविष्कार किया। उस समय से लेकर अब तक अनेक प्रकार के अर्द्ध-स्वचालित यंत्र, जैसे ई. मिलर, डब्लू. जे. मिलर और ओनील यंत्रों का निर्माण हुआ। सन् १८९९ में, अमेरिका में पूर्ण स्वचालित यंत्र 'ओवेन यंत्र' का बोतल-निर्माण के लिए आविष्कार हुआ। प्रत्येक प्रकार की ठोस एवं सुषिर (खोखली) काँच वस्तुओं के लिए स्वचालित यंत्रों का आविष्कार हुआ। बहु-मूल्य सीस युक्त काँच के स्थान पर, एक और प्रकार के अच्छे काँच का आविष्कार हुआ जिसमें उपयुक्त मात्रा में बैरियम आक्साइड इत्यादि सम्मिलित हैं।

काँच-प्रदाय यंत्र—यन्त्रों में काँच देने के लिए, काँच-प्रदाय यंत्र भी आ गये हैं। सन् १८८५ में, इंगलैंड के बार्न्सले नगर-निवासी राइलैण्डस ने काँच-प्रदाय यंत्र[1] के विकास का प्रथम प्रयत्न किया था। सन् १९०१ में, होमर ब्रुक ने अमेरिका के न्यूयार्क नगर में प्रथम सफल काँच-प्रदाय यन्त्र का निर्माण किया।

द्वारी और पट्टिका काँच—अट्ठारहवीं शताब्दी में अधिकतर द्वारी काँच सीस रहित था। उन्नीसवीं शताब्दी में फ्रांस में काँच के सिलिन्डर को फूँककर और फिर विशेष चूल्हों में चिपटाकर द्वारी काँच, चेकोस्लोवाकिया के कारीगरों द्वारा बनाया गया। सन् १८२५ में, काँच को चिपटा करनेवाले काष्ठ के स्थान पर ऊष्मसह

1. Feeder

पदार्थ का उपयोग किया गया। सन् १९०२ में, अमेरिका के पिट्सवर्ग नगर के निवासी, डब्लू० क्लार्क ने तप्त काँच को चादर के रूप में कर्षण करने की सनद ली। सन् १९०२ में, वेलजियम निवासी फूरकाल्ट ने चद्दरी काँच वनाने की सनद ली। सन् १९०५ में, पेन्सिलवानिया प्रान्त के, आई. डब्लू. कोलवर्न ने एक दूसरे प्रकार के चद्दरी काँच वनाने के यंत्र की सनद ली और यह यंत्र लिब्वी-ओवेन्स संस्था द्वारा सफलता पूर्वक उपयोग में लाया गया। सन् १९०४ में, पिट्सवर्ग निवासी लूवर्स ने, यांत्रिक प्रणाली द्वारा चद्दरी काँच को सिलिण्डर के रूप में सफलता पूर्वक कर्षण किया।

अट्ठारहवीं शताब्दी में, इंगलैण्ड में और फ्रांस के साँन-गोवे नगर में, ताम्र की मेज पर, ताम्र के वेलन से वेलने द्वारा, पट्टिका काँच का निर्माण हुआ। कुछ समय पश्चात्, इंगलैण्ड में ताम्र की मेज के स्थान पर लोहे की मेज़ का उपयोग हुआ। पट्टिका काँच की निर्माण-विधि तो पूर्ववत् ही है, परन्तु केवल घिसने, पालिश करने और निस्तापन[1] में सुधार हो गया है।

सन् १८७९ में, अमेरिका में पट्टिका काँच का निर्माण हुआ। सन् १९०० में, निस्तापन के लिए, किल्न (भट्ठों) के स्थान पर लेयर का प्रयोग होने लगा। सन् १८९२ में, फिलाडेलफिया निवासी एफ़. शूमैन ने प्रथम जालीदार काँच का निर्माण किया। एल. टी. शेरवुड के अनुसन्धान के कारण अव ऊष्मा-अवशोषक पट्टिका काँच[2] का भी निर्माण हो रहा है।

प्रकाशीय काँच—प्रकाशीय काँच आधुनिक सभ्यता की एक मुख्य वस्तु है। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक सीस-युक्त और सीस-रहित प्रकाशीय काँच वहुत थोड़े वनते थे। म्यूनिख निवासी फ्रानहाउफर और न्यूफकटेल निवासी गुइनाण्ड ने, काँच के वर्णक्रम का अध्ययन किया और एक युग्म अवर्णक[3] लेन्स वनाया। उस समय तक समांग लेन्स केवल साढ़े तीन इंच व्यास के होते थे। सन् १७९० में, गुइनान्ड ने ९ इंचवाला समांग लेन्स, काँच का अग्नि-मिट्टी की शलाका द्वारा यांत्रिक विलोडन कर वनाया। वह म्यूनिख निवासी फ्रानहाऊफर का साझीदार होकर प्रकाशीय काँचों का निर्माण करने लगा। गुइनान्ड का एक पुत्र, पेरिस निवासी वान्टेम्स का साझीदार हो गया। सन् १८२८ में उसने काँच का चौदह इंच व्यास का समांग विम्व वनाया। सन् १८४८ में, वाम्टेम्स, वर्मिघम की चान्स व्रादर्स संस्था का साझीदार हो गया। पेरिस में गुइनान्ड का पौत्र फील यहीं कारोवार करता रहा जो वाद में पारा-मान्टोय

1. Annealing 2. Absorbing plate glass 3. Achromatic lenses

नाम की प्रसिद्ध संस्था में विकसित हो गयी। सन् १८३४-५९ के मध्य, इंगलैण्ड के पादरी हारकोर्ट ने हाइड्रोजन की ज्वाला से, घड़ी यंत्र द्वारा घूर्णित छोटी घरियों[1] में, काँच-द्रावण का कुछ अनुसंधान किया। काँच के अविलोडन के कारण उनको सही प्रकाशीय नियतांकों[2] का पता नहीं चला। दो वोरेट-युक्त काँच और एक सीस-रहित काँच के संयोग से द्वितीय वर्णक्रम रहित एक तिहरा लेन्स वनाया गया।

सन् १८७८ में, ऐवे ने प्रकाशीय काँच पर एक निवंध का प्रकाशन किया और सन् १८८१ में, शाट से उसका सम्वन्ध हो गया और दोनों येना नगर में अनुसन्धान करते रहे। उन्होंने भिन्न आक्साइडों और काँच में उन आक्साइडों के भौतिक गुणों का अध्ययन किया। सन् १८८४ में, जर्मन सरकार की आर्थिक सहायता से प्रकाशीय काँच निर्माण के लिए एक कारखाना खोला गया। "येना ग्लास वर्क्स" ने न केवल प्रकाशीय काँच की मुख्य समस्या का ही अध्ययन किया वल्कि उसने रासायनिक और ऊष्मा-प्रतिरोधक काँच का भी निर्माण किया। सन् १९२० में इंगलैण्ड में सी. जे. पेडल ने प्रकाशीय काँचों के घनत्व, नियंताक और स्थायित्व पर अनेक आक्साइडों के प्रभाव का अध्ययन किया।

भट्ठियां—लकड़ी जलानेवाली भट्ठियों के स्थान पर पुनराप्त्र[3] एवं पुनर्जनित्र[4] प्रकार की उत्पादक गैस तापित भट्ठियाँ वन गयी हैं। सीमेन्स की पुनर्जनित्र उत्पादक गैस तापित पात्र (पाट)[5] भट्ठी, सर्वप्रथम सन् १८६० में वनायी गयी। सन् १८७२ में ड्रेसडन नगर में एफ. सीमेन्स ने कुण्ड भट्ठी वनायी। किल्नों (भट्ठों) के स्थान पर अव स्वचालित लेयरें और मफल लेयरें[6] वनायी जा रही हैं।

काँच की वस्तुएँ—कई नये प्रकार की आश्चर्यजनक काँच की वस्तुएँ वन गयी हैं। सन् १८७९ में, न्यूयार्क प्रान्त के कार्निग नगर में एडिसन द्वारा प्रथम विद्युत-दीप (वल्व) का निर्माण किया गया और अव कार्निग फीता यंत्र द्वारा, एक मिनिट में ५०० विद्युत-दीप तैयार हो सकते हैं। काँच संवन्धी प्रसिद्ध आविष्कार ये हैं—

सन् १९१५ में, पाइरेक्स का उष्मा-प्रतिरोधक काँच।
सन् १९२८ में, अभय काँच।
सन् १९३१ में, काँच की ईंटें, काँच का धागा और कपड़ा।
सन् १९३९ में, ९६ प्रतिशत का सिलिका काँच।

1. Crucibles 2. Constants 3. Recuperative 4. Regenerative
5. Pot furnace 6. Muffle lehrs

दूसरा अध्याय

काँच-निर्माण के उपादान

काँच निर्माण के उपादानों (कच्चे पदार्थों) का वर्गीकरण

(क) प्रौद्योगिक विधि[1]—काँच में उपयोग के अनुसार उपादानों को छः वर्गों में विभक्त किया जा सकता है—

१. काँच-निर्माण के आवश्यक पदार्थ,

२. द्रावक[2],

३. आक्सीकारक,

४. अवकारक,

५. शोधक[3],

६. वर्णक[4]।

(ख) अनिर्मित पदार्थों (उपादानों) का रासायनिक गुणों के अनुसार वर्गीकरण—

१. अम्लीय आक्साइड उत्पादक पदार्थ।

२. भास्मिक (पैठिक)[5] आक्साइड उत्पादक पदार्थ।

(१) काँच-निर्माण के आवश्यक पदार्थ

अम्लीय आक्साइड

सिलिका, SiO_2—व्यापारिक काँच का यह अत्यन्त आवश्यक और मुख्य अवयव है।

प्राप्ति-स्थान—प्रकृति में यह मुक्त अवस्था में एवं सिलीकेट यौगिकों के रूप में पाया जाता है।

प्राकृतिक सिलिका के भेद

१. केलासीय सिलिका, जैसे क्वार्ट्ज़, ट्रिडिमाइट, क्रिस्टोवोलाइट।

२. क्रिप्टो-केलासीय सिलिका, जैसे फ्लिन्ट, चर्ट, चालसेडोनी, एगेट, जेसपार।

1. Technical method 2. Fluxes 3. Fining agents 4. Colouring agents 5. Basic

३. अकेलास सिलिका, जैसे उपल (ओपल)।

क्वार्ट्ज़—प्रकृति में, सिलिका अधिकतर क्वार्ट्ज़ के रूप में पायी जाती है। इसका विशुद्ध रूप 'बिल्लौर पत्थर'[1] है। इसकी रंगीन किस्में नीलराग मणि, गुलाबी क्वार्ट्ज़, कैर्नोग्राम और एवेन्टुरीन; अशुद्धियों के कारण होती हैं। प्रकृति में क्वार्ट्ज़ अधिकतर अम्लीय आग्नेय शिला-अवयवों के रूप में या उसके विच्छेदन-पदार्थों में पाया जाता है, जैसे, बालू, बालू पत्थर और क्वार्ट्ज़ाइट।

काँच-निर्माण के लिए सिलिकन पदार्थों की उपयुक्तता

काँच-निर्माण के लिए, आग्नेय शिलाएँ[2] अनुपयुक्त हैं क्योंकि मुक्त सिलिका की मात्रा इनमें बहुत कम है और सिलिका को दूसरे शैलेय अवयवों से पृथक् करना अत्यन्त कठिन है। काँच-निर्माण के लिए सबसे उपयुक्त निक्षेप (डिपाजिट) बालू, बालू पत्थर और क्वार्ट्ज़ाइट चट्टानें हैं। यदि अधिगम्यता[3], प्राप्य मात्रा और लाने का मूल्य इत्यादि समान हैं तो बालू ही उसके लिए अधिक उपयुक्त पदार्थ है। सिलिका युक्त शिलाओं को प्रयोग के पहले तोड़ना और चालना पड़ता है जिसके कारण यंत्रों और मजदूरी में व्यय अधिक हो जाता है।

बालू—भूगर्भ शास्त्र में 'बालू' शब्द उस खनिज पदार्थ के लिए आता है जिसमें निश्चित परिमाणवाले बिखरे कण हों। इस प्रकार बाल वह खनिज पदार्थ है जिसके अधिकांश कणों का व्यास ·१ मिलीमीटर से १ मिलीमीटर के मध्य होता है।

कणों के परिमाणानुसार, बालू का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

कंकड़	२ मि. मी. से अधिक व्यास।
अति स्थूल बालू	२ से १ मि. मी. व्यास।
स्थूल बालू	१ से ·५ ,, ,,
मध्यम बालू	·५ से ·२५ ,, ,,
सूक्ष्म बालू	·२५से ·१ ,, ,,
अति सूक्ष्म बालू	·१ से ·०५ ,, ,,
सिल्ट	·०५से ·०१ ,, ,,
मिट्टी या कीचड़	·०१मि० मी० से कम व्यास।

जल-प्रवाह के द्वारा स्थानान्तरित बालू में क्वार्ट्ज़ की मात्रा अधिक होती है, क्योंकि खनिज पदार्थों में क्वार्ट्ज़ बहुत कठोर और स्थायी है। ऐसी भी बालू पायी

1. Rock crystal 2. Igneous rocks 3. Accessibility

जाती है जिसमें क्वार्टज् के अलावा और भी पदार्थ अधिक मात्रा में होते हैं, परन्तु यह बालू कम ही पायी जाती है। भारत के केरल प्रान्त में, मोनेज़ाइट बालू मिलती है जिसमें क्वार्ट्ज़ और मोनेज़ाइट खनिज पदार्थ भी मिले रहते हैं।

काँच-निर्माण के योग्य सर्वोत्तम बालू—काँच-निर्माण के लिए सबसे उपयुक्त वही बालू है जिसमें सिर्फ क्वार्ट्ज़ हो, यदि अन्य खनिज पदार्थ उपस्थित हों तो उन्हें अशुद्धियों में ही गिनना चाहिए। बालू में ये अशुद्धियाँ स्पष्ट कणों के रूप में हो सकती हैं। यदि अशुद्धियाँ लोह, आक्साइड, मिट्टी, कैलसाइट या डोलोमाइट रूप में हों तो ये या तो क्वार्ट्ज़ कणों की परत के ऊपर पायी जाती हैं या क्वार्ट्ज़ कणों को सीमेन्ट की तरह परस्पर चिपकाये रहती हैं।

बालू का चुनाव—बालू के चुनाव में काँच-निर्माता इन तीन बातों का ध्यान रखता है—

(१) शुद्धता, (२) श्रेणीक्रम, (३) मूल्य।

शुद्धता—

(अ) प्रथम कोटि की बालू में, सिलिका की मात्रा ९९ प्रतिशत से कम न होनी चाहिए जिसमें क्वार्ट्ज़ के कण भी होने चाहिए।

(आ) बालू में Al_2O_3, MgO, CaO, Na_2O, K_2O की उपस्थिति हानिप्रद नहीं है, परन्तु जिस बालू में ये पाये जाते हैं उसकी रचना, खान के अन्दर एक समान नहीं होती। प्रकाशीय काँच की समांगता पर इसका प्रभाव पड़ता है। Al_2O_3 की उपस्थिति से फेल्सस्पार, अबरक या मिट्टी की उपस्थिति का संकेत मिलता है।

(इ) फेरिक आक्साइड Fe_2O_3 की उपस्थिति अति हानिकारक है क्योंकि इसके ·१ प्रतिशत भी होने पर, काँच में हरा रंग आ जाता है। वर्णहीन काँच-निर्माण के लिए, फेरिक आक्साइड की मात्रा ·०९—·१ प्रतिशत से अधिक न होनी चाहिए, इससे कम ही होनी चाहिए। भिन्न प्रकार के काँचों के लिए, फेरिक आक्साइड की अधिकतम मात्रा यह है—

प्रकाशीय काँच	·०२ से ·०३	प्रतिशत
रासायनिक काँच	·१	,,
पट्टिका काँच	·२	,,
चद्दरी काँच	·२ से ·३	,,
वर्णहीन काँच	·०५	,,
साधारण हरी बोतलें	·५	,,
काली बोतलें	३ से ७	,,

श्रेणीक्रम—यदि वालू के श्रेणीक्रम में असमानता होती है तो द्रावण अनियमित होता है और काँच में पाषाण-कण आ जाते हैं। प्रथम कोटि की वालू में, सम्पूर्ण कण "वालू श्रेणी" के होने चाहिए। वासवेल के अनुसार, उत्तम कोटि की वालू के ७० से ९० प्रतिशत या अधिक कण, एक ही श्रेणी के होने चाहिए और उत्तम तो यह है कि उसके कणों का व्यास ·५ से ·२५ मि. मी "माध्यम वालू श्रेणी" का हो। कण जितने छोटे होते हैं उतनी ही शीघ्र द्रावण होता है। परन्तु छोटे कणोंवाली वालू कम पायी जाती है और सर्वदा शुद्ध नहीं होती और उसके कणों के ऊपर लोह आक्साइड की परत जमी रहती है। छोटे कणोंवाली वालू के द्रावण में, काँच में वहुधा वुलवुले आ जाते हैं और इन वुलवुलों का दूर करना अति कठिन होता है। वालू के छोटे कण वहति[1] (वहाव) के कारण वहुधा नालियों[2] और पुनर्जनित्रों में पहुँच जाते हैं और उनको वन्द कर देते हैं। कोणीय कणोंवाली वालू शीघ्र द्रुत हो जाती है।

मूल्य—वालू के चुनाव में वालू के मूल्य का अधिक महत्त्व है। वालू के ले आने में अधिक व्यय होने पर मूल्य वढ़ जाता है, इसलिए दूर स्थित वालू तव ही चुनी जाती है जव कि निकट की वालू विश्लेपण और परीक्षण द्वारा अत्यन्त अनुपयोगी सिद्ध होती है। वालू के चुनाव में यह आवश्यक है कि वह समुचित मात्रा में उपलब्ध हो और एक-जैसी ही हो।

वालू का शोधन—वालू के शोधन की वहुत-सी विधियाँ हैं।
रासायनिक विधियाँ ये हैं—

१. वालू को सोडियम कार्वोनेट घोल के साथ मिलाना,
२. या हाइड्रो क्लोरिक अमल के साथ मिलाना,
३. (१५ प्रतिशत सलफुरिक अम्ल और ५ प्रतिशत फेरस सलफेट के) घोल के साथ ८०°–१००° से० के ताप पर मिलाना,
४. वालू को, ($\frac{1}{4}$–२ प्रतिशत सोडियम आगजालेट और $\frac{1}{4}$–$\frac{1}{2}$ प्रतिशत फेरस सलफेट के) घोल के साथ २६–६०° से० के ताप पर मिलाना। घोल की मात्रा वालू की मात्रा से आधी होती है और मिश्रण २–५ मिनट तक किया जाता है। यह विधि सस्ती और शीघ्रतया हो जाती है।

रासायनिक क्रिया के पश्चात्, वालू को कई वार स्वच्छ जल से धोना चाहिए। वालू को तापन (इग्नीशन, उज्ज्वालन) द्वारा भी शुद्ध किया जा सकता है।

1. Draught 2. Flues

किसी भी विधि से शुद्ध करने पर, फेरिक आक्साइड की मात्रा तो कम हो जाती है, परन्तु शुद्ध करने के व्यय के कारण वालू का मूल्य वढ़ जाता है। वालू को यांत्रिक विधि से जल से धोकर और छानकर भी शुद्ध किया जा सकता है। यह विधि सस्ती और व्यावहारिक है। धोने से मिट्टी और सूक्ष्म श्रेणीक्रम की वालू पृथक् हो जाती है। छानने से श्रेणीक्रम में समानता आ जाती है।

धोने का यंत्र—वालू को धोने के कई प्रकार के यंत्र हैं। इन यंत्रों में वालू वहते हुए जल के सम्पर्क में आती है और अशुद्धियाँ जल में वह जाती हैं। वालू से पानी छान लिया जाता है और विशेप यंत्रों द्वारा, तप्त गैस या वाष्प का प्रयोग कर वालू सुखा ली जाती है।

प्रयोगशाला में वालू की परीक्षा—वालू की सफल परीक्षा, एक अच्छे जेवी लेन्स द्वारा प्रयोगशाला में की जा सकती है। इस प्रकार की परीक्षा से निम्न गुण ज्ञात हो जाते हैं—

(१) वालू कणों का आकार और परिमाण।
(२) वालू कणों की ऊपरी सतह पर जमी परत के गुण—यह मिट्टी है अथवा लोह आक्साइड।
(३) वालू में अन्य खनिज पदार्थों की उपस्थिति।

सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा परीक्षण से वालू में अन्य खनिज पदार्थों की उपस्थिति तत्काल ज्ञात हो जाती है।

वालू से भारी खनिज पदार्थों को पृथक् करना

प्लावी[1] विधि द्वारा वालू से भारी खनिज पदार्थ पृथक् किये जा सकते हैं। क्वार्ट्ज़ का विशिष्ट गुरुत्व २.५ से २.८ तक, फेल्सपार का २.४ से २.६ तक और भारी खनिज पदार्थों का २.९ से ४ तक होता है। अतएव यदि वालू को निम्न घोलों में छोड़ा जाय तो क्वार्ट्ज़ और फेल्सपार के कण घोलों में उतराते रहेंगे और भारी खनिज पदार्थ नीचे वैठ जायँगे—(घोल)

(१) पारा-पोटेशियम-आयोडाइड का पानी में वना घोल (विशिष्ट गुरुत्व २.८ से ८.१ तक)।
(२) ब्रोमोफार्म (विशिष्ट गुरुत्व २.८४)।

1. Floatation

(३) मेथिलीन आयोडाइड (विशिष्ट गुरुत्व ३·३)।

घोल के नीचे बैठे हुए पदार्थों को हटा लेने से भारी खनिज पदार्थ बालू से पृथक् हो जाते हैं।

बालू का रासायनिक विश्लेषण—बालू की परीक्षा प्रयोगशाला में रासायनिक विश्लेषण की विधि से की जाती है और विभिन्न आक्साइडों, जैसे सिलिकन, अल्यूमिनियम लोहा, टायटेनियम, कैलशियम, मैगनिशियम, सोडियम, पोटेशियम की उपस्थित नमी की प्रतिशतता और प्रज्ज्वलन हानि[1] (जल जो १००° सें० पर भी नहीं निकल पाता है और कार्बनिक पदार्थ) की मात्रा निश्चित की जाती है।

बालू में लोह की सरल परीक्षा—बालू में उपस्थित लोह की परीक्षा के लिए, प्रयोगशाला में बालू को चूर्ण कर प्रज्वलन करते हैं, तब बालू के रक्त वर्ण की तीव्रता से ज्ञात हो जाता है कि उसमें कितनी मात्रा लोह आक्साइड की है। इस सरल विधि से, अनेक तरह की बालू की तुलना, उनमें विद्यमान लोह की मात्रा के कारण की जा सकती है। जिस बालू में चूने की मात्रा पर्याप्त होती है उसके वर्ण में इतनी तीव्रता नहीं आती।

प्रयोगशाला में बालू का शोधन—परख-नली में जल भरकर और उसमें कुछ मिनट तक बालू को हिलाकर प्रयोगशाला में बालू धोयी जा सकती है। अच्छी बालू, एक ही धोवन में मिट्टी या सिल्ट से मुक्त हो जाती है। धोयी और बिना धोयी बालू के वर्णों की तुलना करने से ज्ञात हो जाता है कि बालू का शोधन जल द्वारा धोने से कहाँ तक सम्भव है।

श्रेणीक्रम—बालू का श्रेणी-निर्धारण चालनियों[2] से छान कर किया जाता है। इस प्रकार के श्रेणीक्रम से सिर्फ कणों की अल्प अक्षरेखा की लम्बाई ज्ञात होती है; परन्तु कणों के आयतन का परिमाण ज्ञात नहीं होता। आदर्श चालनी में गोल छिद्र होने चाहिए जिनका बनाना कठिन होता है। अधिकांश चालनियों की जाली तार की बनी होती है।

चालनियों का अंकन—इंगलैण्ड और अमेरिका में चालनियों का अंकन, प्रति इंच की लम्बाई में स्थित छिद्रों की संख्या के अनुसार होता है। माइनिंग और मेटालर्जी संस्था ने चालनियों के एक ऐसे कुलक[3] का आविष्कार किया है जिसमें छिद्रों का व्यास, चालनी के तारों के व्यास के सम है। ऐसी चालनियों की सम्पूर्ण तालिका यह है—

1. Loss on ignition 2. Sieve 3. Set समूह

छिद्रों की संख्या प्रति इंच	परिमाण मि० मी० में	श्रेणीक्रम
१०	१.२७६	अति स्थूल वालू
१२	१.०५६	
१६	.७९२	स्थूल वालू
२०	.६६५	
३०	.४२१	मध्यम वालू
४०	.३१७	
५०	.२५४	
६०	.२११	सूक्ष्म वालू
७०	.१८०	
८०	.१५७	
९०	.१३९	
१००	.१२७	
१२०	.१०७	

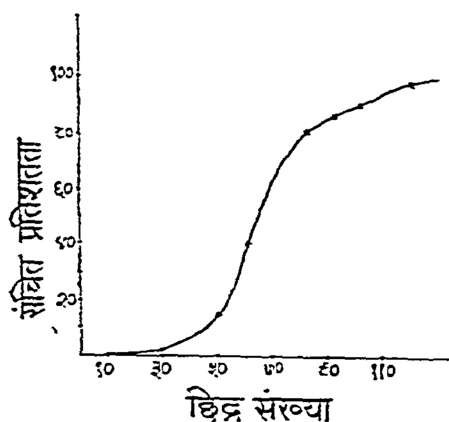
वालू के श्रेणीक्रम का चित्रण[1] करने की विधि—सौ ग्राम वालू को कुलक की प्रत्येक चालनी से छान लेते हैं। प्रत्येक चालनी पर वालू का जो भाग रह जाता है वह तौल लिया जाता है। प्रत्येक चालनी की संचित प्रतिशतता जानने के लिए, प्रत्येक चालनी और उसकी पूर्ववर्ती चालनियों में जो वालू रह जाती है उसका योग किया जाता है। फिर एक लेखा चित्र (ग्राफ) वनाया जाता है जिसमें प्रत्येक अंक की चालनी और उसकी संचित प्रतिशतता अंकित की जाती है। निम्न उदाहरण से लेखा चित्र वनाने की विधि स्पष्ट हो जाती है।

वालू का कुल वजन=१०० ग्राम

चालनी के छिद्र	चालनी में वची वालू का वजन	संचित प्रतिशतता
१०	०.० ग्राम	०.० ग्राम
२०	०.५ „	.५ „
३०	१.० „	१.५ „

1. Recording अभिलेखन

चालनी के छिद्र	चालनी में बची बालू का वजन	संचित प्रतिशतता
५०	१३.० ,,	१४.५ ,,
६०	२६.० ,,	४०.५ ,,
८०	४१.० ,,	८१.५ ,,
९०	४.० ,,	८५.५ ,,
१००	३.० ,,	८८.५ ,,
१२०	६.० ,,	९४.५ ,,
१२० के पार	५.५ ,,	१००.० ,,



[चित्र १—बालू के श्रेणीक्रम का लेखा चित्र]

इस उदाहरण से स्पष्ट है कि बालू का अधिक भाग ६० और ८० छिद्र के मध्य का है। आदर्श बालू में सम परिमाण के कण होते हैं और उनकी संचित प्रतिशतता का चित्रण लेखा चित्र में एक लम्बवत रेखा[1] होती है। यह चित्रण जितना ही उदग्रता से हटता है उतनी ही बालू के श्रेणीक्रम में असमानता आती है।

कांच-निर्माण के उपयुक्त कुछ भारतीय बालुएँ—

प्रदेश	स्थान	(अवसाद) निक्षेप[2] की किस्म।
पंजाब	जैजों (जालन्धर के समीप)	नरम, सहज में चूर होनेवाले, पत्थर के बड़े टुकड़े।
उत्तर प्रदेश	लोघरा, बड़गढ़ (नैनी के समीप)	
	पनहाई (बांदा)	चट्टान

1. Vertical line 2. Deposit

दिल्ली	दिल्ली	अज्ञात
राजस्थान	सवाई माधोपुर, वीकानेर	नरम, सहज में, चूर होनेवाले, पत्थर के वड़े टुकड़े।
"	वरोधिया (वूंदी)	कंकड़
विहार	मंगलहट, पथरघट्टा (राजमहल की पहाड़ियाँ)	वालू-पत्थर
मध्य प्रदेश	जवलपुर	वालू
वम्वई	पेथानी, संखेडा (वड़ोदा)	नदी की वालू, वालू पत्थर
मद्रास	एन्नोर, एन्नामोर	वालू

डा० रामाचरण के अनुसन्धान से ज्ञात हुआ है कि भारतीय नदियों, जैसे गंगा, यमुना, की वालुओं को जल से धोने और चुम्वकीय पृथक्कारक[1] से चालने के पश्चात्, काँच-निर्माण के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

विदेश की कुछ सर्वोत्तम वालुओं की रासायनिक रचना

आक्साइड	ब्रिटिश वालू लिन स्थान की (धुली हुई)	फ्रेंच वालू फान्टेनव्लो स्थान की	वेलजियन वालू	जर्मन वालू होहेनवोका स्थान की	अमेरिकन वालू वर्कले स्प्रिन्ग स्थान की (पिसीचट्टानें)
SiO_2	९८.८२	९९.५०	९८.६४	९९.७०	९९.६५
Al_2O_3	.५६	.२३	.६३	.३५	.११
Fe_2O_3	.०६	.०४	.०६	.०५	.०२
CaO	.१६	—	.३१	—	.१२
MgO	.०२	—	.१३	—	लेश
क्षार	—	—	.४५	—	—
प्रज्वलन हानि	.३३	.२२	.१२	.१०	.२३

1. Separator

कुछ भारतीय वालुओं का रासायनिक विश्लेषण

आक्साइड	स्थान								
	पथरघट्टा	बड़गाढ़	पेथानी	संखेड़ा	एन्नौर	जबलपुर	जैजों	पनहाई	लोघरा
SiO_2	९६.००	९९.९५	९८.१०	९९.३९	९७.५३	९८.०४	६८.३०	९७.५४	९७.५५
TiO_2	—	.०६	.१७	.०७	.०९	.६३	.०७	.०८	.१०
Al_2O_3	१.१५	.३९	.८४	.११	१.०२	.९१	.८२	१.०५	.८९
Fe_2O_3	लेश	.०२	.०४	.०४	.०४	.१४	.२५	.११	.३७
CaO	,,	.११	.१५	.१५	.१३	लेश	.०६	.०५	.०३
MgO	,,	—	.०७	.०५	.१३	.०९	.१७	.०१	.०२
K_2O	२.६०	.०८	—	—	.३८	—	—	—	.०६
Na_2O	—	.०२	—	—	.२४	—	—	—	.०२
प्रज्वलन हानि	.२५	.३६	.६३	.२०	.३५	—	.१४	.२०	.५२
विश्लेषक	जी० मैकडानल्ड	प्रो० वॉसवेल	प्रो० वॉसवेल	प्रो० वॉसवेल	प्रो० वॉसवेल	डा० डुन	डा० डुन	डा० डुन	काँच प्रौद्योगिकी विभाग, शेफील्ड

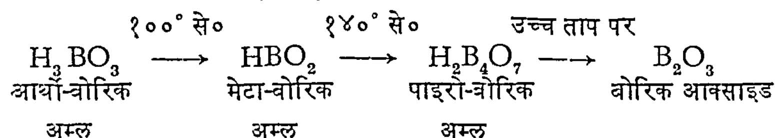
कुछ वालुओं का यांत्रिक विश्लेषण
(प्रोफेसर वॉसवेल द्वारा)

परिमाण	स्थान						
	नैनी	पेथानी	संखेड़ा	फान्टेन ब्लो	लिन (धुली हुई)	बेल्जियम	वर्कलेस्प्रिंग्स
१.मि० मी० से अधिक के कण	—	.५	—	—	—	.७	—
१ मि.मी. से .५० मि.मी. के कण	लेश	११.५	९.९	—	—	६.५	१.५
.५० ,, से .२५ ,, ,, ,,	९१.१	६५.४	७०.७	७०.३	९०.८	९१.०	९७.१
.२५ ,, से .१० ,, ,, ,,	८.४	१९.८	१७.७	२८.३	८.७	१.४	.८
.१० ,, से .०१ ,, ,, ,,	.१	१.४	.५	.६	.२	.४	.२
.०१ ,, से कम के कण	.४	१.४	१.२	.८	.३	—	—

भारत की वालू अमेरिकन अथवा यूरोपियन वालू के समान ही उपयुक्त है।

वोरिक आक्साइड, $B_2 O_3$

वोरिक आक्साइड सिर्फ काँचीय अवस्था में होता है। प्रकृति में यह मुक्त अवस्था में नहीं पाया जाता। वोरिक अम्ल को अति तापन करने (हीटिंग) से वोरिक आक्साइड प्राप्त होता है।



काँच-निर्माण में वोरिक अम्ल या सुहागा का प्रयोग किया जाता है क्योंकि वोरिक आक्साइड नमी को अवशोषण कर शीघ्र वोरिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है।

वोरिक अम्ल—H_3BO_3 यह वहुत से ज्वालामुखीय प्रदेशों, जैसे इटली के टसकेनी प्रान्त, नेवादा, केलीफोर्निया नोवा-स्कोशिया एवं दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी तट पर पाया जाता है। व्यापारिक मात्रा में सुहागा से इसका निर्माण किया जाता है।

सुहागा—$Na_2 B_4 O_7, 10H_2O$ (दानेदार या चूर्ण) व्यापारिक सुहागा, वास्तव में सोडियम-पाइरो-वोरेट है, पर निस्तापित सुहागे[1] $Na_2B_4O_7$ (केलासीय) का भी खूव प्रयोग किया जाता है। केलीफोरनिया में खनिज के रूप में और तिव्वत में टिंकल या सुहागे के रूप में यह पाया जाता है। वोलेविया देश में लाइम वोरेट पाये जाते हैं और इनसे भी सुहागा का निर्माण किया जाता है।

सुहागा एवं वोरिक अम्ल की मुख्य अशुद्धियाँ अल्युमिना चूना, मैगनिशिया एवं क्षार हैं और ये सिलीकेट एवं कार्वोनेट के रूप में पायी जाती हैं। व्यापारिक काँच-निर्माण में ये अशुद्धियाँ हानिकारक नहीं हैं।

वोरिक आक्साइड युक्त काँचों के गुण

सुहागा और वोरिक अम्ल, काँच-द्रवण में द्रावकों[2] का कार्य करते हैं, परन्तु इनमें सोडियम कार्वोनेट से कम द्रावण क्षमता है। ये वहुत से वर्णक आक्साइडों को घोल लेते हैं। काँच में वोरिक आक्साइड का उपयुक्त मात्रा में योग करने से, प्रसार गुणांक कम होता है और तनाव शक्ति एवं तापीय[3] सहन शक्ति वढ़ती हैं। वोरिक आक्साइड की अल्प मात्रा से, काँच में जल-प्रतिरोधकता वढ़ जाती है। काँच की वस्तुओं में, जैसे

1. Calcined borax 2. Fluxes 3. Thermal

तापमापी नलियों, लालटेन की चिमनियों और भोजन पकाने के पात्रों में, जिनको आकस्मिक ताप-परिवर्तन सहना पड़ता है, बोरिक आक्साइड की मात्रा अधिक से अधिक और क्षार की मात्रा कम से कम रखी जाती है। बोरिक आक्साइड से काँच में विशिष्ट वर्तन[1] और विक्षेपण[2] आता है और इसलिए इसका उपयोग प्रकाशीय काँच-निर्माण में बहुत अधिक होता है। यह काँच के घनत्व को बढ़ाता है और निस्तापन ताप को ऊँचा करता है। सिलिका के स्थान पर बोरिक आक्साइड के प्रयोग से काँच का द्रवण शीघ्र होता है, काँच अधिक तरल हो जाता है, और उसकी श्यानता-परास[3] एवं विक्षेपण-क्षमता बढ़ जाती है। परन्तु यदि बोरिक आक्साइड की मात्रा और भी अधिक बढ़ा दी जाय तो ऊष्म-सह[4] पदार्थों का संक्षारण शीघ्रता से होने लगता है।

फासफोरिक आक्साइड, P_2O_5

काँच में फ़ासफ़ोरिक आक्साइड के प्रवेशन के लिए

(अ) कैलशियम फ़ासफ़ेट $Ca_3(PO_4)_2$ और

(आ) सोडियम फ़ासफ़ेट $Na_2H(PO_4)$, $1(H_2O$ का प्रयोग किया जाता है।

फ़ासफ़ोरिक आक्साइड युक्त काँचों के गुण

फ़ासफ़ोरिक आक्साइड युक्त काँच देखने में बहुत अच्छा लगता है और इस कारण कभी-कभी खाने-पीने के पात्रों के रूप में इसका उपयोग किया जाता है। यह काँच में विशिष्ट वर्तन और विक्षेपण उत्पन्न करता है, इसलिए कुछ विशेष प्रकार के प्रकाशीय काँचों में इसका उपयोग किया जाता है। फ़ासफेट काँच खुले रखने से, शीघ्र क्षीण हो जाते हैं और इस कारण ऐसे काँचों के बने हुए लेन्सों की प्रकाशीय-संहति[5] में सुरक्षा करना आवश्यक हो जाता है। फ़ासफेट काँच, सिलिका काँचों की अपेक्षा शीघ्र द्रवित होते हैं। हाल में ही ऐसे काँच तैयार किये गये हैं जिनमें अल्युमिनियम फ़ासफ़ेट बहुत अधिक मात्रा में हैं और इन काँचों पर हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल का कोई असर नहीं पड़ता।

आर्सेनियस आक्साइड, As_4O_6

यद्यपि यह भी अम्लीय आक्साइड है, पर काँच-निर्माण में यह अधिकतर शोधक, द्रावक या काँच को वर्णहीन करने के उपयोग में आता है।

1. Refraction 2. Dispersion 3. Viscosity 4. Refractory
5. Optical system

सोडियम आक्साइड, Na_2O

सोडियम यौगिकों के प्राप्ति स्थान—

(१) सोडियम क्लोराइड $NaCl$—सोडियम लवणों में सोडियम क्लोराइड ही अधिक मात्रा में बहुत-से स्थानों में पाया जाता है। यह सागर के जल में और शैल-लवण के रूप में पाया जाता है, किंतु काँच-निर्माण में इसका प्रयोग नहीं किया जाता, क्योंकि ऊँचे ताप पर यह उड़नशील है और केवल जलवाष्प की उपस्थिति में सिलिका द्वारा यह विच्छेदित किया जा सकता है। अविच्छेदित[1] सोडियम क्लोराइड, काँच में उपलीयता[2] उत्पन्न कर सकता है।

(२) सोडियम सल्फेट या साल्टकेक Na_2SO_4—इसके निक्षेप[3] स्पेन, पेरू, हंगरी, साइबेरिया और अमेरिका के पश्चिमी राज्यों में पाये जाते हैं। भारतवर्ष में यह राजस्थान में पाया जाता है। सोडियम क्लोराइड से इसका निर्माण दो विधियों से होता है :—(१) लेवलान्क विधि, (२) हारग्रीव राबिन्सन विधि।

निम्न उद्योगों से भी यह उपजात[4] के रूप में प्राप्त होता है—

(अ) स्टासफर्ट (जर्मनी) का पोटाश उद्योग,

(आ) सोडियम नाइट्रेट और सलफ्युरिक अम्ल द्वारा नाइट्रिक अम्ल निर्माण का उद्योग,

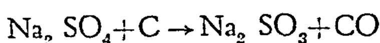
(इ) पोटेशियम डाइक्रोमेट निर्माण का उद्योग—यह केवल हरा काँच बनाने के उपयुक्त है।

नमी और साल्टकेक—साल्टकेक शीघ्र ही नमी अवशोषण करता है और जल-योजित ग्लाउबर्स लवण ($Na_2SO_4, 10H_2O$) के रूप में परर्वातत हो जाता है, जो कि वायु में खुला रखने पर कठोर पिण्ड के रूप में बदल जाता है और जिसको पीसना कठिन होता है। इसको शुष्क स्थान में संचित करना चाहिए।

काँच द्रावण में साल्टकेक की रासायनिक प्रतिक्रिया साल्टकेक और सिलिका में रासायनिक प्रतिक्रिया प्राय: १५००° सें० पर होती है। सोडियम-सलफाइट Na_2SO_3 और सिलिका में रासायनिक प्रतिक्रिया तुरन्त होती है। इसलिए काँच-मिश्रण[5] में, कुछ अवकारक,[6] जैसे एन्थ्रेसाइट या अच्छा कोयला मिलाने से, साल्टकेक को सलफाइट में अवकारित किया जा सकता है। टैंक भट्ठियों में, कोई ऐसा पदार्थ प्रयुक्त करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि ऐसी भट्ठियों का वायुमण्डल

1. Undecomposed 2. Opalescent effect 3. Deposit 4. By product
5. Batch 6. Reducing agent

स्वयं ही अवकारक होता है, परन्तु फिर भी व्यवहार में, किसी रूप में कार्बन का सर्वदा योग किया जाता है।



$$Na_2\ SO_4 + C \rightarrow Na_2\ SO_3 + CO$$

सिद्धान्ततः अवकरण के लिए, कार्बन की मात्रा साल्टकेक के भार की ८.५ प्रतिशत होनी चाहिए, परन्तु व्यवहार में साधारणतया ५ प्रतिशत का ही योग किया जाता है। यदि कार्बन का अधिक मात्रा में योग किया जाय तो अवकरण के कारण सलफाइट सलफाइड में परिवर्तित हो जायगा और काँच में अम्बर वर्ण[1] आ जायगा। साल्टकेक का अनवकृत भाग काँच की सतह पर 'फ्लक्स' 'गाल' या लवण के रूप में उतराने लगता है। कार्बन की अत्यधिक मात्रा काँच में झाग उत्पन्न कर सकती है। काँच मिश्रण में मिलाने के पूर्व कार्बन को भली-भाँति चूर्ण कर साल्टकेक के साथ मिश्रित करना चाहिए।

(३) सोडियम कार्बोनेट (सोडा ऐश), $Na_2\ CO_3$ यह निम्न स्थानों पर प्राप्त होता है—

(अ) प्राकृतिक सोडा या ट्रोना (Na_2CO_3, $NaHCO_3$, H_2O) के रूप में नेवादा और दक्षिणी केलीफोर्निया की झीलों में,

(आ) मगाडी सोडा—सोडा का यह सबसे बड़ा प्राकृतिक निक्षेप ब्रिटिश पूर्व अफ्रीका में नैरोबी से प्रायः ६० मील की दूरी पर है। इसको निस्तापन करने पर सोडा ऐश प्राप्त होता है जिसमें सोडियम कार्बोनेट की मात्रा ९९ प्रतिशत होती है।

सोडा ऐश का निर्माण दो विधियों द्वारा होता है—

(अ) लेवलान्क विधि, (आ) सालवे विधि।

इन दो प्रकार के सोडा ऐशों के गुणों में कोई अन्तर नहीं होता।

सोडा ऐश की दो किस्में होती हैं—(१) भारी सोडा ऐश (२) हलका सोडा ऐश, जो भारी सोडा ऐश से डेढ़ गुना हलका होता है। काँच-द्रावण के लिए हलका सोडा ऐश हानिकर है क्योंकि वहति (वहाव)[2] इसको आसानी से भट्ठी की नालियों[3] में ले जाता है और इसको ढोने और बाँधने में अधिक व्यय पड़ता है। इसके प्रयोग से कुछ लाभ भी है, जैसे काँच-मिश्रण में अधिक समानता आती है और काँच-मिश्रण के पदार्थों पर हलके सोडा ऐश के सरलतापूर्वक लिपट जाने के कारण, काँच का द्रवण सुगम हो जाता है।

1. Amber colour 2. Draught 3. Flues

नमी और सोडा ऐश—सोडा ऐश वायु से नमी और कार्बन डाइ-आक्साइड का शीघ्र अवशोपण करता है, इस लिए उसे शुष्क स्थान पर संचित करना चाहिए। सोडा ऐश का मूल्याङ्कन उससे प्राप्त सोडियम आक्साइड (Na_2O) की प्रतिशत मात्रा से किया जाता है। अत्यन्त शुद्ध सोडा ऐश में ५८·४९ प्रतिशत सोडियम आक्साइड होता है।

काँच-निर्माण में सोडा ऐश एवं साल्टकेक के उपयोग की तुलना

काँच-मिश्रण में सोडा ऐश अथवा साल्टकेक का प्रयोग कई वातें विचारने के पश्चात् किया जाता है।

(अ) मूल्य—आरम्भ में सोडा ऐश का साल्टकेक से अधिक मूल्य था, परन्तु साल्टकेक युक्त मिश्रण को द्रावण के लिए अधिक ताप की आवश्यकता होती थी, इसलिए सोडा ऐश को प्राथमिकता दी जाती थी। जव काँच-द्रावण के लिए अधिक ताप की भट्ठियों का आविष्कार हुआ तव साल्ट-केक का उपयोग होने लगा। सालवे विधि के आविष्कार ने सोडा-ऐश का मूल्य वहुत कम कर दिया है। सोडा ऐश से ५८.५ प्रतिशत और साल्टकेक से ४३.७ प्रतिशत सोडियम आक्साइड (Na_2O) प्राप्त होता है।

(आ) द्रावण ताप[1]—सोडा ऐश युक्त काँच-मिश्रण का कम ताप पर ही द्रवण हो जाता है जव कि साल्टकेक और सिलिका में रासायनिक प्रतिक्रिया ऊँचे ताप पर होती है। कम ताप के द्रवण में, ईंधन में वहुत कुछ किफायत होती है। ऊष्मसह पदार्थों का कम संक्षारण होता है और भट्ठी अधिक दिनों तक चलती है। सोडा ऐश की प्रतिक्रिया से काँच में अधिक मात्रा में शीघ्रता पूर्वक गैस का निष्कासन होता है जिसके परिणामस्वरूप रासायनिक क्रिया से वचे हुए कुछ सिलिका के कण काँच की सतह पर छादनी[2] वना दे सकते हैं। यथार्थ में, यदि काँच के द्रावण में सिर्फ सोडा ऐश क्षार का उपयोग किया जाय तो काँच कदाचित् ही वुलवुले रहित[3] होगा। साल्टकेक से प्रतिक्रिया केवल ऊँचे ताप पर होती है, इसलिए यदि सोडा ऐश और साल्टकेक का एक साथ ही प्रयोग किया जाय तव सोडा ऐश की प्रतिक्रिया से वची हुई सिलिका पर साल्टकेक की प्रतिक्रिया होती है और इस कारण काँच की सतह पर कोई सिलिका की छादनी वनने

1. Temperature of founding 2. Scum 3. Seed-free

नहीं पाती। ऊँचे ताप पर गैस के निष्कासन से काँच भी अधिक बुलबुले-रहित होता है।

(इ) काँच के गुण—यह अभी निश्चय नहीं हो पाया है कि एक ही प्रकार के क्षार के प्रयोग से काँच के गुणों पर क्या प्रभाव पड़ता है। तथापि सोडा ऐश के द्वारा बने काँच, कम भंगुर होते हैं और वैज्ञानिक काँच धमन के लिए अधिक उपयुक्त होता है जब कि साल्टकेक के द्वारा बने काँच ऊँचे तापों पर अधिक तरल, निर्माण के समय अधिक आनन्ददायक, मज़बूत, कठोर और अधिक स्थायी होते हैं। सलफेट से बने हुए काँच, ८५०° सें० ताप पर कम श्यान[1] होते हैं और उनका कोमलांक[2] ऊँचा होता है। साल्टकेक द्वारा बने हुए काँच अधिक लहरिया-दार और धागेदार होते हैं। कुछ ऐसे काँचों में कलिलमय गंधक के कारण नीला वर्ण झलकने लगता है। साल्टकेक के काँचों को अवकारक—जैसे कार्बन—की आवश्यकता पड़ती है, किन्तु यह यदि अधिक मात्रा में संकलित किया जाय तो काँच अम्बर वर्ण का हो जाता है और यदि कम मात्रा में संकलित किया जाय तो काँच की सतह पर 'झाग' याने 'काँच गाल' या "लवण जल" उत्पन्न हो जाता है। वे काँच जिनमें अधिक क्षारीय पदार्थ साल्टकेक का प्रयोग किया जाता है, कार्यकक्ष के ठंडे भागों में विकाचरण[3] होकर सलफेट पत्थर उत्पन्न कर सकते हैं।

सोडियम आक्साइड-युक्त काँचों के गुण

सोडियम आक्साइड और सिलिका के संयोजन से जल में घुलनेवाला 'जल-काँच' बनता है। इसको स्थायी बनाने के लिए कोई द्विभास्मिक (द्वैपीठिक)[4] आक्साइड, जैसे, कैलशियम या सीस आक्साइड को भी संकलित करना पड़ता है। सोडा ऐश शक्तिशाली द्रावक है, अतएव इसकी मात्रा जितनी ही अधिक होती है उतना ही शीघ्र द्रवण होता है। जिन काँचों में सोडियम आक्साइड की मात्रा अधिक होती है वे नरम होते हैं और उन्हें सहज में ही फूंककर रूप दिया जा सकता है। काँच में सोडियम आक्साइड की वृद्धि से काँच का श्यान परास[5], प्रसार-गुणांक बढ़ जाता है, परन्तु तनन शक्ति[6], प्रत्यास्थता[7], ऊष्मा-चालकता, तापीय सहन शक्ति, निस्तापन ताप और स्थायित्व कम हो जाते हैं। सोडियम आक्साइड की अधिकतम मात्रा १८ प्रतिशत तक

1. Viscous 2. Softening point 3. Devitrification 4. Dibasic
5. Viscosity range 6. Tensile strength 7. Elasticity

हो सकती है और इससे अधिक मात्रा के काँच ऋतु-क्षरण से नष्ट हो जाते हैं और कुछ समय पश्चात् धुँधले और मैले दीखने लगते हैं।

पोटेशियम आक्साइड, K_2O

प्राप्ति-साधन—प्रकृति में यह यथेष्ट मात्रा में सिलिकेटों में, जैसे फेल्सपार और अवरक के रूपों में पाया जाता है, पर इनसे पोटाश यौगिकों का निस्सारण, आर्थिक दृष्टि से लाभकर नहीं है।

पोटेशियम आक्साइड के काँच में प्रवेशन के लिए मुख्यत: पोटेशियम कार्बोनेट (K_2CO_3) का उपयोग किया जाता है, जिसका निर्माण निम्न पदार्थों से होता है—

(अ) प्राकृतिक पोटाश के निक्षेप जो ऊपरी अलसेस लोरेन और स्टैसफर्ट (जर्मनी) में पाये जाते हैं। काँच-निर्माण में जो पोटाश अथवा यवक्षार[1] काम में लाये जाते हैं, वे जलयोजित कार्बोनेट हैं और उनमें पोटेशियम कार्बोनेट की मात्रा ८३ से ८५ प्रतिशत होती है।

(आ) अमेरिका में नेबरास्का, केलीफोर्निया और ऊटा की कुछ बड़ी झीलों का जल वाष्पन करने पर पोटेशियम कार्बोनेट प्राप्त होता है।

(इ) लकड़ी, चुकन्दर का शीरा और कुछ पृथ्वी के पौधों की भस्म से भी पोटेशियम कार्बोनेट प्राप्त किया जा सकता है।

काँच में पोटेशियम आक्साइड के प्रवेशन के लिए, कभी-कभी दानेदार कास्टिक पोटाश KOH का भी उपयोग किया जाता है।

नमी और पोटेशियम कार्बोनेट

पोटेशियम कार्बोनेट अति प्रक्लेद्य[2] होता है और नमी को शीघ्र अवशोषणकर पहले लेपी[3] और फिर घोल में परवर्तित हो जाता है, इसलिए इसको शुष्क स्थान में संचित करना चाहिए।

काँच में सोडियम आक्साइड के स्थान पर पोटेशियम आक्साइड के प्रयोग का प्रभाव

यदि सोडियम आक्साइड के स्थान पर पोटेशियम आक्साइड का प्रयोग किया जाता है तो काँच अधिक चमकदार, अच्छे वर्ण का और अधिक कठोर होता है। पोटाश-युक्त काँच सोडा-युक्त काँच की अपेक्षा ऊँचे ताप पर और अधिक समय में द्रवित

1. Pearl ash 2. Deliquescent 3. Paste

होता है और कार्य करने के ताप पर अधिक श्यान होता है। क्योंकि यह पोटाश सोडा से अधिक मूल्यवान् है, अतः इसका प्रयोग केवल इन काँचों के निर्माण में होता है—

(१) सीस-युक्त केलासित काँच—जिसमें अधिक चमक और अधिक विक्षेपण की आवश्यकता है।

(२) पोटाश-चूना-सिलिका युक्त, वोहीमियन काँच जिसका कोमलांक ऊँचा है।

(३) प्रकाशीय काँच—जिसमें विशिष्ट प्रकाशीय स्थिरांक की आवश्यकता होती है।

पोटाश काँच में द्रावक का कार्य करता है। फेरस आक्साइड के कारण उत्पन्न वर्ण, पोटाश युक्त काँच में सोडा युक्त काँच की अपेक्षा कम स्पष्ट होता है; विशेषकर सीस युक्त काँचों में, अतः पोटाश काँच सरलतापूर्वक वर्णहीन किये जा सकते हैं। समान प्रतिशत के पोटाश-चूना युक्त काँच, सोडा-चूना युक्त काँचों की अपेक्षा अधिक स्थायी होते हैं। जिनमें सोडियम आक्साइड और पोटेशियम आक्साइड एक साथ समान भार में हों, वे काँच उन काँचों से जिनमें एक ही क्षारीय आक्साइड होता है, सहज में द्रवणशील, अच्छे प्रकार से शुद्ध एवं कार्य-योग्य और अधिक स्थायी होते हैं। जव उपस्थित क्षार का भार एक समान हो तव सोडा-चूना युक्त काँच की अपेक्षा पोटाश-चूना युक्त काँच का घनत्व और वर्त्तनांक कम होता है। सीस युक्त काँचों में, जिनमें क्षार समान भार में है, सोडा युक्त काँच की अपेक्षा पोटाश युक्त काँच का घनत्व और वर्तनांक कम होता है, किन्तु इन्हीं काँचों में जव क्षार सम अणु भारों में उपस्थित होते हैं तव सोडा युक्त काँच की अपेक्षा पोटाश युक्त काँच का वर्तनांक कुछ अधिक हो जाता है। चूना युक्त काँच की ही तरह सीस युक्त काँच में दोनों क्षार (सोडा और पोटाश) उपस्थित होते हैं तो वह काँच उसकी अपेक्षा जिसमें एक ही क्षार होता है अधिक प्रतिरोधी (रेजिस्टैण्ट) होता है।

लिथियम आक्साइड, Li_2O

लिथियम आक्साइड अथवा लिथिया मुक्त अवस्था में नहीं पाया जाता। काँच-निर्माण में लिथियम कार्वोनेट का प्रयोग किया जाता है। सोडा और पोटाश की अपेक्षा लिथिया अधिक शक्ति का द्रावक है। अधिक मूल्य होने के कारण काँच-निर्माण में इसका वहुत कम उपयोग किया जाता है।

कैलशियम आक्साइड, CaO

प्राप्ति-स्रोत—

(१) कैलशियम कार्वोनेट, $CaCO_3$—यह कई रूपों में पाया जाता है।

(अ) आइसलैण्ड स्पार के पारदर्शी केलास।

(आ) कैलसाइट, कैल्कस्पार, लाइम-स्पार और संगमरमर के अपारदर्शी केलास,

(इ) सेटिनस्पार के रेशेदार केलास,

(ई) चूना पत्थर और चाक, (खड़िया),

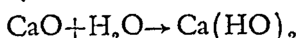
(उ) समुद्री घोंघे।

भारत में, मध्य प्रदेश के कटनी, सतना, रायपुर, मैहर और आसाम प्रदेश के सिलहट स्थानों में उच्च कोटि का चूना पत्थर पाया जाता है।

(२) जिप्सम (हरसोंठ), $CaSO_4\ 2H_2O$

(३) वरा-चूना (वेबुझा चूना, कैलशियम आक्साइड), CaO—यह चूना-पत्थर को निस्तापन कर प्राप्त किया जाता है। यह शीघ्र ही नमी का अवशोपण करता है। इसको चूर्ण के रूप में संचित करना चाहिए।

(४) वुझा-चूना, $Ca(HO)_2$—कैलशियम आक्साइड को वुझाने पर यह प्राप्त होता है।

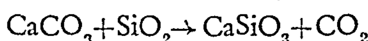


$$CaO + H_2O \rightarrow Ca(HO)_2$$

यह कार्बन-डाय-आक्साइड का अवशोपण कर फिर से कैलशियम कार्बोनेट में परिवर्तित हो जाता है, अतः इसकी रचना की समय-समय पर जाँच करनी चाहिए।

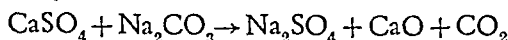
काँच-द्रावण में कैलशियम यौगिकों की रासायनिक प्रतिक्रिया

कैलशियम कार्बोनेट अपेक्षया कम ताप पर ही सिलिका द्वारा विच्छेदित हो जाता है और कैलशियम सिलिकेट वन जाता है।



$$CaCO_3 + SiO_2 \rightarrow CaSiO_3 + CO_2$$

जिप्सम ($CaSO_4$) केवल ऊँचे ताप पर क्रियाशील होता है और इसलिए इसका प्रयोग साल्टकेक के स्थान पर किया जा सकता है। हरसोंठ (जिप्सम) को चूर्ण के रूप में, वगैर पिण्ड वनाये, अनिश्चित काल तक संचित किया जा सकता है, जव कि साल्टकेक संचित करने से उसमें कठोर पिण्ड वन जाते हैं। काँच-द्रावण में, हरसोंठ प्रथम तो जल रहित होता है और फिर सोडा-ऐश के साथ क्रियाशील होकर, सोडियम सल्फेट वनाता है—



$$CaSO_4 + Na_2CO_3 \rightarrow Na_2SO_4 + CaO + CO_2$$

चूना-पत्थर और लाईमस्पार में अशुद्धियाँ—ये अशुद्धियाँ, लोह आक्साइड, अल्युमिना, मैगनीशिया और अम्ल में अविलेय अवशेप हैं। काँच-मिश्रण में चूना-

पत्थर २० प्रतिशत से अधिक नहीं होता, अतः इसमें लोह की उपस्थिति का इतना महत्त्व नहीं है जितना कि बालू या क्षार में होता है।

टुकड़ों का परिमाण—चूना-पत्थर को चूर्ण रूप में पीसने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह द्रुत सोडा ऐश या साल्टकेक में घुल जाता है, परन्तु चौथाई इंच से अधिक परिमाण के टुकड़े प्रयोग में नहीं लाने चाहिए।

काँच-निर्माण में चूना-पत्थर, बेबुझा चूना[1] और बुझा चूना की आपेक्षिक उपयोगिता

निम्न तत्त्वों को ध्यान में रखते हुए ही आपेक्षिक उपयोगिता का विचार किया जा सकता है।

(१) मूल्य—चूना-पत्थर का उपयोग ही सबसे सस्ता पड़ता है। इसको सिर्फ तोड़ना पड़ता है। निस्तापन करने से इसका मूल्य बढ़ जाता है।

(२) अशुद्धियाँ—चूना-पत्थर को निस्तापन करने से कार्बनिक अशुद्धियाँ नष्ट हो जाती हैं, अतः आधुनिक भट्ठियों द्वारा निर्मित बेबुझा चूना (जीवचूर्णक) एवं बुझा-चूना, मौलिक चूना-पत्थर की अपेक्षा अधिक शुद्ध हो सकते हैं, परन्तु यदि ये गलत विधि से बनाये जायँ तो उनमें और भी अधिक अशुद्धियाँ सम्मिलित हो सकती हैं।

(३) रचना[2]—चूना-पत्थर की रचना स्थिर होती है, किन्तु बेबुझा चूना और बुझा चूना दोनों की रचना संचय और हवा में खुले रहने से बदल जाती है।

(४) प्रयोग—बेबुझे चूने और बुझे चूने को सरलतापूर्वक चूर्ण किया जा सकता है। चूना-पत्थर को यंत्र द्वारा ही तोड़ा जा सकता है।

(५) द्रावण—चूना-पत्थर और बुझे चूने से द्रावण के समय गैस का निकास होता है जो काँच-शोधन में उपयोगी होता है।

चूना युक्त काँचों के गुण

कैलशियम आक्साइड काँच को बहुत अधिक रासायनिक स्थायित्व देता है। चूना शक्तिशाली द्रावक है और सिलिका पर इसकी प्रतिक्रिया काफी निम्न ताप पर होती है। काँच में कैलशियम आक्साइड की अधिक मात्रा होने पर, काँच में विकाचरण होने की प्रवृत्ति आ जाती है जिससे वोलेसटोनाइट बन जा सकता है। चूने की मात्रा बढ़ने से, काँच का श्यानता-परास कम हो जाता है। अधिक ताप पर, अधिक

1. Quicklime जीवचूर्णक 2. Composition

चूना युक्त काँच, अधिक सोडा युक्त काँचों की अपेक्षा अधिक तरल होते हैं। हस्तकार्य और अर्धस्वतः चालित[1] यंत्रों के लिए अधिक चूना युक्त काँच प्रयोग में लाया जाता है जो कि शीघ्र ही ठोस हो जाता है। काँच में चूने की मात्रा बढ़ाने से, काँच की ऊष्मा-चालकता[2], निस्तापन-ताप[3], तनन शक्ति, तापीय सहन-शक्ति और स्थायित्व बढ़ जाते हैं और प्रसार गुणांक कम हो जाता है।

बैरियम आक्साइड, BaO

प्राप्ति-साधन—विथेराईट $BaCO_3$—यह प्रकृति में पाया जाता है। काँच-निर्माण में, अधिकतर बैरियम कार्बोनेट यौगिक प्रयोग में लाया जाता है।

इसमें सिलिका, चूना, मैगनिशिया, अल्युमिना और लोह आक्साइड अशुद्धियाँ साधारणतया पायी जाती हैं। एक अच्छे नमूने को अम्ल में पूर्णरूप से घुल जाना चाहिए और उसमें लोह की मात्रा लेशमात्र ही होनी चाहिए।

(२) बराईट या भारी-स्पार, $BaSO_4$—प्रकृति में यह यथेष्ट मात्रा में पाया जाता है। बेरियम कार्बोनेट का निर्माण विथेराईट से होता है। भारत में, मद्रास प्रदेश के करनाल (कुरनूल ?) नगर में यह पाया जाता है।

काँच-द्रावण में बेरियम यौगिकों की रासायनिक प्रतिक्रिया

बेरियम कार्बोनेट और सिलिका की प्रतिक्रिया से बेरियम सिलिकेट बनता है और कार्बन-डाय-आक्साइड गैस का निष्कासन[4] होता है। यदि काँच-मिश्रण में बेरियम सलफेट का प्रयोग किया जाता है तो साथ में किसी अवकारक का भी प्रयोग करना पड़ता है। साधारणतः बेरियम सल्फेट के भार की मात्रा का ४ से ७ प्रतिशत कोयला या कोक, काँच-मिश्रण में सम्मिलित किया जाता है।

बेरियम आक्साइड युक्त काँचों के गुण

काँच में चूने की अपेक्षा बेरियम आक्साइड चमक, शक्ति और प्रत्यास्थता बढ़ाता है। यह काँच का स्थायित्व बढ़ाता तो है, पर चूने के बराबर नहीं बढ़ाता। कैलशियम कार्बोनेट की अपेक्षा बेरियम कार्बोनेट की प्रतिक्रिया ऊँचे ताप पर होती है। यह काँच का घनत्व और वर्तनांक[5] बढ़ाता है, पर सीस से कम बढ़ाता है। कठोरता और प्रसार गुणांक प्रायः चूना युक्त काँच के समान ही हैं। बेरियम युक्त काँच, सीस युक्त

1. Semi automatic 2. Heat conductivity 3. Annealing temperature
4. Evolution 5. Refractory index

काँचों की अपेक्षा ऊँचे ताप पर अधिक तरल, और कम श्यानता-परास के होते हैं, अतएव पीडित वस्तुओं[1] के निर्माण के लिए अधिक उपयुक्त हैं। बेरियम युक्त काँचों का खुले पात्रों में द्रावण किया जा सकता है, परन्तु सीस युक्त काँचों के भट्ठी की गैसों से अवकृत होने का भय रहता है। बेरियम युक्त काँच, सीस युक्त काँचों की तरह ही कार्य कर सकते हैं, यद्यपि वे उसकी अपेक्षा कुछ अधिक कठोर होते हैं। बेरियम युक्त काँच, अम्ल पालिश के योग्य नहीं होते। बेरियम युक्त काँच, बेरियम आक्साइड के विशेष विक्षेपण एवं वर्तनांक के गुणों के कारण प्रकाशीय काँच-निर्माण में बहुत उपयोग में लाये जाते हैं। अधिक बेरियम आक्साइड युक्त काँचों में विकाचरण[2] की प्रवृत्ति होती है और ऊष्मसह[3] पदार्थों का संक्षारण होता है।

सीस आक्साइड, PbO

प्राप्ति के साधन—(१) मुरदासंख या पीला सीस आक्साइड, PbO.

(२) लाल सीस या मिनियम, Pb_3O_4—क्योंकि इसमें सर्वदा कुछ अंश मुरदासंख का भी होता है, अतः इसका रंग पीले से चटकीला लाल तक होता है। लाल सीस की रचना, सीस आक्साइड की उपलब्धता की मात्रा से व्यक्त की जाती है। शुद्ध लाल सीस ९८.६७ प्रतिशत सीस आक्साइड (PbO) के समान है। सीस आक्साइडों में सिलिका, लोह, ताँबा, वंग (टिन) सीस सलफेट, बेरियम सलफेट और सीस धातु की अशुद्धियाँ हो सकती हैं।

काँच में मुरदासंख और लाल सीस के प्रयोग से आपेक्षिक लाभ

मुरदासंख[4] लाल सीस से सस्ता है, परन्तु इसमें बहुधा कुछ सीस धातु बिना ऑक्सीकृत हुए रह जाता है। लाल सीस ५५०° सें० के ऊपर शीघ्र विच्छेदित हो जाता है, और जो अतिरिक्त आक्सीजन निकलता है उसके द्वारा सीस आक्साइड सीस धातु में अवकृत[5] होने से रुक जाता है। परन्तु इस आक्सीजन से काँच-शोधन में कोई सहायता नहीं मिलती, क्योंकि यह काँच द्रवित होने के पूर्व ही निकलता है।

सीस आक्साइड युक्त काँचों के गुण

सीस आक्साइड, काँच का घनत्व और वर्तनांक बढ़ाता है और इस कारण यह प्रकाशीय काँचों[6], भोजन एवं पेयपात्रों और कृत्रिम रत्नों के निर्माण के उपयोग में आता है। सीस युक्त काँच, चूना युक्त काँचों से नरम होते हैं और शीघ्र ही काटे तथा पालिश किये

1. Pressed wares 2. Devitrification 3. Refractory 4. Litharge
5. Reduced 6. Optical glass

जा सकते हैं। पोटाश क्षार का सीस युक्त काँच सबसे अधिक चमकदार होता है। अधिकतर वर्णक[1], सीस युक्त काँच में चूना युक्त काँचों की अपेक्षा अच्छा प्रभाव उत्पन्न करते हैं। भार की समान मात्रा होते हुए, चूना युक्त काँच, सीस युक्त काँचों की अपेक्षा अधिक घुलनशील और कम स्थायी होते हैं। सीस युक्त काँचों का स्थायित्व, कुछ बोरिक आक्साइड के योग से बढ़ जाता है। चूना युक्त काँचों की अपेक्षा, सीस युक्त काँच भट्ठी के ऊष्मसह पदार्थों का अधिक संक्षारण करते हैं।

सीस युक्त काँचों का द्रावण—आरम्भ में सीस युक्त काँच सिर्फ बंद पात्रों में ही द्रवित किये जाते थे, परन्तु अब भट्ठियों में उन्नति हो जाने के कारण खुले पात्र (पॉट) भी प्रयोग में लाये जा रहे हैं। काँच मिश्रण या काँच के उपादान (बैच) में कोई अवकारक पदार्थ नहीं होना चाहिए, पर उसमें कोई आक्सीकारक पदार्थ, शोरा-जैसा अवश्य होना चाहिए। उत्तम तो यह है कि भट्ठी का आन्तरिक वायुमण्डल आक्सीकरण युक्त हो। द्रावण ऊँचे ताप पर करना चाहिए जिससे वह न्यूनतम समय में हो। इन्हीं कारणों से साल्टकेक और बराईट जिन्हें अवकरण करने के लिए कार्बन की आवश्यकता होती है, सिलीनियम और गंधक जो स्वयं अवकारक हैं, सीस युक्त काँच-निर्माण में प्रयोग में नहीं लाये जा सकते हैं।

अलमुनियम आक्साइड, Al_2O_3

प्राप्ति-साधन—(१) अल्युमिनियम आक्साइड या निस्तापित[2] अल्युमिना; Al_2O_3—प्रकृति में यह कुरंदम, लाल, नीलम और एमरी के रूपों में पाया जाता है। इसका निर्माण अल्युमिनियम हाइड्रो आक्साइड से किया जाता है।

(२) अल्युमिनियम हाइड्रो आक्साइड या जलयोजित अल्युमिना, $Al(OH)_3$ प्रकृति में यह बाक्साइट (Al_2O_3, $2H_2O$) के रूप में पाया जाता है और इससे जलयोजित अल्युमिना का निर्माण किया जाता है, जिसको निस्तापन करने से अल्यू-मिनियम आक्साइड प्राप्त होता है।

(३) केयोलिन, चीनी मिट्टी : Al_2O_3, $2SiO_2$ $2H_2O$

(४) फेल्सपार, जैसे—

आर्थोक्लेज़ (K_2O, Al_2O_3, $6SiO_2$)
अलबाईट (Na_2O, Al_2O_3, $6SiO_2$)
एनॉरथाइट (CaO, Al_2O_3, $2SiO_2$)

1. Colouring agents 2. Calcined

पोटाश-युक्त फेल्सपारों की रचना स्थिर होती है और यह इंगलैण्ड, नार्व, जर्मनी, उत्तरी अमेरिका और भारत में पाये जाते हैं। काँच में अल्युमिना के सम्मिलन के लिए फेल्सपार का ही प्रयोग किया जाता है। फेल्सपार सस्ता, शुद्ध तथा सहज में द्रवणीय होता है और इसकी रचना में वही आक्साइडें होती हैं जिनसे कि काँच बनता है।

(५) नेफलीन; $Na_2O\ Al_2O_3\ 2SiO_2$ और फोनोलिथ पत्थर।

(६) अल्युमिना युक्त बालू—अधिक मात्रा में केयोलिन एवं फेल्सपार युक्त बालू भी बहुधा प्रयोग में लायी जाती है। जर्मनी की मार्टिन्स्रोडा बालू में प्रायः ३ से ६ प्रतिशत अल्युमिना होता है और यह थुरिंगियन तापमापक काँच-निर्माण के उपयोग में आता है।

काँच-द्रावण में अल्युमिना युक्त पदार्थों के उपयोग की तुलना

जब काँच की शुद्धता ही मुख्य उद्देश्य हो, जैसे प्रकाशीय काँच-निर्माण के लिए, तब निस्तापित या जलयोजित अल्युमिना का प्रयोग करना चाहिए। परन्तु जिन काँचों में शुद्धता इतनी आवश्यक नहीं है, उनमें केओलिन अथवा फेल्सपार का प्रयोग किया जा सकता है। निस्तापित या जलयोजित अल्युमिना, दोनों काँच-मिश्रण (काँच-उपादान) का समान ही द्रावण करते हैं। कम ताप पर द्रवित होनेवाले काँच में केओलिन में सतह पर आकर झाग के रूप में जमने की प्रवृत्ति होती है। फेल्सपार शीघ्र द्रवित हो जाता है और उसके प्रयोग से काँच में कुछ सिलिका और कुछ क्षार आ जाता है। अतः इस के कारण, काँच-मिश्रण में क्षार की मात्रा कम की जा सकती है और काँच-निर्माण का मूल्य कम हो जाता है।

अल्युमिनियम आक्साइड युक्त काँचों के गुण

काँच में अल्यूमिनियम आक्साइड विकाचरण[1] को रोकता है और इसके प्रयोग से काँच का द्रावण और शोधन सरल हो जाता है। अल्युमिना की अल्प मात्रा के योग से श्यानता, कठोरता, स्थायित्व, प्रत्यास्थता, तनन-शक्ति, चमक और अम्ल-प्रतिरोधकता बढ़ती है। इसके द्वारा काँच में समांगता और वैज्ञानिक कार्य के गुणों में उन्नति होती है। यह काँच का प्रसार-गुणांक और अभितापन[2] ताप कम करता है।

बालू के प्रत्येक १०० भाग के साथ, साधारणतया अल्युमिना दो या तीन भाग मिलाया जाता है, यद्यपि कुछ हालतों में १५ प्रतिशत तक भी मिलाया गया है।

1. Devitrification 2. Annealing

टीटेनियम डाय-आक्साइड, TiO_2

टीटेनियम आक्साइड साधारणतः रंग के लिए और अपारदर्शक अकाचन बनाने के प्रयोग में आता है।

जस्ता आक्साइड, ZnO

प्राप्ति के स्रोत—(१) जस्ता श्वेत ZnO; काँच-निर्माण में साधारणतः यही व्यवहार में लाया जाता है।

(२) जस्ता कार्बोनेट $ZnCO_3$

(३) जस्ता धूल; यह साधारणतः सिलेनियम द्वारा लाल काँच-निर्माण के उपयोग में आता है।

जस्ता आक्साइड युक्त काँचों के गुण

भास्मिक (पैठिक)[1] आक्साइडों में जस्ता आक्साइड काँच के प्रसार गुणांक को बहुत कम करता है। काँच में अधिक स्थायित्व और कम ऊष्मीय प्रसार उत्पन्न करने के कारण यह रासायनिक काँच-निर्माण के प्रयोग में आता है। जस्ता युक्त काँचों का वर्तनांक समान रचना के चूना एवं बेरियम युक्त काँचों के बीच का होता है, अतएव इसका उपयोग प्रकाशीय काँचों के निर्माण में भी होता है। इससे द्रवणता ऊँचे ताप पर होती है, इसलिए जस्तायुक्त काँचों के द्रावण के लिए ऊँचे ताप की आवश्यकता होती है। काँच-मिश्रण में साधारणतया प्रति १०० भाग बालू में ५ से ८ भाग जस्ता आक्साइड मिलाया जाता है।

मैगनिशियम आक्साइड MgO

प्राप्ति के स्रोत—(१) मैगनेसाईट $MgCO_3$ —अति शुद्ध मैगनेसाइट, भारत, दक्षिण अफ्रीका, ग्रीस और अमेरिका में पाया जाता है।

(२) डोलोमाइट, $MgCO_3$, $CaCO_3$ —संयुक्त राज्य अमेरिका में एक अति शुद्ध लोह हीन डोलोमाइट पाया जाता है और यही वहाँ पर काँच-निर्माण में अधिकतर प्रयोग में लाया जाता है।

(३) सलफ़ेट, जैसे इप्सम् साल्ट, $MgSO_4 7H_2O$ कीज़राईट $MgSO_4,H_2O$

(४) सिलीकेट, जैसे ऑलीवाइन, इन्स्टेटाइट, एसवेसटस, ज़हरमोहरा, टैल्क इत्यादि।

1. Basic

काँच-निर्माण में केवल मैगनेसाइट, डोलोमाइट अथवा इनके निस्तापन से प्राप्त आक्साइडों का उपयोग किया जाता है।

मैगनिशियम आक्साइड युक्त काँचों के गुण

मैगनिशिया की काँच में लघु मात्रा होने से द्रावण शीघ्र होता है, परन्तु अधिक मात्रा में होने से द्रावण में कठिनाई होती है। अधिक मैगनिशिया युक्त काँचों में उन्हीं से मिलते जुलते चूना युक्त काँचों से अधिक श्यानता, असमांगता और डोरियापन[1] की प्रवृत्ति होती है। सोडा-चूना युक्त काँच में, कुछ कैलशियम आक्साइड व्यूहाणु के स्थान में मैगनिशियम आक्साइड व्यूहाणु का प्रयोग करने से द्रवण शीघ्र होता है और कार्य में सरलता होती है। लघु मात्रा में, चूना युक्त काँचों में इसका प्रयोग वैज्ञानिक कार्य के गुणों में उन्नति करता है, विकाचरण की प्रवृत्ति को रोकता है और निस्तापन (अभितापन) ताप[2] कम करता है।

विविध पदार्थ

टूटा काँच

प्राय: प्रत्येक कारखाने में टूटा और रद्दी काँच, काँच-मिश्रण में सम्मिलित किया जाता है। टूटे काँच को काँच-मिश्रण में मिलाने से काँच-द्रावण एवं शोधन में सुगमता होती है। साधारणत: टूटे काँच की जो मात्रा मिलायी जाती है, वह काँच-मिश्रण का २५ से ५० प्रतिशत होती है।

जल

काँच-मिश्रण में जल मिलाने से द्रावण में सुगमता होती है, परन्तु जल की मात्रा, काँच-मिश्रण से ५ प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए।

(२) द्रावक[3]

द्रावक वह पदार्थ हैं जो कि रासायनिक क्रिया में शीघ्रता उत्पन्न करते हैं और जिनके कारण काँच-मिश्रण द्रवित होकर काँच बन जाता है। बहुत से पदार्थ हैं जो कि द्रावक का कार्य करते हैं। जैसे —

1. Cordiness and stringiness 2. Annealing temperature 3. Fluxes

सोडा ऐश पोटाश; चूना; बोरिक अम्ल; सुहागा; सोडियम एवं पोटेशियम नाइट्रेट (ये अधिकतम द्रावकता देते हैं); कैलशियम फ्लोराइड या फ्लुस्पार (यह द्रावक की अपेक्षा काँच में उपलीयता के लिए प्रयोग में लाया जाता है); एमोनियम सलफेट, एमोनियम नाइट्रेट और एमोनियम क्लोराइड।

एमोनियम लवणों में एमोनियम सलफेट अति उत्तम है और इसकी मात्रा, बालू के प्रति सहस्र भाग में पन्द्रह भाग होनी चाहिए।

(३) आक्सीकारक[1]

काँच द्रवण के समय जिन पदार्थों से आक्सीजन का निष्कासन होता है वे पदार्थ 'आक्सीकारक' कहलाते हैं।

आक्सीकारकों का उद्देश्य

काँच-मिश्रण में जो कार्बनिक पदार्थ विद्यमान रहते हैं उनको आक्सीकारक विच्छेदित[2] करता है, अतः काँच में कार्बन द्वारा रंग नहीं आने पाता। सहज में अवकृत होने वाले पदार्थों, जैसे सीस आक्साइड को आक्सीकारक अवकरण होने से रोकता है।

आक्सीकारक पदार्थ बहुत-से हैं, जैसे—सोडियम नाइट्रेट, सोडा नाइटर, चाइल साल्टपीटर, $NaNO_3$ यह ३१६° सें० पर द्रवित होता है और कुछ अधिक ताप पर विच्छेदित होता है। क्योंकि यह बहुत ही अधिक आर्द्रताग्राही है, इसलिए प्रायः शोरा का उपयोग किया जाता है।

शोरा (नाइटर) KNO_3—प्रारम्भ में यह चाइल साल्टपीटर से बनाया जाता था। भारत में शोरा निर्माण, देश का पुराना उद्योग है और बिहार, पंजाब आदि स्थानों में प्रचलित है। यह ३३९° सें० पर द्रवित होता है और कुछ अधिक ताप पर विच्छेदित होता[2] है।

पायरोलूसाइट, मैंगनीज़-डाय-आक्साइड, MnO_2—यह आक्सीजन को मुक्त कर स्वयं मैंगनस-आक्साइड (MnO) में अवकृत[3] हो जाता है। इसका आक्सीकारक कृत्य अति न्यून है और इसका प्रयोग मुख्यतः काँच में रंग देने और काँच को वर्णहीन करने के लिए होता है।

लाल सीस, Pb_3O_4—इसको भी आक्सीकारक कहा जा सकता है क्योंकि द्रावण के समय यह भी आक्सीजन मुक्त करता है।

१. पहला शीर्षक पृ० १७ पर, दूसरा पृ० ४२ पर है। 2. Decomposes 3. Reduced

(४) अवकारक द्रव्य[1]

अवकारक पदार्थ वे हैं जो काँच-मिश्रण के किसी अवयव से आक्सीजन का निष्कासन करते हैं।

अवकारक के कृत्य—अवकारकों से काँच में कुछ विशिष्ट आक्साइडों के सम्मिलित होने में सहायता मिलती है। साल्टकेक के साथ कार्बन का कोयला या कोक के रूप में, प्रयोग किया जाता है जिसमें साल्टकेक सलफाइट में परवर्तित हो जाय और सिलीकेट से उसकी रासायनिक क्रिया निम्न ताप पर हो सके। अवकारकों का प्रयोग आवश्यक वातावरण तयार करने के लिए भी होता है ताकि काँच में विशिष्ट वर्ण आ सकें। ताम्र द्वारा काँच में लाल वर्ण लाने के लिए स्टैनस् आक्साइड का प्रयोग किया जाता है। सीस युक्त काँच-मिश्रण में अवकारकों का उपयोग नहीं करना चाहिए। जब काँच-मिश्रण में आक्सीकारक, जैसे शोरा इत्यादि उपस्थित हों तब भी अवकारकों का जहाँ तक सम्भव हो उपयोग नहीं करना चाहिए।

(५) शोधक द्रव्य[2]

जब काँच का द्रवण होता है तब तरल काँच में बहुत-से छोटे-छोटे गैस के बुलबुले फँस जाते हैं। इन बुलबुलों को "बीज" कहकर व्यक्त किया जाता है। इन 'बीजों' को दूर करने से ही काँच का शोधन होता है और इसके लिए दो विधियाँ हैं।

(अ) द्रुत[3] काँच के ताप को बढ़ाने से बीज बड़े होकर निकल जाते हैं। अधिक ताप के कारण काँच की श्यानता घट जाती है और इससे भी बीज निकल जाने में सुविधा होती है।

(आ) तरल काँच में शोधक का योग करने से काँच की सतह के नीचे बहुत से गैस-बुलबुले मुक्त होते हैं और जब ये बुलबुले ऊपर उठते हैं तब अपने साथ और छोटे बुलबुलों को भी खींच ले जाते हैं।

कुछ पदार्थ जो शोधकों का कार्य करते हैं, ये हैं—

साल्टकेक—द्रवण के अन्त में जब गन्धक-डाय-आक्साइड गैस निकलती है, तब यह शोधक का कार्य करता है।

कार्बनिक पदार्थ—आलू, चुकन्दर, और भीगी लकड़ी के टुकड़े द्रुत काँच में घुसा दिये जाते हैं और तब गैस मुक्त होने के कारण काँच शुद्ध हो जाता है।

1. Reducing agents 2. Fining agents 3. Molten

एमोनियम नाइट्रेट (NH_4 NO_3) यह पूर्णतया गस में परिवर्तित हो जाता है और पूर्ण शुद्धावस्था में प्राप्त होता है। इस कारण इसके प्रयोग से काँच में कोई हानिप्रद अवशेष नहीं आता। इसको जल से भीगे कागज में लपेट कर एक काँटे[1] द्वारा द्रुत काँच में दूर तक घुसा दिया जाता है।

आर्सेनियस आक्साइड, अर्सेनियस अम्ल (As_4O_6)—साधारणतः यह श्वेत आर्सेनिक या केवल आर्सेनिक नाम से विख्यात है। यह भी काँच में शोधक का कार्य करता है। काँच के साथ आर्सेनिक की क्रिया का कुछ भाग यांत्रिक होता है क्योंकि ऊँचे ताप पर इसका कुछ भाग वाष्पशील हो जाता है जिससे काँच शुद्ध हो जाता है और क्रिया का कुछ भाग रासायनिक होता है जिससे आर्सेनियस आक्साइड अवकृत होकर आर्सेनिक धातु वन जाता है और आक्सीजन के निकलने के कारण काँच शुद्ध हो जाता है। अन्ततः आर्सेनिक धातु भी वाष्पशील होकर काँच को और शुद्ध करता है। आर्सेनिक का कुछ भाग काँच में As_2O_5 के रूप में सर्वदा रह जाता है। मैंगनीज़-डाय-आक्साइड और सिलिनियम की कुछ अधिक मात्रा होने पर काँच में जो वर्ण आ जाता है उस को आर्सेनिक की लघु मात्रा दूर करती है। अधिक मात्रा में आर्सेनिक काँच को उपलीय अथवा दूधिया बनाता है। आर्सेनिक का ५ प्रतिशत उपयोग करने से काँच पूर्ण अपारदर्शी हो जाता है। वैज्ञानिक धमन कार्य[2] में आर्सेनिक युक्त काँचों का रंग शीघ्र खराब हो जाता है।

ऐन्टीमनी आक्साइड, Sb_2O_3—यह श्वेत ऊष्मा पर ही वाष्पशील है। मैंगनीज़ और क्रोमियम आक्साइड के साथ यह अवकारक का कार्य करता है। यदि इसका प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाय तो काँच में उपलीयता या दूधियापन आ जाता है। अवकारक के रूप में इसका अधिक महत्त्व नहीं है।

(६) वर्णक

काँचों में रंग जिस ढंग से लाया जाता है उसके अनुसार वर्णक पाँच समूहों में वर्गीकृत किये जा सकते हैं—

(क) काँच में घुली हुई रंगीन सिलीकेटें या और प्रकार के रंगीन लवण,
(ख) रंगीन कलिमय घोल,
(ग) वड़े परिमाण के विना घुले कणों का आलम्बन[3],

1. Fork 2. Lamp working 3. Suspension

(घ) ठोस पायस,
(ङ) विकाचरण[1]।

(क) रंगीन सिलीकेटें और अन्य प्रकार के लवण

वैनडियम

इसके दो आक्साइड हैं—

(१) V_2O_3—यह भास्मिक (basic पैठिक) आक्साइड है और काँचों को पीलापन लिये हुए हरा रंग देता है। अधिक मूल्यवान् होने के कारण यह कदाचित् ही प्रयोग में आता है।

(२) V_2O_5—यह आम्लिक आक्साइड है और काँचों को पीला रंग देता है। प्रकाश के पार-जम्बू क्षेत्र[2] की किरणों को यह अति अवशोषण[3] करता है। सिलिकेट काँचों में वेन्डेट्स स्थायी नहीं होते, ये बहुत शीघ्र निम्न आक्साइड में अवकृत हो जाते हैं और काँच को हरा रंग देते हैं।

क्रोमियम

क्रोमियम के दो आक्साइड हैं—

(१) क्रोमियम ट्राय-आक्साइड, CrO_3—यह अम्लिक आक्साइड है और इसका वर्ण संत्रई लाल है। क्षारों के संयोग से यह, क्रोमेट्स और डाइ-क्रोमेट्स बनाता है, जैसे कि हरे वर्ण का सोडियम क्रोमेट और नारंगी वर्ण का सोडियम-डाय-क्रोमेट। द्रुत काँचों की भास्मिक (वेसिक) अवस्था क्रोमेट के अनुकूल होती है। साधारण सिलिका के काँचों में CrO_3 विच्छेदित होकर Cr_2O_3 में परिवर्तित हो जाता है। Cr_2O_3 का वर्ण हरा है, और इसके काँच में घुलने से काँच का रंग पन्ना की तरह हरा हो जाता है।



$$2CrO_3 \rightleftarrows Cr_2O_3 + 3\,O$$

एक प्रतिशत आर्सनिक या ऐन्टीमनी आक्साइड अवकारक का योग करने से, मुक्त आक्सीजन दूर हो जाता है और Cr_2O_3 का उत्पादन सरल हो जाता है।

अधिक समय तक ऊँचे द्रवण-ताप से भी पन्ना की तरह काँच में हरा रंग आ जाता है।

(२) क्रोमियम एनहाइड्राइड, Cr_2O_3—यह पैठिक (भास्मिक) आक्साइड है

1. Devitrification 2. Ultra-violet region 3. Absorption

और यह या और कोई भी क्रोमियम लवण काँच में हरा रंग देने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है।

क्रोमियम आक्साइड की थोड़ी ही मात्रा से काँच संतृप्त[1] हो जाता है और इससे अधिक मात्रा होने पर 'एवुन्टरीन काँच' का निर्माण होता है।

निकल

प्रयोग में आनेवाले यौगिक ये हैं—

(१) निकेलस आक्साइड, NiO—यह हरे-भूरे रंग का होता है और व्यापारिक मात्रा में उपलब्ध है।

(२) निकेलिक आक्साइड, Ni_2O_3—साधारणतः व्यवहार में यही आता है और यह 'कृष्ण निकल आक्साइड' के नाम से प्रसिद्ध है।

निकल यौगिक, द्रवण की अवधि में स्थायी निकेलस लवणों में परिवर्तित हो जाते हैं। पोटाश-चूना युक्त काँचों में यह नीला बैंगनी रंग देता है और सोडा युक्त काँचों में भूरा-बैंगनी रंग, जिसमें भूरे रग की प्रवृत्ति अधिक होती है। सोडा-चूना युक्त काँचों में, कुछ कोवाल्ट की मात्रा (वालू का ·०१ प्रतिशत) मिलाने से अच्छा रंग आता है। निकल से प्राप्त रंग वहुत ही पक्का होता है और इस रंग पर आक्सीकरण या अवकरण वातावरणों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। पूर्ण वर्णक्रम परास[2] में, यह प्रकाश का सामान्य अवशोषण करती है, अतः यह विशिष्ट रंग के लिए अयोग्य है और काँच में वर्णक के लिए वहुत कम प्रयोग में आती है।

कोवाल्ट

प्रयोग में आनेवाले यौगिक ये हैं —

(१) कोवाल्ट्स लवण—जो कोवाल्ट्स आक्साइड CoO के संवादी[3] हैं। कोवाल्ट्स लवण काँच में स्थायी होता है।

(२) कोवल्टिक् लवण—जो कोवल्टिक् आक्साइड Co_2O_3 के संवादी हैं।

(३) व्यापारिक कोवाल्ट आक्साइड—यह कोवल्ट्स आक्साइड और कोवल्टिक् आक्साइड का मिश्रण है और प्रायः Co_3O_4 का संवादी है।

कोवाल्ट लवण गहरा नीला रंग देते हैं। काँच द्रवण के समय, कोवाल्ट यौगिक स्थायी कोवल्ट्स लवणों में परिवर्तित हो जाते हैं।

1. Saturated 2. Spectrum range 3. Corresponding

सीरियम

इसके दो आक्साइड होते हैं —

(१) CeO_2 और (२) Ce_2O_3

व्यापारिक पदार्थ, CeO_2 का हाइड्रेट है जिसमें ७५ प्रतिशत आक्साइड होता है। गैस मैन्टलों के निर्माण में, मोनेजाइट बालू से थोरिया की शुद्धि करते समय यह आक्साइड उपजात के रूप में प्राप्त होता है। सीरियम के नाइट्रेट और बोरेट यौगिक भी उपयोग में लाये जाते हैं।

सीरिया (Ceria) यदि अकेला प्रयोग में लाया जाय तो काँच में कोई रंग नहीं आता। टीटेनियम आक्साइड के संयोजन से जब कि दोनों आक्साइडों की मात्रा तीन प्रतिशत होती है तब काँच में सुन्दर पीला रंग आता है। रंग को गहरा करने के लिए, सीरियम आक्साइड की मात्रा स्थिर रखकर, टीटेनियम-आक्साइड की मात्रा बढ़ानी चाहिए।

यूरेनियम

प्रयोग में आनेवाले यौगिक हैं—

(१) यूरेनेट लवण, जैसे सोडियम यूरेनेट् $Na_2O, 2(UO_3), 3H_2O$ जो कि आम्लिक आक्साइड UO_3 का संवादी है।

(२) यूरेनाइल, UO_2 —यह सोडियम यूरेनाईल का भास्मिक मूल है।

(३) U_2O_3—भास्मिक आक्साइड।

(४) U_2O_8—कृष्ण आक्साइड।

कुछ कम अम्लीय काँचों में, जैसे पोटाश युक्त काँच, जिसमें कि सीस आक्साइड की मात्रा अधिक है, यूरेनियम से हरी प्रतिदीप्तता* के साथ चमकदार पीला रंग आता है। काँच की जैसे अम्लीयता बढ़ती है वैसे ही पीले रंग में हरियाली आने लगती है। सोडा-युक्त काँचों में अधिक तापन के पश्चात् पीला-हरा रंग आता है और प्रतिदीप्ति हरी होती है। यूरेनियम का उच्च आक्साइड पीला रंग और निम्न आक्साइड हरा रंग देता है। उच्च ताप पर और जैसे-जैसे अम्लीयता बढ़ती है वैसे-वैसे उच्च आक्साइड निम्न आक्साइड में परिवर्तित हो जाता है।

* कुछ यौगिकों में प्रतिदीप्तता Fluorescence पायी जाती है। इस गुण के कारण पराजम्बु विकिरणें दीर्घ होकर दृश्य प्रकाश विकिरण में या रंगीन प्रकाश में परिवर्तित हो जाती हैं।

ताम्र

ताम्र के यौगिक जो प्रयोग में आते हैं, ये हैं—

(१) क्यूप्रस् आक्साइड, Cu_2O—यह लाल रंग का होता है।

(२) क्यूप्रिक् आक्साइड, CuO—यह काले रंग का होता है।

(३) ताम्र सलफेट, $CuSO_4, 7H_2O$—नीला विट्रीयल (तूतिया)।

ताम्र अति प्राचीन वर्णक आक्साइड है और मिस्र-निवासी इसका प्रयोग काँचों और काचनों (Glazing) पर करते थे। काँच में ताम्र दोनों ही (वर्णहीन क्यूप्रस् आक्साइड और गहरे रंग का क्यूप्रिक्) अवस्थाओं में उपस्थित हो सकता है। काँच में क्यूप्रिक् आक्साइड के रंग पर ताप और काँच की रचना का प्रभाव पड़ता है और इस प्रकार क्रोमियम और कोबाल्ट वर्ण के मध्य के वर्ण यानी नीले से लेकर हरे वर्ण क्यूप्रिक् आक्साइड से आ सकते हैं। अत्यधिक अवकारक वातावरण में, काँच वर्ण-हीन हो जाता है और क्यूप्रिक् आक्साइड अवकृत होकर वर्णहीन क्यूप्रस् आक्साइड या ताम्र धातु में परिवर्तित हो जाता है। ताम्र लाल काँच[1] का द्रावण उदासीन अथवा अवकारक वायुमण्डल में होना चाहिए। ऐसे काँच का पुनः तापन करने से रंग उभर आता है और काँच अति गहरी लाल मणि-जैसा हो जाता है। यह समझा जाता है कि काँच में लाल रंग के दो कारण हो सकते हैं—(१) पुनः तापन से ताम्र धातु के कलि-लीय[2] कणों का उपयुक्त मात्रा में काँच में फैल जाना, (२) पुनः तापन से सिलिका और क्यूप्रस् आक्साइड के दुर्बल रासायनिक संयोग के कारण, क्यूप्रस् आक्साइड, सिलिका संयोजन से मुक्त हो जाता है और क्यूप्रस् आक्साइड् के कण काँच में फैल जाते हैं।

अत्यधिक भास्मिक (पैठिक) काँच-मिश्रण के कारण क्यूप्रस आक्साइड का अवक्षेपण हो जाता है और परावर्तित प्रकाश में देखने पर काँच यकृत वर्ण का ज्ञात होता है।

ताम्र यदि अत्यधिक मात्रा में उपस्थित है या अति तप्त किया जाय, तब ताम्र धातु पृथक् हो जाती है और एवन्टुरीन काँच का निर्माण होता है।

मैंगनीज़

काँच-निर्माण में मैंगनीज़-डाय-आक्साइड यौगिक MnO_2 का प्रयोग होता है जो कि खनिज पायरोलुसाइट के रूप में पाया जाता है और इसमें कुछ लोह आक्सा-

1. Copper ruby glass 2. Colloidal particles

इड की मात्रा भी होती है। भारत के मध्य प्रदेश में एक उत्तम प्रकार का पायरोलुसाइट पाया जाता है।

मैंगनीज़ के वर्ण, उसकी आक्सीकरण अवस्था पर निर्भर हैं। विविध यौगिक, जैसे परमैंगनेट्स—$R'MnO_4$ (वैंगनी रंग), मैंगनेट्स—$R_2'MnO_4$ (हरा रंग), मैंगेनाइट्स—R'_2MnO_3 होते हैं जो कि अम्लीय आक्साइडों Mn_2O_7, MnO_3, MnO_2 के संवादी हैं। भास्मिक आक्साइड, जैसे कि मैंगनिक आक्साइड—Mn_2O_3 और मैंगनस आक्साइड, MnO से क्रमशः मैंगनिक एवं मैंगनस लवण वन सकते हैं। काँच में मैंगनस लवण अत्यन्त स्थिर और वर्णहीन होते हैं। अधिक समय तक तापन करने से अन्य लवण और उच्च आक्साइड सहज में मैंगनस अवस्था में अवकृत हो जाते हैं। यह पूर्ण निश्चय नहीं है कि मैंगनीज़ के किस लवण द्वारा काँच में रंग आता है, परन्तु सम्भव है कि काँच में मैंगनीज़ जव रंग देता है तव मैंगनिक आक्साइड—Mn_2O_3 के रूप में उपस्थित रहता है। काँच में मैंगनीज़ का रंग उन स्थायी और सरलता पूर्वक अवकृत होनेवाले मैंगनीज़ यौगिकों पर निर्भर है जो किसी प्रकार से विच्छेदित नहीं हो पाते हैं। अवकारक और अधिक समय तक तापन करने से मैंगनीज़ का रंग नष्ट हो जाता है। काँच में श्रेष्ठ रंग लाने के लिए सिलिका की मात्रा कम होनी चाहिए। मैंगनीज़ द्वारा रंगीन काँच का वर्ण, कुछ कोवाल्ट योग करने से परिवर्तित किया जा सकता है। कोवाल्ट की मात्रा प्रति १०० भाग वालू में ·०२ से ·०१ भाग तक होनी चाहिए। मैंगनीज़ यौगिक यदि वहुत अधिक मात्रा में उपस्थित होते हैं तो काँच का रंग भूरे से काला तक हो जाता है। अधिक मैंगनीज़ युक्त काँच में कुछ कोवाल्ट, लोह, निकल और ताम्र का योग करने से काले काँच का निर्माण होता है। जव क्षार पोटाश होता है तव मैंगनीज़ नीला-वैंगनी रंग देता है। और जव सोडा क्षार होता है तव लाल-वैंगनी रंग देता है। कुछ पोटेशियम डाइक्रोमेट की मात्रा का योग करने से मैंगनीज़ का रंग गहरा किया जा सकता है।

लोहा

इसके अनेक आक्साइड होते हैं—

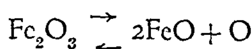
(१) फेरस आक्साइड, FeO

(२) फेरिक आक्साइड, Fe_2O_3 (कुंकुमी या हेमेटाइट),

(३) मैगनेटाइट, Fe_3O_4

काँच में फेरिक लोहा पीला रंग और फेरस लोहा नीला-हरा रंग उत्पन्न करता

है। परन्तु वास्तव में काँच में रंग फेरस एवं फेरिक आक्साइडों का संयुक्त प्रभाव होता है, अतः लोहे से काँच का रंग पीला और नीले-हरे के मध्य का होता है।



$$Fe_2O_3 \rightleftarrows 2FeO + O$$

यह प्रतिक्रिया उच्च ताप पर या अवकारकों और काँच में अम्लता-अवयवों (SiO_2) के होने पर दाहिने होने लगती है। जैसे-जैसे द्रवण होता है वैसे ही वैसे लोहे की प्रवृत्ति फेरस अवस्था में परिवर्तित होने की होती है और यह प्रवृत्ति आर्सेनिक या ऐन्टीमनी आक्साइड के योग से रोकी जा सकती है। आक्सीकारक, जैसे नाइटर इत्यादि का काँच-मिश्रण में योग करने से, फेरिक आक्साइड बनने की अनुकूलता होती है। अनिर्मित पदार्थों में, लोहा अशुद्धि के रूप में उपस्थित होता है, अतः काँच प्रायः हरे रंग का होता है। लोह आक्साइड द्वारा अच्छा हरा काँच बनाने के लिए ताप, वातावरण एवं द्रावण समय का नियंत्रण आवश्यक है। लोह यौगिक, ऊष्मा एवं प्रकाश के रक्षणार्थ धूप के चश्मे का काँच रंगने के उपयोग में लाये जाते हैं। फेरस आक्साइड में, दीर्घ विकिरण तरंगों के अवशोपण की अति क्षमता है, अतः ऊष्मा किरणों के अवशोपण के लिए, काँचों में इसका प्रयोग किया जाता है।

(ख) रंगीन कलिलमय घोल

गन्धक

काँच-मिश्रण में गंधक जब तात्विक अवस्था[1] में मिलाया जाता है तब काँच में हलके पीले रंग से लेकर अम्बर वर्ण के रंग उत्पन्न किये जा सकते हैं। साधारणतया इस वर्ण के लिए गंधक-पुष्पों का प्रयोग किया जाता है, परन्तु अन्य गन्धकयुक्त यौगिक, जैसे कैलशियम सल्फाइड का भी प्रयोग किया जा सकता है यदि भट्ठी में अवकरण वातावरण[2] स्थित किया जा सके। आक्सीकरण वातावरण में रंग नष्ट हो जाता है। साल्टकेक युक्त काँच-मिश्रण में, यदि कार्बन की मात्रा अधिक होती है जिससे कि साल्ट-केक, सल्फाइड या तात्त्विक गंधक में अवकृत हो सके, तब काँच में अम्बर वर्ण उत्पन्न हो सकता है। यह निश्चय नहीं है कि रंग, सलफाइड से या तात्त्विक गंधक से उत्पन्न होता है। सीस सलफाइड बनने के कारण, सीस युक्त काँच में, गंधक भूरा या काला रंग उत्पन्न करता है, जिससे कि काँच में सलफाइड की उपस्थिति प्रमाणित होती है। जब अकेले गंधक का प्रयोग होता है तब बहुत कुछ सम्भव है कि काँच में

1. Elementary stage 2. Reducing Conditions

क्षार सलफाइड बन जाते हों। पात्रों में ही रंग उभर आता है और पुनः तापन की आवश्यकता नहीं होती। काँच-मिश्रण में आर्सेनिक या नाइटर नहीं होना चाहिए, पर किसी अवकारक का होना आवश्यक है। अम्बर वर्ण के लिए काँचों में अधिक क्षार की मात्रा आवश्यक है।

कार्बन

कार्बन में स्वयं वर्ण देने की क्षमता है और काँच में यह अम्बर वर्ण उत्पन्न करता है। आरम्भ में विश्वास किया जाता था कि वर्ण, गंधक के यौगिकों के कार्बन द्वारा अवकरण के कारण होता है और जब काँच-मिश्रण में गंधक अनुपस्थित हो तब वर्ण उत्पन्न नहीं किया जा सकता। परन्तु यह भी सम्भव है कि गंधक रहित काँच-मिश्रण में, जिसमें सिर्फ कार्बन हो, काँच में अम्बर वर्ण लाया जा सकता है। तथापि, सर्वश्रेष्ठ अम्बर वर्ण तब ही प्राप्त होता है जब काँच-मिश्रण में गंधक और कार्बन दोनों ही उपस्थित होते हैं। अम्बर वर्ण के लिए उत्तम काँच वह है जो नरम हो, जिसमें क्षार अधिक हो, नाइटर एवं आर्सेनिक रहित हो तथा अवकरण वातावरण में द्रवित किया गया हो और काँच-मिश्रण में या तो अकेला कार्बन हो या कार्बन गंधक, दोनों ही हों।

रजत

रजत नाइट्रेट यौगिक ($AgNO_3$) साधारणतः प्रयोग में आता है और यह घोल के रूप में काँच-मिश्रण पर उड़ेल दिया जाता है। बहुत अल्प मात्रा के प्रयोग से काँच में कोई रंग नहीं आता, पर पुनः तापन से पीला रंग उभर आता है। इस वर्ण में धुँधलापन युक्त उपलीयता[1] या अपारदर्शकता तक हो सकती है। अतः यह प्रयोग में कदाचित् ही आता है।

रजत काँच में सुन्दर पीला अभिरंजन[2] उत्पन्न करता है और इसके लिए रजत क्लोराइड या रजत सलफेट से लाल या पीली मिट्टी के साथ एक और पाँच के अनुपात में लेपी बनायी जाती है और इस लेपी को काँच की सतह पर लगाया जाता है। काँच को मफल भट्ठी में, काँच के मृदुतापांक से किंचित् निम्न ताप पर कुछ मिनटों तक गरम करते हैं। काँच ठंडा होने पर जल से लेपी धो डाली जाती है और काँच में आकर्षक पीलापन आ जाता है। यह पीला रंग, काँच में रजत के प्रवेश होने के कारण उत्पन्न होता है।

1. Opalascence 2. Staining

स्वर्ण

प्रयोग में आनेवाले यौगिक हैं—

(१) पर्पिल ऑव केसियस,

(२) स्वर्ण क्लोराइड—$AuCl_3$ या $HAuCl_4$

क्योंकि काँच-मिश्रण में स्वर्ण यौगिक की आवश्यकता अति लघु मात्रा में होती है, इसलिए साधारणतः या तो स्वर्ण घोल को काँच-मिश्रण में उँड़ेला जाता है या स्वर्ण यौगिक को कुछ बालू के साथ मिश्रित किया जाता है। काँच जब बनकर तैयार होता है तब आरम्भ में या तो वर्णहीन होता है या उसमें हलका तृण-जैसा पीला वर्ण होता है। उसे पुनः तापन करने से रंग उभर आता है और काँच आकर्षक लाल रंग का हो जाता है। अति तापन से स्वर्ण-कण स्कंदित[1] हो जाते हैं और रंग परिवर्तित होकर भूरा हो जाता है। यतः रंग गहरा होता है, इसलिए स्वर्णिम-लाल-काँच[2] को साधारणतः वर्णहीन काँच के ऊपर आवरण या स्फुरण के प्रयोग में लाया जाता है। लाल रंग के लिए पोटाश-सीस युक्त काँच श्रेष्ठ होता है।

सिलीनियम

प्रयोग में आनेवाले यौगिक हैं—

(१) सिलीनियम धातु,

(२) सोडियम सिलीनाइट, Na_2SeO_3, यह सुगमता से सिलीनियम धातु में अवकृत हो जाता है।

(३) बेरियम सिलीनाइट, $BaSeO_3$

आक्सीकारक वातावरण में, काँच में सिलीनियम बिना कोई रंग दिये सिलीनाइट के रूप में रहता है।

अवकारक वातावरण[3] में सिलीनाइडों का निर्माण होता है जो काँच में पीला रंग देते हैं। अत्यधिक अवकारक वातावरण में, कुछ पॉलीसिलीनाइड संयोजन के निर्माण के कारण, वर्ण नष्ट हो जा सकता है। हलके आक्सीकारक वातावरण में, जब कि सिलीनियम की मात्रा ·५ प्रतिशत हो, और आर्सेनिक की उपस्थिति में, काँच में आकर्षक गुलाबी रंग आ सकता है। बन्द या ढँके पात्रों में, काँच द्रवण में समय लगता है, तब बहुत-सा सिलीनियम काँच में घुलने और समाने के पूर्व ही वाष्पशील हो जाता

1. Coagulated 2. Gold ruby glass 3. Reducing Conditions

है। सीसयुक्त काँच; सिलीनियम द्वारा लाल रंग उत्पन्न करने के उपयुक्त नहीं है क्योंकि सीस-सिलीनाइट का रंग काला होता है।

लाल काँच[1]

जब सिलीनियम और कैडमियम सलफाइड का एक साथ प्रयोग होता है और जब काँच का अवकारक वातावरण में द्रावण किया जाता है तब काँच में तृण पीत वर्ण आता है। काँच-वस्तुओं को निर्माण उपरान्त प्रायः मृदु-तापांक तक शीतल किया जाता है और फिर उनको गहरे लाल ताप तक तप्त किया जाता है, तब उनका रंग उभर आता है और काँच लाल या माणिक्य के वर्ण का हो जाता है। एक्स-किरणों द्वारा ज्ञात हुआ है कि लाल रंग कैडमियम-सिलिनो-सलफाइड यौगिक के कारण उत्पन्न होता है। कैडमियम-सलफाइड और कैडमियम सिलीनाइड के ठोस घोल कणों के अवक्षेप से भी लाल-वर्ण उत्पन्न हो सकता है। ठोस घोल में दोनों यौगिकों की आपेक्षिक मात्राओं के अन्तर के कारण, काँच में नारंगी रंग से लेकर गहरा लाल रंग आ सकता है। गहरे लाल रंग के काँच-कणों में कैडमियम-सिलीनाइड की मात्रा अधिक होती है। यह भी सम्भव है कि रंग, कणों के रंग के अनुसार हो। स्वर्ण और ताम्र से उत्पादित लाल रंग, कणों के परिमाण और प्रकृति पर निर्भर होते हैं। अति उत्तम लाल रंग के लिए साधारणतः सिलिका-पोटाश-जस्ता-बेरियम युक्त काँच प्रयोग में लाया जाता है।

(ग) आलम्बन[2] द्वारा वर्ण

आलम्बित कणोंवाला तरल काँच जब ठंडा कर ठोस बनाया जाता है तब आलम्बित कणों का नीचे बैठना असम्भव होता है और ये कण, काँच में इस प्रकार बड़े परिमाण में वितरित रहते हैं कि काँच में रंग आ जाता है। ये आलम्बित कण काँच के शीतल होने के समय केलासित हो जाते हैं या द्रुत काँच में कणों के वास्तविक आलम्बन के कारण आजाते हैं, यह महत्त्वहीन है।

वंग उपल[3] (दूधिया)

वंग आक्साइड, SnO_2—यह काँच में परान्धता उत्पन्न करता है। यह आक्साइड घुलनशील नहीं है और द्रुत काँच में आलम्बित रहता है तथा शीतल होने पर काँच में दूधिया रंग देता है। इस प्रकार के काँच में प्रकाश किरणें गमन नहीं कर

1. Ruby glass 2. Suspension 3. Tin Opal

सकतीं। पूर्ण अपारदर्शी काँच-निर्माण के लिए वंग आक्साइड ५ प्रतिशत का योग करना चाहिए।

एवेन्टुरीन काँच

एवेन्टुरीन काँचों में वर्णक आक्साइड अति संतृप्त होते हैं और अनुकूल स्थितियों में शीतल होने पर वे वर्णक आक्साइड केलासित होकर, काँच में आलम्बित कणों के रूप में वितरित हो जाते हैं।

(अ) 'क्रोम एवेन्टुरीन' हरे रंग का काँच है जिसमें क्रोमियम आक्साइड केलासित हो गया है। क्रोम एवेन्टुरीन काँच-निर्माण के लिए, प्रति सौ भाग वालू में, वीस भाग पोटेशियम डाइक्रोमेट मिलाना चाहिए।

(आ) 'ताम्र एवेन्टुरीन' के निर्माण के लिए भी प्रति सौ भाग वालू में ६ से ८ भाग ताम्र आक्साइड काँच-मिश्रण में योग करना चाहिए। सीस रहित या लेश-मात्र सीस युक्त काँच ही ताम्र एवेन्टुरीन के उपयुक्त होता है।

(घ) ठोस पायसों द्वारा दिया गया वर्ण

फ़ासफ़ेट उपल (दूधिया)

प्रयोग में आनेवाले यौगिक ये हैं—

(१) अस्थि भस्म—इसमें ६० से ८० प्रतिशत $Ca_3(PO_4)_2$ होता है और यह पशुओं की अस्थियों को निस्तप्त करने से प्राप्त होता है।

(२) कैलशियम फासफ़ेट, $Ca_3(PO_4)_2$—फ़ासफ़ेट उपल निर्माण के लिए, यही साधारणतः प्रयोग में आता है।

निम्न तापों पर विभिन्न रचनाओं की दो तरल कलाएँ पृथक् हो जाती हैं। कैलशियम फ़ासफ़ेट की तरल पारदर्शक अति लघु वूँदें तरल काँच में आलम्बित रहती हैं। ताप वढ़ाने से दोनों कलाएँ, तरल काँच और कैलशियम फ़ासफ़ेट, परस्पर घुल-मिल जाती हैं और काँच पारदर्शक हो जाता है। उपलीयता तव ही उत्पन्न होती है जव कि काँच कुछ समय तक ऐसे ताप पर रखा जाय जो द्रवणांक से वहुत अधिक न हो और तव दोनों रूप पुनः पृथक् हो जाते हैं और दूधियापन पुनः प्रकट होता है। आलम्वित कैलशियम फ़ासफ़ेट की वूँदें पारदर्शक होती हैं, अतः पारगमन में वास्तविक प्रकाश की अति न्यून हानि होती है और किरणें सिर्फ विखर जाती हैं। अल्प सिलिका युक्त काँचों में दूधियापन लाने के लिए, कैलशियम फ़ासफ़ेट कम मात्रा में आवश्यक होता है। फ़ासफ़ेट उपलों में कुछ खुरदुरापन होता है और उसमें काँचाभ लक्षण

लाने के लिए यही आवश्यक है कि ऐसे काँचों का निर्माण उच्च ताप पर हो और काँच-मिश्रण में सीस या बोरिक आक्साइड अधिक मात्रा में सम्मिलित किया जाय। काँच को पुन: तापन करने से फ़ासफेट उपलीयता गहरी की जा सकती है।

पतले उपल काँच से जब विद्युतताप-दीपित तार देखा जाता है तब तार का रंग उपल या लाल अग्नि के रंग का दिखाई पड़ता है। सेलखड़ी काँच[1] में तार बिना रंग परिवर्तन के दिखलाई पड़ता है।

असली उपल काँच में, प्रतिघन सेन्टीमीटर, $१०^{१०}$ से $१०^{१४}$ कण होते हैं और इनका व्यास ·१ से १·३ माइक्रन होता है। सेलखड़ी काँच में कण कुछ अधिक परिमाण में होते हैं, परन्तु प्रतिघन सेन्टीमीटर संख्या कम होती है। इन कणों में लघु केलासों, अकेलास ठोस पदार्थों या लघु बीजों के रूप में गैसों का मिश्रण हो सकता है। फ्लोराइड युक्त काँच-मिश्रण में सोडियम क्लोराइड की कुछ थोड़ी मात्रा का योग करने से, उपल काँच को सेलखड़ी काँच में परिवर्तित किया जा सकता है।

(ङ) विकाचरण द्वारा प्राप्त रंग

उपल काँचों के निर्माण के लिए, काँच-मिश्रण में निम्न पदार्थों का योग किया जाता है—

(१) अधिक मात्रा में सिलिका

काँच जिसमें चूने की मात्रा कम होती है और सिलिका की मात्रा अधिक होती है यदि अधिक समय तक, आवश्यक कार्य-करण ताप से निम्न ताप पर रखा जाय तो सिलिका केलासित हो जाती है और उपल या सेलखड़ी काँच का उत्पादन होता है। सिलिका की मात्रा ८० से ८५ प्रतिशत आवश्यक होती है।

(२) क्रायोलाइट

क्रायोलाइट, Na_3AlF_6—क्रायोलाइट ग्रीनलैण्ड की खानों से निकाला जाता है। जब प्रति १०० भाग बालू में १० से १२ भाग क्रायोलाइट काँच-मिश्रण में प्रयोग किया जाता है तब काँच उपल हो जाता है। उपलीयता का कारण कैलशियम फ्लोराइड एवं सोडियम फ्लोराइड के केलास या सिलिका के भिन्न रूप होते हैं। अधिक चूना युक्त काँचों में उपलीयता का मुख्य कारण कैलशियम फ्लोराइड होता है।

सोडियम फ्लुओसिलिकेट, Na_2SiF_6—इसका कृत्रिम ढंग से निर्माण किया

1. Alabaster glass

जाता है और क्रायोलाइट के स्थान पर उपल काँचों के उत्पादन के लिए यह प्रयोग में लाया जा सकता है।

(३) फ्लूर-स्पार

फ्लूर-स्पार, CaF_2—फेल्सपार और फ्लूर-स्पार के प्रयोग से भी उपल-काँच बनाया जा सकता है। फ्लोरीन युक्त उपल-काँचों के उत्पादन में, अल्युमिना की उपस्थिति आवश्यक है। द्रवण के समय, कोई स्थायी यौगिक, जैसे अल्युमिनियम फ्लोराइड (AlF_6) के बनने के कारण, फ्लोरीन की हानि नहीं हो पाती। जब द्रुत काँच का ताप कम किया जाता है तब अल्युमिनियम फ्लोराइड विच्छेदित होकर सोडियम या अन्य फ्लोराइडों में परिवर्तित हो जाता है जो उपलीयता उत्पन्न करते हैं। काँच में अल्युमिना के प्रवेश के लिए, कोई भी अल्युमिनियम यौगिक प्रयोग में लाया जा सकता है।

क्रायोलाइट, फेल्सपार और फ्लूर-स्पार द्वारा उत्पादित उपल-काँचों का दूधियापन, वंग आक्साइड द्वारा उत्पादित और फ़ासफ़ेट उपलों के मध्य का होता है। उपल-काँचों के उत्पादन के लिए काँचों के ताप, द्रावण, शोधन एवं कार्य करने का नियंत्रण अति आवश्यक है। द्रुत काँच पारदर्शक होते हैं, परन्तु शीतल होते समय उनमें उपलीयता[1] उत्पन्न करनेवाले कण पृथक् हो जाते हैं। यह शीतल होने की गति और ताप पर निर्भर है कि किस प्रकार के केलास बनेंगे और जैसे वे होंगे उसी प्रकार की उपलीयता आयेगी। काँच की मन्द गति से शीतल होने पर उत्तम कोटि की उपलीयता उत्पन्न होती है।

विरंजन-पदार्थ

काँच-निर्माण में प्रयोग में आनेवाले सब अनिर्मित पदार्थों में, लोह यौगिक कुछ मात्रा में पाये जाते हैं। काँच संग्रह, लोह छड़ों, कार्य के औजारों, अनिर्मित पदार्थों के मिश्रण और पात्रों एवं कुण्ड ब्लाकों की क्षारण क्रियाओं से, कुछ न कुछ लोहा काँच में प्रवेश होता ही रहता है। लोहा, काँच में पीले से हरा रंग उत्पन्न करता है और इस रंग को विरंजन[2] की क्रिया द्वारा दूर किया जा सकता है।

काँचों में विरंजन के लिए निम्न विधियाँ प्रयोग में आती हैं—(१) रासायनिक विधि, (२) भौतिक विधि, (३) दोनों प्रकार की विधियों का संयोजन।

1. Opalescence 2. Decolourising

रासायनिक विरंजन-विधि

रासायनिक विधि से काँच में वर्ण विरंजन करने के लिए, काँच-मिश्रण में ऐसे पदार्थ मिलाये जाते हैं जो कि फ़ेरस लोह को फ़ेरिक लोह में परिवर्तित कर दें, जिससे प्रकाश का अधिकतम संचरण[1] पीले वर्ण के पक्ष में हो और इस प्रकार हरे वर्ण की स्पष्टता कम हो जाय। रासायनिक ढंग से काँच में विरंजन के लिए कई पदार्थ प्रयोग में आते हैं—

(अ) आर्सेनिक, As_4O_6—द्रावण क्रिया के समय और नाइट्रेट की उपस्थिति में आर्सेनिक उच्च आक्साइड As_2O_5 में परिवर्तित हो जाता है और द्रवित काँच में यह आर्सिनेट के रूप में रहता है, बाद में यह फेरस लोह के साथ आक्सीकारक का कार्य करता है।

(आ) मैंगनीज़-डाय-आक्साइड, MnO_2—यह फेरस आक्साइड (FeO) को फेरिक आक्साइड (Fe_2O_3) में परिवर्तित कर, स्वयं मैंगनस आक्साइड (MnO) और मैंगनिक आक्साइड (Mn_2O_3) में अवकृत हो जाता है। मैंगनीज़ द्वारा आक्सीकरण इतना स्थायी नहीं होता जितना कि आर्सेनिक द्वारा। मैंगनीज़ द्वारा आक्सीकृत फेरिक आक्साइड, ऊष्मा से अवकृत हो जा सकता है।

(इ) पोटेशियम नाइट्रेट, KNO_3 —शोरा अति सफल आक्सीकारक है और यह लोहे को फेरिक स्थिति में परिवर्तित कर देता है। सोडियम नाइट्रेट भी शोरा की ही तरह कार्य करता है।

भौतिक विरंजन-विधि

दो वर्ण पूरक कहलाते हैं जब कि वे दोनों मिलकर श्वेत प्रकाश की सम्पूर्ण किरणों का बराबर मात्रा में अवशोषण करें। फेरस सिलीकेट के हरे वर्ण का पूरक नीलारुण[2] वर्ण है जिसमें लाल और बैंगनी किरणें पारगमित हो सकती हैं, परन्तु हरी किरणों का कुछ भाग अवशोषित हो जाता है। काँच में फ़ेरस लोह के वर्ण को संशोधित करने के लिए ऐसे पदार्थ का योग किया जाता है जो कि फेरस लोह के कारण वर्ण के साथ उसका पूरक वर्ण[3] उत्पन्न करे। यह भौतिक विरंजन-विधि है और योगशील[4] अवशोषण के सिद्धान्त पर आधारित है।

1. Transmission 2. Purple 3. Supplementary colour 4. Additive

यदि दोनों वर्ण हल्के होते हैं तो काँच वर्णहीन दिखलाई देता है। इस प्रकार काँच की पूर्ण शुभ्रता के कुछ अल्प अंश की ही हानि से 'निष्पक्ष वर्ण' या 'वर्णसमता' प्राप्त होती है और काँच अवर्ण हो जाता है। वर्णों की मात्रा बढ़ने से काँच धुंधला और भूरे वर्ण का हो जाता है।

भौतिक ढंग से विरंजन करनेवाले बहुत-से पदार्थ हैं। यथा—

(१) **मैंगनीज-डाय-आक्साइड,** MnO_2—पायरोलुसाइट पदार्थ का उपयोग किया जाता है और इसमें मुख्यतः MnO_2 होता है। यह सोडा युक्त काँचों की अपेक्षा पोटाश युक्त काँचों का विरंजन करने में अधिक सफल होता है क्योंकि पोटाश-युक्त काँचों में दिया हुआ नीला-बैंगनी रंग, सोडा युक्त काँचों में दिये हुए भूरे-बैंगनी रंग से अधिक पूरक होता है। अतः सोडायुक्त काँच में कुछ मात्रा कोबाल्ट आक्साइड की प्रयुक्त करनी पड़ती है। मैंगनीज़ द्वारा दिया हुआ रंग उड़नशील है। द्रावण के समय अवकारक वातावरण अथवा लगातार अधिक समय तक तापन करने से, वर्ण (रंग) नष्ट हो जाता है। इस कारण मगनीज़ द्वारा अवर्ण काँचों में कुछ आवश्यक से अधिक मैंगनीज़ देकर कुछ गुलाबीपन लाया जाता है, जिसमें कि काँच की वस्तुएँ जब कि किलन या लेयर में पुनः तापित की जायँ तो यह गुलाबीपन निकल जाने पर काँच पूर्ण रंगहीन दिखलाई दे। कुछ थोड़ी मात्रा में डाइक्रोमेट या सीरियम आक्साइड का योग करने से मैंगनीज़ की उड़नशील प्रवृत्ति घट जाती है। सीसयुक्त काँचों के विरंजन के लिए यह उत्तम विरंजक है। यह कुण्ड भट्ठियों की अपेक्षा पाट (पात्र) भट्ठियों के लिए अधिक उपयुक्त है, क्योंकि ताल भट्ठियों में साल्टकेक युक्त काँच-मिश्रण का कार्बन और अधिक ताप, वर्ण को नष्ट कर देते हैं। मैंगनीज़ द्वारा रंगहीन काँचों में सूर्य या चाप दीप[1] के परा-बैंगनी[2] प्रकाश की क्रिया से गुलाबी रंग उत्पन्न हो जाता है और यह वर्णहीन मैंगनस आक्साइड के रंगीन मैंगनिक आक्साइड में परिवर्तन होने के कारण होता है और इस क्रिया के लिए आक्सीजन की प्राप्ति काँच में उपस्थित फेरिक लोह से होती है।

(२) **सिलीनियम**—विरंजन के लिए सिलीनियम धातु या सोडियम सिलीनाइट का प्रयोग किया जाता है। अकेला सिलीनियम फेरस के हरे वर्ण को पूर्ण रूप से नीरंग नहीं कर सकता, परन्तु कुछ कोबाल्ट आक्साइड के साथ यह विरंजन के लिए अति उत्तम है, सीस युक्त काँचों में सिलीनियम द्वारा वर्ण-निवारण नहीं किया जा

1. Arc lamp 2. Ultra violet

सकता। यह कुण्ड भट्ठियों के लिए अति उपयुक्त है। सिलीनियम के साथ कुछ आर्सेनिक का योग करने से अति उत्तम वर्ण-विरंजन होता है। सिलीनियम द्वारा नीरंग काँचों को खुली धूप में रखने से उनमें तृण वर्ण आ जाता है और पुनः निस्तापन करने से यह वर्ण दूर हो जाता है। सिलीनियम द्वारा विरंजन किये हुए काँच जब पुनः तप्त किये जाते हैं, जैसे कि लेयर[1] में, तब उनमें बहुधा गुलाबी रंग आ जाता है। अतः काँच की वस्तुएँ हलके रंग की बनायी जाती हैं क्योंकि लेयर में रंग के गहरे होने की सम्भावना बनी रहती है।

(३) **निकल आक्साइड**—निकल सिलीकेट के वर्ण पर आक्सीकरण अथवा अवकारक वातावरण का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अतः सोडा युक्त काँचों के विरंजन के लिए निकल आक्साइड और उसके भार का ५से७ प्रतिशत तक कोबाल्ट आक्साइड प्रयोग में लाया जाता है। परन्तु निकल आक्साइड विरंजन के लिए कदाचित् ही उपयोग में लाया जाता है, क्योंकि यह विशेषकर सोडा युक्त काँचों में पूर्ण पूरक वर्ण नहीं देता।

काँच-मिश्रण में विरंजन पदार्थों का पूर्ण रूप से मिश्रण होने के लिए, उनको साधारणतः तौलकर, बालू या सोडा ऐश की मापी हुई मात्रा में मिश्रित किया जाता है और फिर इस मिश्रण की आवश्यक मात्रा काँच-मिश्रण में मिलायी जाती है।

1. Lehr

तीसरा अध्याय

अनिर्मित पदार्थों का मिश्रण एवं गणना

विभिन्न कारखाने विभिन्न विधियों से अनिर्मित पदार्थों का मिश्रण काँच-निर्माण के लिए तैयार करते हैं। इसी को 'काँच-मिश्रण' के नाम से व्यक्त किया जाता है।

काँच-मिश्रण[1] के पदार्थों का संचय

अनिर्मित पदार्थ मिश्रण-भवन के निकटवर्ती कक्ष में संचित किये जाते हैं। मिश्रण-भवन में नमी न होनी चाहिए और वहाँ तक गाड़ियों के पहुँचने योग्य रास्ता होना चाहिए। पदार्थों को नमी से बचाये रखने के लिए यथेष्ट परिमाण की खत्तियों में और बाहरी दीवालों से कुछ हटाकर रखना चाहिए। खत्तियाँ कई प्रकार की होती हैं। बहुत-से बड़े कारखानों में, खुले कमरों में या तो ठेला गाड़ी के लिए ऊपर गली होती है या पदार्थ उठाने के ढोल यंत्रों में ऊपर टोंटी होती है। कुछ स्थानों में, इस्पात की बड़ी कुंडियाँ या V —आकार की खत्तियाँ ऊपर स्थित रहती हैं और नीचे से टोंटी द्वारा उनमें रखे हुए पदार्थ निकाले जा सकते हैं। ऊपर स्थित खत्तियाँ बहुधा शक्तिशाली सीमेन्ट की रम्भाकार[2] बनायी जाती हैं। छोटे कारखानों में माल डब्बों से मजदूरों द्वारा उतारा जाता है। अधिक मात्रा के माल के लिए बेलचे और ठेलागाड़ी का प्रयोग किया जाता है। बोरे और पीपे, मजदूरों या ट्रक द्वारा ले जाये जाते हैं।

बड़े कारखानों में अधिक मात्रा के पदार्थ हाथ या यान्त्रिक बेलचों द्वारा अलग पेटी पर रखे जाते हैं और यह पेटी विभिन्न पदार्थों को विभिन्न खत्तियों में पहुँचा देती है।

तौलना और मिश्रण

अल्प मात्रा के पदार्थ को, खत्ती से मंच तुला पर हाथ-ठेले द्वारा ले जाया जाता है। तौलने के पश्चात् इसको मिश्रण कक्ष में ले जाते हैं। काँच-मिश्रण को खूब मिश्रित किया जाता है। बेलचों से इसे पक्के फर्श पर काफी उलटा-पुलटा जाता है। परन्तु यह पुरानी विधि है, इससे पदार्थ अच्छे प्रकार से मिश्रित नहीं हो पाते हैं और उनमें

1. Batch 2. Cylindrical

जंग तथा कार्बनिक पदार्थों की अशुद्धियाँ फ़र्श से आ जाती हैं। दूसरी विधि से मिश्रण, काठ के बड़े बक्सों या कंडालों में हस्त-बेलचों द्वारा किया जाता है। इस विधि से अशुद्धियाँ प्रवेश नहीं कर पातीं और मिश्रण भी उत्तम होता है क्योंकि मिश्रण में बक्स की दीवालों से भी सहायता मिलती है।

बहुत-से कारख़ानों में तुलायुक्त खत्तियाँ ऊपर स्थित होती हैं। टोंटी खोलने से पदार्थ आत्मग पेटी द्वारा मिश्रण यंत्र पर पहुँचते हैं। मिश्रण यंत्र के निकट एक मंच तुला होती है। इस तुला से फुटकर पदार्थ तौलकर मिश्रण यंत्र में बेलचों द्वारा डाले जाते हैं। बड़े कारखानों में मिश्रण-यंत्र एक तुला पर स्थित होता है और यह तुला एक गाड़ी पर रहती है जो कि ऊपर स्थित खत्तियों के नीचे चलती है। यह यंत्र पदार्थों का संग्रह और मिश्रण कर, काँच-मिश्रण को आत्मग पेटी या ट्रक में डाल देता है जिससे कि वह भट्ठी तक पहुँच जाये।

आर्सेनिक-जैसे पदार्थ में जिन्हें काँच-मिश्रण के लिए अल्प मात्रा में प्रयोग किया जाता है, पहले एक छोटी तुला पर तौले जाते हैं और मिश्रण यंत्र में डालने के पूर्व कुछ मिश्रित कर दिये जाते हैं। तीव्र वर्णक, जैसे कोवाल्ट सिलीनियम मैंगनीज को काँच-मिश्रण के किसी शुष्क पदार्थ के साथ मिश्रित कर उसकी तीव्रता कम कर दी जाती है और इस प्रकार उसको अधिक मात्रा में तौला जा सकता है।

मिश्रण यंत्र प्रायः दो प्रकार के होते हैं—

(१) बक्सनुमा, जिनके भीतर घूमनेवाले फलक होते हैं।

(२) स्वयं परिक्रामक।

मिश्रण यंत्रों की समाई ५०० पाउण्ड से १ टन तक अधिक होती है। पूर्ण रूप से मिश्रण दो या तीन मिनट में हो जाता है। जब एक ढोल से काँच-मिश्रण मिश्रित होने पर बाहर निकाला जाता है तब दूसरा काँच-मिश्रण यंत्र के ढक्कन पर तैयार रहता है। इस प्रकार मिश्रण की क्रिया अविश्रान्त होती रहती है।

टूटा काँच[1]

छोटे कारखानों में मिश्रित किये हुए काँच-मिश्रण को सीधे भट्ठी पर ले जाया जाता है और बेलचों द्वारा पॉट (पात्र) में डाल दिया जाता है। इसके पश्चात् बिना कुचला टूटा काँच पॉट में डाला जाता है। बड़े कारखानों में, जहाँ काँच-मिश्रण भट्ठी में आत्मग यंत्र द्वारा डाला जाता है, वहाँ टूटा काँच कभी-कभी हाथ से बेलचों

1. Cullet

द्वारा पृथक् से डाला जाता है। बहुत-से स्थानों में टूटे काँच को यांत्रिक वेलनों से तोड़कर, फिर उसे चुम्बकीय पृथक्कर्ता द्वारा ले जाया जाकर और तौलकर मिश्रण यंत्र में डालते हैं। यह यंत्र ढोलनुमा होता है। टूटे काँच का साधारणतया अनुपात सम्पूर्ण मिश्रण के $\frac{1}{4}$ से $\frac{1}{2}$ तक होता है। काँच-मिश्रण को मिश्रण यंत्र से संचय-कक्ष या भट्ठी तक ट्रक या आत्मग पेटी द्वारा पहुँचाया जाता है। टूटे काँच से द्रुत काँच की श्यानता बढ़ जाती है।

मिश्रण के समय श्रमिकों को क्षार, चूना और सीस की धूल के कष्ट से बचने के लिए नाक के ऊपर श्वासरक्षक पहनना चाहिए। रुई की डाट जो नथुनों में रखी जा सकती है, सबसे सरल श्वासरक्षक है।

काँच-मिश्रण के पदार्थों से प्राप्त काँच के अवयव

पदार्थ	सूत्र	अणु-भार	काँच के अवयव	
			आक्साइड	भार
अम्लीय—				
आर्सेनिक*	As_4O_6	३९६	$2As_2O_3$	३९६
बोरिक अम्ल	H_3BO_3	६२	$\frac{1}{2}B_2O_3$	३५
सोहागा (दानेदार)	$Na_2B_4O_7, 10H_2O$	३८२	Na_2O	६२
			$2B_2O_3$	१४०
सोहागा (केलासीय)	$Na_2B_4O_7,$	२०२	Na_2O	६२
			$2B_2O_3$	१४०
कैलशियम फ़ासफ़ेट	$Ca_3(PO_4)_2$	३१०·३	$3CaO$	१६८.३
			P_2O_5	१४२
सोडियम फ़ासफ़ेट	$Na_2H(PO_4), 10H_2O$	३२२	Na_2O	६२
			$\frac{1}{2}P_2O_5$	७१
क्वार्ट्ज़ या बालू (सिलिका)	SiO_2	६०·३	SiO_2	६०·३
भास्मिक (पैठिक)				
अल्युमिना (निस्तापित)	Al_2O_3	१०२.२	Al_2O_3	१०२.२
अल्युमिना (हाइड्रेट)	$Al_2(OH)_6$	१५६.२	Al_2O_3	१०२.२
बेरियम कार्बोनेट	$BaCO_3$	१९७.४	BaO	१५३.४
बेरियम सल्फ़ेट	$BaSO_4$	२३३.४	BaO	१५३.४
†क्रायोलाइट	Na_3AlF_6	२१०.१	$\frac{3}{2}Na_2O$	९३.०
			$\frac{1}{2}Al_2O_3$	५१.१

* कुछ भाग वाष्पशील होता है। † सिलिका का १०.४५ भाग वाष्पशील होता है।

पदार्थ	सूत्र	अणु-भार	काँच के अवयव	
			आक्साइड	भार
डोलोमाइट	$MgCO_3$, $CaCO_3$	१८४.४	MgO CaO	४०.३ ५६.१
फेल्सपार (अलवाइट)	Na_2O, Al_2O_3, $6SiO_2$	५२६	Na_2O Al_2O_3 $6SiO_2$	६२. १०२.२ ३६१.८
फेल्सपार (एनारथाइट)	CaO, Al_2O_3, $2SiO_2$	२७८.९	CaO Al_2O_3 $2SiO_2$	५६.१ १०२.२ १२०.६
फेल्सपार (आर्थोक्लेज)	K_2O, Al_2O_3, $6SiO_2$	५५८.१	K_2O Al_2O_3 $6SiO_2$	९४.१ १०२.२ १२०.६
‡फ्लूरस्पार	CaF_2	७८.१	CaO	५६.१
केओलिन	AL_2O_3,$2SiO_2$, $2H_2O$	२५८.८	Al_2O_3 $2SiO_2$	१०२.२ १२०.६
चूना पत्थर	$CaCO_3$	१००.१	CaO	५६.१
मुरदासंख	PbO	२२३.१	PbO	२२३.१
मैगनीशिया (निस्तापित)	MgO	४०.३	MgO	४०.३
मैगनेसाइट	$MgCO_3$	८४.३	MgO	४०.३
पोटेशियम नाइट्रेट	KNO_3	१०१.१	$\frac{1}{2}K_2O$	४७.०५
पोटाश	K_2CO_3	१३८.१	K_2O	९४.१
बुझा चूना	CaO	५६.१	CaO	५६.१
लाल सीस	Pb_3O_4	६८५.३	$3PbO$	६६९.३
साल्टकेक	Na_2SO_4	१४२	Na_2O	६२
बेबुझा चूना	$Ca(OH)_2$	७४.१	CaO	५६.१
सोडा ऐश	Na_2CO_3	१०६	Na_2O	६२
सोडियम नाइट्रेट	$NaNO_3$	८५	$\frac{1}{2}Na_2O$	३१
जस्ता कार्बोनेट	$ZnCO_3$	१२५.४	ZnO	८१.४
जस्ता आक्साइड	ZnO	८१.४	ZnO	८१.४

‡ सिलिका का २०.१५ भाग वाष्पशील होता है।

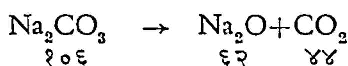
काँच-निर्माण के लिए गणना

बहुत-से कारखाने, काँच-निर्माण में अनिर्मित पदार्थो की प्रयोग में आनेवाली मात्राओं को अर्थात् काँच-मिश्रण सूत्र को अति सावधानी से गुप्त रखते आ रहे हैं। अधिकतर काँच-मिश्रण के सूत्र 'परीक्षा एवं भूल' विधि से प्राप्त किये गये थे। प्राचीन समय में यह एक प्रकार से आवश्यक और सही था क्योंकि उन दिनों पेटेन्ट द्वारा आविष्कार सुरक्षित नहीं किये जा सकते थे।

परन्तु अब सही विश्लेषण की विधियों के कारण किसी भी काँच का विश्लेषण किया जा सकता है और काँच-मिश्रण के अवयवों को ठीक-ठीक ज्ञात किया जा सकता है। फिर भी लघु मात्रा के वर्णकों का और पदार्थो के वाष्पशील होने की मात्रा का सही पता लगाना अति कठिन है। द्रावित काँच द्वारा पात्र और कुण्ड भट्ठियों के ब्लाक के ऊष्मसह पदार्थो के क्षरण के कारण, काँच में कुछ अल्युमिना आ जाता है। अतः सही गणना के लिए अल्युमिना की मात्रा के लिए कुछ मुजरा देना चाहिए। इस प्रकार Al_2O_3 की मात्रा, काँच में ·३ से ·५ प्रतिशत तक प्रवेश कर सकती है।

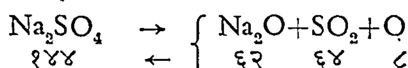
गणना के लिए काँच को उसके आक्साइडों के अवयवों[1] का मिश्रण मानते हैं।

काँच-मिश्रण के पदार्थों से आक्साइडों की प्राप्ति—



$$\underset{१०६}{Na_2CO_3} \rightarrow \underset{६२}{Na_2O} + \underset{४४}{CO_2}$$

१०६ भाग शुद्ध सोडा ऐश से ६२ भाग सोडियम आक्साइड प्राप्त होता है।



$$\underset{१४४}{Na_2SO_4} \rightleftarrows \left\{ \underset{६२}{Na_2O} + \underset{६४}{SO_2} + \underset{८}{O} \right.$$

१४४ भाग शुद्ध साल्टकेक से ६२भांग सोडियम आक्साइड प्राप्त होता है।

यदि काँच में किसी आक्साइड की प्रतिशत मात्रा ज्ञात है तो उसके लिए आवश्यक अनिर्मित पदार्थ की मात्रा की गणना की जा सकती है। १०६ भाग सोडा ऐश से, या १४४ भाग साल्टकेक से ६२ भाग सोडियम आक्साइड प्राप्त होता है।

पदार्थों की शुद्धता

जब काँच-मिश्रण के पदार्थ शुद्ध नहीं होते तब काँच की रचना में अशुद्धियाँ आ जाती हैं और इस कारण काँच-मिश्रण के अन्य पदार्थों की आवश्यक मात्रा में परिवर्तन करना पड़ता है।

1. Constituents

उदाहरण—यदि सोडा ऐश की रचना निम्न है—

Na_2CO_3	९६.२ प्रतिशत
Na_2SO_4	२.३ ,,
Al_2O_3	१.१ ,,
Fe_2O_3	.२ ,,
उज्ज्वालन हानि	.२ ,,

तब सोडा ऐश की 'क' मात्रा से निम्न आक्साइडों की मात्राएँ काँच में आयेंगी।

$$Na_2O = \left\{ क \times \frac{६२}{१०६} \times \frac{९६\cdot२}{१००} + क \times \frac{७२}{१४४} \times \frac{\cdot२\cdot३}{१००} \right\} \text{ भाग।}$$

$$Al_2O_3 = \left(क \times \frac{१\cdot१}{१००} \right) \text{ भाग।}$$

$$Fe_2O_3 = \left\{ क \times \frac{\cdot२}{१००} \right\} \text{ भाग।}$$

कुछ आदर्श गणनाएँ—

(१) निम्न अणुसूत्र के काँच उत्पादन के लिए, काँच-मिश्रण ज्ञात करो—



$6SiO_2,\ 1.0\ Na_2O,\ 0.8CaO$

SiO_2 के ६ अणु, वालू के ६ अणुओं से प्राप्त होते हैं,

∴ वालू=६ × ६०=३६० भाग, तौल से

Na_2O का १ अणु, सोडा ऐश के १ अणु से प्राप्त होता है,

∴ सोडा ऐश=१०६ भाग, तौल से

CaO के .८ अणु, चूना पत्थर के .८ अणु से प्राप्त होते हैं,

∴ चूना पत्थर=.८ × १००=८० भाग, तौल से

अतः काँच-मिश्रण इस प्रकार है—

वालू	३६०	भाग	यानी	वालू	१०००	भाग
सोडा ऐश	१०६	,,		सोडा ऐश	२९४	,,
चूना पत्थर	८०	,,		चूना पत्थर	२२२	,,

(२) निम्न काँच-मिश्रण से प्राप्त काँच का अणु सूत्र ज्ञात करो।

वालू	१०००	भाग
सोडा ऐश	४००	,,
चूना पत्थर	१००	,,

काँच-मिश्रण	अणुओं की आपेक्षिक संख्या	पदार्थ के एक अणु से प्राप्त आक्साइड के अणु की संख्या	आक्साइड के अणुओं की आपेक्षिक संख्या	आक्साइड का परिवर्तित अनुपात
वालू (SiO_2) १०००	$\frac{१०००}{६०}$ = १६.६७	१	१६.६७	६.०० SiO_2
सोडा ऐश (Na_2CO_3) ४००	$\frac{४००}{१०६}$ = ३.७७	१	३.७७	१.३६ Na_2O
चूना पत्थर ($CaCO_3$) १००	$\frac{१००}{१००}$ = १.००	१	१	.३६ CaO

अतः काँच का अणु सूत्र इस प्रकार है—


$6SiO_2$, 1.36 Na_2O, .36 CaO.

(३) निम्न काँच की रासायनिक रचना से काँच का अणु सूत्र ज्ञात करो—

SiO_2	75.0	प्रतिशत
Na_2O	15.0	,,
CaO	10.0	,,

आक्साइड	आक्साइड अणुओं की आपेक्षिक संख्या	आक्साइड का परिवर्तित अनुपात
SiO_2	$\frac{75}{60} = 1.25$	६SiO_2
Na_2O	$\frac{15}{62} = .24$	१.१५ Na_2O
CaO	$\frac{10}{56} = .18$	.८६ CaO.

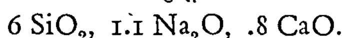
अतः काँच का अणु सूत्र इस प्रकार है—


6 SiO_2, 1.15 Na_2O, .86 CaO

या

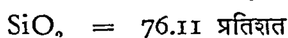

6 SiO_2, 1.15 R_2O, .86 RO.

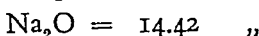
(४) निम्न काँच के अणु सूत्र से काँच की रासायनिक रचना ज्ञात करो—

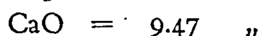

6 SiO_2, 1.1 Na_2O, .8 CaO.

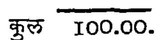
आक्साइड	अणुओं की आपेक्षिक संख्या	आक्साइड की आपेक्षिक मात्रा	प्रतिशत में परिवर्तन
SiO_2	6	$6 \times 60 = 360$	$\frac{360 \times 100}{473} = 76.11$ प्रतिशत
Na_2O	1.1	$1.1 \times 62 = 68.2$	$\frac{68.2 \times 100}{473} = 14.42$ „
CaO	.8	$.8 \times 56 = 44.8$	$\frac{44.8 \times 100}{473} = 9.47$ „
		कुल 473.0	

अतः काँच की रासायनिक रचना इस प्रकार है—

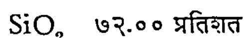

SiO_2 = 76.11 प्रतिशत

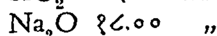

Na_2O = 14.42 „

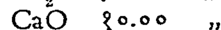

CaO = 9.47 „


कुल 100.00.

(५) निम्न रासायनिक रचना के काँच के लिए काँच-मिश्रण ज्ञात करो—


SiO_2 ७२.०० प्रतिशत


Na_2O १८.०० „


CaO १०.०० „

आक्साइड	आक्साइड की मात्रा	पदार्थ की मात्रा जो आक्साइड की मात्रा के लिए आवश्यक है	वालू के प्रति १००० भागों के लिए परिवर्तित मात्रा
SiO_2	७२	वालू ७२ भाग	वालू १००० भाग
Na_2O	१८	सोडा ऐश $\frac{१८ \times १०६}{६२}$ = ३०·७७ „	सोडा ऐश ४२७ „
CaO	१०	चूना पत्थर $\frac{१० \times १००}{५६}$ = १७·८६ „	चूना पत्थर २४८ „

अतः काँच-मिश्रण इस प्रकार हैं—

वालू	१०००	भाग
सोडा ऐश	४२७	"
चूना पत्थर	२४८	"

(६) निम्न काँच-मिश्रण से बने हुए काँच की रासायनिक रचना ज्ञात करो—

वालू	१०००	भाग
सोडा ऐश	३८०	"
चूना पत्थर	१२०	"

पदार्थ	मात्रा	पदार्थ में आक्साइड की मात्रा	प्रतिशत में परिवर्तन
वालू	१०००	SiO_2 =१०००	७७·६ प्रतिशत
सोडा ऐश	३८०	Na_2O $\frac{३८० \times ६२}{१०६}$ =२२२.३	१७·२ "
चूना पत्थर	१२०	CaO $\frac{१२० \times ५६}{१००}$ =६७.२	५·२ "

अतः काँच की रासायनिक रचना इस प्रकार है—

SiO_2	७७.६	प्रतिशत
Na_2O	१७.२	"
CaO	५.२	"

(७) निम्न काँच-मिश्रण से उत्पादित काँच की प्रतिशतता ज्ञात करो—

वालू	१००	भाग
सोडा ऐश	४०	"
चूना पत्थर	१०	"

जब कि टूटे काँच का प्रयोग निम्न मात्राओं में किया जाता है—

(क) वालू के भार का २० प्रतिशत।

(ख) अनिर्मित पदार्थों के भार का २० प्रतिशत।

(ग) अनिर्मित पदार्थों से उत्पादित काँच के भार का २० प्रतिशत।

अनिर्मित पदार्थ			अनिर्मित पदार्थों से प्राप्त आक्साइड की मात्रा		
वालू	१००	भाग	SiO_2		=100
सोडा ऐश	४०	"	Na_2O	$= \frac{40 \times 62}{106}$	=23·4
चूना पत्थर	१०	"	CaO	$= \frac{10 \times 56}{100}$	=5·6
टूटा काँच $\left(१०० \times \frac{२०}{१००}\right)$	=२०	"	टूटा काँच		=20
	कुल	१७०			कुल 149

काँच-मिश्रण से काँच का प्रतिशत उत्पादन$= \frac{१४९}{१७०} \times १०० =$ ८७.६

(ब) टूटे काँच का भार $= \left(\frac{१५० \times २०}{१००}\right) =$ ३० भाग,

अतः काँच का प्रतिशत उत्पादन$= \frac{१५९}{१८०} \times १०० =$ ८८.३

(स) अनिर्मित पदार्थों से प्राप्त आक्साइडों का भार=१२९ भाग,

अतः टूटे काँच का भार $= \frac{१२९ \times २०}{१००} =$ २५.८ भाग,

और काँच का प्रतिशत उत्पादन$= \frac{१२९ + २५८}{१५० + २५.८} \times १००$

=८८ भाग।

(८) निम्न रचना के काँच-उत्पादन के लिए, काँच-मिश्रण ज्ञात करो—

SiO_2	६५	प्रतिशत
Al_2O_3	५	"
CaO	१३	"
Na_2O	१०	"
K_2O	७	"

निम्न अनिर्मित पदार्थों का प्रयोग करो—

बालू [जिसकी रचना है, SiO_2 ९८%; Fe_2O_3 ·५%]

फेल्स्पार [जिसकी रचना है, SiO_2 ६५%; Al_2O_3 १९%; K_2O १६%]

चूना-पत्थर [जिसकी रचना है, $CaCO_3$ ९७%; SiO_2 २%, Al_2O_3 ·५%, Fe_2O_3 ·५%]

पोटाश [जिसकी रचना है, K_2O ६७%]

सोडा ऐश [जिसकी रचना है, Na_2CO_3 ९९%]

आवश्यक सोडा ऐश $= १० \times \frac{१००}{९९} \times \frac{१०६}{६२} = १७.३$ भाग,

आवश्यक चूना पत्थर $= १३ \times \frac{१००}{९७} \times \frac{१००}{५६} = २३.९$ भाग,

२३.९ भाग चूना पत्थर में होगा $२३.९ \times \frac{२}{१००} = .४८$ भाग, SiO_2,

और $२३.९ \times \frac{५}{१००} = .१२$ भाग, Al_2O_3

∴आवश्यक $Al_2O_3 = (.५ - .१२) = ४.८८$ भाग,

आवश्यक फेल्स्पार $= ४.८८ \times \frac{१००}{१९} = २५.७$ भाग,

२५.७ भाग फेल्स्पार में, $२५.७ \times \frac{६५}{१००} = १६.७$ भाग SiO_2

और $२५.७ \times \frac{१६}{१००} = ४.१$ भाग K_3O

∴ आवश्यक $K_2O = (७ - ४.१) = २.९$ भाग,

∴ आवश्यक $SiO_2 = \{६५ - (.४८ + १६.७)\} = ४७.८२$ भाग

आवश्यक पोटाश $= २.९ \times \frac{१००}{६७} = ४.३$ भाग,

आवश्यक बालू $= ४७.८२ \times \frac{१००}{९८} = ४८.८$ भाग,

अतः काँच मिश्रण इस प्रकार है—

वालू	४८.८	भाग	यानी	वालू	१०००
सोडा ऐश	१७.३	„		सोडा ऐश	३५४
पोटाश	४.३	„		पोटाश	८८
चूना पत्थर	२३.९	„		चूना पत्थर	४९०
फेलस्पार	२५.७	„		फेलस्पार	५२७

काँच-निर्माण के सिद्धान्त

काँच-निर्माण में सिलिकेटों (और वोरेटों) के उपयुक्त मिश्रण का उत्पादन करना होता है और इसको इस प्रकार ठंडा करना होता है कि केलास न वनने पाये। उत्पादित काँच कई पदार्थों का पारस्परिक घोल होता है, अतः इसका कोई सरल और निश्चित सूत्र नहीं दिया जा सकता। जव वालू, सोडा ऐश और चूना पत्थर का एक साथ द्रावण करते हैं तो अति सम्भव है कि प्राप्त मिश्रण में सोडियम-मेटा-सिलीकेट, कैलशियम-मेटा-सिलीकेट और अतिरिक्त सिलिका हों। यह भी सम्भव है कि अन्य सिलीकेट, जैसे डाय-सिलिकेट या जटिल लवण भी हों, इसलिए काँच के रासायनिक या अन्य सूत्र देना सम्भव नहीं है। क्योंकि काँच का यथार्थ संघटन निश्चित नहीं हुआ है इसलिए काँच की रचना वहुधा आक्साइडों में व्यक्त की जाती है। इसका यह अर्थ नहीं है कि काँच में आक्साइड मुक्त अवस्था में उपस्थित हैं, परन्तु उनके संयोजन के ढंग[1] को नहीं व्यक्त किया गया है। यह विधि कम-से-कम सरल तो अवश्य है। भिन्न आक्साइडों और उनके लवणों के मिश्रण का द्रवण कर काँच वनाया जा सकता है। सदियों के अनुभव से काँचों की रचनाओं की सीमाएँ निर्धारित-सी हो चुकी हैं और यह आश्चर्य की वात है कि प्राचीन और आधुनिक सिलिका-चूना-सोडायुक्त वोतलों और द्वारी काँचों की रचनाओं में वहुत समता है। यह समता अचानक ही नहीं हुई है। वहुत-से प्राप्य आक्साइडों के संयोजन में से कुछ ही रचनाओं के चुनने का वैज्ञानिक कारण भी है। काँच-निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि—

(१) मितव्ययिता एवं सस्ते उत्पादन के लिए सिलिका का अधिक मात्रा में प्रयोग किया जाय।

(२) भट्ठी में प्राप्त सीमित ताप के कारण कुछ सोडा ऐश का प्रयोग किया जाय।

1. Mode of combination

(३) काँच-कार्य के समय काँच की उपयुक्त श्यानता के लिए कुछ चूना का प्रयोग किया जाय।

(४) स्थायी काँच उत्पादन के लिए सोडा ऐश और चूना का सीमित मात्रा में प्रयोग किया जाय।

(५) विकाचरण के निवारण के लिए आक्साइडों के अनुपात पर विशेष ध्यान दिया जाय।

कुछ आदर्श काँचों की रचना और उपयुक्त काँच-मिश्रण

१. द्वारी काँच

संख्या	१	२	३	४	५	६
आक्साइड	प्रतिशत रचना					
SiO_2	७२.०	७३.०	७१.६	७०.९	७०.९	७२.१
Al_2O_3	१.६	.५	.७	१:७	.५	१.४
CaO	१०.४	८.०	१२.६	१४.०	११.१	१३.४
MgO	—	३.०	१.१	—	—	—
Na_2O	१६.०	१५.५	१३.४	१२.३	१७.१	१२.४

द्वारी काँचों के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण—

संख्या	१	२	३	४	५	६
अनिर्मित पदार्थ	भार के अनुसार					
बालू	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००
अल्युमिना	२२	७	१०	२४	७	१९
चूना पत्थर	२५७	१९५	३१४	३५३	२७९	३३२
मैंगनेसाइट	—	८६	३२	—	—	—
सोडा ऐश	३८०	३६३	३२०	२९६	४१२	२९६

१. फूरकाल्ट यंत्र निर्मित, यूरोप का चादरी काँच।

२. फूरकाल्ट यंत्र निर्मित चादरी काँच।

३. लूवर यंत्र निर्मित चादरी काँच।
४. वेलन द्वारा निर्मित, यूरोप का पट्टिका काँच।
५. अमेरिकन जालीदार पट्टिका काँच।
६. हस्त-निर्मित ब्रिटिश रम्भाकार काँच।

(२) धमित काँच-वस्तुएँ (ब्लोन वेयर)

संख्या	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
आक्साइड	प्रतिशत रचना								
SiO_2	७४.४	६७.२	७०.५	७४.०	७४.५	७४.०	७४.०	७५.४	७७.८
Al_2O_3	१.२	—	३.५	.५	.९	—	—	—	—
CaO	५.०	१.०	१३.६	५.०	५.५	६.८	७.०	३.७	३.६
MgO	३.५	—	१.६	३.५	४.१	—	—	—	—
PbO	—	१४.८	—	—	—	—	—	—	—
Na_2O	१५.९	९.५	१०.८	१७.०	१५.०	१७.४	१९.०	१७.८	१६.२
K_2O	—	७.१	—	—	—	१.४	—	२.६	२.१
B_2O_3	—	—	—	—	—	—	—	.३	—
As_2O_3	—	—	—	—	—	—	—	.२	—

धमित काँच-वस्तुओं के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण—

संख्या	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
अर्निमित पदार्थ	भार के अनुसार								
बालू	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००
अल्युमिना	१६	—	५०	७	१२	—	—	—	—
चूना पत्थर	१२०	२७	३४४	१२१	१३२	१६४	१६९	८८	८३
मैगनेसाईट	९८	—	४७	९९	११५	—	—	—	—
लाल सीस	—	२२३	—	—	—	—	—	—	—
सोडा ऐश	३६५	२४२	२६२	३९२	३४४	४०२	४३९	४०१	३५६
पोटाश	—	१२१	—	—	—	—	—	—	—
शोरा	—	५०	—	—	—	४१	—	७५	५८
सोहागा	—	—	—	—	—	—	—	६	—
आर्सनिक	—	७	—	—	—	—	—	३	—

७. काँच गोला प्रदाय यंत्र द्वारा निर्मित अमेरिकन सुषिर वस्तु।
८. अमेरिकन भोजन-एवं पान-पात्र।

९. अमेरिकन हस्त प्रदाययंत्र ।
१०. अमेरिकन यंत्र काँच गोलाप्रदाय युक्त निर्मित ।
११. जर्मन ओवेन यंत्र ।
१२. धमनाड (फुंकनी) द्वारा निर्मित भारतीय वस्तुएँ ।
१३. भारतीय चूड़ी काँच ।
१४. धमनाड द्वारा निर्मित भारतीय वस्तुएँ ।
१५. धमनाड द्वारा निर्मित भारतीय वस्तुएँ ।

(३) पीडन यंत्र द्वारा निर्मित भोजन-पान पात्र ।

संख्या	१६	१७	१८	१९	२०	२१
आक्साइड	प्रतिशत रचना					
SiO_2	७६.२	७२.०	६४.७	४८.७	५२.५	६१.३
CaO	७.७	६.५	१.८	—	—	४.५
PbO	—	—	—	३८.०	३३.८	१५.५
BaO	—	—	१२.७	—	—	६.२
ZnO	—	४.३	—	—	—	—
Na_2O	१६.१	६.३	९.४	—	.३	—
K_2O	—	१०.८	११.३	१३.३	१३.३	१२.५
B_2O_3	—	—	—	—	.६	—
As_2O_3	—	—	—	—	.१	—

पीडन यंत्र द्वारा निर्मित भोजन-पान पात्रों के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण—

संख्या	१६	१७	१८	१९	२०	२१
अनिर्मित पदार्थ	भार के अनुसार					
बालू	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००
चूना पत्थर	१८०	१६०	५०	—	—	.१३०
लाल सीस	—	—	—	८००	६६०	२६०
बेरियम कार्बोनेट	—	—	—	२५०	—	—
जस्ता आक्साइड	—	६०	—	—	—	—
सोडा ऐश	४००	१५०	२५०	—	—	—
पोटाश	—	२२०	१००	३६६	३३०	२८०
शोरा	—	—	६०	५०	४०	३०
सोहागा	—	—	—	—	३०	—
आर्सेनिक	—	—	—	—	२	—

१६. ब्रिटिश साधारण पीड़न काँच पात्र।
१७. ब्रिटिश साधारण भोजन-पान पात्र[1]।
१८. ब्रिटिश पीडन काँच-पात्र।
१९. ब्रिटिश पूर्ण मणिभ काँच।
२०. ब्रिटिश पूर्ण मणिभ काँच।
२१. ब्रिटिश अर्ध मणिभ काँच।

(४) विद्युत प्रकाश दीप

संख्या	२२	२३	२४	२५	२६
आक्साइड	प्रतिशत रचना				
SiO_2	६८.१	७२.१	७३.६	७२.५	६८.०
Al_2O_3	—	—	—	१.६	—
CaO	—	३.४	५.४	४.९	४.६
MgO	—	३.९	३.७	.३.५	—
PbO	६.८	—	—	—	१२.६
BaO	७.१	—	—	—	—
Na_2O	१०.४	—	१७.२	१७.५	५.५
K_2O	७.६	२०.५	—	.५	९.२

विद्युत प्रकाश दीपों के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण।

संख्या	२२	२३	२४	२५	२६
अनिर्मित पदार्थ	भार के अनुसार				
वालू	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००
अल्युमिना	—	—	—	२२	—
चूना पत्थर	—	८४	१३१	१२१	१२०
मैगनेसाइट	—	११३	१०५	१०१	—
लाल सीस	१०२	—	—	—	१९०
बेरियम कार्बोनेट	१३४	—	—	—	—
सोडा ऐश	२६१	—	४००	४१३	१४०
पोटाश	१३०	४१७	—	—	१५९
शोरा	५०	—	—	—	६०

1. Table ware

२२. जर्मन काँच।

२३. इंगलिश काँच।

२४. अमेरिकन पूर्ण आत्मग यंत्र निर्मित काँच।

२५. अमेरिकन विद्युत दीप एवं नली-काँच।

२६. ब्रिटिश काँच।

(५) ऊष्मा प्रतिरोधक काँच (हीट रेजिस्टिंग ग्लास)

संख्या	२७	२८	२९	३०	३१
आक्साइड	प्रतिशत रचना				
SiO_2	७३.५	५५.०	७३.९	७६.८	७५.३
Al_2O_3	३.६	१.२	२.२	.७	१.८
CaO	६.६	—	—	६.५	.६
MgO	.१	.२	—	.३	.१
PbO	—	३५.०	—	—	—
ZnO	—	१.०	—	—	—
Na_2O	१४.६	२.१	६.७	११.२	५.०
K_2O	—	४.५	—	४.८	—
B_2O_3	१.२	—	१६.५	—	१५.२
As_2O_3	—	१.०	.८	—	२.०

ऊष्मा प्रतिरोधक काँचों के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण—

संख्या	२७	२८	२९	३०	३१
अनिर्मित पदार्थ	भार के अनुसार				
बालू	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००
अल्युमिना	४९	२२	३०	९	२४
चूना पत्थर	१६०	—	—	१५१	१४
मैगनेसाइट	३	७	—	८	३
सोडा ऐश	३२८	६५	१५५	२४९	११३
पोटाश	—	१२०	—	९२	—
लाल सीस	—	६५१	—	—	—
जस्ता आक्साइड	—	१७	—	—	—
सोहागा	४४	—	—	—	—
बोरिक अम्ल	—	—	३९५	—	३५७
शोरा	—	५०	—	—	—
आर्सेनिक	—	१७	११	—	२६

२७. जर्मन थर्मस फ्लास्क ।

२८. खनिक दीप ।

२९. येना ताप दीपित गैस-चिमनी ।

३०. आस्ट्रीयन दीप ।

३१. येना ऊष्मा प्रतिरोधक गैस-चिमनी ।

(६) रासायनिक काँच

संख्या	३२	३३	३४	३५
आक्साइड	प्रतिशत रचना			
SiO_2	६६.६	७५.९	६४.७	८०.६
Al_2O_3	२.९	.१४	४.२	२.२
CaO	२.७	८.७	.६	.२
MgO	२.५	.२	.२	.३
ZnO	३.६	—	१०.९	—
B_2O_3	८.०	—	१०.९	११.९
Na_2O	१०.०	७.१	७.५	३.९
K_2O	१.३	७.९	.७	.७
As_2O_3	—	—	.१४	.७

रासायनिक काँचों के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण—

संख्या	३२	३३	३४	३५
अनिर्मित पदार्थ	भार के अनुसार			
वालू	१०००	१०००	१०००	१०००
अल्युमिना	४३	२	६५	२५
चूना पत्थर	७२	२०५	१७	४
मैगनेसाईट	७८	६	६	८
जस्ता आक्साइड	५४	—	१६८	—
सोहागा	३२८	—	४५९	—
वोरिक अम्ल	—	—	—	२६२
सोडा ऐश	१६७	१६०	७१	८३
पोटाश	२९	१५३	११	१३
आर्सेनिक	—	—	२	९

३२. फ्राई।

३३. केवेलियर।

३४. येना।

३५. पाइरेक्स।

(७) थर्मामीटर काँच

संख्या	३६	३७	३८
आक्साइड	प्रतिशत रचना		
SiO_2	६७.३	७२.०	६०.८
Al_2O_3	२.५	५.०	३.१
B_2O_3	२.०	१२.०	१.३
CaO	७.०	—	—
PbO	—	—	२२.८
MgO	—	—	.१
ZnO	७.०	—	—
Na_2O	१४.०	११.०	१०.३
K_2O	—	—	१.१
As_2O_3	—	—	.६
P_2O_5	—	—	.१

थर्मामीटर काँचों के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण—

संख्या	३६	३७	३८
अनिर्मित पदार्थ	भार के अनुसार		
वालू	१०००	१०००	१०००
अल्युमिना	३७	६९	५१
सोहागा	८४	४५५	५८
चूना पत्थर	१८६	—	—
लाल सीस	—	—	३८४
मैगनेसाइट	—	—	३
जस्ता आक्साइड	१०४	—	—
सोडा ऐश	३३३	१३५	२७२
शोरा	—	—	३९
आर्सेनिक	—	—	१०
सोडियम फ़ासफेट	—	—	८

३६. येना साधारण १६ III।

३७. येना ५९ III।

३८. अमेरिकन।

(८) प्रकाशीय काँच

संख्या		३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५
		प्रतिशत रचना						
आक्साइड	μ_D	१.५८०३	१.६०६८	१.६५५५	१.५१७९	१.५९०५	—	१.६६
	γ	४१.९	३७.५	३४.४	६०.९	५७.०	—	—
Si_2O		५३.९	३९.०	२०.०	६८.५	३९.६	७०.६	४०.०
Al_2O_3		—	—	—	—	—	.६	.२
CaO		२.०	४.०	—	—	२.०	१४.२	२.४
PbO		३६.७	४९.०	७९.९	—	३.०	—	५२.७
BaO		—	—	—	९.७	४४.०	—	—
ZnO		—	—	—	१.०	७.७	—	—
Na_2O		१.०	३.०	—	१२.०	—	१२.५	२.०
K_2O		६.०	४.०	—	५.०	—	—	३.०
B_2O_3		—	—	—	३.५	५.०	—	—
As_2O_3		.३	.२	.१	.२	.४	—	—
Sb_2O_3		—	१.०	—	—	—	—	—

प्रकाशीय काँचों के लिए उपयुक्त काँच-मिश्रण—

संख्या	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५
अनिर्मित पदार्थ	भार के अनुसार						
बालू	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००	१०००
अल्युमिना	—	—	—	—	—	८	५
चूना पत्थर	६६	१८३	—	—	९०	३५९	१०७
लाल सीस	६९७	१२८६	४०९०	—	७८	—	१३४९
बेरियम कार्बोनेट	—	—	—	१८२	१४३०	—	—
जस्ता आक्साइड	—	—	—	१५	१९४	—	५
सोडा ऐश	३२	१३२	—	३००	—	३०३	८५
पोटाश	१३६	९७	—	१०६	—	—	६९
बोरिक अम्ल	—	—	—	९०	२२४	—	—
शोरा	४०	८०	—	—	—	—	६०
आर्सेनिक	६	५	५	३	१०	—	—
ऐन्टेमनी	—	२७	—	—	—	—	—

३९. हलका फ्लिंट काँच।
४०. भारी फ्लिंट काँच।
४१. अति भारी फ्लिंट काँच।
४२. हलका असीस काँच (क्राउन ग्लास)।
४३. भारी बेरियम असीस काँच।
४४. धूप के चश्मों का मजबूत अमेरिकन काँच।
४५. चश्मे का फ्लिंट काँच।

रंगीन काँच

रंगीन काँच बनाने के लिए काँच-मिश्रण में एक या अधिक वर्णकों का योग करना होता है।

वर्णक	काँच का रंग	वर्णक की मात्रा (प्रति १००० भाग बालू)	रंग लाने के लिए सहायक रासायनिक पदार्थ की मात्रा	विशेषताएँ
कैडलियम सलफाइड	पीला	२० से ३०भाग	गंधक ५से१०भाग	
कलशियम फ़ासफ़ेट	उपल	१२०से३०० ,,		
कार्बन	अम्बर	५ से १० ,,	गंधक २ से ४ ,,	
क्रोमियम आक्साइड	हरा	१ से २ ,,		
कोबाल्ट आक्साइड	नीला	१ से ३ ,,		
क्रायोलाइट	उपल	१००से१२० ,,		
क्यूपरिक आक्साइड	आसमानी	१० से २० ,,		आक्सीकरण वातावरण।
क्यूपरस आक्साइड	लाल	२ से ३ ,,	स्टेनस आक्साइड १५ भाग रोशेल लवण ८ भाग	अवकरण वातावरण,पुनः तापन से रंग उभरता है।
फ्लर स्पार	उपल	१००से१५० ,,	फेल्सपार १००से १५० भाग	
स्वर्ण क्लोराइड	लाल	१ से ४ ,,		पुनः तापन से उभर आता है।
लोह आक्साइड	हरा	१ से २० ,,		
मैंगनीज़ डायआक्साइड	बैंगनी	४० से ८० ,,		

वर्णक	काँच का रंग	वर्णक की मात्रा (प्रति १००० भाग वालू	रंग लाने के लिए सहायक रासायनिक पदार्थ की मात्रा	विशेषताएँ
मैंगनीज डाय आक्साइड	—	२ से ५ भाग		काँच में वर्ण निवारण के लिए।
निकल आक्साइड	वैंगनी	५ से ७ ,,	कोवाल्ट आक्साइड .१ से .२ भाग	
पोटेशियम आइक्रोमेट	हरा	५ से १० ,,	ताम्र आक्साइड १ से २ भाग	
सिलीनियम	लाल	८ से १५ ,,	कैडमियम सल्फाइड १० से १५ भाग जस्ता धूल कुछ मात्रा	पुनः तापन से रंग उभरता है।
सिलीनियम	—	·०२ से ·०४ ,,	कोवाल्ट आक्साइड ·००३ से ·००६ भाग	काँच में वर्ण निवारण के लिए।
गंधक	अम्बर	१५ से २० ,,		
वंग आक्साइड	उपल	४० से १०० ,,		
यूरेनियम आक्साइड	पीला	३ से ६ ,,		

चौथा अध्याय

काँच के गुण

(क) भौतिक गुण

ठोस अवस्था में काँच के भौतिक गुणों में वहुत थोड़ा अन्तर पड़ता है और इस गुण के कारण कई प्रकार की काँच-वस्तुएँ उत्पादित की जा सकती हैं। वहुत-से भौतिक गुण योगशील[1] हैं। योगशील गुण काँच से अवयव आक्साइडों के रासायनिक गुणों पर ही नहीं निर्भर करता वल्कि काँच में उपस्थित प्रत्येक आक्साइड की आपेक्षिक मात्राओं पर भी निर्भर करता है। यदि किसी काँच में आक्साइडों का प्रतिशत भार $प_1$, $प_2$ और $प_3$ हो और $ग_1$, $ग_2$ और $ग_3$ विशिष्ट आक्साइडों के गुणक हों तथा यह एक प्रतिशत विशिष्ट आक्साइड का विशिष्ट गुण सूचित करते हों तो सम्पूर्ण भौतिक गण क निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किया जा सकता है, $क = \Sigma प_1 ग_1$

घनत्व

किसी पाट (पात्र) भट्ठी या कुण्ड भट्टी की दीवालों पर काँच का दाव काँच के घनत्व के सरल अनुपात में होता है। जव काँच वहुत अधिक मात्रा में तैयार किया जाता है तव काँच की प्रत्येक वस्तु का भार काँच के घनत्व पर निर्भर रहता है। काँच में विभिन्न घनत्वों के स्तरों के कारण असमांगताएँ, लहरें या रेखाएँ आ जाती हैं। काँच का वर्तनांक भी वहुत कुछ काँच के घनत्व के अनुसार होता है। काँच के घनत्व में परिवर्तन उसकी रचना के परिवर्तन की सूचना देता है, अतः काँच-मिश्रण के पदार्थों के सही तौल का पता काँच के घनत्व को जाँचकर लगाया जा सकता है।

घनत्व ज्ञात करने की विधियाँ

(१) काँच के एक छोटे टुकड़े को पतले प्लैटिनम के तार में वाँधकर, काँच को वायु और जल में तौलते हैं। भार-हानि से काँच का आयतन ज्ञात हो जाता है जिससे घनत्व का गणन किया जा सकता है।

1. Additive

(२) काँच को कुचलकर, चालनी से निश्चित परिमाण में छानकर, फिर पानी से धोकर सूक्ष्म धूल से मुक्त कर लेते हैं और सुखाकर, थोड़ी-सी मात्रा को तौल लिया जाता है। एक सान्द्रता-मापक[1] या घनत्व बोतल जल के साथ तौल ली जाती है और तुला हुआ काँच इसमें डालकर, इसको फिर तौल लिया जाता है।

यदि काँच का भार $=$ त

घनत्व बोतल और जल का भार $=$ $त_1$

घनत्व बोतल, जल और काँच का भार $=$ $त_2$

$$\text{तो काँच का घनत्व} = \frac{त}{त + त_1 - त_2} \text{।}$$

(३) उतराने की विधि में उत्प्लावक[2] द्रव का घनत्व इस प्रकार व्यवस्थापित किया जाता है कि वह काँच के घनत्व के बराबर हो जाय। इस विधि से बहुत सही घनत्व ज्ञात हो सकता है।

काँच के घनत्व के सम्बन्ध में, उसका व्युत्क्रम या आपेक्षिक आयतन[3] योगशील है।

विंकलमान और शाट[4] के अनुसार, यदि काँच में उपस्थित आक्साइडों की प्रतिशतता $प_1$, $प_2$, $प_3$ है और इनका घनत्व गुणक क्रमशः $ग_1$, $ग_2$, $ग_3$ है, तो काँच का घनत्व घ निम्न सूत्र द्वारा व्यक्त किया जाता है—

$$\frac{१००}{घ} = \Sigma \frac{प_1}{ग_1} \text{।}$$

वेली ने किंचित् भिन्न सूत्र का प्रयोग किया था—

$$\frac{प}{घ} = \Sigma \frac{प_1}{ग_1} \text{।}$$

यहाँ प $=$ विश्लेषण द्वारा प्राप्त आक्साइडों की सम्पूर्ण प्रतिशतता।

काँच में उपस्थित आक्साइड का घनत्व मुक्त आक्साइड के घनत्व से सर्वदा कम होता है।

1. Pycnometer 2. Buoyant 3. Reciprocal or specific volume
4. Winkelmann and Schott

काँच के घनत्व-गुणक[1]

आक्साइड	विकलमान और शाट	टिलोटसन	वेली	इंगलिश और टर्नर
Pbo	९.६	—	१०.३०	—
BaO	७.०	—	७.२०	—
ZnO	५.९	—	५.९४	—
Al_2O_3	४.१	२.७५	२.७५	२.७५
MgO	३.८	४.०	३.२५	३.३८
CaO	३.३	४.१	४.३०	३.३०
K_2O	२.८	—	३.२०	—
Na_2O	२.६	२.८	३.२०	३.४७
P_2O_5	२.५५	—	—	—
SiO_2	२.३	२.८	२.२४	२.२०
B_2O_3	१.९	—	३.०००	—

तल-तनाव[2]

तप्त काँच का तल-तनाव महत्त्वपूर्ण है क्योंकि वह इस पर निर्भर है--(१) तल पर बुलबुलों का टूटना, (२) लोह औजारों और ऊष्म-सह दीवालों का द्रुत काँच से भींगना, (३) काँच की उचित ढलाई।

काँच का तल-तनाव बूंद-भार विधि से ज्ञात किया जा सकता है। काँच के छड़ के एक सिरे को तप्त कर द्रवित किया जाता है और काँच की बूंदों के भार की छड़ के व्यास से तुलना की जाती है, जिससे काँच का तल-तनाव ज्ञात हो जाता है।

अल्युमिना और चूना काँच के तल-तनाव को बढ़ाते हैं ,परन्तु बोरन आक्साइड और सीस आक्साइड इसको कम करते हैं।

विद्युतीय गुण

काँच की विद्युत-चालकता उसकी रचना, ताप एवं वातावरण पर निर्भर है। निम्न ताप पर काँच पृथक्कारी[3] होते हैं। सब ही तापों पर काँच विद्युत-चालक होते

1. Factor अपवर्त्य 2. Surface tension 3. Insulator

हैं, और २५° से १२००° सें० तक प्रतिरोधकता $१०^{१९}$ ओम[1] से १ ओम[1] तक हो सकती है।

निम्न ताप पर तल-चालकता के कारण आयतन चालकता का मापना जटिल हो जाता है और सम्भव है कि तल-चालकता अविशोपित[2] नमीके स्तर के कारण होती है।

परिभापा में, आयतन-प्रतिरोधकता एक-समान छड़ के प्रति इकाई लम्बाई और इकाई अनुप्रस्थ काट का ओमों में अनुदैर्घ्य प्रतिरोध[3] है। आयतन चालकता प्रतिरोधकता का व्युत्क्रम है।

तल प्रतिरोधकता किसी तल के इकाई लम्बाई और इकाई चौड़ाई के भाग की ओमों में प्रतिरोधकता है। कुछ विद्वानों ने विद्युत चालकता को विद्युद्विश्लेपक[4] बतलाया है जो मुख्यतः सोडियम आयनों के कारण होता है। काँच को तप्त करने पर काँच की विद्युत चालकता बढ़ जाती है। कोमलांक के निकट, काँच उत्तम विद्युत-चालक हो जाता है।

(ख) तापीय गुण

तप्त करने पर काँच प्रसारित होते हैं और प्रसार की मात्रा काँच की रचना पर निर्भर रहती है। काँच का रेखीय प्रसार इस प्रकार व्यक्त किया जाता है—

$$ल_{त} = ल_{०} (१ + ग \times त)$$

यहाँ 'ल' काँच की लम्बाई, 'त' ताप परास और 'ग' रेखीय प्रसार गुणांक है। घन प्रसार या आयतन प्रसार, रेखीय प्रसार से तीन गुना होता है। ऊष्मा प्रतिरोधक और रासायनिक काँचों का निम्न प्रसार होना चाहिए। आवरण के उपयोग में आनेवाले काँचों का प्रसार गुणांक एक-सा होना चाहिए। विद्युत दीप में काँच एवं संमुद्रित तार का प्रसार गुणांक एक-समान होना चाहिए। प्लैटिनम और निकल-लोह के एक मिश्र धातु का प्रसार गुणांक एक समान होता है। अतः इसी प्रकार के तार विद्युत दीपों को संमुद्रित[5] करने के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं।

कुछ रेखीय प्रसार गुणांक (प्रसार O–३००° सें०)

क्वार्ट्ज (विटरियोसिल)	५×१०^{-७}

1. Ohm विद्युत प्रतिरोध की इकाई। 2. Absorbed 3 Longitudinal resistance 4. Electrolytic 5. Sealed

पाइरेक्स काँच	३२×१०^{-७}
रासायनिक काँच	६०×१०^{-७}
सीस युक्त काँच	८०×१०^{-७}
सोडा-चूना युक्त काँच	९५×१०^{-७}

काँच के रेखीय प्रसार की दर काँच के निस्तापन ताप परास तक स्थिर रहती है।

काँच का तापीय प्रसार काँच के अवयवी आक्साइडों के प्रतिशत भार पर प्रायः निर्भर है।

काँच का रेखीय प्रसार गुणांक का सूत्र, $ग = \Sigma प_१ ग_१$ है। इस सूत्र में $प_१, प_२, प_३$ आक्साइडों के भार की प्रतिशतता, और $ग_१, ग_२, ग_३$ आक्साइडों के प्रसार गुणक हैं।

रेखीय प्रसार गुणक

आक्साइड	विंकलमान और शाट	इंगलिश और टर्नर
Na_2O	३.३३×१०^{-७}	४.३२×१०^{-७}
K_2O	२.८३×१०^{-७}	३.९०×१०^{-७}
Al_2O_3	१.६७×१०^{-७}	$.१४ \times १०^{-७}$
CaO	१.६७×१०^{-७}	१.६३×१०^{-७}
BaO	१.००×१०^{-७}	१.४०×१०^{-७}
PbO	१.००×१०^{-७}	१.०६×१०^{-७}
ZnO	$.६० \times १०^{-७}$	$.७० \times १०^{-७}$
SiO_2	$.२७ \times १०^{-७}$	$.०५ \times १०^{-७}$
B_2O_3	$.०३ \times १०^{-७}$	* $-.६६ \times १०^{-७}$
MgO	$.०३ \times १०^{-७}$	$.४५ \times १०^{-७}$

* O से १२ प्रतिशत B_2O_3 के लिए।

असाधारण रचनाओं के काँचों में, गुणक से सही अर्हाएँ नहीं आती है, जिसका एक कारण यह हो सकता है कि विभिन्न आक्साइड काँच में मुक्त अवस्था में उपस्थित नहीं हैं जिसके आधार पर सूत्र में गणन किया जाता है। काँच का प्रसार उसके आयतन पर निर्भर है, न कि उसके भार पर। गणन में आक्साइडों की प्रतिशतता का विचार किया जाता है और काँच के प्रसार गुणांक में काफी अन्तर होने का यह भी कारण है।

तापीय प्रसार का माप

एक ऊर्ध्वाधर विद्युत-भट्ठी में एक क्वार्ट्ज़ नली के अन्दर काँच की चार इंच लम्बी छड़ रखी जाती है। क्वार्ट्ज़ नली के बाहरी सिरे पर दाब-प्रमापी[1] या डायल लगा रहता है। यह .०००१ इंच तक का दाब माप सकता है। दो क्वार्ट्ज़ की छड़ें, एक नली के बंद सिरे पर और दूसरी काँच की छड़ के ऊपर रहती हैं और ये काँच की छड़ के दोनों तरफ के धक्के को रोकती हैं। प्रति मिनट ४° सें० ताप बढ़ाया जाता है। काँच छड़ का सही रेखीय प्रसार गुणांक प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उसमें क्वार्ट्ज़ नली के भी तापीय प्रसार का योग किया जाय। दूसरी विधि से आयतन प्रसार ज्ञात करने के लिए, काँच को फूँककर एक इंच व्यास का एक बल्ब तैयार किया जाता है और तब अत्यन्त पतले छिद्र की छोटी नली जिसका एक सिरा खुला होता है, कर्षण कर बनायी जाती है। बल्ब को पारे से भरकर तौल लिया जाता है। इस बल्ब को ज्ञात ताप के ठंडे पानी में एक बीकर में रखते हैं और पारे को नली के अन्त तक नियमित किया जाता है। पानी को तब तप्त कर उबाला जाता है। ताप बढ़ने के कारण जो पारा बाहर आ जाता है वह तौल लिया जाता है और गणन कर काँच का तापीय प्रसार गुणांक ज्ञात किया जा सकता है।

विशिष्ट ऊष्मा[2]

भट्ठी की कुशलता और भट्ठी की बची ऊष्मा के गणन के लिए, काँच की विशिष्ट ऊष्मा का ज्ञान उपयोगी होता है। काँच की विशिष्ट ऊष्माओं की भिन्नता उसके अवयवी आक्साइडों की मात्रा पर निर्भर है।

1. Pressure gauge 2. Specific heat

काँच की विशिष्ट ऊष्मा का सूत्र, ऊ $= \Sigma$ प$_१$ उ$_१$ है। इस सूत्र में प$_१$, प$_२$, प$_३$ आक्साइडों के भार की प्रतिशतता और उ$_१$, उ$_२$, उ$_३$ आक्साइडों की विशिष्ट ऊष्मा के गुणक हैं।

विशिष्ट ऊष्मा के गुणक

(०° से १००° सें० ताप परास)

आक्साइड	विकलमान और शाट
Na_2O	२६७ × १०$^{-५}$
MgO	२४४ × १०$^{-५}$
B_2O_3	२३७ × १०$^{-५}$
Al_2O_3	२०७ × १०$^{-५}$
SiO_2	१९१ × १०$^{-५}$
CaO	१९० × १०$^{-५}$
P_2O_5	१९० × १०$^{-५}$
K_2O	१८६ × १०$^{-५}$
ZnO	१२५ × १०$^{-५}$
BaO	६७ × १०$^{-५}$
PbO	५१ × १०$^{-५}$

उच्च तापों पर, काँच की विशिष्ट ऊष्मा अति शीघ्रता से बढ़ती है। काँच की विशिष्ट ऊष्मा .८ से .२५ तक होती है।

ऊष्मा चालकता

काँच ऊष्मा का अधम चालक है। काँच की तापीय चालकता अपेक्षया बहुत कम है और इसका मापना कठिन होता है। यह गुण योगशील है और इस सूत्र 'ऊ $= \Sigma$ प$_१$ उ$_१$' से प्राप्त किया जा सकता है। इस सूत्र में प$_१$, प$_२$, प$_३$ आक्साइडों के भार की प्रतिशतता और उ$_१$, उ$_२$, उ$_३$ आक्साइडों की ऊष्मा चालकता के गणक हैं।

ऊष्मा चालकता के गुणक

आक्साइड	पालहार्न	रस
K_2O	१×१०⁻³	१३४×१०⁻³
PbO	८×१०⁻³	११७×१०⁻³
BaO	११×१०⁻³	११८×१०⁻³
ZnO	१६×१०⁻³	८६×१०⁻³
B_2O_3	१६×१०⁻³	३७×१०⁻³
P_2O_5	१६×१०⁻³	—
Na_2O	१६×१०⁻³	१०७×१०⁻³
Al_2O_3	२२×१०⁻³	६२×१०⁻³
SiO_2	२२×१०⁻³	३०×१०⁻³
CaO	३२×१०⁻³	८८×१०⁻³

अधिक ऊष्मा चालकता का काँच, जैसे कि अधिक चूना युक्त काँच, शीघ्र शीतल हो जाता है, अतः निर्माण के पश्चात् इसे लेयर में शीघ्र स्थानान्तरित करना चाहिए। साधारण काँच, ऊष्मा-किरणों या अवरक्त किरणों का अच्छा चालक है, विशेष काँचों, जैसे धूप के चश्मे, द्वारी काँच में ऊष्मा किरणों का पारगमन रोकने के लिए काँच में फेरस आक्साइड का योग किया जाता है।

(ग) यांत्रिक गुण

काँच के यांत्रिक गुणों का अति महत्त्व है क्योंकि काँच-वस्तुओं, जैसे बोतलों, जारों, द्वारी और पट्टिका काँचों में इतनी दृढ़ता होनी चाहिए कि वे आसानी से न टूट सकें।

यंग का प्रत्यास्थता-गुणांक[1]

जब किसी वस्तु पर तनाव या दबाव पड़ता है तो वस्तु के कण विस्थापित हो जाते हैं और इस विस्थापन को 'विकृति'[2] कहते हैं। प्रत्यास्थित पदार्थ विकृति-प्रतिरोधक होते हैं और इस प्रकार विकृति को हटाने के लिए एक आन्तरिक शक्ति उत्पन्न हो जाती

1. Young's Modulus of Elasticity 2. Strain

है जिसको 'प्रतिवल'[1] नाम से व्यक्त किया जाता है। प्रतिवल और विकृति के अनुपात से वस्तु की प्रत्यास्थता मापी जाती है।

यदि 'ल' इंच लम्बी और 'अ' वर्ग इंच वृत्ताकार काटवाली काँच की छड़ पर 'फ' पाउंडों के तनाव से $ल_१$ इंच लम्बाई वढ़ जाय, तो प्रतिवल$=\frac{फ}{अ}$ पाउंड प्रति वर्गइंच और, विकृति$=\frac{ल_१}{ल}=$वि*,

$$प्रत्यास्थता\ गुणांक=\frac{फ}{अ} \bigg/ \frac{ल_१}{ल}\ ।$$

व्यापारिक काँच का गुणांक प्राय: $१०^{-७}$ पाउंड प्रति वर्गइंच लिया जा सकता है। प्रतिवल को किलोग्रामों में प्रतिवर्ग मिलीमीटर मापा जा सकता है, अतः प्रत्यास्थता गुणांक को किलोग्राम प्रतिवर्ग मिलीमीटर में भी माप सकते हैं।

साधारण परिस्थितियों में अच्छे प्रकार से निस्तापित काँच की चौथाई इंच अनुप्रस्थ काटवाली[2] छड़, जिसके सिरे खूब पालिश किये हुए हों, टूटते समय $१०^४$ पाउंड प्रति वर्गइंच प्रतिवल सहन कर सकती है।

छोटे काँच के रेशे, निस्तापन नष्ट किये हुए काँच और अम्ल साधित काँच साधारणतया अधिक प्रतिवल पर टूटते हैं, जब कि असम सतहवाले बड़े काँच और निरेखित काँच[3] कम प्रतिवल ही पर टूट जाते हैं।

यंग की प्रत्यास्यता-गुणांक मापने की विधि

एक काँच की छड़ को दो पैनी धार के किनारों पर रखते हैं। इन धारों की दूरी 'ल' इंच है। इसके मध्य में एक दूसरी पनी धार पर वोझा "वो" लटकाया जाता है। छड़ का विक्षेप[4] Δ है।

$$प्रत्यास्थता\ गुणांक,\ प्र=\frac{वो\times ल३}{४८\times \Delta \times ज}\ ।$$

यहाँ, ज=छड़ की जड़ता[5]-विभ्रमिपा, और

(क) वृत्ताकार छड़ जिसका व्यास 'स' है,

$$ज=\frac{\pi\ स४}{६४}\ ।$$

* यह विमाहीन अति न्यून संख्या है और 'वि' की अर्हा .००१ होने के पूर्व ही काँच टूट जाता है।

1. Stress 2. Cross section 3. Etched glass 4. Deflection 5. Moment of inertia अवस्थितत्व

(ख) आयताकार छड़ जिसकी चौड़ाई=च, और आकृष्टि की दिशा में गहराई=ग उसका

$$ज = \frac{च \times ग^3}{१२}$$

प्रत्यास्थता गुणांक प्राय: योगशील होता है और इस समीकरण से व्यक्त किया जाता है, प्र= Σ प$_1$ प्र$_1$; इस सूत्र में प$_1$, प$_2$, प$_3$ आक्साइडों के भार की प्रतिशतता है और प्र$_1$, प्र$_2$, प्र$_3$ आक्साइडों की प्रत्यास्थता के गुणक हैं।

यंग के प्रत्यास्थता गुणांक के गुणक

आक्साइड	विंकलमान और शाट	क्लार्क और टर्नर
SiO_2	६.९	३.९
B_2O_3	५.९	—
Na_2O	९.८	१०.८
K_2O	६.९	—
CaO	६.९	२३.५
BaO	६.९	—
ZnO	९.८	—
PbO	४.५	—
MgO	३.०	२९.४
Al_2O_3	१४.७	११.८

अल्प प्रत्यास्थता से दृढ़ता आती है क्योंकि विकर्पित[1] वस्तुओं में यह अधिक प्रतिवलों का होना रोकती है।

भंगुरता

जब काँच आकुंचित किया जाता है तो यह बहुत कम झुकता है और अकस्मात् टूट जाता है। धातुएँ टूटने के पूर्व सुघट्य रूप से विस्थापित होती हैं। काँच भंगुर कहलाता है क्योंकि यह अचानक टूट जाता है और आन्तरिक प्रतिवल के कारण इसमें विशाखीय दरारें[2] आ जाती हैं। एक अकेली दरार से कई दरारों की किरणें बन जाती हैं जिनसे काँच के खपाचे बनते हैं।

दरार

काँच में दरारों का फैलना अति जटिल है। विशिष्ट प्रकार की दरारों के निश्चित

1. Distorted 2. Forked fractures

रूप और स्थायी लक्षण होते हैं। दरार का प्रारम्भ-विन्दु अवश्य होता है और दरार के सव भाग एक साथ और तुरन्त नहीं वनते । दरार, सदैव किसी तनाव-वल के कारण होती है और उसकी दिशा के साथ वह समकोण वनाता है। जैसे-जैसे दरार आगे को वढ़ती है वैसे-वैसे वल का वितरण वदल जा सकता है, परन्तु दरार का समतल, वल से सदैव समकोण वनाता है। जव तनाव अत्यधिक होता है तव विशाखीय दरारें वन जाती हैं और ये पंखों के रूप की तरह आगे फैलती हैं। दृढ़ काँच में कुछ अधिक मात्रा में प्रतिवल उपस्थित रहता है और जव ऐसा काँच टूटता है तो कई दरारें और विशाखीय दरारें वन जाती हैं। काँच में इस प्रकार की दरारों का प्रारम्भ एक सूक्ष्म और चिकने नाभिक से होता है।

काँच की दृढ़ता

काँच की दृढ़ता उसकी तनाव-शक्ति[1] है। इकाई क्षेत्रफल अनुप्रस्थ काट की काँच की छड़ जिस न्यूनतम वोझ के भार से टूट जाती है, उसी से यह तनाव-शक्ति मापी जाती है।

विंकलमान और शाट के अनुसार यह गुण योगशील है और तनाव-शक्ति का सूत्र, $त = \Sigma\ प_१ त_१$ है। इस सूत्र में $प_१$, $प_२$ $प_३$ आक्साइडों के भार की प्रतिशतता और $त_१$, $त_२$, $त_३$ आक्साइडों के तनाव-शक्ति-गुणक हैं।

तनाव-शक्ति के गुणक

आक्साइड	विंकलमान और शाट
CaO	.२०
ZnO	.१५
SiO_2	.०९
P_2O_5	.०७५
B_2O_3	.०६५
BaO	.०५
Al_2O_3	.०५
As_2O_5	.०३
PbO	.०२५
Na_2O	.०२
K_2O	.०१
MgO	.०१

1. Tensile strength

तनाव-शक्ति मापने की विधि (टूटने के समय प्रतिबल)

एक काँच की छड़ के सिरे पर क्रमशः बोझा बढ़ाया जाता है। छड़ लम्बी होती जाती है और अन्त में टूट जाती है। यदि टूटते समय का बोझ 'ब' पाउंड हो और काँच का अनुप्रस्थ काट अ वर्गइंच, तो तनाव शक्ति, $त = \frac{ब}{अ}$ पाउंड प्रति वर्गइंच।

जब काँच की दृढ़ता की परीक्षा, झुकाकर की जाती है तो उसको 'विच्छेदन' गुणांक' कहते हैं। दृढ़ता जाँचने के लिए चौथाई इंच व्यास की काँच की छड़ उत्तम होती है। काँच के सूक्ष्म रेशों की तनाव-शक्ति काँच की छड़ों से अधिक होती है।

विच्छेदन गुणांक के मापने की विधि

'ल' इंच लम्बी काँच की छड़ को दो तीव्र धारों पर आधारित किया जाता है और मध्य में तीव्र धार पर क्रमशः बोझ की वृद्धि की जाती है, जब तक कि छड़ टूट न जाय। यदि टूटते समय का बोझ 'बो' है, तो विच्छेदन गुणांक, $क = \frac{बो \times ल}{४ ह}$ पाउंड प्रति वर्गइंच

वृत्ताकार छड़ के लिए, $ह = \frac{\pi ब^{३}}{३२}$।

नली के लिए, $ह = \pi \left(\frac{ब_{१}^{४} - ब_{२}^{४}}{३२ ब_{१}} \right)$।

और आयताकार छड़ के लिए, $ह = \frac{च म^{२}}{६}$।

यहाँ ब=छड़ का व्यास इंचों में,

$ब_{१}$, $ब_{२}$=नली का बाह्य एवं आन्तरिक व्यास इंचों में,

च=आयताकार छड़ की चौड़ाई इंच में,

म=आयताकार छड़ की मोटाई इंच में।

काँच की दृढ़ता मापने में, साधारणतया काँच की सतह की दुर्बलता मापी जाती है क्योंकि सम्भव है कि छड़ मध्य में न टूटे और किसी और ही जगह से टूट जाय।

येना काँच की तनाव-शक्ति ३.५ से ८ किलोग्राम प्रति वर्ग मिलीमीटर तक होती है।

1. Modulus of rupture

संघट्टन परीक्षण[1]

काँच की मजबूती संघट्टन-परीक्षण द्वारा भी मापी जा सकती है। काँच की पट्टी को उसके दोनों किनारों पर और काँच पट्टिका को चारों किनारों पर आधारित करते हैं और ज्ञात भार के इस्पात के एक गोले को विभिन्न ऊँचाई से काँच के मध्य में स्वतन्त्रता-पूर्वक आकर्षण शक्ति द्वारा गिरने देते हैं। जिस ऊँचाई से गोले को गिराने पर काँच में दरार पड़ जाय वह ऊँचाई काँच की मजबूती का मात्रिक मापक है।

सब दरारें काँच की सतह से आरम्भ होती हैं। (काँच के ताज़े कर्षण किये हुए रेशे बहुत मजबूत होते हैं, किंतु छू जाने पर इनकी शक्ति बहुत क्षीण हो जाती है। इसी प्रकार ताजे निरेखित काँच की सतह बहुत मज़बूत होती है। समय बीतने पर, ताज़े काँच की सतह की दृढ़ता अपने आप कम हो जाती है।

पट्टिका काँच के शक्ति-परीक्षण के लिए साधारणतया १६" × २" × $\frac{१}{४}$" की पट्टी का प्रयोग किया जाता है।

समय का प्रभाव—एक मिनट के लिए काँच अति भारी बोझ सहन कर ले, परन्तु अधिक समय तक यही बोझ सहने में वह असमर्थ हो सकता है और टूट जा सकता है।

प्वायसाँ का अनुपात[2]

यदि काँच की छड़ को सिरों से खींचा जाय तो छड़ के व्यास में कुछ आकुंचन आ जाता है। इस आकुंचन और छड़ की इकाई लम्बाई की विकृति में विशिष्ट अनुपात रहता है। यदि छड़ के व्यास का आकुंचन "अ" है और अनुदैर्घ्य विकृति 'ब' है तो प्वायसाँ अनुपात, $प = \frac{अ}{ब}$ और व्यापारिक काँचों के लिए इसकी अर्हा .२० से .३० तक होती है।

बोतलों के फटने का दाब

परीक्षा के लिए बोतलों के अन्दर जलचालित दाब इतना बढ़ाया जाता है कि बोतलें फटने पर आ जायें। एक हस्तचालित पंप दाब मापक के साथ बोतल के मुँह पर लगा देते हैं। बोतल १५° से ६५° सें० ताप के जल में लटका दी जाती हैं। साधारणतः बोतल का परीक्षण एक मिनिट में होता है और जितना दाब बोतल अनुमान

1. Impact testing 2. Poisson's ratio

से सहन कर सकती है, उसका दूना दाव दिया जाता है। ताप की वृद्धि से फटने का दाव भी कम हो जाता है।

दवाव-शक्ति

यह दवाव या कोण विकार शक्ति है और यह वल की वह न्यूनतम मात्रा है जो कि काँच के इकाई आयतन के घन को तोड़ सके। काँच की दवाव-शक्ति उसकी तनाव-शक्ति से बहुत अधिक होती है। यह गुण योगशील है और सूत्र 'द $= \Sigma$ प$_१$ द$_१$' से व्यक्त किया जाता है। इस सूत्र में, प$_१$, प$_२$, प$_३$ आक्साइडों के भार की प्रतिशतता और द$_१$, द$_२$, द$_३$ काँच में आक्साइडों के दवाव-शक्ति गुणक हैं।

दवाव-शक्ति के गुणक

आक्साइड	विंकलमान और शाट
SiO_2	१.२३
MgO	१.१०
Al_2O_3	१.००
B_2O_3	.९०
P_2O_5	.७६
BaO	.६५
ZnO	.६०
Na_2O	.५२
PbO	.४८
CaO	.२०
K_2O	.०५

काँच की दृढ़ता के लिए उसकी दवाव-शक्ति का इतना महत्त्व नहीं है। येना काँच के लिए, यह लगभग ६० से १२० किलोग्राम प्रतिवर्ग मिलीमीटर होती है।

निस्तापन और प्रतिनिस्तापन[1] का प्रभाव

जो काँच शीघ्रता से ठंडा किया जाता है उसकी वाहरी सतह पर दवाव प्रतिवल उत्पन्न हो जाता है। ऐसा काँच जव झुकाया जाता है तो काँच में तनाव प्रतिवल उत्पन्न होता है और यह तापीय दवाव प्रतिवल का निष्फलन करता है। इससे काँच में प्रतिवल का अन्त हो जाता है और तव काँच को और झुकाने पर, काँच में तनाव प्रतिवल आता

1. Disannealing

है। अतः जिस काँच में निस्तापन नष्ट कर दिया गया है यानी जो शीघ्रता से ठंडा किया गया है, उसको तोड़ने के लिए, निस्तापित काँच से अधिक बोझ या शक्ति की आवश्यकता होती है। बहुधा यह बोझ निस्तापित काँच के बोझे से कई गुना अधिक होता है।

इस प्रकार से कठोर बनाया हुआ काँच मोटरगाड़ियों में वायु-प्रतिरोध के लिए प्रयोग में आ रहा है। पालिश किये हुए पट्टिका काँच[1] को प्रथम निस्तापन ताप तक तप्त किया जाता है, फिर वायु की फुहारों से अचानक ठंडा किया जाता है। चश्मे और महोपाक्ष[2] के लेन्स भी इसी प्रकार तेल में डुबोकर कठोर बनाये जाते हैं।

बोतलों की मजबूती

कार्बोनेट युक्त द्रवों के लिए, बोतलों को गैस का आन्तरिक दाब सहन करना पड़ता है। सोडा जल की बोतलों को ८० से ९० पाउंड प्रतिवर्ग इंच का दाब सहन करना पड़ता है।

कठोरता

काँच की कठोरता एक बहुत जटिल गुण है और इसको सन्तोषजनक रीति से मापा नहीं जा सकता। कुछ अंशों तक इसे मापने के लिए, काँच की सतह को उत्तरोत्तर बढ़नेवाली कठोरता के विभिन्न पदार्थों से खरोंचा जाता है। साधारणतया 'मोह्स' कठोरता[3] अनुमाप प्रयोग में लाया जाता है जिसका श्रेणी-क्रम यह है—

(१) टैल्क (साबुन-पत्थर)
(२) हरसोठ (जिप्सम)
(३) कैलसाइट
(४) फ्लोराइट
(५) एपेटाइट
(६) फेल्सपार
(७) क्वार्ट्ज़
(८) पुखराज
(९) कुरंदम
(१०) हीरा

मोह्स की कठोरता के अनुमाप के अनुसार व्यापारिक काँच की कठोरता ५.३८ से ५.८१ तक होती है। सिलिका युक्त काँच की कठोरता ६.३१ है।

साधारण तौर पर काँच की कठोरता काँच की तनाव-शक्ति के अनुरूप होती है और प्रतिनिस्तापन काँच की कठोरता, काँच की सतह पर दबाव और काँच की तनाव-शक्ति के योग के बराबर होती है। आऊरबाख[4] ने काँच की कठोरता को बालू-पत्थर के गोले से दबाकर मापा और देखा कि किसी के आकार में बिना स्थायी परिवर्तन लाये, काँच को किस हद तक दबाया जा सकता है। उसने पता लगाया कि काँच का यह गुण योगशील है।

1. Plate glass 2. Goggle धूप या ताप का चश्मा 3. Mohs' scale 4. Auerbach

काँच की कठोरता ज्ञात करने के लिए हीरे की भोंथरी नोक से चिह्न[1] बनाते हैं और उस समय के प्रतिरोध को माप लेते हैं। चिह्न इस प्रकार बनाया जाता है कि पालिश किये हुए काँच की सतह में दरार न पड़े। प्रति इकाई क्षेत्र पर जो भार पड़ता है वह वास्तव में चिह्न बनाने के प्रतिरोध का मापक होता है और बहुत हद तक काँच की कठोरता के अनुसार होता है।

लेक्रेनियर[2] ने काँच को स्थायी एवं प्रामाणिक स्थिति में घिसा और इस तरह काँच की कठोरता को मापा। यह काँच के उस कठोरपन का द्योतन करता है जो कि काँच के घिसने और पालिश करने की दृष्टि से प्रत्यक्ष उपयोगी है।

प्रामेली और लीयान[3] ने खरोंच कठोरता को हीरे की नोक से मापा। १३०° अंश पर झुकी हीरे की नोक पर विभिन्न बोझों का भार रखा गया और उसे काँच की सतह पर २.७ मिलीमीटर प्रति मिनट की स्थिर गति से बढ़ाया गया। खरोंचों की चौड़ाई मापने से काँच की आपेक्षिक कठोरता जानी जा सकती है।

अत्यंत सन्तोषजनक रीति से काँच की कठोरता मापन के लिए अब तक कोई विधि निश्चित नहीं है क्योंकि अभी तक कठोरता की परिभाषा का, मापनीय राशियों में सूत्रीकरण नहीं हो सका है।

काँच की कठोरता योगशील है। यदि $प_1$ $प_2$, $प_3$ आक्साइडों की प्रतिशतता और $क_1$, $क_2$ $क_3$ आक्साइडों की कठोरता के गुणक हैं, तो

कठोरता $= \Sigma प_1 क_1$।

कठोरता के गुणक

आक्साइड	आऊरबाख
Al_2O_3	१०.१
ZnO	७.१
K_2O	३.९
SiO_2	३.३२
BaO	१.९५
PbO	१.४५
P_2O_5	१.३२
B_2O_3	०.७५
Na_2O	−२.६५
CaO	−६.३

1. Dent 2. Lecrenier 3. Pramclee and Lyon

लेकेनियर ने ज्ञात किया कि (१) काँचों में सिलिका का समान आयतन होते हुए, सोडायुक्त काँच पोटाशयुक्त काँचों की अपेक्षा अधिक कठोर होते हैं। (२) शुद्ध सोडा-चूना युक्त काँचों में, चूना या मैगनिशिया की वृद्धि से और सोडा की हानि से, काँच की कठोरता बढ़ती है। (३) बोरन आक्साइड कठोरता की वृद्धि करता है। (४) सीसयुक्त काँच की कठोरता, सोडा या चूने की वृद्धि से बढ़ती है।

तापीय सहनता

अचानक ताप परिवर्तन की उस मात्रा को, जिसे काँच बिना टूटे सहन कर सके, काँच की 'तापीय-सहनता' कहते हैं।

विंकलमान और शाट ने, काँच के तापीय सहनता के गुणांक को निम्न सूत्र द्वारा व्यक्त किया है—

$$\text{तापीय सहनता, स} = \frac{\text{त}}{\text{प्र}_२}\sqrt{\frac{\text{ऊ}}{\text{घ व}}}।$$

यहाँ त=तनाव-शक्ति,
प्र=यंग का प्रत्यास्थता गुणांक,
र=रेखीय प्रसार गुणांक,
ऊ=ऊष्मा चालकता,
घ=घनत्व,
व=विशिष्ट ऊष्मा

तापीय सहनता का गुणांक योगशील होता है। यदि $प_१$, $प_२$, $प_३$ आक्साइडों की प्रतिशतता है और $स_१$, $स_२$, $स_३$ आक्साइडों के तापीय सहनता के गुणक हैं, तो काँच की तापीय सहनता, $स = \Sigma प_१ स_१$।

तापीय सहनता के गुणक

आक्साइड	विंकलमान और शाट
SiO_2	१.२३
MgO	१.१०
Al_2O_3	१.००
B_2O_3	.९०
P_2O_5	.७६
BaO	.६५
ZnO	.६०
Na_2O	.५२
PbO	.४८
CaO	.४८
K_2O	.०५

यदि इकाई लम्बाई की काँच की छड़ जिसका प्रसार गुणांक 'प्र' है, 'त' तापांश तक तप्त की जाय तो 'प्र×त' इंच प्रसार होगा। छड़ को मौलिक लम्बाई में करने के लिए, प्रतिवल या वल, व=य×प्र×त, और यहाँ 'य' यंग का प्रत्यास्थता गुणांक है। साधारण सोड़ा चूनायुक्त काँच के लिए य×प्र=९० पाउंड प्रति वर्ग इंच और यहाँ 'त' सेन्टीग्रेड ताप अंशों में हैं। यदि काँच की स्थूल छड़ तप्त की जाय और फिर जल में डुवोकर अचानक ठंडी की जाय, तो काँच की वाहरी सतह पर पूर्ण प्रतिवल 'य×प्र×त' उत्पन्न हो सकता है। तव वाहरी भाग आकुंचित होता है और चटक जा सकता है। जव प्रतिवल काँच की तनाव या दवाव शक्ति से अधिक होता है तव काँच में दरारें आ जाती हैं। काँच के अचानक ठंडे होने पर सतह पर प्रतिवल तनाव होता है और अचानक तप्त होने पर प्रतिवल दवाव होता है। क्योंकि काँच की दवाव शक्ति उसकी तनाव शक्ति से अधिक होती है, अतः वह आकस्मिक ठंड से आकस्मिक गरमी अधिक सहन कर सकेगा।

तापीय सहनता के परीक्षण

(१) काँच के घनाकार टुकड़ों को जल में गरमकर फिर उन्हें ठंढे जल में डुवो दिया जाता है। इस रीति से ऐसा ताप अन्तर ज्ञात किया जाता है जिस पर ५० प्रतिशत टुकड़े चटक जायँ।

(२) काँच की छड़ों को ऊर्ध्व विद्युत् भट्ठी में गरमकर उन्हें ठंढे जल में डुवो दिया जाता है। प्रामाणिक तुलना के लिए उस ताप अन्तर को ज्ञात किया जाता है, जिस पर ५० प्रतिशत छड़ें चटक जायँ।

(३) काँच की वोतलों को ६५°, ७०°, और ७५° सें० तक गरम करने के वाद उन्हें २०° सें० के ठंढे जल में डुवो दिया जाता है। उत्तम कोटि की वोतलों में से ७५ प्रतिशत को ५०°, सें० का अन्तर सहन करना चाहिए।

(४) लैम्प की चिमनियों को १००° सें० के जल में गरमकर, उन्हें १५° सें० तक ठंढे जल में डुवो दिया जाता है। यदि वे उत्तम कोटि की हैं तो ५० प्रतिशत से अधिक को नहीं टूटना चाहिए।

(५) २०० घन सेन्टीमीटर समाई और .९ से १.९ मिलीमीटर स्थूलता के कोणीय वीकरों में ४ से ५ सेन्टीमीटर गहराई तक द्रवित मोम भरा जाता है, जिस ताप पर टूटने की सम्भावना होती है उससे ५०° सें० कम ताप तक ठंढे जल में गरम मोम से भरी वीकरें डुवो दी जाती हैं। ५° ताप अंश के अन्तर से परीक्षा दुहराकर की जाती है,

जब तक कि सब बीकर टूट न जायँ। तापीय सहनता=ताप अन्तर×स्थूलता (मिली-मीटरों में)

पाश्चरीकरण, भोजन बनाने के बर्तन, लैम्प चिमनियाँ, रासायनिक काँच और थर्मामीटर की नली के लिए उच्च तापीय सहनता के काँच की आवश्यकता होती है। काँच में अधिक तापीय सहनता उत्पन्न करने के लिए सिलिका की मात्रा अधिक और क्षार की मात्रा कम होनी चाहिए और काँच में कुछ मात्रा में जस्ता आक्साइड, बोरन आक्साइड और अल्युमिनियम आक्साइड भी होने चाहिए।

(घ) प्रकाशीय गुण

जब प्रकाश की किरण, वायु से काँच में प्रवेश करती है, तो वायु और काँच में चाल के अन्तर के कारण किरण वर्तित[1] हो जाती है। आयतन और वर्तन कोणों की ज्या के अनुपात को काँच का वर्तनांक व्यक्त किया जाता है। काँच की रचना एवं उसकी भौतिक दशा पर वर्तनांक निर्भर है। यह प्रकाश के तरंग-दैर्घ्य पर भी निर्भर करता है और न्यूनतम तरंग-दैर्घ्य के लिए सबसे अधिक और अधिकतम तरंग-दैर्घ्य के लिए सबसे कम होता है।

इस कारण, जब शुद्ध श्वेत प्रकाश की किरण काँच में से होकर गमन करती है तो किरण विभक्त होकर फैल जाती है। किरण यदि एक प्रिज़्म से होकर गमन करती है तो प्रिज़्म से निकलने पर प्रकाश का अविरत वर्णक्रम बन जाता है। प्रकाश की किरणों के अपने अवयवों में विभक्त होने की क्रिया को विक्षेपण[2] कहते हैं। तत्त्व की अति तप्त वाष्पों का निर्गमन वर्णक्रम[3] विरत[4] होता है और उसके विभिन्न भागों में उज्ज्वल रेखाएँ होती हैं। इन रेखाओं के स्थिर स्थानों के द्वारा तत्त्व का अभिज्ञान किया जा सकता है।

यदि श्वेत प्रकाश किसी तत्त्व की तप्त वाष्प से होकर गमन करता है तो वर्ण-क्रम में अवशोपित पट्टियाँ या कृष्ण रेखाएँ उसी स्थान में होंगी जहाँ कि निर्गमन वर्णक्रम में तत्त्व की तप्त वाष्पों की उज्ज्वल रेखाएँ होती हैं। अर्थात् वाष्प या गैस के रूप में कोई तत्त्व, सफेद प्रकाश से वही वर्ण रेखाएँ अवशोपण करता है जिन्हें कि स्वयं निर्गमन वर्णक्रम में उत्पन्न करता है। यह किरशाफ के नियम से भी स्पष्ट होता है। इसके अनुसार, पदार्थ से तप्त अवस्था में जिस आवर्त की तरंगें निकलती हैं, वह पदार्थ ठंढी अवस्था में उस आवर्त की तरंगों का अवशोपण करेगा।

1. Is refracted 2. Dispersion 3. Emission spectrum 4. Non-continuous

फ्रानहोफर रेखाएँ[1]

सूर्य प्रकाश के वर्णक्रम में अनेक काली रेखाएँ हैं जिनको 'फ्रानहोफर की रेखा' कहा जाता है। जब प्रकाश बहुत-से तत्त्वों से गमन करता है तो प्रकाश के कुछ वर्णो का अवशोषण होता है। फ्रानहोफर ने प्राय: ५७६ रेखाओं का पता लगाया था और बहुत-सी रेखाएँ हमारे तत्त्वों की वर्णक्रम रेखाओं के अनुरूप हैं। सूर्य या पृथ्वी के वायु-मण्डल में जो तत्त्व उपस्थित हैं उनका पता और अभिज्ञान इन रेखाओं के स्थान-ज्ञान से होता है।

सूर्य के वर्णक्रम की मुख्य रेखाएँ विशेष अक्षरों द्वारा व्यक्त की जाती हैं।

अवशोषण रेखा	तरंग-दैर्घ्य*	वर्णक्रम में स्थान
A'	७६७७ × $१०^{-८}$ सेन्टी मीटर सेकन्ड	लाल
B	६८७० × $१०^{-८}$,, ,,	,,
C	६५६३ × $१०^{-८}$,, ,,	,,
D	५८९३ × $१०^{-८}$,, ,,	पीला
E	५२७१ × $१०^{-८}$,, ,,	हरा
F	४८६२ × $१०^{-८}$,, ,,	,,
G'	४३४१ × $१०^{-८}$,, ,,	नीलारुण

रेखा D सोडियम धातु की है और C, F, G' रेखाएँ हाईड्रोजन के वर्णक्रम की हैं।

साधारण कार्यों के लिए वर्तनांक मापने के लिए रेखा D ली जाती है और इस वर्तनांक को μ_D व्यक्त किया जाता है। काँच के लिए यह १.४ से १.८ तक होता है।

विक्षेपण

किसी विशिष्ट काँच के प्रिज्म द्वारा वर्णक्रम के फैलने की मात्रा को विक्षेपण[2] कहते हैं। वर्णक्रम के सिरों की किरणों के वर्तनांक अन्तर के कारण विक्षेपण होता है। क्योंकि इसका मापना कठिन है, इसलिए साधारणत: विशिष्ट रेखाओं के बीच का विक्षेपण ($\mu_D - \mu_C$), (μ_E, μ_D) और ($\mu_{G'}\ \mu_F$), जिनको आंशिक

* तरंग-दैर्घ्य की मात्राएँ, $A^\circ = १०^{-८}$ सेंटीमीटर।

1. Fraunhofer Lines 2. Dispersion

विक्षेपण कहते हैं, मापे जाते हैं। ($\mu_F - \mu_C$) को **माध्य विक्षेपण** कहते हैं।

काँच के वर्तनांक और विक्षेपण के अनुपात को $\left(\frac{\mu_D - 1}{\mu_F - \mu_C}\right)$ द्वारा व्यक्त किया जाता है और इसे अक्षर ν (कांसट्रिन्जेंस) द्वारा चिह्नित करते हैं। काँच के लिए ν की अर्हा २५ से ६८ तक होती है। लेन्सों का फोकस अन्तर, प्रकाश किरणों के अनुसार होता है। C और F रेखाओं के लिए लेन्स का फोकस अन्तर इस प्रकार है—

$$\frac{१}{फ_C} = (\mu_C - १)\left(\frac{१}{व_१} - \frac{१}{व_२}\right) \text{ और } \frac{१}{फ_F} = (\mu_F - १)\left(\frac{१}{व_१} - \frac{१}{व_२}\right)$$

यहाँ '$व_१$', '$व_२$', लेन्स की वक्रता की त्रिज्याएँ हैं। क्योंकि μ_F की मात्रा μ_C से अधिक होती है, अतः $फ_C$ की मात्रा $फ_F$ से अधिक होती है। इस कारण रंगीन वृत्तों से घिरा हुआ प्रतिबिंब बनता है जिसको 'वर्ण विपथन'[1] कह कर व्यक्त किया जाता है।

C और F रेखाओं के फोकस अन्तरों को ($फ_C - फ_F$) लेन्स का 'वर्ण विपथन' कहा जाता है।

लेन्सों का अवर्णक संयोजन[2]

लेन्सों का ऐसा संयोजन जो वर्ण विपथन से रहित हो, अवर्णक संयोजन कहलाता है। इस प्रणाली में, एक लेन्स द्वारा उत्पन्न विक्षेपण का दूसरे लेन्स द्वारा निराकरण हो जाता है किन्तु वर्तन पूर्ण सन्तुलित नहीं होता। यह समूह एक लेन्स की तरह काम करता है, क्योंकि प्रत्येक लेन्स के वर्तन और विक्षेपण का अनुताप भिन्न होता है।

पूर्ण अवर्णकता प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। यह तभी सम्भव है जब कि दोनों काँच सम्पूर्ण वर्णक्रम को समान दूरी तक फैलायें। उदाहरणार्थ, क्षार-सिलिका-सीसयुक्त काँच क्षार-सिलिका-चूनायुक्त काँचों की अपेक्षा वर्णक्रम के नीले भाग को अधिक विस्तृत करता है। अतः सही प्रकाशीय कार्य के लिए सिर्फ ν ही का जानना आवश्यक नहीं है, परन्तु आपेक्षिक आंशिक विक्षेपणों का भी ज्ञान आवश्यक है और ये माध्य विक्षेपण के अनुपात में व्यक्त किये जाते हैं। साधारणतः निम्न आंशिक विक्षेपणों की अर्हा (Value) ज्ञात हो जाती है—

$$\frac{\mu_D - \mu_{A'}}{\mu_F - \mu_C} = \alpha; \frac{\mu_F - \mu_D}{\mu_F - \mu_C} = \beta; \frac{\mu_{G'} - \mu_F}{\mu_F - \mu_C} = \gamma$$

1. Chromatic aberration 2. Chromatic combination

दो लैंस जो पूर्णतया अवर्णक हैं, उनके γ की अर्हा में तो वहुत अन्तर होगा, परन्तु α, β, γ की अर्हा प्राय: एक-सी होगी।

एवी और शाट[1] के अनुसन्धानों के पूर्व इस प्रकार का लेन्स संयोजन सम्भव न था। लेकिन इन लोगों ने वहुत-से नये तत्त्वों को कार्यों में सम्मिलित कर ऐसे लेन्स वनाये जिनमें γ की अर्हा में काफी भिन्नता थी। अनेक कठिनाइयों के कारण, शाट दूरवीन के लिए एक फ्लिंट या सीस काँच और एक क्राउन या असीस काँच का केवल एक ही युग्म संयोजन व्यापारिक मात्रा में निर्माण कर सका। इसमें आपेक्षिक आंशिक विक्षेपण प्राय: एक-समान थे।

वहुत-से निर्माता, दो से अधिक प्रकार के काँचों या खनिजों, जैसे फ्लोराइट का प्रयोग कर, लेन्सों के पूर्ण अवर्णक संयोजन वनाने में सफल हुए हैं। इनको "अपवर्णक संयोजन"[2] कहकर व्यक्त किया जाता है।

प्रकाशीय गुणों एवं रचना में सम्बन्ध

एवी और शाट के अनुसन्धानों के पूर्व, केवल उन्हीं काँचों के प्रकाशीय गुण ज्ञात थे जिनमें सिलिका, सोडियम, पोटेशियम, वोरन, सीस, कैलशियम और फ़ासफ़ोरस के आक्साइड विद्यमान थे। यह भी ज्ञात था कि काँच की घनत्व-वृद्धि से काँच के वर्तनांक और विक्षेपण, दोनों में ही वृद्धि होती थी और चूना युक्त काँचों की अपेक्षा सीस युक्त काँचों में वृद्धि अधिक होती थी। इसलिए सीस युक्त काँच, जिनका घनत्व और वर्तनांक अधिक होता है वे "सीस काँच" या फ्लिंट काँच और चूना युक्त काँच, जिनका घनत्व और वर्तनांक अल्प होता है, वे "असीस काँच या क्राउन काँच" कहे गये।

शाट और एवी के अनुसन्धानों के पूर्व, सिर्फ "सीस काँच" और "असीस काँच" दो ही प्रकार के प्रकाशीय काँच होते थे। शाट और एवी ने ऐसे "सीस काँच" और "असीस काँच" तैयार किये जिनके सम्पूर्ण वर्णक्रम में γ की अर्हाओं में तो भिन्नता थी, परन्तु उनके आपेक्षिक आंशिक विक्षेपण की अर्हाएँ प्राय: एक ही थीं। इस उद्देश्य को सिद्ध करने के लिए कुछ नये तत्त्व, जैसे फ्लोरीन, लोथियम, मैगनीशियम, कैडमियम, जस्ता, वेरियम और अल्युमीनियम का प्रयोग किया गया।

यह ज्ञात हुआ कि वेरियम आक्साइड काँचों में वर्तनांक तो वढ़ाता है, परन्तु विक्षेपण कम करता है। वोरिक अम्ल वर्णक्रम के नीले भाग की अपेक्षा लाल भाग को अधिक विस्तृत करता है। फ्लोरीन, पोटेशियम और सोडियम वर्णक्रम के लाल भाग

1. Abbe & Schott 2. Apochomatic combination

की अपेक्षा नीले भाग को अधिक विस्तृत करता है। बोरिक आक्साइड माध्य विक्षेपण की अर्हा को भी कम करता है।

द्रवित अकेलाम बोरिक आक्साइड और द्रवित सिलिका या क्षारयुक्त सिलिकेट काँचों में धातु आक्साइडों के घोल से माध्य वर्तनांक बढ़ जाता है, किन्तु यह वृद्धि घुले हुए आक्साइडों के भार के अनुपात में नहीं होती। वर्तनांक की वृद्धि आक्साइड के समाहार की वृद्धि के अनुपात में नहीं होती। क्षारयुक्त सिलिकेट काँचों में बोरिक आक्साइड वर्तनांक बढ़ाता है, परन्तु जब बोरिक आक्साइड की मात्रा १५ प्रतिशत के ऊपर होती है तो वर्तनांक घटता है।

सीस युक्त काँचों में अधिक विक्षेपण और γ की अर्हा कम होती है और वर्णक्रम के लाल भाग की अपेक्षा नीले और बैंगनी भागों में अधिक विक्षेपण होता है। बेरियम युक्त काँच जिनका μ_D सीसयुक्त काँचों जैसा है। परन्तु विक्षेपण उनसे कम होगा।

काँच की रचना और वर्तनांक में क्या संबंध है इस पर सी० जे० पेडिल[1] ने सिलिका क्षारयुक्त काँचों पर अनुसन्धान किया है। इन काँचों में कुछ चूना, सीस आक्साइड और बेरियम आक्साइड भी सम्मिलित थे। कुछ फल जो उन्होंने ज्ञात किये, ये हैं—

(१) अवयवों की समान प्रतिशतता उपस्थिति में, चूना सीस आक्साइड की अपेक्षा μ_D अधिक बढ़ाता है।

(२) जब सिलिका के स्थान पर भस्मों को स्थानापन्न किया जाता है और सोडियम आक्साइड की वही मात्रा रहती है तो μ_D की (१) की अपेक्षा अधिक वृद्धि होती है। पोटाश युक्त काँच में सोडा युक्त काँच के ही बराबर वृद्धि होती है।

(३) सोडियम आक्साइड के स्थान पर पोटेशियम आक्साइड को उतनी ही प्रतिशतता में स्थानापन्न करने से काँच का μ_D कम होता है।

फिक और फिन[2] ने निम्न सूत्र प्रस्तावित किया है—

$$\mu_D - १ = (अ \times क) - (ब \times ख) - (स \times ग)$$

यहाँ अ, ब, स, सिलिका, सोडा और चूना की क्रमशः प्रतिशतता हैं और क, ख, ग, की निम्न अर्हाएँ हैं—

सिलिका SiO_2	क	ख	ग
५०.००–५९.५०	.००४८३६	.००५४९१	.००७५२१
५९.५०–७३.७५	.००४७८५	.००५५६८	.००७५९८
७३.७५–१००.००	.००४५८४	.००६१२७	.००७९७७

1. C. J. Peddle 2. Fick and Finn

नामकरण

काँचों को दो नामों से व्यक्त किया गया है—(१) फ्लिंट काँच (सीस काँच), इनमें सीस सम्मिलित होता है और इनका μ_D अधिक और γ अल्प होता है।

(२) क्राउन काँच (असीस काँच) इनका γ अधिक होता है, और ये चार भागों में व्यक्त किये गये हैं—

(१) असीस काँच, (२) बेरियम युक्त असीस काँच,
(३) बेरियम युक्त सीस काँच, (४) सीस काँच।

असीस काँच के तीन भाग हैं—

(१) कठोर, (२) कोमल, (३) बोरो सिलीकेट असीस काँच।

घनत्व के अनुसार भी विभाजन किया जाता है जो निर्माताओं की पसन्द पर निर्भर है और बेरियम युक्त असीस काँचों, बोरियम युक्त सीस काँचों, सीस काँचों के लिए इस प्रकार है—

(१) अत्यन्त हलका ३.० से कम घनत्व।
(२) हलका ३.० से ३.५ तक घनत्व।
(३) घना ३.५ से ३.८ तक घनत्व।
(४) अत्यन्त घना ३.८ से ऊपर घनत्व।

पेडल ने काँचों के निम्न नामकरण प्रस्तावित किये हैं—

(१) साधारण असीस काँच,
(२) जस्तायुक्त असीस काँच,
(३) फ्लोरीन युक्त असीस काँच,
(४) फ़ासफ़ेट असीस काँच,
(५) बेरियमयुक्त असीस काँच,
(६) बेरियमयुक्त सीस काँच
(७) सीस काँच।

वर्तनांक के अनुसार, इनका पुनः विभाजन किया गया है।

साधारण असीस काँच		बेरियम असीस एवं बेरियम सीस काँच		सीस काँच	
नाम	μ_D	नाम	μ_D	नाम	μ_D
हलका	१.५ से कम	हलका	१.५६ से कम	अति हलका	१.५७ से कम
मध्यम	१.० से १.५२	मध्यम	१.५६ से १.५९	हलका	१.५७ से १.६०
घना	१.५२ से अधिक	घना	१.५९ से १.६३	घना	१.६० से १.६४
		अतिघना	१.६३ से अधिक	अति घना	१.६४ से १.७०
				अतितर घना	१. ७० से अधिक

बर्लिन की सेन्डलीजर प्रकाशीय काँच कम्पनी ने प्रकाशीय काँचों को ४ भागों में विभाजित किया है—

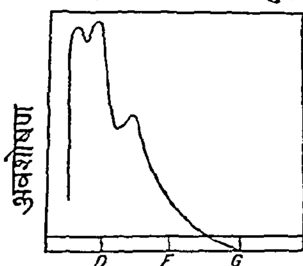
(१) असीस काँच,
(२) वेरियन (वेरियम युक्त असीस काँच),
(३) वेरिट (वेरियम युक्त सीस काँच),
(४) सीस काँच।

प्रत्येक काँच पर संख्या चिह्नित होती है जिससे काँच के μ_D और γ ज्ञात हो जाते हैं। उदाहरणार्थ वेरिट $\frac{५४८}{५३२}$ का अर्थ है कि काँच वेरियम युक्त सीस काँच है और

उसका $\mu_D = १.५४८$
$\gamma = ५३.२$

प्रकाश का अवशोषण

जब प्रकाश की किरणें काँच से होकर गमन करती हैं तो प्रकाश का कुछ अंश सर्वदा अवशोपित हो जाता है। प्रकाश का अवशोपण या तो पूर्ण वर्णक्रम में एकसमान होता है या काँच में उपस्थित रंगीन लवणों या कलिलीय घोलों के कारण वर्णात्मक होता है। पहली दशा में, जब अवशोपण की मात्रा अल्प होती है तो काँच वर्णहीन दिखलाई पड़ता है और जब अवशोपण यथेष्ट मात्रा में होता है तो काँच हलका धूसर वर्ण का दिखलाई पड़ता है। पिछली दशा में, काँच उसी वर्ण का दिखलाई देगा जिस वर्ण का वर्णक्रम से सबसे कम अवशोपण हुआ है। भिन्न वर्णक आक्साइड़ों के अवशोपण और तदनुसार काँच में रंग देने की शक्ति भिन्न होती है। एक ही आक्साइड के होने पर भी, प्रभाव काँच की रचना और वर्णक की मात्रा पर निर्भर करता है।



[चित्र २—कोवाल्ट युक्त काँचों का वर्णात्मक अवशोपण]

ताप-वृद्धि के साथ अवशोपण-शक्ति बढ़ती है। परन्तु अवशोपित पट्टियाँ या तो स्थिर रहती हैं या वर्णक्रम के लाल सिरे की तरफ बढ़ती हैं और ठंडी होने पर अपने पूर्व स्थान पर लौट आती हैं।

वर्णक्रम भा-मापी[1]

काँच के रंग का अध्ययन करने के लिए यह आधुनिक आविष्कार है। ५ से ३० m μ की एक वर्णिक किरणें भा-विद्युतीय कोशा पर लायी जाती हैं। ये किरणें रंगीन काँच से और वायु या वर्णहीन काँच से गमन करती हैं और उत्पन्न हुए विद्युत-प्रभाव की तुलना से काँच के वर्ण की तीव्रता मापी जा सकती है।

[2]पारजम्बु रश्मि पारगमित काँच

साधारण व्यापारिक काँचों में वस्तुतः परावैंगनी रश्मि पारगमित नहीं होती। येना के शाट और जेन ने ऐसे काँच बनाये जिनमें अधिकांश परावैंगनी रश्मियाँ पारगमित हो सकती थीं। ऐसे काँच की दूरबीन के लेन्स द्वारा ५० प्रतिशत अधिक सितारों का पता चला।

(१) पारजम्बु (परावैंगनी) रश्मि द्रवित क्वार्ट्ज् और बोरिक आक्साइड में पारगमित होती हैं।

(२) पारजम्बु (परावैंगनी) विकिरणें[3], बोरिक आक्साइड, फ्लूर-स्पार और अल्युमिना के द्रवित मिश्रण से अधिकांश मात्रा में पारगमन करती हैं।

(३) चूना, मैगनीशिया, सीस आक्साइड, अल्युमिना और बोरिक आक्साइड की अनुपस्थिति में, निकल द्वारा रंगीन काँचों में दृश्य प्रकाश का अवशोपण होता है, परन्तु पारजम्बु रश्मि का अधिकांश मात्रा में पारगमन होता है।

(४) पारजंम्बु विकिरणें, काँचीय सिलिका से बहुत अधिक मात्रा में पारगमन करती हैं। पार-जम्बु प्रकाश के पारगमन के लिए पारद-वाष्पदीप का काँच भी काँचीय सिलिका का बनाया जाता है। निर्माण की कठिनाइयों के कारण, प्रकाशीय कार्य के लिए काँचीय सिलिका के बुलबुलों से मुक्त छोटे लैन्स ही बनाना सम्भव है।

"वीटा काँच"-इंगलैंड निर्मित है जिसमें पारजम्बु विकरणें पारगमित हो सकती हैं और इसमें फेरिक आक्साइड की मात्रा .०३ प्रतिशत से कम हैं।

पार-जम्बु रश्मि अवशोषण काँच

साधारण व्यापारिक काँच, विशेप कर जिनमें फेरिक आक्साइड या सीस होता है, पार-जम्बु रश्मि का अवशोषण करते हैं।

1. Spectro photometer 2. Ultra-violet परावैंगनी 3. Radiation

ऊष्मा रश्मि-अवशोषण कांच

फेरस आक्साइड के रूप में लौह, अवरक्त विकिरणों को अधिक मात्रा में अवशोपण करता है।

(१) ज़िगमण्डी[1] ने अधिक फेरस आक्साइड युक्त काँच बनाया और ८ मिलीमीटर स्थूल का ऐसा काँच वस्तुतः पूर्ण ऊष्मा रश्मि का अवशोपण करता था।

(२) क्रुक्स ने सोडा-चूना युक्त काँचमिश्रण में १० प्रतिशत फेरस आगज़लेट[2] सम्मिलित कर काँच-निर्माण किया जो कि ९८ प्रतिशत ऊष्मा विकिरणों का अवशोपण करता था।

(३) सोडा-चूना युक्त काँच में फेरोसो-फेरिक-आक्साइड (Fe_3O_4) और वायोटाइट खनिज सम्मिलित करने से ऊष्मा रश्मियाँ वस्तुतः अवशोपित हो जाती हैं।

(४) सीरियम, क्रोमियम और टाइटेनियम के आक्साइड भी ऊष्मा रश्मियों का अवशोपण करते हैं।

(५) शेरवुड ने इमारतों के लिए ऊष्मा प्रतिरोधक काँच का आक्सीकरण वातावरण में निर्माण किया। सोडा-चूना-बोरेक्स युक्त काँच में, मैंगनीज़ टाइटेनियम और निकल के आक्साइड और कृत्रिम वायोटाइट का सम्मिलन किया गया।

इस काँच में ७७ प्रतिशत प्रकाश-रश्मि पारगमित होती थी और २२ प्रतिशत ऊष्मा रश्मि अवशोपित होती थी।

1. Zsigmondy 2. Oxalate

पाँचवाँ अध्याय

काँच की श्यानता और निस्तापन

श्यानता

काँच-निर्माण में श्यानता एक अति आवश्यक गुण है। काँच-निर्माण के लिए प्रयोग में आनेवाली विधियों, जैसे काँच धमन, पीडन, कर्षण और बेलना, बहुत कुछ काँच की श्यानता पर निर्भर करते हैं। निस्तापन में विकृति को हटाना भी श्यानता से ही सीधा सम्बन्धित है। काँच का शोधन भी अधिक अंशों में श्यानता की स्थिति पर निर्भर है।

श्यानता की परिभाषा

द्रव के अणुओं के संसंजन[1] का आन्तरिक संघर्ष श्यानता कहलाता है। श्यानित द्रव बहाव के प्रतिरोधक होते हैं। जिन द्रव पदार्थों की श्यानता कम होती है, उनको 'तरल द्रव्य' कहा जाता है।

मैक्सवेल के श्यानता गुणांक

जब श्यान द्रव की एक सतह दूसरी सतह के समानान्तर गतिशील होती है तो दोनों सतहों के पारस्परिक घर्षण से एक आन्तरिक बल उत्पन्न होता है जो उन दो सतहों की आपेक्षिक गति को मिटाने का प्रयत्न करता है। इस बल को प्रति इकाई क्षेत्र पर सतह के स्पर्शीय धरातल में नापते हैं। दोनों सतहों के बीच की दूरी एक इकाई होती है और उनके वेग में एक इकाई का अन्तर होता है। इस प्रकार के स्पर्श रेखीय बल को श्यानता का गुणांक कहते हैं और चिह्न η (ग्रीक लैटर ईटा) से व्यक्त करते हैं।

$$\eta = \frac{\text{ब} \times \text{स}}{\text{ग}},$$

यहाँ

ब = डाइन बल।

स = समानान्तर सतहों की दूरी।

ग = दो सतहों की आपेक्षिक गति।

श्यानता को डायनों[2] में प्रति सेन्टीमीटर प्रति सेकन्ड मापा जाता है और इस इकाई को 'पायेज़[3]' कहते हैं।

1. Cohesion 2. Dynes 3. Poise

यदि व = १ और, स = १ तव η = व

जल की श्यानता २०° सें० ताप पर .०१ η और अण्डी के तेल की १० η तथा डामर की १०९.५ η होती है।

ऊँची श्यानताओं को व्यक्त करने के लिए, साधारणतः श्यानता का लघुगणक इस तरह दिया जाता है— ζ (ज़ेटा) = लघुगणक η (ईटा)

श्यानता और केलासन

द्रव ठंडा होने पर साधारणतः ठोस हो जाता है और अणुओं का पुनःस्थापन होने से विशिष्ट केलास वनते हैं। परन्तु यदि द्रव हिमांक पर अति गाढ़ा होता है और उसमें आन्तरिक घर्षण अधिक होता है तो अणु केलासीय आकार के लिए आवश्यक स्थानों में आसानी से नहीं पहुँच सकते। अतः गाढ़ द्रव, ठंडे होने पर काँचाभ[1] घनाकृति के हो जाते हैं और तरल द्रव जो हिमांक के निकट तरल रहते हैं, केलासीय हो जाते हैं।

शोधन और श्यानता

जब काँच को द्रवित किया जाता है तो निम्न ताप पर कई रासायनिक क्रियाएँ होती हैं और पर्याप्त मात्रा में गैस का निकास होता है। इससे लेपी पदार्थ और गैस वुलवुलों का फेन वन जाता है जिसमें विना घुली वालू के कण भी होते हैं। ताप वढ़ने पर वालू तो घुल जाती है, परन्तु गैस वुलवुले या वीज सम्पूर्ण द्रुत काँच में विखरे रहते ह। काँच का ताप और वढ़ाने से श्यानता कम हो जाती है और वीजों को वाहर निकलने की सुविधा हो जाती है। उष्मा के कारण वीज प्रसारित होते हैं और ये वुलवुले शीघ्रता से ऊपर उठते हैं तथा अपने साथ छोटे वुलवुलों को भी ले जाते हैं। काँच की श्यानता १२००° सें० ताप पर १४००° सें० ताप से तीन गुनी अधिक होती है और इसलिए १४००° सें० ताप पर वुलवुले १२००° सें० ताप पर तीन गुना अधिक तेजी से काँच में से निकल सकते हैं।

श्यानता और विकृति

निम्न तापों पर श्यानता अति शीघ्रता से वदलती है। रक्तोष्ण ताप के पूर्व, सब ही साधारण काँच दृढ़ हो जाते हैं और उनकी अपरिमित श्यानता होती है। काँच के मृदुलांक के निकट प्रति ५.५° सें० ताप कम होने पर, श्यानता दूनी हो जाती है।

लिटिलटन के कोमलांक पर काँच की श्यानता ४.५× १०^{७} पायेज़ हो जाती है। द्रव काँच की शोधन स्थिति में श्यानता प्रायः ५० पायेजें, कार्य ताप पर प्रायः १०^{३}

1. Glassy

से $१०^५$ पायेंजें और अभितापन (निस्तापन) ताप पर प्रायः $१०^{१३}$ पायेंजें होती है। $१०^{१३}$ पायेजों पर काँच पूर्णतया दृढ़ हो जाता है।

काँच में विकृति, श्यान बहाव के कारण होती है जो कि श्यानता के सरल अनुपात में होती है। अभितापन के लिए काँच को कुछ समय तक उतने तापपर रखा जाता है जिसमें काँच की ऐसी श्यानता हो जाय जिसमें अणु स्थानान्तरित होकर विकृतियों को दूर कर सकें। काँच को इस प्रकार से ठंडा किया जाता है कि काँच में न्यूनतम विकृति आ सके।

श्यानता और काँच का कार्य करण

तापक्रम के परिवर्तन से काँच की श्यानता का परिवर्तन होने के कारण, काँच की चादरों, नलियों, छड़ों, बोतलों इत्यादि का निर्माण सम्भव होता है। काँच की रचना भी ऐसी चुनी जाती है कि जिससे विशिष्ट ताप पर काँच की विशिष्ट श्यानता हो और विशिष्ट ताप विस्तार में, श्यानता के परिवर्तन की विशिष्ट दर हो। जिस काँच में चूने की मात्रा अधिक होती है, वह शीघ्र अनाम्य (न झुकनेवाला) हो जाता है और मुख-धमन वस्तु के लिए उपयुक्त होता है। यांत्रिक कार्य के लिए अधिक श्यानता परास के काँच की आवश्यकता होती है और इसे सोडा की मात्रा बढ़ाने से और चूना की मात्रा कम करने से प्राप्त किया जा सकता है। जब चूने के स्थान पर सीस का प्रयोग किया जाता है तो काँच का कार्य करण परास बढ़ जाता है और इस परास में, औजारों द्वारा काँच पर सरलतापूर्वक कार्य किया जा सकता है। ऐसे काँच को "मधुर" या "उत्तम प्रकृति" का व्यक्त किया जाता है।

काँच की रचना और श्यानता

सिलिका की मात्रा-वृद्धि से काँच का श्यानता-परास बढ़ जाता है। चूने की मात्रा की वृद्धि से श्यानता बढ़ती है, परन्तु श्यानता-परास कम होता है। सोडा की मात्रा की वृद्धि से, श्यानता घटती है, परन्तु श्यानता-परास बढ़ता है। पोटाश का असर सोडा की ही तरह होता है, परन्तु वह इतना प्रभाव नहीं देता। बोरिक आक्साइड की मात्रा में वृद्धि से श्यानता कम होती है। अल्युमिना की वृद्धि से श्यानता और श्यानता-परान दोनों ही बढ़ जाते हैं तथा सिलिका की अपेक्षा यह अधिक प्रभावयुक्त है। परन्तु सोडा-चूना युक्त काँच में, अल्युमिना की अल्प मात्रा श्यानता को घटाती है। मैग-नीशिया का असर प्रायः चूने की ही तरह होता है, परन्तु प्रभाव उससे कम होता है। परन्तु सोडा-चूना युक्त काँच में मैगनीशिया की अल्प मात्रा श्यानता को बहुत अधिक कम कर देती है। सीस श्यानता को तो घटाता है, किन्तु श्यानता-परास को बढ़ाता है।

उच्च तापों पर काँच की श्यानता मापने की विधि

(१) **मैसन गिलवर्ट एवं वर्कले की विधि**—एक प्लैटिनम का गोला, द्रुत काँच से भरी रंभाकार (वेलनाकार) घरिया में डूबने दिया जाता है या एक तार से उसे लटकाकर नियत बल से उसे ऊपर खींचा जाता है। एक्स किरणों द्वारा निश्चित समयों पर गोले की स्थिति जानकर उसका वेग ज्ञात कर लिया जाता है। स्टोक के सिद्धान्त से, $\eta = \frac{क}{व}$, यहाँ 'क' एक नियतांक है जो काँच एवं प्लैटिनम के घनत्व तथा अर्धव्यास पर निर्भर होता है। 'व' वेग और 'η' श्यानता है। इस उपकरण[1] का द्रवों की ज्ञात की हुई श्यानताओं के प्रति अंशन[2] किया जाता है।

(२) **मार्गुलेज की विधि**—दो संकेन्द्र[3] सिलिन्डरों (वेलनों) के मध्य पिघला काँच भरते हैं। वाहरी सिलिन्डर नियत गति से घूमता है। अन्दर के सिलिन्डर पर एक वल क्रियाशील होता है जिसका मान तरल काँच की श्यानता के अनुपात में होता है।

(३) द्रव काँच को दो संकेन्द्र सिलिन्डरों के मध्य में रखते हैं। भीतरवाला सिलिन्डर एक वल से घूमता है। इस वल का घूर्ण[4] "म" है" और कोणीय वेग "ग" है विमा मानों द्वारा नियतांक "क" का मान निकालने पर, श्यानता $\eta = क\frac{म}{ग}$। इस उपकरण का द्रवों की ज्ञात हुई श्यानताओं के प्रति अंशन किया जाता है।

(४) वाशवर्न[5] ने मोटर द्वारा चालित कठोर चीनी मिट्टी की छड़ से द्रव काँच को आलोड़ित कर दिया। छड़ के कोणीय वेग और शक्ति की खपत को लिख लिया। फिर उसीके आधार पर श्यानता का निश्चय किया गया।

काँच का कोमलांक[6]

काँच का निश्चित द्रवणांक नहीं होता, परन्तु उसका कोमल परास निश्चित किया जा सकता है। काँच का कोमलांक बिन्दु वह ताप है जिस पर काँच का तन्तु[7] एक निश्चित दर से गरम करने पर, अपने ही भार से १ मिलीमीटर प्रति मिनट वढ़ता है।

लिटिलटन का प्रयोग—एक ऊर्ध्वाधर विद्युत भट्ठी में २२.८ सेण्टीमीटर लम्वे और .५० से .७० मिलीमीटर व्यासवाले काँच के तन्तु को स्वतन्त्रतापूर्वक

1. Apparatus 2. Is caliberated 3. Concentric 4. Moment विभ्रमिपा (रघु०) 5. Washburn 6. Softening point मृदुकरणांक 7. Filament

लटका दिया गया। धागे (तन्तु) का निचला भाग एक मापश्रेणी के सामने रखा गया, दूरवीन द्वारा उसको फोकस किया जा सकता था। प्रति मिनट पर ताप एवं धागे की मिलीमीटर में लम्बाई के सम्बन्ध को जानने के लिए रेखाचित्र वनाया गया। कोमल विन्दु वह ताप था जिस पर रेखाचित्र का झुकाव ४५° का था। इस प्रयोग के अनुसार कोमलांक ४.५×१०^{७} पायेजों की श्यानता के तदनुरूप है।

जर्मन और इंगलिश काँच प्रौद्योगिकी संस्थाओं के अनुसार पूर्णतापीय-प्रसार-वक्र का अधिकतम ताप काँच के कोमलांक पर होता है। यह $१०^{११}$ से $१०^{१२}$ पायेजों की श्यानता के तदनुरूप है और प्रायः निस्तापन परास की ऊपरी सीमा के अनुरूप है।

काँच का मृदुकरणांक ताप वोरन, सीस, वेरियम, सोडियम, पोटेशियम और फेरिक आक्साइडों का योग करने से कम होता है, किन्तु सिलिका, कैलशियम और अल्युमिनियम आक्साइडों से वढ़ जाता है।

व्यापारिक काँचों का कोमलांक ताप ४००° सें० और ८००° सें० के मध्य में होता है।

काँच में विकृतियाँ[1]

साधारण ताप पर काँच अत्यन्त ही प्रत्यास्थ[2] पदार्थ है। यह ऊष्मा का अत्यन्त अधम चालक है। जव काँच की वस्तु को गरम किया जाता है तो वाहर की सतह अन्दर की अपेक्षा अधिक गरम हो जाती है। इसी प्रकार जव तप्त काँच वस्तु को ठंडा किया जाता है तो वाहर की सतह भीतर की अपेक्षा अधिक ठंडी हो जाती है। काँच काय में ताप-प्रवणता[3] वन जाती है। केन्द्र की दिशा में काँच की सतह से दूरी और वहाँ के ताप का रेखाचित्र वनाया जाता है और इस वक्र के झकाव को 'ताप-प्रवणता' नाम से व्यक्त किया जाता है। काँच की अर्धस्थूलता की प्रति इकाई के ताप का अन्तर ही "ताप-प्रवणता" है।

जव काँच में ताप-प्रवणता विद्यमान होती है तो काय में फैलाव और संकोचन के कारण उसमें प्रतिवल प्रवणता[4] उपस्थित हो जाती है। जिस काँच में प्रतिवल होगा उसमें तदनुरूप विकृतियाँ होंगी और जिसमें विकृतियाँ होंगी उसमें तदनुरूप प्रतिवल भी होंगे। ये दोनों शब्द अन्तर्निमेय[5] हैं क्यों कि एक का कारण दूसरा है। यदि काँच की अनिश्चित लम्बाई की पट्टी[6], कमरे के ३०° सें० ताप से ४००° सें० तक गरम की जाती है तो उसमें ताप-प्रवणता उत्पन्न हो जायगी। दोनों सतहों में वढ़ने

1. Strains 2. Elastic 3. Temperature gradient 4 Stress gradieant 5. Interchangeable 6. Slab

की प्रवृत्ति होती है, किन्तु मध्य का भाग इनको बढ़ने से रोकता है और फलस्वरूप वाहरी सतह पर दवाव तथा मध्य में तनाव उत्पन्न हो जाता है।

यदि ताप ४००° सें० पर स्थिर कर दिया जाय, जिससे कि पूर्ण पट्टी का यह ताप हो जाय, तो ताप-प्रवणता हट जायगी, और विकृतियाँ भी गायव हो जायँगी।

विकृति की मात्रा काय[1] की ताप-प्रवणता के अनुपात में होती है।

यदि काँच को अचानक ठंडा या गर्म किया जाय तो ताप-प्रवणता इतनी तीव्र हो सकती है कि उसमें इतनी शक्ति का प्रतिवल उत्पन्न हो जाय जो कि काँच को तोड़ दे।

काँच काय में ताप प्रवणता दूर करने से जो विकृतियाँ गायव हो जाती हैं, उनको "अस्थायी विकृतियाँ" कहा जाता है।

स्थायी विकृति

यदि काँच-पट्टी को उसके कोमलांक ताप के निकट तक एकसमान तप्त कर दिया जाय तो श्यान वहाव के कारण, पट्टी विकृति से मुक्त हो जायगी। अव यदि काँच-पट्टी को ठंडा किया जाय तो उसमें ताप-प्रवणता आने के कारण, सतह पर तनाव और भीतर दवाव उत्पन्न हो जायगा तथा कुछ श्यान वहाव के कारण, प्रतिवल का कुछ भाग गायव हो जायगा। जव काँच-पट्टी दृढ़ हो जाती है और उसका ताप एकसमान हो जाता है तो ताप-प्रवणता के हटने के कारण, अस्थायी विकृति भी दूर हो जाती है।

यदि ताप-प्रवणता के कारण उत्पन्न विकृति 'व' है, और श्यान वहाव के कारण 'क' विकृति हट जाती है, तो ठंडे होने की अवधि में (व–क) आन्तरिक विकृति रहेगी। जव ताप-प्रवणता हट जाती है तव काँच में विकृति को निम्न सूत्र से व्यक्त किया जा सकता है—

$$(\text{व}-\text{क})-\text{व}=-\text{क}$$

काँच की स्थायी विकृति, काँच के ठंडे होते समय की दूर होनेवाली विकृति के वरावर और विपरीत होती है।

विकृति का उपलम्भन[2]

सन् १८१३ में, व्रूस्टर ने ज्ञात किया कि जिस ऋणात्मक काँच में दवाव होता है वह एकाक्ष प्रकाशीय केलास की[3] तरह होता है और ध्रुवीयित प्रकाश में, उसमें वाधन वर्ण[4] दिखलाई देते हैं।

विकृति परीक्षक

समानान्तर प्रकाश पुंज को एक लेन्स से पारगमित कर एक समतल में ध्रुवीयित करने की दो विधियाँ हैं—(१) निकोल प्रिज्म जिसको 'ध्रुवीयक' कहते हैं,

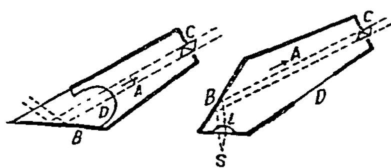
1. Body 2. Detection परिचयन, पता लगाना 3. Uniaxial optically negative crystal 4. Interference colours

उससे पारगमित कर, या (२) काँच की पट्टियों की श्रेणी से परावर्तित कर। ये 'पट्टियाँ आपाती प्रकाशकिरण'[1] से विशिष्ट कोण पर होती हैं। निकली हुई किरण का एक दूसरे निकोल प्रिज्म से परीक्षण किया जाता है। इस प्रिज्म को 'विश्लेपक' कहा जाता है। इसका इतना घूर्णन किया जाता है कि क्षेत्र में अन्धेरा हो जाय और निकोलें 'अनुप्रस्थित'[2] हो जाती हैं। परीक्षा करने योग्य काँच को विश्लेपक और ध्रुवीयक के मध्य में ऐसा रखते हैं कि उसकी लम्बी अक्षि विश्लेपक के ध्रुवीयण समतल से ४५° का कोण बनाये। विकृतित भाग प्रकाशित रहते हैं और विकृतिहीन भागों में अन्धेरा होता है। विकृति परीक्षक में अपूर्ण निस्तापित बोतल पूर्ण निस्तापित ज्ञात हो सकती है क्योंकि विकृति के अनुसार बोतल को ठीक दिशा में परीक्षक में रखकर जाँचना सम्भव नहीं है।

गहरा हरा, गहरा अंबर या काला काँच इस विधि से जाँचा नहीं जा सकता। लिटिलटन के अनुसार ऐसे काँचों में विकृतियों का अवरक्त[3] या पार-जम्बु विकरणों द्वारा पता लगाया जा सकता है।

"ध्रुवाभ[4]" या "ध्रुवाभ काँच" में दो पतली पालिशदार काँच की पट्टियों के मध्य कार्बनिक प्लास्टिक पदार्थ की परत देते हैं। इस पदार्थ में कुछ केलास होते हैं जो सब एक दिशा में ऐसे रखे जाते हैं कि प्रकाश का ध्रुवण हो जाय। काँच की पट्टियाँ चतुर्दिक से बन्द कर दी जाती हैं। यह "ध्रुवाभ" चादरें विभिन्न आकारों की होती हैं और विकृति परीक्षक में प्रयुक्त की जाती हैं।

(१) दिन के प्रकाश के प्रयोग के लिए —काठ के बक्स A का भीतरी भाग हल्के काले रंग से रंगा जाता है। इसके पेंदे B में कई परतें काले काँच की चादरों की होती हैं जो कि परावर्तित प्रकाश* का ध्रुवण करती हैं और ध्रुवीयित प्रकाश निकोल प्रिज्म C द्वारा जाँचा जाता है। काँच को छिद्र D द्वारा लाया जाता है।



[चित्र ३—विकृति परीक्षक]

* काँच की पट्टियाँ इस प्रकार स्थित की जाती हैं कि प्रकाश-पुंज उनसे ऐसा आपतन-कोण बनाये जिसका स्पर्श काँच के वर्तनांक के बराबर हो। यह "ब्रूस्टर ध्रुवीयण कोण" के नाम से व्यक्त किया जाता है।

1. Incident ray of light 2. Crossed 3. Infra-red 4. Polaroid

(२) कृत्रिम प्रकाश के लिए—प्रकाश पुंज को लेन्स L द्वारा समानान्तर बनाया जाता है। काँच की काली चादरें B प्रकाश को परावर्तित कर ध्रुवीयित करती हैं। जिस काँच की जाँच करनी होती है उसे छिद्र D द्वारा स्थित किया जाता है। निकोल प्रिज्म C, द्वारा प्रकाश जाँचा जाता है।

आँखों के स्थान पर एक केमरा रखकर दृश्य क्षेत्र का फोटोग्राफ भी लिया जा सकता है। विश्लेपक के लिए ध्रुवाभ बिम्ब या काँच की पट्टियाँ आधुनिक विकृति परीक्षकों में निकोल प्रिज्मों के स्थान पर प्रयोग में लायी जा रही हैं।

विकृति का मात्रात्मक आगणन[1]

जब क्वार्ट्ज़ का स्फान (पच्चर)[2] ध्रुवीयेक्ष[3] में रखा जाता है तब स्थान के मध्य केन्द्र में एक काली रेखा दिखाई देती है। जिस काँच की विकृति जाँच करनी होती है उस को स्फान और विश्लेपक के मध्य रखा जाता है। काली रेखा का स्थानान्तरण, विकृति की मात्रा या विकृति के कारण उत्पन्न समकोण वर्तनांक अन्तर के अनुपात में होता है। समकोण वर्तनांक अन्तर को ज्ञात किये हुए काँचों का प्रयोग कर स्फान को रेखांकित कर लिया जाता है। विकृति युक्त काँच की भिन्न दिशाओं में भिन्न वर्तनांक[4] होता है। यदि μक और μख क्रमश: प्रतिबल के समानान्तर और समकोण पर वर्तनांक हों तो (μक– μ ख) मात्रा को "समकोण वर्तनांक अन्तर" कहकर व्यक्त किया जाता है और यह काँच में उपस्थित प्रतिबल के अनुपात में होता है।

प्रकाशीय मार्ग अन्तर, δ=स (μक– μख), यहाँ 'स' काँच-पट्टिका की स्थूलता है। प्रकाशीय काँच के लिए δ का मान २० m μ प्रति सेन्टीमीटर से अधिक नहीं होना चाहिए। बहुत-से ऐसे यंत्र अब सुलभ हैं जिनसे ४ सरलता से जाना जा सकता है।

ऐडम्स और विलियमसन के अनुसार, विकृति के हटने की दर प्रतिबल के वर्ग के अनुपात में होती है। लिटिलटन के अनुसार, इकाई प्रतिबल के लिए, प्रतिबल के हटने की दर श्यानता के अनुपात में होती है। प्रकाशीय मार्ग अन्तर और काँच में प्रतिबल का सम्बन्ध निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किया जाता है—

$$\text{प्र} \times \text{ब} = \frac{\delta}{\text{स}}$$

1. Quantitative estimation 2. Wedge कीलक 3. Polariscope
4. Refractive index

यहाँ, प्रतिवल प्रकाशीय गुणांक = प्र;
मुख्य इकाई प्रतिवलों का अन्तर = व;
काँच पट्टिका की स्थूलता = स;
दो किरणों का आपेक्षिक विलम्ब = δ

अधिकतर सोडा चना युक्त काँचों के लिए, प्र=२.६ जब कि 'δ' की मात्रा मिलीक्रानों में, 'स' की सेन्टीमीटरों में, और 'व' की किलोग्राम प्रति सेन्टीमीटर होती है। उदाहरणार्थ २६ $m\mu$ प्रति सेन्टीमीटर का प्रकाशीय मार्ग अन्तर= $\frac{२६}{२.६}$ = १० किलोग्राम प्रति सेन्टीमीटर प्रतिवल

विकृति बिन्दु

काँच का विकृति विन्दु उस ताप को कहते हैं जिस पर विकृतियों को दूर करने के लिए कम से कम चार घंटा का समय लगता है और उपरि अभितापन (निस्तापन) ताप से ५०° सें० से अधिक का अन्तर नहीं होना चाहिए।

काँच का निस्तापन

काँच की विना निस्तापन की हुई आधी इंच मोटी छड़ दो अनुप्रस्थित निकोल प्रिज्मों के मध्य विद्युत भट्ठी में रखी जाती है। निरीक्षण करने पर छड़ के केन्द्रीय अक्ष के चतुर्दिक एक काला क्रास और संकेन्द्रित रंगीन वृत्त दिखलाई देते हैं। जब ताप वढ़ाया जाता है तो कई सौ डिगरियों तक कोई परिवर्तन नहीं होता, परन्तु काँच की किस्म के अनुसार प्राय: ४००° सें० या इससे अधिक पर रंगीन वृत्त फैलने लगते हैं और अन्त में गायब हो जाते हैं, सिर्फ काला क्रास रह जाता है। फिर क्रास भी फैलने लगता है और पूर्ण अन्धकार हो जाता है तथा उस ताप पर काँच विकृतियों से मुक्त हो जाता है।

न्यूनतम ताप जिस पर विकृति हटायी जा सकती है उसको "निम्नतापन ताप" कहते हैं। इस ताप पर निस्तापन की दर बहुत धीमी होती है और पूर्ण निस्तापन में कई दिवस लग जाते हैं।

लिली के अनुसार, "निम्न निस्तापन ताप" वह है जिस पर काँच की श्यानता $४ \times १०^{१४.४}$ पायेज़ हो। यह वह ताप है जिस पर श्यानता काँच को ऐसा प्रत्यास्थ पदार्थ वना देती है कि किसी प्रतिवल का उस पर असर न पड़े और उसको चाहे जितने शीघ्र ठंडा करने पर भी विकृति न उत्पन्न हो सके।

ताप बढ़ाने पर निस्तापन शीघ्र होता है। "उच्च निस्तापन ताप" वह तत्त्व है जिस पर काँच की ९० प्रतिशत मौलिक विकृतियाँ दो मिनट में हटायी जा सकें।

उच्च निस्तापन ताप ही काँच का निस्तापन ताप माना जाता है। काँच को इस ताप से अधिक कभी तप्त नहीं किया जाता क्योंकि कुछ समय के पश्चात् अपने भार के कारण काँच का रूप बिगड़ जाता है।

उच्च निस्तापन ताप से विकृति विन्दु तक के ताप परास को "निस्तापन परास" कहा जाता है।

अधिकतर व्यापारिक काँचों का निस्तापन परास ४२५° और ६००° सें० के मध्य होता है।

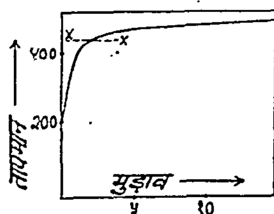
टुआईमान[1] के अनुसार निस्तापन ताप के निकट प्रति ८° सें० ताप के घटने पर काँच की श्यानता दूनी हो जाती है। अतः प्रत्येक ८° सें० ताप की वृद्धि से निस्तापन का समय आधा रह जाता है।

उदाहरण—यदि ५००° सें० ताप पर, काँच की विकृतियाँ १० मिनट में हटायी जा सकती हैं तो ५०८° सें० ताप पर ५ मिनट में ही विकृतियाँ दूर की जा सकेंगी। इंगलिश भी टुआईमान के विचार से सहमत हैं, परन्तु उनके अनुसार ९०° सें० ताप की वृद्धि से निस्तापन का समय आधा रह जाता है।

निस्तापन परास में काँच का कोमल होना

उच्च निस्तापन ताप पर काँच निम्न निस्तापन ताप की अपेक्षा अधिक कोमल होता है। विद्युत भट्ठी में काँच की छड़ क्षैतिज समतल में रखी जाती है और ताप धीरे-धीरे बढ़ाया जाता है। काँच के दूसरे सिरे पर एक निर्देशक लगाया जाता है। मुड़ाव की दर के अनुसार कोमलता की दर निर्देशित होती है। कोमल होने की दर धीरे-धीरे बढ़ती है और उच्च निस्तापन ताप पर कोमलता शीघ्रता से होने लगती है।

काँच की छड़ के ताप के प्रति मुड़ाव की मात्रा का लेखा-चित्र बनाने से उच्च निस्तापन ताप ज्ञात करना सम्भव है।



[चित्र ४—काँच का मुड़ना।]

1. Twymann

निस्तापन परास पर काँच के प्रसार की दर

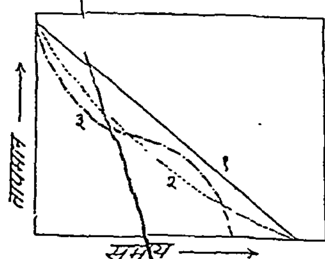
निम्न निस्तापन ताप तक, निस्तापित काँच के प्रसार की दर रेखीय[1] होती है। इसके पश्चात्, प्रसार की दर में आकस्मिक वृद्धि होती है। उच्च निस्तापन ताप के ऊपर प्रसार की दर कम हो जाती है। आरम्भ में, विना निस्तापन किये हुए काँच का प्रसार निस्तापित काँच की अपेक्षा अधिक होता है। निस्तापन परास के ठीक नीचे, प्रसार की दर कम हो जाती है और निस्तापन परास में, निस्तापित काँच के सदृश हो जाती है। निस्तापन परास में विकृति और विकृतिहीन काँच के प्रसार में कोई अन्तर नहीं होता है।

निस्तापन विधि

प्रत्येक निस्तापन विधि में, काँच को इतने ताप तक गरम किया जाता है कि निश्चित समय में विकृतियाँ दूर हो जायँ और फिर काँच इस प्रकार से ठंडा किया जाता है कि न्यूनतम विकृति काँच में अवशेष रहे।

काँच को पूर्णरूप से निस्तापन करना असम्भव है क्योंकि उसमें ठंडे होते समय कुछ न कुछ स्थायी विकृति सर्वदा आ ही जाती है। यदि काँच का निम्न ताप पर निस्तापन किया जाता है तो तप्त अवस्था में काँच को विकृति हीन होने में अधिक समय लगता है, परन्तु इसको शीघ्रता से ठंडा किया जा सकता है।

अधिक श्यानता होने के कारण यह उच्च ताप प्रवणता सहन कर सकता है, जिसके कारण विकृति अधिकतर रह जाती है जो स्थायी विकृति के रूप में प्रकट होती है। यदि काँच का उच्च ताप पर निस्तापन किया जाय तो काँच शीघ्र ही विकृति से मुक्त हो जाता है क्योंकि उच्च ताप पर श्यानता भी कम होती है। परन्तु अधिक मात्रा में स्थायी विकृति से वचने के लिए काँच को वहुत धीरे-धीरे ठंडा करना चाहिए जिससे ताप-प्रवणता कम आये। इस विधि से विकृति भी कम ही होती है। विकृति का कुछ भाग काँच के श्यान वहाव के कारण दूर हो जाता है, परन्तु यही भाग स्थायी विकृति के रूप में पुनः आ जाता है।



[चित्र ५—काँच निस्तापन लेखा चित्र।
(१) लेयर का लेखा चित्र।
(२) किल्न का लेखा चित्र।
(३) आदर्श निस्तापन का लेखा चित्र।]

1. Linear

उच्च निस्तापन ताप की अपेक्षा यदि काँच निम्न निस्तापन ताप पर निस्तापित किया जाय तो पूर्ण रूप से निस्तापन विधि में कम समय की आवश्यकता होती है।

काँच की वस्तुओं की लेयर से गमन करने की दर, लेयर की ताप-प्रवणता, वस्तुओं के आकार-प्रकार और मोटाई एवं काँच की रचना पर निर्भर होती है। उदाहरण के लिए, ऊँची वस्तुओं को लेयर के अत्यधिक गरम भाग से शीघ्रता से गमन करना चाहिए जिससे वस्तु की आकृति बिगड़ने न पाये और लेयर के ठंडे भाग में गमन के लिए अधिक समय दिया जा सकता है। किल्नों में कम ताप होने पर, ठंडे होने की दर भी मन्द हो जाती है। इंगलिश और टर्नर ने ज्ञात किया है कि निस्तापन परास के ऊपरी भाग में ठंडे होने की क्रिया शीघ्रता से की जा सकती है। निस्तापन परास के निम्न भाग में ही संकट का भय रहता है।

अधिकतर निस्तापन लेयरों में ताप क्रमशः और एकसमान कम होता है। काँच की वस्तुएँ भी एक समान गति से गमन करती हैं और यह बहुत कुशल विधि नहीं है।

काँच की रचना और निस्तापन ताप

व्यापारिक सोडा चूना युक्त काँच का निस्तापन ताप (प्रायः ५५०° सें०) क्षार सीस युक्त काँच (प्रायः ४५०° सें०) की अपेक्षा ऊँचा होता है। अधिक क्षार युक्त काँच काफी निम्न ताप पर निस्तापित किये जा सकते हैं। जटिल काँच-जैसे रासायनिक और ऊष्मा प्रतिरोधक का निस्तापन ताप (प्रायः ६००° सें०) कुछ अधिक ही होता है। ये कठिनाई से निस्तापित होते हैं और क्रिया बहुत धीमे होती है। सोडा-चूना-सिलिका-युक्त काँच में, यदि सिलिका की मात्रा स्थिर रखी जाय और सोडा के कुछ भाग के स्थान में चूना या मैगनीशिया प्रयोग में लाया जाय तो काँच का निस्तापन ताप बढ़ जाता है। जिस काँच में चूना और मैगनीशिया दोनों उपस्थित होते हैं उस काँच का निस्तापन ताप, उस काँच की अपेक्षा जिसमें केवल इनमें से एक ही अवयव हों, निम्न होता है। इसलिए यदि सोडा-चूना-सिलिका-युक्त काँच में, चूने के कुछ भाग के स्थान में मैगनीशिया प्रयोग में लाया जाय तो निस्तापन ताप निम्न हो जाता है। काँच में यदि सोडा के कुछ भाग के स्थान में अल्युमिना का प्रयोग किया जाय और सिलिका की मात्रा स्थिर रहे तो निस्तापन ताप बढ़ जाता है। चूने की तुलना में, अल्युमिना काँच का निस्तापन ताप घटाता है। यदि सोडा के कुछ भाग के स्थान में सिलिका का प्रयोग किया जाय तो भी काँच का निस्तापन ताप बढ़ जाता है। काँच में यदि सिलिका के कुछ भाग के स्थान में बोरिक आक्साइड का प्रयोग किया जाय और

सोडा (Na_2O) की मात्रा १० प्रतिशत पर स्थिर रहे तो निस्तापन ताप कम होता है, परन्तु यदि Na_2O की मात्रा २० प्रतिशत पर स्थिर होती है तो निस्तापन ताप बढ़ता है और यह वृद्धि तब तक रहती है जब तक कि बोरिक आक्साइड की मात्रा १८ प्रतिशत तक नहीं पहुँचती और इसके पश्चात् निस्तापन ताप कम होने लगता है।

काँच में हानि रहित विकृति

काँच-निर्माता काँच का निस्तापन इतना करता है कि अवशिष्ट विकृति काँच के लिए खतरनाक न हो। बहुत पतली वस्तुएँ, जैसे विद्युत बल्ब, काँच नलियाँ, खुली हवा में ठंडी की जाती हैं और इनके लिए निस्तापन अनावश्यक है। प्रकाशीय काँचों में विकृति की मात्रा न्यूनतम होनी चाहिए क्योंकि विकृति वास्तव में लेन्सों और प्रिज्मों में ऐंठन उत्पन्न करती है और वे व्यर्थ हो जाते हैं। बोतल में यदि युक्तियुक्त विकृति की मात्रा एक समान वितरित हो तो वह अधिक मजबूत होगी और इस प्रकार की बोतल उत्तम निस्तापित बोतलों से अधिक स्थायी होगी। अतः वे बोतलें जिनमें कुछ विकृति है किसी भी प्रकार से निम्न कोटि की नहीं हैं।

छठाँ अध्याय

काँच का स्थायित्व

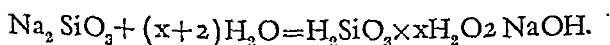
स्थायित्व काँच का वह गुण है जिसके कारण काँच की चमकीली सतह और उसकी पारदर्शिता मलिन या वियोजित हुए विना अधिक समय तक वनी रह सके ।

काँच में अधिक स्थायित्व की आवश्यकता

दवाएँ, भोजन और पेय जिन काँच की बोतलों में रखे जाते हैं उन बोतलों के काँच पर बहुत समय तक द्रवों की रासायनिक क्रिया होती रहती है । यह अत्यन्त आवश्यक है कि काँच इन द्रवों की क्रिया से विघटित या विक्लेदित होकर उनमें सम्मिलित न हो जाय । रासायनिक काँच-वस्तुओं को जल, अम्ल और क्षार का संक्षारण[1] सहना पड़ता है । द्वारी काँच को वायु-ऋतुक्षरण, यानी वायुमण्डल की नमी तथा कार्वन-डाइआक्साइड के कारण होनेवाला संक्षारण सहना पड़ता है और एमोनिया, हाइड्रोजन सलफ़ाइड तथा सल्फ्युरिक अम्ल गैसों के, जो वायु-मण्डल में होते हैं, प्रभाव का सामना करना पड़ता है । प्रकाशीय काँच में ऋतु प्रभाव की दृष्टि से बहुत अधिक स्थायित्व होना आवश्यक है क्योंकि मूल्यवान् लेन्स या प्रिज़्म जरा-सी भी तह जम जाने से निरर्थक हो जाता है ।

ऋतु-प्रभाव और रासायनिक क्रिया

काँच के सम्पर्क में आने से नमी का पहले अधिशोपण होता है, फिर अवशोपण, और तत्पश्चात् वह काँच की भीतरी परतों में विसरित हो जाती है । घुलनशील सिलीकेटें काँच में जल विश्लेपित हो जाती हैं । सोडा चूना युक्त काँच में सोडियम सिलिकेट नमी से जल विश्लेपित हो जाता है ।



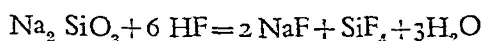
$$Na_2SiO_3 + (x+2)H_2O = H_2SiO_3 \times xH_2O \, 2NaOH.$$

इस प्रकार जो कास्टिक सोडा वनता है वह वायुमण्डल के कार्वन-डाइ-आक्साइड द्वारा सोडियम कार्वोनेट में परिवर्तित हो जाता है । सोडियम कार्वोनेट की महीन

1. Corrosion

सुइयों के आकार के केलास बन जाते हैं और सिलिका का सूक्ष्म श्वेत निक्षेप ऋतु-प्रभावित कांच की सतह पर जम जाता है। यदि इस कांच को सूखे कपड़े से रगड़ा जाय तो उस पर खरोंच पड़ जाती है, परन्तु श्वेत सतह पर की परत या झिल्ली तनु अम्ल या जल से ही धोकर सहज में दूर की जा सकती है। ऋतु-प्रभाव से पोटाश युक्त काँच की सतह पर नम और चिकना निक्षेप बनता है क्योंकि पोटेशियम कार्बोनेट प्रक्लेद्य[1] होता है। जब काँच का जल संक्षारण होता है तब प्राप्त घोल में सिर्फ सोडा और सिलिका होती है और सोडा का सिलिका से अनुपात, काँच की अपेक्षा घोल में अधिक होता है। चूना या कैलशियम सिलेकेट वस्तुतः अघुलनशील हैं, अतः कुछ समय पश्चात् संक्षारण की गति मंद पड़ जाती है। काँच से घुलनेवाली सोडा की मात्रा प्रायः समय के वर्गमूल के अनुपात में होती है।

उच्च तापों पर ऋतु-प्रभाव का वेग बढ़ जाता है। सोडियम कार्बोनेट और कास्टिक सोडा के क्षारीय घोलों से संक्षारण, जल के ही समान, परन्तु उससे अधिक वेग से होता है। तीव्र सल्फ्युरिक अम्ल, काँच का बहुत कम संक्षारण करता है। तीव्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल का कुछ प्रकार के काँचों पर विशिष्ट संक्षारण होता है। तनु अम्ल, काँच पर जल के समान ही संक्षारण करते हैं। हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल से काँच पर अत्यन्त तीक्ष्ण प्रतिक्रिया होती है, जिसके फलस्वरूप सिलिकन फ्लोराइड के बनने के कारण पूर्ण काँच कुछ समय में विघटित[2] हो जाता है।



$$Na_2SiO_3 + 6HF = 2NaF + SiF_4 + 3H_2O$$

उच्च ताप पर किसी भी प्रतिकर्मक[3] द्वारा काँच का अधिक संक्षारण होता है। जो काँच जल से कम संक्षारित होते हैं वे ऋतु-प्रभाव भी अधिक सहन कर सकते हैं। काँच में अधिक समय तक जल का निम्न मात्रा में प्रतिधारण (बना रहना) काँच के पूरे भीगे रहने से अधिक हानिकारक है, क्योंकि तीव्र कास्टिक सोडा जो बनता है वह काँच को बड़े वेग से प्रभावित करता है।

काँचों के टिकाऊपन में वृद्धि करना

अम्ल से धोने पर काँच का स्थायित्व अधिक हो जाता है। इस विधि से सतह का क्षार दूर हो जाता है जो कि वायु संक्षारण का मुख्य कारण है। चद्दरी काँच जब लेयर में निस्तापित किया जाता है तो उसकी सतह पर सोडियम सलफेट की तह

1. Deliquescent 2. Disintegrated 3. Reagent

जम जाती है,जो कि सतह पर के क्षार और जलती गैसों के गंधक डाइ आक्साइड की मियः क्रिया से उत्पन्न होता है। यह तह, काँच को तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से धोने से जा सकती है। इस व्यवहार से काँच की सतह में अधिक स्थायित्व आ जाता है।

अग्निविधि द्वारा पालिश कर देने से काँच में स्थायित्व अधिक आ जाता है। इस विधि से ऊपरी सतह पर के क्षार का कुछ भाग वाष्पशील हो जाता है और इस प्रकार काँच की सतह पर की क्षार-मात्रा कम हो जाती है और काँच अधिक स्थायी हो जाता है।

काँच के स्थायित्व की परीक्षण-विधियाँ

काँच की स्थायित्व-परीक्षा उन्हीं स्थितियों में की जाती है जिनमें किसी विशिष्ट काँच को रहना पड़े। उदाहरणार्थ, रासायनिक काँच की परीक्षा पृथक् से कास्टिक सोडा, सोडियम कार्बोनेट और तीव्र हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से करनी चाहिए।

जब काँच विशिष्ट स्थितियों में जल, अम्ल या क्षार के सम्पर्क में होता है, तब जो क्षार मुक्त होता है उसकी मात्रा निश्चय करने से, काँच का स्थायित्व जाना जा सकता है। परीक्षण में अल्प अन्तरों से क्रियाओं में काफी भिन्नता आ जाती है। अतः कोई भी एक विधि ऐसी नहीं है जो सर्व प्रकार के काँचों के लिए उपयुक्त हो।

चूर्ण परीक्षण

एक प्लेटिनम पात्र में ४० से ५० छिद्र परिमाणवाले ५ ग्राम काँच को १०० घन सेंटीमीटर जल में, जिसका ताप ८०° सें० है, एक घंटे तक गरम करते हैं। फिर इसको छानकर अवशेष को धोकर क्षाररहित करते हैं। छने घोल को प्रामाणिक सलफ्युरिक अम्ल के घोल से अनुमापन[1] करते हैं, जिससे कि १०० ग्राम काँच के लिए आवश्यक सल्फ्युरिक अम्ल की गणना की जाती है। चूर्ण के स्थान पर काँच पट्टिकाओं[2] या बिम्बों का भी प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन पट्टिकाओं या बिम्बों की सतह पर की असमांगताओं और रेखाओं के कारण संदिग्ध मान आता है।

अमेरिकन सिरामिक संस्था की परीक्षण-विधि

काँच का ४० से ५० छिद्र परिमाण का चूर्ण किया जाता है। काँच धूलि दूर करने के लिए चूर्ण को ऐलकोहल से धोया जाता है और तब ११०° सें० पर सुखाया जाता है। इस चूर्ण का १० ग्राम, एक २०० घन सेंटीमीटर एरलिनमायर फ्लास्क में

1. Titrate 2. Slabs

तौलकर रखा जाता है और उसमें .५० घन सेंटीमीटर $\frac{N}{50}$ सल्फ्यूरिक अम्ल का योग किया जाता है। फ्लास्क के मुँह पर एक छिद्रीय रबड़ की डाट लगा दी जाती है। इस फ्लास्क को तापस्थापी[1] में रखकर ४ घंटे तक ९०° सें० ताप पर गरम किया जाता है। फ्लास्क को तब ठंडा कर, और कास्टिक सोडा के $\frac{N}{50}$ के घोल तथा देशन के लिए फ़ीनाल लाल का प्रयोग कर अनुमापन किया जाता है और घुले हुए Na_2CO_3 या Na_2O की प्रतिशतता की गणना की जाती है। अम्ल के प्रयोग से काँच के विच्छेदन पर कास्टिक जल-विश्लेपण की भिन्नता का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

एम्पूलों का स्थायित्व परीक्षण

ब्रिटिश फारमाकोपिया के अनुसार, एम्पूलों की परीक्षा के लिए—

(१) काँच की एम्पूलों को कुचल कर चूर्ण बना लिया जाता है और फिर चूर्ण-परीक्षण की विधि से स्थायित्व की परीक्षा की जाती है।

(२) प्रति १००० घन सेंटीमीटर मिथाइल लाल के घोल में जिसमें ८.३ घन सेंटीमीटर $\frac{N}{50}$ हाइड्रोक्लोरिक अम्ल होता है, उसको एम्प्यूल में भरकर, मुख संमुद्रित कर, तीस मिनट तक एक वायु दाव के वाष्प में गरम करते हैं और फिर ठंडा करते हैं। देशक[2] का रंग पूर्णतया पीला नहीं होना चाहिए।

धुंधलापन परीक्षण

काँच पट्टिकाओं की पालिश की हुई सतहों को नमी से संतृप्त वायु में, ८०° सें० ताप पर २४ घंटों तक खुला छोड़ दिया जाता है। इससे सतहें धुंधली हो जाती हैं और सूक्ष्मदर्शी द्वारा संक्षारण की मात्रा ज्ञात की जाती है। यह विधि प्रकाशीय काँच के लिए प्रयोग में लायी जाती है।

माइलिअस का आइडोयोसीन परीक्षण

आइडोयोसीन एक रँगने का पदार्थ है जो ईथर में घुल जाता है। क्षार के साथ यह एक लाल रंग का पदार्थ उत्पन्न करता है, जो ईथर में तो नहीं घुलता, किन्तु जल में घुल जाता है।

1. Thermostat 2. Indicator

एक ताजे टूटे हुए काँच की सतह एक मिनट के लिए आइडोयोसीन के जल-संतप्त ईथर के घोल में, जिसका ताप १८° सें० है, डुबोयी जाती है। काँच से मुक्त किया हुआ क्षार, आइडोयोसीन के साथ लाल रंग का यौगिक बनाता है जो काँच की सतह पर जमा हो जाता है। लाल रंग की तीव्रता से मुक्त क्षार की मात्रा का निर्देश मिलता है। काँच की सतह पर लाल रंग का यौगिक, गुलाबी धव्वे को जल में घोल कर दूर किया जा सकता है और क्षार की मात्रा, सोडियम लवण के प्रामाणिक (स्टैंडर्ड) घोल से तुलनाकर तापमापन द्वारा[1] ज्ञात की जा सकती है। "प्राकृतिक क्षारीयता या वायु संक्षारण" ज्ञात करने के लिए, काँच की एक वर्ग मीटर सतह से क्षार की मात्रा मिलीग्रामों में निश्चित कर ली जाती है। इस परीक्षण से काँचों के स्थायित्व का सही मान ज्ञात हो जाता है। दूसरा उपाय यह है कि काँच की सतह को तोड़कर उसे ७ दिनों तक १८° सें० की नमी युक्त वायु में खुला रखा जाता है और फिर सतह पर आइडोयोसीन परीक्षण किया जाता है जिससे कि काँच की "वायु संक्षारण क्षारीयता" या "जलवायु संक्षारण" ज्ञात होता है। इस परीक्षण से मान अधिक संगत आते हैं और इसका प्रयोग प्रकाशीय काँच के लिए किया जाता है।

जिन काँचों में सीस आक्साइड, वेरियम आक्साइड और वोरिक आक्साइड की प्रतिशतता अधिक होती है उन काँचों के आइडोयोसीन परीक्षण से स्थायित्व का सही मान नहीं आता।

निपीड-तापक[2] परीक्षण

काँच के जिस वर्तन की परीक्षा करनी होती है उसमें जल भरकर उसे जलयुक्त निपीड-तापक में रख दिया जाता है। निपीड तापक को ४ वायु दाव से ३ घंटे तक गरम किया जाता है, तव (१) वर्तन के आधे द्रव को उद्वाष्पन कर सुखाया जाता है और अवशेष का ३ मिनटों तक ६५०° सें० पर प्रज्वलन किया जाता है। स्थायित्व व्यक्त करने के लिए, काँच-वस्तु की आन्तरिक सतह के प्रतिवर्ग डेसीमीटर के लिए आवश्यक अवशेष की मात्रा की मिलीग्रामों में गिनती कर ली जाती है। (२) द्रव के आधे भाग को $\frac{N}{100}$ सल्फ्यूरिक अम्ल से अनुमापन किया जाता है और स्थायित्व व्यक्त करने के लिए काँच-वस्तु की आन्तरिक सतह के प्रतिवर्ग डेसीमीटर के लिए आवश्यक के अम्ल की मात्रा की घन सेंटीमीटरों में गणना की जाती है।

1. Colorimetrically 2. Autoclave

कांच-वस्तु की सतहों की दशा का परीक्षण पर पूरा प्रभाव पड़ता है, इसलिए इस परीक्षण से स्थायित्व का सही मान नहीं आता।

विभिन्न प्रतिकर्मकों से परीक्षण

जिस काँच-वर्तन की परीक्षा करनी होती है उसमें निम्नलिखित १५० घन सेंटीमीटर प्रतिकर्मक[1] को ३ घंटे तक १००° सें० ताप पर गरम करते हैं।

(१) २ N. सोडियम हाइड्रो आक्साइड,
(२) N. ऐमोनिया,
(३) २ N. सोडियम कार्वोनेट,
(४) २ N. सल्फ्युरिक अम्ल,
(५) २०.२ प्रतिशत का हाइड्रोक्लोरिक अम्ल।

स्थायित्व दो प्रकार से व्यक्त किया जाता है—

(क) काँच-वर्तन की भार-हानि प्रतिवर्ग डेसीमीटर,
(ख) क्षार की मात्रा प्रतिवर्ग डेसीमीटर।

साधारणतः यह परीक्षण रासायनिक काँच-वस्तुओं के लिए किया जाता है।

काँच-रचना और स्थायित्व

साधारणतः द्विभास्मिक[2] प्रकार का आक्साइड सोडा-सिलिका या पोटाश-सिलिका युक्त काँच में प्रयुक्त करने से काँच का टिकाऊपन वढ़ता है। स्थायित्व वढ़ाने के लिए सर्वोत्तम जस्ता आक्साइड है और इसके वाद मैगनीशियम, कैलशियम, स्ट्रानशियम वेरियम तथा सीस आक्साइडों का नम्वर आता है। काँच का स्थायित्व उसमें उपस्थित क्षार की मात्रा पर निर्भर है। सोडा युक्त काँचों की अपेक्षा पोटाश युक्त काँच अधिक स्थायी हैं। जिसमें सोडा और पोटाश की भार-मात्रा वरावर होती है, वह काँच एक क्षार युक्त काँच की अपेक्षा अधिक स्थायी होता है। अल्युमिनियम आक्साइड काँच का स्थायित्व वढ़ाता है और साधारण काँच में अल्युमिनियम आक्साइड की मात्रा ३ से ४ प्रतिशत तक प्रयोग में लायी जाती है, परन्तु रासायनिक काँच-वस्तुओं में इसकी मात्रा ६ से १० प्रतिशत हो सकती है।

१२ प्रतिशत तक मात्रा में वोरिक आक्साइड मिलाने पर ऋतु-प्रभाव से काँच के स्थायित्व में वृद्धि हो जाती है, लेकिन इससे अधिक मात्रा का प्रयोग करने से स्थायित्व

1. Reagent 2. Dibasic

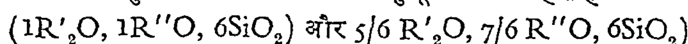
घटता है। काँच का टिकाऊपन वढ़ाने के लिए क्षारीय आक्साइड के कुछ भाग के स्थान पर सिलिका या द्विभास्मिक आक्साइड का प्रयोग करना चाहिए।

एक क्षारीय आक्साइड के कुछ भाग के वदले दूसरे क्षारीय आक्साइड को भी स्थानापन्न करना चाहिए। कुछ अल्युमिना का प्रयोग करने से काँच का स्थायित्व वढ़ता है।

काँच की अणु-रचना और स्थायित्व

अधिकतम स्थायित्व लाने के लिए काँच में आक्साइडों का सर्वोत्तम अनुपात क्या है, यह ज्ञात करने के लिए वहुत चेष्टाएँ की गयी हैं।

वेनराथ के अनुसार टिकाऊ काँच निम्न अणु सूत्रों के मध्य होते हैं—



$(1R'_2O, 1R''O, 6SiO_2)$ और $5/6\ R'_2O, 7/6\ R''O, 6SiO_2)$

यह सूत्र भस्म के एक अणु और अम्ल के तीन अणुओं के अनुपात से वना है और इसको "त्रि-सिलीकेट" अनुपात कहा जाता है। (R'_2O क्षारीय आक्साइडों और $R''O$ द्विभास्मिक आक्साइडों के लिए है।)

वेवर के अनुसार स्थायी काँच के लिए यदि $R_2'O$ के $R''O$ से अनुपात की मात्रा एक से कम हो तो अम्ल अणु तीन से कम होने चाहिए।

शापनर[1] के अनुसार यदि काँच की रचना (कR'_2O, ख $R''O$, ग SiO_2) से व्यक्त की जाती है, तो स्थायी काँच के लिए $ग=३\left(\frac{क}{ख}+ख\right)$, यदि ख=१, तो $ग=३\ (क^२+१)$

कोर्नर के अनुसार यदि काँच का सूत्र (क $R_2'O$, $1\ R''O$, गSiO_2) से व्यक्त किया जाता है तो स्थायी पोटाश-चूना-सिलिका युक्त काँच के लिए

$$ग=४\ (क^२+१)$$

यदि काँच में सोडा और पोटाश दोनों ही उपस्थित हैं और यदि पोटाश-अणु सोडा-अणुओं से अधिक हों तो स्थायी काँच के लिए—

$$ग=\left(४-\frac{च}{च+छ}\right)\left\{(च+छ)^२+१\right\}$$

और यदि सोडा-अणु पोटाश-अणुओं से अधिक हैं तो स्थायी काँच के लिए—

$$ग=\left(३+\frac{छ}{च+छ}\right)\left\{(च+छ)^२+१\right\}$$

1. Tscheuschner

यहाँ च=पोटेशियम आक्साइड के अणु।

छ=सोडियम आक्साइड के अणु।

च+छ=पोटेशियम एवं सोडियम आक्साइडों के अणु।

पेडल स्थायी सोडा चूना युक्त काँच के लिए निम्न सूत्र अच्छा समझते हैं—($5 SiO_2, 1R_2O, 1CaO$) और स्थायी सीस काँच के लिए निम्न सूत्र—($5 SiO_2, 1R_2O, 1.5 CaO$)।

काँच-निर्माण में सिर्फ स्थायित्व का ही अकेला विचार नहीं करना पड़ता है, इसलिए काँच-मिश्रण में काफी परिवर्तन किया जाता है, जिससे काँच कार्योपयोगी हो सके और उसमें अन्य गुण भी आ जायँ।

जल काँच

जल काँच की रचना [Na_2O,SiO_2] से [$Na_2O, 4SiO_2$] तक भिन्न प्रकार की होती है। इसके लिए वालू और सोडा ऐश को द्रवण करते हैं। इस तरह वनी हुई सिलीकेट को दावमय जल में घोला जाता है और उत्पाद[1] लसलस जल में परिवर्तित हो जाता है जिसको 'जल काँच' कहा जाता है।

जल काँच का घनत्व साधारणतः ४०° Be' होता है। इसके निर्माण के लिए अत्यन्त शुद्ध पदार्थों का प्रयोग करना चाहिए, क्योंकि चूना या अल्यूमिना-जैसी अशुद्धि से उत्पादित पदार्थ जल में कम घुलनशील होगा और उसमें दूधियापन दृष्टिगोचर होगा।

1. Product

सातवाँ अध्याय

काँच-रचना एवं विकाचरण

काँच की द्रवण क्रिया

जव काँच-मिश्रण को भट्ठी में डाला जाता है तो—

(१) काँच-मिश्रण के पदार्थ गरम हो जाते हैं।

(२) जैसे-जैसे ताप की वृद्धि होती है, वैसे-वैसे काँच-मिश्रण के कुछ अवयव[1] द्रवित होने लगते हैं।

(३) विभिन्न अवयवों में रासायनिक क्रिया आरम्भ हो जाती है।

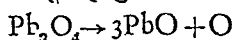
काँच-निर्माण के प्रयोग में आनेवाले पदार्थों के द्रवणांक का अध्ययन करने से यह ज्ञात हुआ है कि—

(क) अन्य पदार्थों की उपस्थिति का द्रवणांकों पर प्रभाव पड़ता है। सम-अणु भार के अनुपात में सोडा और पोटाश के मिश्रण का ६९०° सें० पर द्रवण होता है। यह ताप उनके पृथक् द्रवणांक से काफी कम है।

(ख) द्रवण के समय होनेवाली प्रतिक्रियाओं द्वारा उत्पादित रासायनिक पदार्थों का भी द्रवणांकों पर प्रभाव पड़ता है।

पदार्थ	द्रवणांक
सोडियम नाइट्रेट	३१६° सें०
शोरा	३४०° ,,
अजल सुहागा	७४२° ,,
सोडियम कार्वोनेट	८५३° ,,
सोडियम सल्फ़ेट	८८५° ,,
पोटाश	८८५° ,,
पोटाश फेल्सपार	१२००° ,,
अल्युमिनियम आक्साइड	२०५०° ,,
कलशियम आक्साइड	२५७०° ,,
मैगनीशियम आक्साइड	२८००° ,,

(३) द्रवण के पूर्व ही कुछ पदार्थ विच्छेदित हो जाते हैं। जैसे,



$$Pb_3O_4 \rightarrow 3PbO + O$$



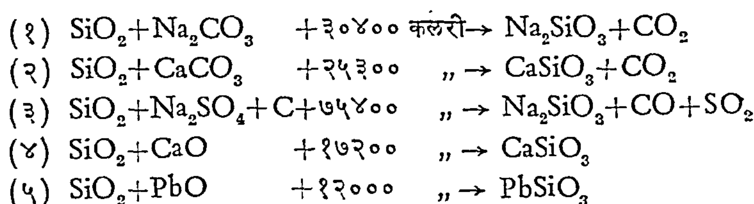
$$CaCO_3 \rightarrow CaO + CO_2$$

काँच-निर्माण, सिलीकेटों एवं वोरेटों के उत्पादन के कारण होता है और इनका

1. Constituents

उत्पादन तव होता है जव कि अम्लीय आक्साइडों की भास्मिक आक्साइडों, कार्वोनेटों, सलफ़ेटों और सलफ़ाइडों पर प्रतिक्रिया होती है।

काँच-निर्माण में वहुत-सी रासायनिक प्रतिक्रियाएँ ऊष्मा शोषक[1] होती हैं, इसलिए ऐसी प्रतिक्रियाओं की पूर्ति के लिए रासायनिक पदार्थों को गरम करना आवश्यक होता है।



(१) $SiO_2+Na_2CO_3$ +३०४०० कलरी→ $Na_2SiO_3+CO_2$

(२) SiO_2+CaCO_3 +२५३०० ,, → $CaSiO_3+CO_2$

(३) $SiO_2+Na_2SO_4+C$+७५४०० ,, → $Na_2SiO_3+CO+SO_2$

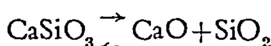
(४) SiO_2+CaO +१७२०० ,, → $CaSiO_3$

(५) SiO_2+PbO +१२००० ,, → $PbSiO_3$

इन रासायनिक क्रियाओं के कारण काँच के पात्रों का ताप कम हो जाता है। किसी एक पदार्थ का द्रवण हो जाने के पश्चात् रासायनिक क्रिया वहुत शीघ्रता से होने लगती है। उदाहरणार्थ, द्रुत सोडियम कार्वोनेट सिलिका के साथ वहुत ही शीघ्रता से प्रतिक्रियाशील होता है। यदि द्रावक, जैसे नाइट्रेट, उपस्थित हो तो रासायनिक प्रतिक्रिया में शीघ्रता आ जाती है। द्रावक निम्न ताप पर द्रवित हो जाता है और उसमें कुछ प्रतिकारक पदार्थ घुल जाते हैं, तव वह निम्न ताप पर ही क्रियाशील हो जाता है।

द्रुत काँच की रचना

द्रुत काँच में उपस्थित द्रव्यों को सही-सही ज्ञात करना अति कठिन है। इसमें सिलीकेटों के पारस्परिक घोल हो सकते हैं। उच्च ताप पर, संहित क्रिया नियम[2] के अनुसार, कुछ सिलीकेट अपने अवयवी आक्साइडों में वियुत[3] भी हो सकते हैं। उदाहरणार्थ—



$$CaSiO_3 \rightleftharpoons CaO+SiO_2$$

वहुत ही ऊँचे ताप पर सम्पूर्ण कैलशियम सिलीकेट कैलशियम आक्साइड और सिलिका में वियुत हो सकता है और ताप कम होने पर फिर से कुछ कैलशियम सिलिकेट वन जा सकता है।

1. Endothermic 2. Law of mass action 3. Dissociated

काँच-निर्माण के रासायनिक पदार्थों का अनुपात वहुधा ऐसा नहीं होता कि सम्पूर्ण रासायनिक यौगिक वन सकें, जैसे जव कि सिलिका अधिक मात्रा में साधारणतः उपस्थित होती है।

अतः द्रुत काँच को सिलीकेटों (या वोरेटों) का पारस्परिक घोल कहा जा सकता है और यह सिलीकेट या वोरेट, काँच के ताप के अनुसार वहुत कुछ अवयव आक्साइडों में वियुत होते हैं। घोल में वे अतिरिक्त आक्साइड भी होते हैं जो रासायनिक यौगिकों के निर्माण की आवश्यकता से अधिक मात्रा में होते हैं।

द्रुत काँच का ठोस होना

ठोस पदार्थों को तीन मुख्य भागों में वाँटा जा सकता है—

(१) केलासीय (२) अकेलासीय (३) काँचीय

(१) केलासीय पदार्थ वह है जिसकी प्रवृत्ति घोल अथवा द्रवण अवस्था से निस्सादन होने पर निश्चित आकार में परिवर्तित हो जाने की होती है। किसी भी पदार्थ के केलासों का विशिष्ट रेखिकीय रूप[1] होता है। परन्तु किसी द्रव्य में घुले हुए या द्रुत अवस्थावाले पदार्थ के रूप में कोई नियमशीलता नहीं होती। प्रत्येक पदार्थ के लिए एक ऐसा ताप होता है जिस ताप तक ठंडा किये जाने पर उसका साधारणतः केलासन हो जाता है और इस ताप को उस पदार्थ का 'हिमांक अथवा द्रवांक' कहा जाता है। अधिकांश केलासीय पदार्थों के लिए हिमांक पूर्ण तीव्र और सुनिर्धारित होता है। क्योंकि हिमीकरण केलासीय आकार के वनने पर निर्भर है, अतः निम्न श्यानता के द्रव में इनका वनना आसान होता है, क्योंकि अणु कम प्रतिरोध के कारण अपने को व्यवस्थित कर लेते हैं।

(२) जव कोई अकेलासीय तरल पदार्थ ठंडा किया जाता है तव इसका भी कोई निश्चित हिमांक होता है। परन्तु जो ठोस पदार्थ वनता है उसका केलासीय रूप नहीं होता।

(३) ठंडे होने पर कुछ तरल द्रव अधिक श्यान हो जाते हैं और विना केलासन के ठोस अवस्था में परिवर्तित हो जाते हैं। जव ऐसे ठोस पदार्थ गरम किये जाते हैं तो वे कोमल होकर श्यान अवस्था में परिवर्तित हो जाते हैं। ऐसे पदार्थों को 'काँचीय पदार्थ' कहा जाता है। इन पदार्थों में परमाणु अनियमित जालियों की तरह फ्रेम से स्थित होते हैं। केलासीय अथवा अकेलासीय पदार्थों की तरह

1. Geometric structure

काँच का हिमांक अथवा द्रवणांक नहीं होता। काँचों का केवल कोमलांक होता है। साधारण स्थिति में काँच प्रकाश को ध्रुवीयित नहीं करता। यदि काँच को कोमल होने के ताप से कुछ अधिक ताप पर ज्यादा देर तक रखा जाय तो उसका विकाचरण हो जायगा।

काँच को "अधिशीतल[1] तरल" भी कहा जा सकता है, क्योंकि तरल अवस्था से ठोस अवस्था में काँच का परिवर्तन क्रमशः होता है और ठोस काँच में उसकी तरल अवस्था में के सब ही भौतिक गुण, जैसे ऊष्मा-चालकता इत्यादि, होते हैं।

विद्युद्विश्लेष्य[2] दृष्टि से व्यापारिक काँच में आइनें[3] और अवियुत[4] अणु होते हैं। यदि ठोस काँच को "अधिशीतल तरल" माना जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि अत्यधिक अथवा अनन्त श्यानता के कारण, आइनें इधर-उधर चल नहीं सकतीं, इसलिए ठोस काँच उत्तम पृथक्कारी[5] या विद्युत् का अधम चालक है।

उच्च ताप पर सोडियम आइनों की सहज गति के कारण, काँच विद्युत् का अच्छा चालक हो जाता है।

ऐक्स किरण अनुसन्धानों द्वारा ज्ञात हुआ है कि काँच में कोई केलासीय यौगिक नहीं है। काँच का संगठन या जाल अनियमित चतुरनीकों का बना हुआ है, जिसके केन्द्र में सिलिकन परमाणु और प्रत्येक चारों कोनों पर चार आक्सीजन परमाणु परस्पर गुँथे रहते हैं। कुछ आक्सीजन परमाणु दो सिलिकन परमाणुओं से गुँथे रहते हैं और कुछ केवल एक ही सिलिकन परमाणु से। अन्य आक्साइडों के परमाणु या आइनें अव्यवस्थित सिलिका संगठन के रिक्त स्थानों में रहते हैं। सिलिका जाली अन्य आक्साइडों की उपस्थिति से खुलकर फैल जाती है।

यद्यपि यह सम्भव है कि सिलिका और भास्मिक आक्साइडों में, कुछ अवस्था में किसी प्रकार का रासायनिक संयोजन हो, परन्तु व्यापारिक काँच विशिष्ट रासायनिक यौगिक नहीं है और सिवाय सापेक्ष रचना बताने के लिए, इसका कोई रासायनिक सूत्र नहीं दिया जाना चाहिए। काँच के सरल एवं जटिल अवयवों के लक्षण, काँच की ठंडी और ठोस अवस्था में तथा गरम और तरल अवस्था में बिलकुल भिन्न होते हैं। काँच के संगठन की व्यवस्था काँच के ठंडे करने एवं निस्तापन की विधि में परिवर्तन होने से भिन्न होती है।

1. Undercooled 2. Electrolytic 3. Ions 4. Undissociated 5. Insulator

कार्वनिक पदार्थ, जो कार्वनिक काँच कहलाते हैं, साधारण काँचों से, रचनाओं, निर्माण-विधियों और गुणों में वहुत भिन्न होते हैं, इसलिए कार्वनिक काँच रासायनिक प्रौद्योगिकी का पृथक् भाग माना जाता है।

काँच का विकाचरण

जव द्रुत काँच को कुछ समय तक तरलांक[1] से निम्न ताप पर रखते हैं तो द्रुत काँच में उपस्थित एक या अधिक पदार्थो के केलासन को विकाचरण कहा जाता है। सवसे सरल रूप में विकाचरण तव होता है जव कि विशिष्ट ताप पर घोल का कोई पदार्थ विलेयता से अधिक मात्रा में होने के कारण अवक्षेपित हो जाता है।

यदि किसी पदार्थ का तरल द्रव्य में संतृप्त घोल लिया जाय और उसका ताप घटाया जाय तो कुछ घुला पदार्थ घोल से पृथक् हो सकता है और उसके केलास वन सकते हैं। परन्तु यदि तापक्रम धीरे-धीरे कम किया जाय और द्रव को हिलाया या हटाया न जाय तो केलासन नहीं होगा और अति संतृप्त घोल प्राप्त होगा जिसमें उस ताप पर विलेय से अधिक मात्रा में पदार्थ विलयन रहेगा। यदि अति संतृप्त घोल की थोड़ी भी शान्ति भंग की जाती है तो तुरन्त केलासन हो जाता है। यदि तरलांक पर काँच की श्यानता अधिक हुई तो विकाचरण की क्रिया मंद हो जाती है। अल्युमिना या मैगनिशिया की थोड़ी-सी मात्रा काँच के तरलांक ताप को निम्न कर देती है, इसलिए काँच की श्यानता वढ़ जाती है। इस कारण काँच का विकाचरण, काँच में थोड़ी मात्रा में अल्युमिना या मैगनीशिया का योग करने से रुक जाता है।

हिमांक लेखाचित्र

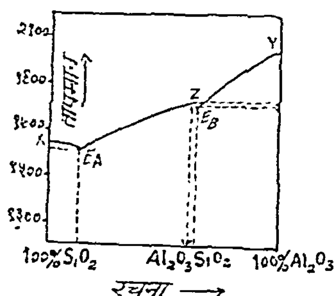
जिस लेखाचित्र में दो या अधिक घटकों[2] से युक्त द्रव के हिमांकों एवं द्रव में उपस्थित अवयवों की आपेक्षिक मात्राओं का परिवर्तन व्यक्त किया जाता है, उसे "हिमांक लेखाचित्र" कहा जाता है और इससे घोल और विकाचरण की स्थितियाँ निश्चय करने में सहायता मिलती है।

हिमांक लेखाचित्र कई प्रकार के होते हैं, जैसे—

(१) घटकों का संयोजन नहीं होता और न वे ठोस अवस्था में मिश्रित ही होते हैं (सुद्रवणातु[3] वनते हैं)। इस प्रकार का सवसे सरल उदाहरण जल में पोटेशियम आयोडाइड का घोल है।

1. Liquidous temperature 2. Components 3. Eutectics

(२) रासायनिक यौगिक बनते हैं, परन्तु न तो मौलिक घटक और न उत्पादित पदार्थ ठोस अवस्था में मिश्रित होते हैं (सुद्रवणातु यहाँ भी बनते हैं)। इसका उदाहरण सिलिका एवं अल्युमिना का द्रुत से ठोस अवस्था का लेखाचित्र है। दोनों आक्साइड एक यौगिक Al_2O_3 SiO_2 बनाते हैं जिसे सिलिमैनाइट कहा जाता है और जिसमें अल्युमिनियम आक्साइड (Al_2O_3), ६२.९ प्रतिशत और सिलिका (SiO_2) ३७.१ प्रतिशत है। इसके हिमांक लेखाचित्र में दो पृथक् भाग हैं और प्रत्येक भाग उस सरल लेखाचित्र की भाँति होता है जिसमें कोई संयोजन नहीं होता।



[चित्र ६—द्रुत सिलिका-अल्युमिना का हिमांक लेखाचित्र]

(३) ठोस अवस्था में मिश्रित केलास प्राप्त होते हैं, परन्तु रासायनिक यौगिक नहीं बनते। इस पद्धति में यूटेक्टिक्स (सुद्रवणातु) नहीं होते और यह पहली दो पद्धतियों से बिलकुल भिन्न है जिनमें आरम्भ में अकेले घटकों का सुद्रवणातु अंक तक अवक्षेपण होता है। उस समय तक यद्यपि दोनों घटकों का अवक्षेप[1] होता है, परन्तु दोनों के केलास भिन्न और स्पष्ट होते हैं। मिश्रित केलासों का अवक्षेपण होने पर प्रत्येक केलास में दोनों घटक इस रूप में होते हैं कि उनको पहचाना नहीं जा सकता और वक्र के किसी भी विन्दु पर केलास बनते हैं।

इस प्रकार का उदारहण पेलेडियम-स्वर्ण धातुओं का हिमांक लेखाचित्र है। इन धातुओं के द्रुत मिश्रण को ठंडा करने पर दोनों धातुओं के मिश्रित केलास जिनमें दोनों धातुएँ होती हैं, विभिन्न अनुपातों में पृथक् हो जाते हैं और कोई सुद्रवणातु विन्दु नहीं होता।

ऐसी पद्धतियाँ भी सम्भव हैं जिनमें ऊपर के तीन प्रकारों में से एकाधिक का संयोजन हो।

जिन पद्धतियों में तीन स्वतन्त्र घटक होते हैं वे 'त्रिमय पद्धतियाँ[2]' कहलाती हैं जो बहुत ही जटिल होती हैं। त्रिमय पद्धति का हिमांक चित्र त्रिवैम आकार[3] का होता है। रचनाएँ त्रिकोणीय चित्र द्वारा चित्रित की जाती हैं और त्रिकोण के प्रत्येक विन्दु से

1. Precipitation 2. Ternary systems 3. Three-dimensional figure

हिमांक के अनुपात में लम्ब[1] खींचे जाते हैं। इस प्रकार निश्चित किये गये हिमांकों को जोड़ने से एक माडल प्राप्त होता है जो एक त्रिकोणीय समतल एवं अनेक समतलों से घिरा होता है तथा पर्वतों और घाटियों की श्रेणी बनाता है। इस प्रकार के त्रिमय माडल से अवक्षेपण के विषय में पहले ही ज्ञात कर लेना सम्भव हो जाता है कि किस क्रम पर अवक्षेपण होगा और किस ताप पर भिन्न केलास बनेंगे, जब कि तीन घटकों से युक्त द्रुत पदार्थ धीरे-धीरे ठंडा किया जाता है। परन्तु व्यवहार में तीन घटकों की पद्धति में विकाचरण के समय क्या अवक्षेपण होगा, इसे पहले से ही बताना अत्यन्त जटिल है।

आरम्भ में यह लगता है कि किसी पद्धति में कौन पदार्थ अवक्षेपित होंगे, इसके ज्ञान से, घोल या ठंडे होते हुए द्रव में कौन-से अवयव उपस्थित हैं, यह भी ज्ञात किया जा सकता है।

यदि यह कल्पना सत्य है तो काँच का पूर्ण विकाचरण कर और केलासों की परीक्षा से सिलीकेटों एवं आक्साइडों की यथार्थ मात्रा निश्चित कर, काँच की वास्तविक रचना ज्ञात की जा सकती है। परन्तु यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि विकाचरण के समय अवक्षेपित पदार्थ ही घोल में अवश्य उपस्थित होते हैं। ठोस पदार्थ के अवक्षेपण के समय कोई अज्ञात रासायनिक परिवर्तन भी हो सकता है। अतः इतना ही कहा जा सकता है कि विकाचरण सम्भवतः कुछ हद तक घोल की प्रकृति का देशन करता है।

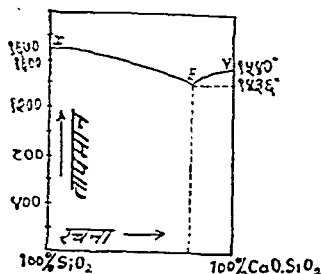
जब सिलिका की मात्रा कैलशियम आक्साइड से अधिक हो तब द्रुत सिलिका केलशियम आक्साइड के हिमांक चित्र का अध्ययन कर कहा जा सकता है कि—

(१) दो अवयवों के किसी निर्दिष्ट समाहार के लिए एक ऐसा ताप होता है जिसके ऊपर विकाचरण हो नहीं सकता और जैसे ताप कम होता है, हिमांक वक्र पर ही केलासन का आरम्भ होता है।

(२) दोनों अवयवों की आपेक्षिक मात्रा पर निर्भर है कि किस पदार्थ का पहले केलासन होगा। अधिक सिलिका होने से, सिलिका के अवक्षेप होने की प्रवृत्ति होती है और अधिक चूना होने से वोलेसटोनाइट[2] का केलासन होता है।

1. Perpendiculars 2. Wollastonite

(३) जब और भी आक्साइड उपस्थित होते हैं, जैसे काँच में, तो समस्या अति जटिल हो जाती है और पद्धति के पूर्ण ज्ञान से ही विकाचरण के विषय में जाना जा सकता है।



[चित्र ७—द्रुत सिलिका—कैलशियम आक्साइड पद्धति का हिमांक लेखाचित्र]

सामान्यतया पहले की ही तरह उन्हीं दो पदार्थों के अवक्षेप होने की प्रवृत्ति होती है। काँच में जब सिलिका अधिक मात्रा में होती है तो सिलिका का अवक्षेपण होता है, और चूना अधिक मात्रा में होता है तो वोलेसटोनाइट के केलास बनते हैं।

जब काँच में विकाचरण होता है तो ताप हिमांक वक्र से ऊँचा करने पर, केलास फिर से घुल जाते हैं।

पेडल के अनुसार काँच में विकाचरण की सीमा

(१) सोडा चूना सिलिका-युक्त काँच में यदि सिलिका की मात्रा ७२ प्रतिशत से अधिक होती है तो सिलिका अवक्षेपित होती है। जब कैलशियम आक्साइड १० प्रतिशत से अधिक और सोडियम आक्साइड २० प्रतिशत से अधिक होता है तो वोलेसटोनाइट का अवक्षेपण होता है। परन्तु यदि सोडियम आक्साइड १५ प्रतिशत से कम है तो काँच का बिना विकाचरण हुए, कैलशियम आक्साइड १५ प्रतिशत तक प्रयोग किया जा सकता है।

(२) सोडा युक्त काँचों की अपेक्षा पोटाश-चूना युक्त काँचों में विकाचरण होने की प्रवृत्ति कम होती है। पेडल ने अधिकांश काँचों में सिलिका का कभी भी अवक्षेपण होते नहीं पाया और कैलशियम सिलीकेट तभी अवक्षेपित हुआ जब कि पोटेशियम आक्साइड की मात्रा ३४ प्रतिशत से अधिक थी।

(३) **सोडा-सीस-सिलिका युक्त काँच**

जब सिलिका की मात्रा ६५ प्रतिशत से अधिक होती है तो कुछ में सिलिका का अवक्षेपण हुआ, परन्तु सीस आक्साइड की मात्रा ५५ प्रतिशत से भी अधिक होने पर, सीस सिलीकेट का कभी केलासन नहीं हुआ।

(४) पोटाश-सीस-सिलिका युक्त काँचों में विकाचरण होने की बहुत कम प्रवृत्ति होती है।

श्यानता और विकाचरण

श्यानता की वृद्धि के कारण, ठंडा किये जाने पर, काँच के विकाचरण की क्रिया में बाधा आ जाती है। अन्ततः एक ऐसी स्थिति आती है जब श्यानता इतनी अधिक हो जाती है कि विकाचरण नहीं हो सकता। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि काँच जितना ही अधिक श्यान होगा उतनी ही विकाचरण की सम्भावना कम होगी, यही कारण है कि पोटाश युक्त काँच उसी रचना के सोडा युक्त काँचों की अपेक्षा अधिक श्यान होने के कारण विकाचरण की कम प्रवृत्ति रखते हैं।

समय और विकाचरण

काँच अति संतृप्त घोलमय होते हैं, अतः यदि ये हिमांक के निकट ताप तक पुनः तप्त किये जायँ तो इनमें विकाचरण की प्रवृत्ति आ जायगी। जितने समय तक काँच संकट परिधि में रहता है उसी पर विकाचरण की मात्रा निर्भर करती है। यदि समय यथेष्ट लम्बा कर दिया जाय तो हिमांक से कई सौ अंश (डिग्री) निम्न ताप पर भी काँच में विकाचरण हो सकता है।

काँच के कार्यकरण और द्रवण में संकट की अवधि

काँच के कार्यकरण और द्रवण में संकट की तीन अवधियाँ होती हैं जब विकाचरण हो सकता है। पहली अवधि काँच के द्रवण और शोधन के पश्चात् होती है जब ताप को कम करके काँच कार्य योग्य बनाया जाता है। यह आवश्यक है कि काँच को किसी भी अवयव के हिमांक ताप के निम्न ताप पर अधिक समय तक न रखा जाय, यदि इस समय विकाचरण होता है तो काँच के काफी तरल होने के कारण काफी बड़े विक्षिप्त केलास बनेंगे।

दूसरी संकट की अवधि वह है जब कि काँच को ठंडा कर सुघट्य अवस्था से ठोस अवस्था में लाते हैं। क्योंकि इस अवधि में ठंडे होने की दर में तीव्रता होती है, अतः या तो सम्पूर्ण काँच में एक समान छोटे केलास बनते हैं या गोलाकार पदार्थ बनते हैं, जो काँच को अपारदर्शक बना देते हैं। इस कारण अधिक चूना या अधिक सिलिका युक्त काँच यंत्रकार्य की अपेक्षा हस्तकार्य के लिए कम उपयुक्त होता है। हस्तकार्य में काँच शीघ्रता से ठंडा किया जाता है।

तीसरी संकट की अवधि वह है जब कि काँच बाद के कार्य के लिए पुनः तापित किया जाता है। कोमल किये हुए काँच के पुनः कार्य के लिए निम्नतम ताप होता है और यदि विकाचरण को रोकता है तो इस ताप से नीचे जाने में संकट है।

आठवाँ अध्याय

ईंधन

ईंधन वह पदार्थ है जो उपयुक्त परिस्थितियों में वायु में जलाये जाने पर ऊष्मा उत्पन्न करता है। इसका प्रयोग औद्योगिक एवं घरेलू कार्यों में किया जा सकता है।

ठोस, द्रव अथवा गैस, तीनों अवस्थाओं में ईंधन पाये जाते हैं। ये प्रकृति में होते हैं और कृत्रिम विधियों से भी तैयार किये जा सकते हैं।

प्राकृतिक ईंधनों का मूल स्रोत

प्राकृतिक गैस तथा खनिज तेलों के अतिरिक्त सभी ईंधन वानस्पतिक होते हैं। उनकी उत्पत्ति लकड़ी के रेशों (सेलुलोज़) से मानी जा सकती है जिनमें राल धर्मी पदार्थ भी मिले रहते हैं।

काँच उद्योग में प्रयोग में आनेवाले ईंधनों का वर्गीकरण

रूप	प्राकृतिक	कृत्रिम
१. ठोस	लकड़ी, जीर्णक[1], लिग-नाइट, कोयला	कोक, ईंटे[2], काठ कोयला
२. द्रव	प्राकृतिक तेल, जैसे पेट्रोलियम	आसुत तेल, जैसे तार तेल
३. गैसीय	प्राकृतिक गैस	कोयला गैस, कोकभट्ठी गैस, उत्पादक गैस

ठोस ईंधन

लकड़ी—काँच की भट्ठियों में इसका प्रयोग तभी किया जाता है जब कोई इससे अधिक अच्छा ईंधन उपलब्ध नहीं होता अथवा उपलब्ध होने पर भी अधिक महँगा पड़ता है।

1. Peat 2. Briquettes

वायु में सुखायी गयी लकड़ी में कार्बन ४० से ५० प्रतिशत और हाइड्रोजन ५ से ६ प्रतिशत होता है। नमी २० प्रतिशत और संयुक्त अवस्था में आक्सीजन ३० प्रतिशत होता है। इसकी उष्मीय[1] शक्ति निम्न होती है। नमी की अधिक मात्रा होने के कारण इसको वाष्पायन के लिए अधिक उष्मा की आवश्यकता होती है।

ईंधन के लिए लकड़ी की उपयोगिता इसलिए है कि यह सरलतापूर्वक प्रज्वलित की जा सकती है और इसमें राख की मात्रा कम होती है।

जीर्णक—यह अभी तक सफल औद्योगिक ईंधन सिद्ध नहीं हुआ है, किन्तु निकट भविष्य में, एमोनिया पुनः प्राप्ति के लक्ष्य से, इसका गैस उत्पादक में प्रयोग महत्त्व का हो सकता है। सीधे जलाने के लिए जीर्णक से पानी दूर कर देना चाहिए, उसमें २५ प्रतिशत से अधिक पानी की मात्रा न रहनी चाहिए। पर गैस उत्पादक में ६० प्रतिशत जलयुक्त जीर्णक भी प्रयोग में लाया जा सकता है।

लिगनाइट—लिगनाइट या भूरा कोयला, मध्य यूरोप, भारत, आस्ट्रेलिया और और कनाडा में पाया जाता है। यह गैस बनाने के प्रयोग में आता है। कभी-कभी गैस बनाने में उपजात भी पुनः प्राप्त किये जाते हैं। लिगनाइट से ईंटें भी तैयार की जा सकती हैं।

कोयला

काँच उद्योग में साधारणतः बिटुमिनी कोयले का प्रयोग किया जाता है। यह कोयला जलते समय आलोकित धुयेंदार ज्वाला देता है। ऐंथ्रेसाइट कोयले में वाष्पशील पदार्थ कम होता है जब कि बिटुमनी कोयले में वाष्पशील पदार्थ अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। ये वाष्पशील पदार्थ, कोयले को बिना वायुसम्पर्क के तप्त करने पर दाह्य गैसों के रूप में निकलते हैं। अवशेष भाग कोक कहलाता है। इस अवशेष के लक्षण के अनुसार बिटुमिनी कोयले का वर्गीकरण (१) पिण्डी[2] कोयले और (२) अपिण्डी[3] कोयले में किया जाता है।

ये दो वर्ग पुनः दो भागों में विभक्त किये गये हैं—

(१) दीर्घज्वाल कोयला, (२) लघुज्वाल कोयला। ज्वाला की लम्बाई और गुण कोयले को प्रायः १०००° सें० ताप तक गरम करने पर निकले हुए वाष्पशील पदार्थ की मात्रा पर अधिकतर निर्भर करते हैं।

1. Calorific 2. Caking coal 3. Non-caking coal

ऐंथ्रेसाइट कोयले को "धूमरहित वाष्प कोयला" भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें वाष्पशील पदार्थ साधारणतः १० प्रतिशत से कम होता है। यह कोयला कठोर और भंगुर होता है, उसमें विजातीय पदार्थ बहुत कम होता है, यह बिना ज्वाला या धूम के जलता है। इसकी स्थानीय ऊष्मा अति तीव्र होती है। राख की प्रतिशत मात्रा बहुत कम होती है और बहुधा यह कृत्रिम बहति[1] में जलाया जाता है।

कोयले का चुनाव

कोयले की किस्म का चुनाव उद्देश्य की आवश्यकता के अनुसार किया जाता है।

(१) अव्यवहित तप्त भट्ठियों के लिए दीर्घज्वाल कोयला आवश्यक है।

(२) कोयला-गैस निर्माण के लिए ऐसा कोयला अधिक उपयुक्त होता है जिससे कोमल, छिद्रीय, चिपकनेवाला कोक प्राप्त हो सके और जिसमें वाष्पशील पदार्थ की प्रतिशतता अधिक है।

(३) उत्पादक गैस निर्माण के लिए ऐसा कोयला उत्तम है जिससे अपिण्डी, कोमल छिद्रीय कोक प्राप्त हो सके, और जो शीघ्र नीचे गिर जाय, कोयले को लगातार कुरेदने या उकसाने की आवश्यकता न पड़े।

और बातों, जैसे कि कोयले की नमी, राख, नाइट्रोजन तथा गंधक की मात्रा, पर भी कोयले का चुनाव निर्भर होता है।

नमी—खान से निकाले जाते समय सब कोयलों में जल रहता है, जिसका कुछ भाग कोयले को खुली वायु में रखने से दूर हो जाता है। वायु में सुखाये हुए कोयले में २ से ५ प्रतिशत तक जल होता है। कोयले में जल की मात्रा ज्ञात करना कठिन है, क्योंकि इसे १००° सें० पर गरम करने पर कोयले का कुछ आक्सीकरण भी आरम्भ हो जाता है। जब कोयले को धोया जाता है तो वह प्रायः और जल बटोर लेता है।

भस्म—कोयले में भस्म (राख) की मात्रा १ से १० प्रतिशत तक होती है। भस्म की रचना महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यदि उसमें द्रवण होनेवाले पदार्थ हों तो झावें[2] बन जाते हैं, जो कि कोयला तप्त करने की सभी विधियों के लिए हानिकारक होते हैं।

गन्धक—कोयले में गंधक की मात्रा नगण्य से ३ प्रतिशत तक होती है। यदि यह रूपामखी[3] (FeS_2) के रूप में उपस्थित होता है तो कोयले को वायु में जलाने से

1. Draught 2. Clinkers 3. Pyrites माक्षिक

उत्पादित भस्म का रंग, फेरिक आक्साइड (Fe_2O_3) बनने के कारण लाली लिये रहता है। परन्तु यदि ऐसे कोयले को बिना वायु के गरम किया जाय तो गंधक का कुछ भाग कोयले में रह जाता है और बाकी हाइड्रोजन सल्फाइड या कार्बन-डाइ-सल्फाइड के रूप में गैसों के साथ निकल जाता है।

नाइट्रोजन—कोयले में नाइट्रोजन १.५ प्रतिशत तक उपस्थित हो सकता है और यह एमोनिया के रूप में निकल जाता है। जिन कारखानों में नाइट्रोजनीय पदार्थों की पुनः प्राप्ति की जाती है उनके लिए नाइट्रोजन युक्त कोयला उपयुक्त होता है।

कोयलों का वर्गीकरण

कोयलों में कई वर्गीकरण हैं। ग्रूनर का वर्गीकरण व्यावहारिक कार्यों के लिए अति उत्तम और उपयुक्त है। यह वर्गीकरण कोयले की अंतिम रचना पर निर्धारित किया गया है।

ग्रूनर के अनुसार कोयले का माध्य प्रतिशत विश्लेषण वर्गीकरण

कोयले	आपिण्डी दीर्घज्वाल कोयला	गैस कोयला	भट्ठी कोयला	पिण्डी कोयला	ऐंथ्रेसाइट
वाष्पशील हाइड्रो कार्बन	३६.०	३१.०	२७.५	२१.०	७.०
कोक	५९.०	६६.०	७०.०	७५.०	९०.०
स्थायी कार्बन	५५.०	६२.०	६७.०	७१.०	८७.०
भस्म (राख)	४.०	४.०	३.०	४.०	३.०
गंधक	.८	.८	१.२	१.२	.५
नमी	४.२	२.२	१.३	२.८	२.५

ग्रूनर के अनुसार कोयलों का वर्गीकरण

ग्रूनर द्वारा नामकरण	पर्याय नाम	कार्बन	हाइड्रोजन	आक्सीजन	अनुपात आक्सीजन/हाइड्रोजन	आसवन के उत्पाद			
						एमोनिया द्रव	अपरिष्कृत तार	गैस	कोक
शुष्क दीर्घ ज्वाला अकोकात्मक	अपिण्डी दीर्घ ज्वाल	७५-८०	५.५-४.५	१९.५-१५	४:३	१२-५	१८-१५	३०-२०	५०-६०
स्थूल दीर्घ ज्वाल	गैस	८०-८५	५.८-५.०	१४.२-१०	३:२	५-३	१५-१२	२०-१७	६०-६८
स्थल, अकोकात्मक	भट्ठी	८५-८९	५.५-५.०	११.०-५.३	२:१	३-१	१३-१०	१६-१५	६८-७४
स्थूल, लघु ज्वाल	पिण्डी	८८-९१	५.५-४.५	६.०-५.५	१:१	१	१०-५	१५-१२	७४-८२
तनु कोयले	एंथ्रेसाइट	९०-९३	४.५-४.०	५.५-३.०	१:१	१-०	५-२	१२-८	८२-९०

कोयलों से प्राप्त कोकों का वर्णन

कोयला	कोक
अपिण्डी, दीर्घ ज्वाल	चूर्णीय या अल्प मात्र चिपचिपा।
गैस	पिण्डी, कोमल, वहुत-सी दरारें।
भट्ठी	पिण्डी, मध्यम घना।
पिण्डी (केकिंग)	पिण्डी, अतिघना, कठोर और चमकीला।
ऐंथ्रेसाइट	चूर्णीय या अल्प मात्र चिपचिपा।

(१) अपिण्डी दीर्घज्वाला कोयला—यह अधिक मात्रा में गैस उत्पन्न करता है, अवशेष कोक का रूप साधारणतः मूल कोयले के सदृश होता है। वाष्पशील पदार्थ में वहुत अधिक अलकतरीय वस्तु मिली रहती है। यह कोयला लम्बी धूमयुक्त ज्वाला के साथ जलता है।

(२) गैस कोयला—यह कोयला प्रति टन १०५०० घन फुट गैस उत्पन्न करता है। अपिण्डी दीर्घज्वाल कोयले की अपेक्षा कोक अधिक चिपचिपा होता है, लेकिन इसका पिण्ड वहुत कम वनता है। यह कोयला अधिकतर गैस निर्माणके प्रयोग में आता है।

(३) भट्ठी कोयला—इसमें घरेलू कोयले भी सम्मिलित हैं। यह पिण्ड वनाता है और इसका कोक गहरे भूरे रंग का होता है।

(४) पिण्डी कोयला—यह भट्ठी के कोयले की तरह घरेलू और औद्योगिक कार्यों के लिए प्रयोग में लाया जाता है, किन्तु मुख्यतः कोक निर्माण में इसका उपयोग होता है।

(५) ऐंथ्रेसाइट—यह वस्तुतः विना धूम के जलता है और इसका कोक चिपचिपा नहीं होता।

कोक

जव कोयले को वायुरहित स्थान में गरम किया जाता है तो उसका वाष्पशील पदार्थ निकलकर दूर हो जाता है और जो पदार्थ अवशिष्ट रहता है उसे 'कोक' नाम से व्यक्त किया जाता है।

गैस वनाते समय प्राप्त कोक वहुधा काँच के उद्योग में प्रयोग किया जाता है। कोक भट्ठियों में वना कोक मुख्यतः धातु कार्मिक कार्य में प्रयोग किया जाता है। गैस उत्पादकों में उत्पादक-गैस-निर्माण के लिए कोक का प्रयोग किया जा सकता है। कोक में भस्म की प्रतिशतता मूल कोयले से अधिक होती है। कोक में भस्म की मात्रा २ से २० प्रतिशत तक होती है। अच्छे गैस कोक की रचना में निम्न द्रव्य होते हैं—

कार्वन	८९.०	प्रतिशत
हाइड्रोजन	.५	,,
आक्सीजन और हाइड्रोजन	२.५	,,
भस्म.(राख)	८.०	,,

ईंटें

छोटा कोयला या कोयले का चूरा, लिगनाइट और जीर्णक को चूर्ण कर फिर कोई चिपचिपा पदार्थ मिलाकर, पीडन द्वारा उसकी ईंटें और ब्लाक (कोल खंड) वनाये जाते हैं। वहुधा सघन वनाने के लिए चिपचिपे पदार्थ राल का प्रयोग किया जाता है।

ईंटें साधारणतः आयताकार होती हैं और प्रायः ४ से ९ पाउंड तक उनका भार होता है। ये ईंटें थोडी ही जगह में इकट्ठी की जा सकती हैं। इनकी तापन शक्ति इतनी ही होती है जितनी कि मूल कोयले की, जिससे ये निर्माण की जाती हैं।

द्रव ईंधन

(अ) प्राकृतिक तेल

ईंधन के लिए प्रयोग में आनेवाले प्राकृतिक तेलों को पेट्रेलियम तेलों के नाम से व्यक्त किया जाता है। ये अनेक प्रकार के होते हैं और प्रायः सभी ईंधन के लिए प्रयोग में लाये जा सकते हैं। कुछ तेल जो आसवन करने पर तरल आसुत तेल उत्पन्न करते हैं, वे अधिक मूल्यवान् होने के कारण ईंधन के उपयोग में नहीं लाये जाते।

संसार के वहुत से भागों में मुख्य कर केलीफोर्निया, टेक्साज्, काला सागर क्षेत्र, केस्पीयन सागर क्षेत्र, मध्यपूर्व क्षेत्र, वर्मा और भारत में ईंधन तेल पाये जाते हैं।

ईंधन तेल, पीले स्वच्छ द्रवों से लेकर शोरे के समान श्यानतावाले और अत्यन्त काले रंग के होते हैं। ईंधन तेल की सामान्य रचना निम्न प्रकार की है—

कार्वन	८३.५	प्रतिशत
हाइड्रोजन	११.५	"
गंवक	३.२	"
भस्म	०.२	"
अज्ञात (आक्सीजन, नाइट्रोजन इत्यादि)	१.६	"

तेल ईंवन से लाभ

तेल की ऊष्मीय शक्ति कोयले की अपेक्षा ५० प्रतिशत अविक होती है। तेल के प्रयोग में कम परिश्रम और संचय में कम स्थान लगता है। कोयले की अपेक्षा इसकी रचना में अविक समानता है। इसके प्रयोग से स्वच्छता रहती है। इसको सहज में ही कहीं ले जाया जा सकता है। इसके प्रयोग से भट्ठी का ताप भी आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है।

इसके लाभों पर विचार करते समय इसकी आपेक्षिक लागत, नियमित रूप से जुटाने की समस्या और भट्टी के ऊष्मसहों के संक्षरण का विचार करना आवश्यक है।

(आ) आसुत तेल

ये तेल अपरिष्कृत पेट्रोलियम तेलों, शंखतेलों, अलकतरा या वात भ्राष्ट्रों के टार से प्राप्त किये जाते हैं।

पेट्रोलियम तेलों से आसवन द्वारा तरल पेट्रोलियम, नेप्था और मिट्टी का तेल प्राप्त होता है। आसवन के पश्चात्, भारी भाग, जैसे मिट्टी का तेल, जो आसुत नहीं हो पाते, तेल ईंवन के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं। अलकतरा के आसवन करने पर एक उत्पाद "तार तेल" होता है और यह कभी-कभी काँच की भट्ठियों और पुनः तापन-छिद्रों में प्रयोग किया जाता है।

तेल वर्नर—काँच उद्योग में भारी तेल, जैसे सामान्य ईंवन-तेल वहुवा प्रयोग में लाये जाते हैं। छोटी भट्ठियों के लिए अविक तरल तेलों का उपयोग किया जाता है। परन्तु इसके लिए कोई विशेप प्रतिवन्ध नहीं है। वर्नर ऐसे वनाये जा सकते हैं हैं जो विभिन्न प्रकार की श्यानतावाले तेलों के लिए उपयुक्त हों। काँच की भट्ठियों में तेल जलाने के लिए तेल का अधिकतर सीकरण किया जाता है। तेल को मध्य नाड में लाने के लिए गुरुत्वाकर्पण या निम्न दाव का प्रयोग किया जाता है। एक संकेन्द्रीय वाह्य नाड से वायु या वाष्प आती है और यह तेल की पतली वार को छिन्न-भिन्न और विभाजित कर सीकरण करती है। अविक तर दवाव की वायु प्रयोग में लायी जाती

है। निम्न दवाव के वर्नरों में (जल की १० से २४ इंच) पंखे से दवाव दिया जाता है, मध्यम दवाव के वर्नरों में (जल की ६० से २०० इंच) धौंकनियों या संपीडकों की आवश्यकता होती है और उच्च दाव के वर्नरों के लिए (प्रति वर्ग इंच ३० से ६५ पाउंड) संपीडकों की आवश्यकता होती है। लघु दाव के वर्नर भी आसानी से प्रयोग में लाये जा सकते हैं, यद्यपि उद्योग में उच्च दाव के वर्नरों से काम लिया जाता है। चुने हुए उपयुक्त वर्नर द्वारा तेल-दाह की प्रणाली पुरानी प्रणाली के स्थान में लगायी जा सकती है। वर्नर के प्रयोग में तेल छानने की व्यवस्था होनी चाहिए।

गैसीय ईंधन

प्राकृतिक गैस—बहुत से स्थानों में, जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका के पेंसिलवानिया प्रदेश में, प्राकृतिक दाह्य गैसें पृथ्वी से निकलती हैं। मौसम एवं स्थान के अनुसार इनकी रचना में भिन्नता होती है। गर्मी में अधिक गैस निकलती है। संयुक्त राज्य अमेरिका के पिट्सवर्ग नगर से प्राप्त गैस की रचना इस प्रकार है—

हाइड्रोजन	४.५	प्रतिशत
मीथेन	८३.०	,,
ईथेन	१२.०	,,
नाइट्रोजन	.५	,,

कोयले से उत्पादित गैसें

निम्न गैसें कोयले से उत्पादित की जाती हैं—

(१) कोयला गैस (२) कोक भट्ठी गैस, (३) उत्पादक गैस।

(१) कोयला गैस—जब कोयले को वायु की अनुपस्थिति में तप्त किया जाता है तो गैसों का एक मिश्रण प्राप्त होता है जिसको 'कोयला गैस' कहा जाता है। कोयला गैस निर्माण करने के उपकरण[1] में निम्न मुख्यताएँ होती हैं।

(क) वकपात्र[2] वाहर से गरम किये जाते हैं, उत्पादित गैसों के निकास के लिए नली होती है। वकपात्रों में कोयला भर दिया जाता है और फिर वे संमुद्रित कर दिये जाते हैं ताकि वायु प्रवेश न कर सके। गैस निर्माण के लिए फिर इन वकपात्रों को उच्च ताप पर गरम किया जाता है।

1. Apparatus 2. Retorts

(ख) गैस को ठंडा करने, एमोनिया को धोने और टार का संघनन करने के लिए उपकरण होता है।

(ग) गैस से कार्बन डाइ आक्साइड और गंधक यौगिकों को पृथक् करने के लिए उपकरण होते हैं।

(घ) गैस इकट्ठा करने के उपकरण भी होते हैं।

एक टन कोयले से प्राय: ८००० से १२००० घन फुट गैस प्राप्त होती है। कोयला गैस की साधारणतः रचना निम्न प्रकार है—

हाइड्रोजन	४५	प्रतिशत
कार्बन मानोआक्साइड	८	"
हाइड्रोकार्बन	४०	"
नाइट्रोजन	५	"
कार्बन डाइआक्साइड	.५	"
आक्सीजन	१.५	"

कोयला गैस पूर्णतया दाह्य[1] होती है। यह विशेपकर घरेलू प्रकाश एवं ईंधन के काम आती है। छोटे औद्योगिक कार्यो में भी इसका प्रयोग होता है। काँच उद्योग में भी वहुधा लेयर, किल्न और पुनः तापन छिद्र कोयला गस से तापित किये जाते हैं। यह वैज्ञानिक काँच धमन और प्रयोगशालाओं में भी प्रयोग में लायी जाती है।

(२) **कोक भट्ठी गैस**—कोक निर्माण कारखानों की उपजात गैस भी कोयला गस से वहुत कुछ मिलती-जुलती है। निकट भविष्य में यह एक महत्त्वपूर्ण ईंधन हो सकती है, यद्यपि वर्तमान समय में यह वहुत कम प्रयोग में आती है।

(३) **उत्पादक गैस**—काँच-उद्योग में प्रयोग में आनेवाला यह मुख्य ईंधन है।

दहन

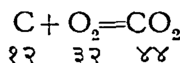
काँच-द्रवण तथा उसके पश्चात् काँच-निर्माण की अनेक क्रियाओं के लिए ऊष्मा की अति आवश्यकता होती है और यह साधारणतः ईंधनों के दहन से प्राप्त होती है। तापन के उद्देश्य से सव प्रकार के ईंधनों का उपयोग तभी सस्ता वैठता है जव कि वायु-प्रदाय और उसके कुशलतापूर्वक नियंत्रण पर पूर्ण महत्त्व दिया जाय।

1. Combustible

जब कार्बन का पूर्ण दहन नहीं होता तो यह धूम के रूप में बाहर निकलता है और उससे वायु की कमी या गैसीय मिश्रण का ठंडा होना सूचित होता है। धूम सर्वदा अन्य अधजले पदार्थों, जैसे कार्बन-मानो-आक्साइड, हाइड्रोजन इत्यादि, के साथ निकलता है और इससे ईंधन की बरबादी का आभास मिलता है।

ईंधन के पूर्ण दहन के लिए आवश्यक आक्सीजन

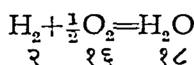
(क) जब केवल कार्बन दाह्य है—



$$C + O_2 = CO_2$$
१२ ३२ ४४

१२ भाग कार्बन के लिए ३२ भाग आक्सीजन की आवश्यकता होती है। अतः १ भाग कार्बन के लिए, भार के अनुसार, २.६७ भाग आक्सीजन की आवश्यकता होगी।

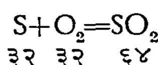
(ख) जब केवल कार्बन हाइड्रोजन दाह्य है—



$$H_2 + \frac{1}{2}O_2 = H_2O$$
२ १६ १८

१ भाग हाइड्रोजन के लिए, भार के अनुसार, ८ भाग आक्सीजन की आवश्यकता होती है।

(ग) जब केवल गंधक दाह्य है—



$$S + O_2 = SO_2$$
३२ ३२ ६४

एक भाग गंधक के लिए, भार के अनुसार, १ भाग आक्सीजन की आवश्यकता होती है।

यदि क, ह, ग और अ क्रमशः कार्बन, हाइड्रोजन, गंधक और आक्सीजन की ईंधन में प्रतिशत मात्राएँ हैं, तो इकाई भार ईंधन के पूर्ण दहन के लिए आवश्यक आक्सीजन के भार की मात्रा—

$$\text{आ}_{\text{भार}} = \frac{(\text{क} \times 2.67) + \left\{\left(\text{ह} - \frac{\text{अ}}{8}\right) + 8\right\} + \text{ग}}{100}$$

इस सूत्र में यह मान लिया गया है कि ईंधन में जो आक्सीजन सम्मिलित है वह हाइड्रोजन के साथ संयुक्त है। अतः दहन के लिए ईंधन में मुक्त हाइड्रोजन की मात्रा

ईंधन के आक्सीजन के $\frac{१}{८}$ भाग के वरावर कम हो जायगी। हाइड्रोजन की वची हुई मात्रा को ईंधन का "प्राप्य हाइड्रोजन" कहा जाता है।

ईंधन के इकाई भार के पूर्ण दहन के लिए, आवश्यक वायु का भार ज्ञात करने के लिए $आ_{भार}$ को $\frac{१००}{२३.३}$ या ४.२९ से गुणन किया जाता है, क्योंकि आक्सीजन वायु के भार का २३.३ प्रतिशत है। ठोस और द्रव ईंधनों का भार ज्ञात किया जा सकता है, परन्तु गैसीय ईंधनों, दहन के गैसीय उत्पादों और दहन के लिए आवश्यक वायु का आयतन ज्ञात करना ही सुविधाजनक होता है।

कोई भी अणुभार के वरावर गैस का आयतन, ताप और दाव की सामान्य परि-स्थितियों में (N.T.P.) २२.४ लिटर होता है, यदि अणु भार ग्रामों में व्यक्त किया जाय, और वह ३५८.६ घनफुट होता है यदि अणु भार पाउंडों में व्यक्त किया जाय।

गैसों और वाष्पों के आयतन तथा भार का सम्वन्ध

गैस या वाष्प	अणुभार	प्रतिग्राम आयतन (लिटरों में)	प्रति पाउंड आयतन (घन फुटों में)
हाइड्रोजन	२	११.२०	१७९.३१
आक्सीजन	३२	.७०	११.२१
नाइट्रोजन	२८	.८०	१२.८१
कावन मानो आक्साइड	२८	.८०	१२.८१
कार्वन-डाइ-आक्साइड	४४	.५१	८.१७
मीथेन	१६	१.४०	२२.४१
इथीलीन	२८	.८०	१२.८१
वाष्प (१००°सें० पर)	१८	१.७३	२७.७०
वायु		.७७७	१२.३८

विद्युत तापन

काँच भट्ठियों के लिए विद्युत तापन अभी तक व्यावहारिक दृष्टि से सफल नहीं हुआ है। विद्युत द्वारा काँच द्रवण के लिए द्रुत काँच को प्रतिरोधक के रूप में प्रयोग किया जाता है और लिखिज[1] (ग्रेफाइट्स) के विद्युदग्र[2] उपयोग में लाये जाते हैं। विद्युत

1. Graphites 2. Electrode

तापन "तीव्र ऊष्मा छड़ों" द्वारा भी किया जाता है। ये तीव्र ऊष्मा छड़ें सिलिकन कार्बाइड की होती हैं, जिनमें ऊष्मा सह मिट्टी का बन्ध होता है। छोटी परीक्षण भट्ठियों में लिपटे हुए तार द्वारा तापन किया जाता है, पर इससे इतना उच्च ताप नहीं आता जितना कि तीव्र ऊष्मा-छड़ों द्वारा आता है। काँच द्रवण के लिए विद्युत चाप[1] उपयुक्त नहीं है, क्योंकि यह अवकारक वातावरण और स्थानीय तीव्र ऊष्मा उत्पन्न करता है।

विद्युत द्वारा उत्पादित ऊष्मा का सूत्र निम्न है—

$$\text{ऊष्मा 'ऊ'} = \frac{\text{ओ} + \text{ए}^2 + \text{स}}{१०५५} = \frac{\text{व} + \text{ए} + \text{स}}{१०५५}$$

ओ (ओम) = प्रतिरोध

ए (एम्पीयर) = विद्युत धारा

स (सेकेन्ड) = समय

वो (वोल्ट) = वोल्ता

१ किलोवाट घंटा=३४१२ ब्रि० ऊ० इ०[2]

ऊष्मा का माप

अमेरिका एवं इंगलैंड में ऊष्मा की इकाई को ब्रिटिश ऊष्मा मात्रक[2], कहते हैं। यह ऊष्मा की वह मात्रा है जो १ पाउंड जल का ताप १° फारेनहाइट बढ़ा देती है। मेट्रिक प्रणाली में इकाई 'कलरी' कहलाती है। यह ऊष्मा की वह मात्रा है जो १ किलो-ग्राम जल का ताप १° सेन्टीग्रेड बढ़ा देती है।

इन इकाइयों का सम्बन्ध इस प्रकार है—

ब्रि० ऊ० मा०	×	·२५२	=	कलरी
ब्रि०. ऊ० मा०	×	२५२	=	ग्राम—कलरी
कलरी	×	३.९७	=	ब्रि. ऊ. मा.
कलरी	×	१०००	=	ग्राम-कलरी
ग्राम—कलरी	×	.००३९७	=	ब्रि. ऊ. मा.
ग्राम—कलरी	×	.००१	=	कलरी

1. Electric arc 2. British thermal unit

गैसों की विशिष्ट ऊष्मा

गैस या वाष्प	स्थिर आयतन	स्थिर दाव
वायु	.१७२	.२३७
कार्वन डाइ-आक्साइड	.१७३	.२१७
हाइड्रोजन	२.४०२	३.४०९
नाइट्रोजन	— —	.२४४
आक्सीजन	— —	.२१८

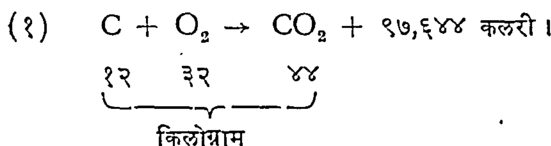
गैसों के मिश्रण की विशिष्ट ऊष्मा ज्ञात करने के लिए प्रत्येक गैस अवयव की विशिष्ट ऊष्मा का उसके मिश्रण में प्रतिशतता से गुणा कर, गुणन के योगफल को १०० से विभाजित किया जाता है।

ऊष्मा रसायन[1]

जब कोई रासायनिक क्रिया होती है तो ऊष्मा का अवशोपण या उद्विकासन होता है। किसी रासायनिक क्रिया में अवशोपण या उद्विकासन की मात्रा पूर्ण निश्चित होती है और अंतिम परिवर्तन की मध्यवर्त्ती क्रियाओं का उस मात्रा पर कोई प्रभाव नहीं नहीं पड़ता।

जब वायु या आक्सीजन में कार्वन जलता है तो ऊष्मा का उद्विकासन होता है और कार्वन की कोई भी विशिष्ट मात्रा जलने पर निश्चित मात्रा में ऊष्मा का उद्विकासन करेगी।

(१) $C + O_2 \rightarrow CO_2 +$ ९७,६४४ कलरी।

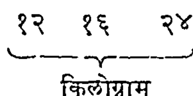


इस सूत्र के अनुसार कार्वन के १२ किलोग्रामों का आक्सीजन के ३२ किलोग्रामों से संयोग होता है और कार्वन डाइ आक्साइड के ४४ किलोग्राम बनते हैं तथा इस क्रिया में ९७,६४४ कलरियों का उद्विकासन होता है।

1. Thermo-chemistry



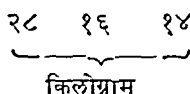
(२) $C+\frac{1}{2}O_2 \rightarrow CO_2$+२९३३९ कलरी।



इस सूत्र में कार्वन जलकर प्रथम कार्वन मानो आक्साइड वनाता है।



(३) $CO+\frac{1}{2}O_2 \rightarrow CO_2$+६८३०५ कलरी।

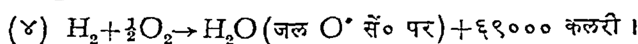


इस सूत्र में कार्वन मानो आक्साइड जलकर कार्वन डाइ-आक्साइड वनाता है।

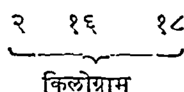
सूत्र (२) और (३) से स्पष्ट है कि जव कार्वन के १२ किलोग्राम दो क्रम में कार्वन डाइ आक्साइड में परिवर्तित होते हैं तो ऊष्मा का उद्विकासन २९३३९+६८ ३०५=९७६४४ कलरी होता है और यह मात्रा उतनी ही है, जवकि कार्वन के १२ किलोग्राम एक ही क्रम में, सूत्र (१) के अनुसार कार्वन डाइ आक्साइड में परिवर्तित होते हैं।

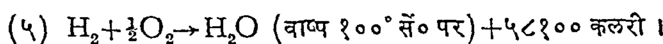
अतः पूर्ण दहन होने पर कार्वन का एक किलोग्राम ८१३७ कलरियाँ देगा और कार्वन की यही ऊष्मीय शक्ति है।

कुछ अन्य पदार्थों का दहन होने पर निम्न प्रतिक्रियाएँ होती हैं—

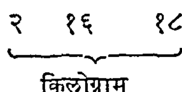


(४) $H_2+\frac{1}{2}O_2 \rightarrow H_2O$ (जल O° सें० पर)+६९००० कलरी।



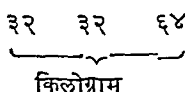


(५) $H_2+\frac{1}{2}O_2 \rightarrow H_2O$ (वाष्प १००° सें० पर)+५८१०० कलरी।





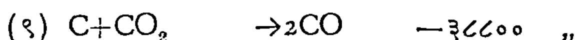
(६) $S+O_2 \rightarrow SO_2$+७१०४० कलरी।



कुछ रासायनिक प्रतिक्रियाओं में ऊष्मा का अवशोपण होता है और इन प्रतिक्रियाओं को "ऊष्मा शोपक[1]" कहा जाता है।


(७) $C+2H_2O$ (वाष्प) $\rightarrow CO_2+2H_2-$ १८९३७ कलरी।

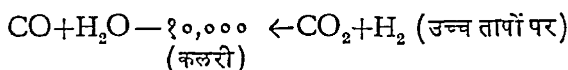

(८) $C+H_2O$ (वाष्प) $\rightarrow CO+H_2$ —२८८०५ ,,


(९) $C+CO_2 \rightarrow 2CO$ —३८८०० ,,

ऊपर की (७) और (८) प्रतिक्रियाएँ गैस उत्पादक में वाष्प और उत्तापदीप्त कोक में होती हैं। वाष्प को कार्वन की प्रतिक्रिया से आक्सीजन और हाइड्रोजन में विक्षेपण करने के लिए जितनी ऊष्मा की आवश्यकता होती है, उतनी ही ऊष्मा हाईड्रोजन के जलकर वाष्प वनने पर उद्विकासित होती है।


(१०) $CO+H_2O \rightarrow CO_2H_2+$ १०,००० कलरी।

(जव वाष्प अधिक मात्रा में है)


$CO+H_2O-$ १०,००० (कलरी) $\leftarrow CO_2+H_2$ (उच्च तापों पर)

ईंधनों का मान

किसी भी ईंधन का मान उसके पूर्णतया जलने पर उद्विकासित ऊष्मा की मात्रा यानी उसकी ऊष्मीय शक्ति पर निर्भर है।

इकाई भार ईंधन के पूर्णतया जलने पर जो ऊष्मा की मात्रा उत्पादित होती है उसे ईंधन की 'ऊष्मीय शक्ति' कहकर व्यक्त किया जाता है।

ईंधनों के ऊष्मीय मान को मापना

ईंधन की ऊष्मीय शक्ति को कलरीमापक द्वारा निश्चित किया जा सकता है। कलरीमापक में ईंधन को दहन कर उद्विकासित ऊष्मा से जल को गरम किया जाता है। इस प्रकार जल के भार और ताप की वृद्धि को ज्ञात कर ईंधन की ऊष्मीय शक्ति का गणन किया जा सकता है।

1. Endo-thermic

ईंधनों का ऊष्मीय मान

ईंधन	आ. उ. इ०	कलरी
लकड़ी (वायु में सूखी)	५५०० से ६०००	१४०० से १५००
लकड़ी (सूखी)	७००० से ८०००	१७५० से २०००
लिगनाइट	७००० से १००००	१७५० से २५००
कोयला (विटुमिनस)	११५०० से १४०००	२९०० से ३५००
ऐंथ्रेसाइट	१३५०० से १४५००	३४०० से ३६५०
कोक	११५०० से १४०००	२९०० से ३५००

वम्ब–कलरीमापक द्वारा ठोस ईंधन का वहुत सही ऊष्मीय मान ज्ञात किया जा सकता है।

ईंधन की ऊष्मीय शक्ति का रासायनिक विश्लेषण द्वारा ज्ञात करना

कई ऐसे सूत्र वताये गये हैं जिनके द्वारा ठोस तथा द्रव ईंधनों के ऊष्मीय मान उनके चरम विश्लेपणों से ज्ञात किये जा सकते हैं। यह सूत्र इस कल्पना पर निर्भर हैं कि ईंधन के दाह्य तत्त्व जलते हैं और प्रत्येक अपनी ऊष्मा की मात्रा उद्विकासित करता है।

कोयलों के लिए निम्न सूत्र, जो कि वर्थलाट के सूत्र का संशोधित रूप है, प्रयोग किया जाता है।

$$\frac{(\text{क} \times ८१३७) + \left\{ \left(\text{ह} - \frac{(\text{अ} + \text{न} - १)}{८}\right) \times ३४५०० \right\} + (\text{ग} \times २२२०) - (\text{जल} \times ६००)}{१००}$$

कलरी, प्रति किलोग्राम कोयला।

अक्षर क, ह, अ, न, ग और जल क्रमशः कार्बन, हाइड्रोजन, आक्सीजन, नाइट्रोजन, गंधक और जल की, ईंधन में उपस्थित भार-मात्रा की प्रतिशतता है। इस सूत्र में मान लिया गया है कि ईंधन में उपस्थित आक्सीजन पहले से ही हाइड्रोजन से संयुक्त है। ईंधन की नमी को वाष्पशील करने के लिए ऊष्मा की आवश्यक मात्रा घटा दी जाती है। ईंधन में उपस्थित नाइट्रोजन के लिए भी एक स्थिर मात्रा घटा ली जाती है।

गैसों के लिए, गैसों के ऊष्मीय मान गणन के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं।

N. T. P. एवं स्थिर आयतन पर गैसों के जलने पर ऊष्मीय मान

गैस	ब्रि० ऊ० मा० प्रति घन फुट	कलरी प्रति घन फुट	कलरी प्रति घन मीटर
हाइड्रोजन	३३३	८६.४	३०५१
कार्बन मानो आक्साइड	३४२	८६.२	३०४४
मीथेन	१०६३	२६८.०	९४६४
ईथेन	१८५२	४६७.०	१६४९२
इथिलीन	१६७०	४२१.०	१४८६८

उच्चताप पर ईंधन का ऊष्मीय मान

ईंधन का ऊष्मीय मान उच्च ताप पर इतना प्रभावकारी नहीं होता जितना कि निम्न ताप पर, क्योंकि दहन के सभी उत्पादों को उसी उच्च ताप तक गरम करने के पश्चात् बची हुई ऊष्मा को किसी और प्रयोग में ला सकते हैं।

ईंधन के जलने से प्राप्त ताप

ईंधन के जलने पर प्राप्त ताप से ही उसकी आर्थिक उपयुक्तता का निर्देश मिलता है। प्राप्य ताप इनपर निर्भर करता है—

(१) ईंधन के जलने पर, ऊष्मा की मात्रा जो मुक्त होती है;

(२) दहन के उत्पादों की प्रकृति और भार; इन उत्पादों को भी गरम करना पड़ता है;

(३) अतिरिक्त वायु की मात्रा जो प्रयोग में आती है;

(४) दहन के उत्पादों की विशिष्ट ऊष्मा;

(५) अन्य प्रकार से होनेवाली ऊष्मा-हानियाँ।

अत: व्यावहारिक स्थितियों में प्राप्त ताप का सही गणन करना सम्भव नहीं होता। परन्तु यदि यह मान लिया जाय कि विना किसी क्षति के सम्पूर्ण उद्विकासित ऊष्मा उपयोग में लायी जाती है तो सद्धान्तिक उच्चतम प्राप्त ताप का गणन करना सम्भव हो जाता है और इस प्रकार ईंधनों के उत्तापमापीय मानों की तुलना की जा सकती है। इस सैद्धान्तिक मान को "ऊष्मीय तीव्रता" कहकर व्यक्त किया जाता है। परिभाषा में यह ताप की वह वृद्धि है जो कि इकाई भार के ईंधन को आक्सीजन की सैद्धान्तिक

मात्रा में जलाने से प्राप्त होती है और दहन क्रिया विना किसी ऊष्मा-हानि के पूर्ण होती है। वास्तविक व्यवहार में यह ताप प्राप्त करना सम्भव नहीं है।

वास्तविक व्यवहार में ऊष्मा-उत्पादन और ऊष्मा-हानियों का सन्तुलन हो जाता है। अग्नि में जब वहति बढ़ा दी जाती है तो ऊष्मीय शक्ति में कोई वृद्धि नहीं होती, परन्तु ऊष्मा का उत्पादन शीघ्र होने लगता है। क्योंकि ऊष्मा की हानियाँ उसी अनुपात में नहीं होतीं, इस कारण अग्नि का ताप बढ़ जाता है। परन्तु यदि अत्यधिक वायु का प्रयोग किया जाय तो ताप निम्न हो जायगा।

पुनर्जनन या पुनरापन[1] की विधियों का प्रयोग करने से ऊष्मीय तीव्रता की वृद्धि होती है। विशेषकर निम्न ईंधनों, जैसे उत्पादक गैस के लिए इन विधियों से ऊष्मीय तीव्रता बढ़ जाती है।

उत्पादक गैस

साधारणतः उत्पादक गैस तीन रूपों में प्रयोग में लायी जाती है।

(१) वायु गैस या सरल उत्पादक गस—यह वायु को उत्तापदीप्त कोयला या कोक में गमन कराकर निर्माण की जाती है।

(२) जल गैस—यह उत्तापदीप्त ईंधन में जल वाष्प गमन कराकर निर्माण की जाती है।

(३) मिश्रित उत्पादक गस—यह वायु एवं जल वाष्प को उत्तापदीप्त ईंधन में गमन-कराकर निर्माण की जाती है। सामन्यतया इसी गैस को 'उत्पादक गैस' के नाम से व्यक्त किया जाता है।

(१) वायु गैस या सरल उत्पादक गैस

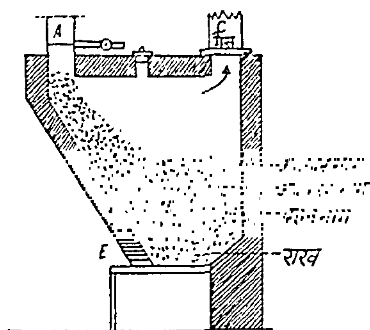
(क) विशाफ उत्पादक

इसका आविष्कार सन् १८३९ में हुआ। इसमें १५० घनफुट आयतन की, अग्नि ईंटों से बनी हुई बेलनाकार कोठरी होती है। ईंधन ऊपर से ७ फुट गहरी झर्झरी पर डाला जाता है। भस्म स्थान के निकट एक द्वार से वायु का नियंत्रण किया जाता है। चिमनी वहति द्वारा, वायु कर्षण होकर भट्ठी में से गमन करती है।

1. Recuperation

(ख) ई. सीमन उत्पादक

इसका आविष्कार सन् १८५७ में हुआ था तथा औद्योगिक दृष्टि से अधिक सफल रहा। इसमें एक आयताकार कोठरी (B) होती है जिसकी एक दीवाल ४५° से ६०° पर झुकी रहती है। झुकी दीवल के पर्दे में एक झर्झरी (E) होती है। ईंधन (A) से डाला जाता है। दहन के लिए वायु, झर्झरी में से होकर, चिमनी वहति द्वारा कर्पण की जाती है। ईंधन के ऊपर निकास द्वार (C) से गैसें वाहर निकलती हैं।



[चित्र ८—सीमन-उत्पादक]

वायु-गैस उत्पादक में रासायनिक प्रतिक्रियाएँ

जव उत्पादक गैस निर्माण के लिए कोयले का प्रयोग किया जाता है तो ईंधन को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(१) दहन भाग—यह झर्झरी के निकट होता है और यहीं कार्वन पूर्णतया जलकर कार्वन डाइ आक्साइड वन जाता है।

(२) अवकरण भाग—यह मध्यवर्ती भाग है और यहाँ कार्वन डाइ आक्साइड कार्वन द्वारा कार्वन मानो आक्साइड में अवकृत हो जाता है।

(३) आसवन भाग—यह ऊपरी भाग है जहाँ कि कोयला गैस इत्यादि उत्पन्न होते हैं।

सरल उत्पादक गैस का निम्न उदाहरण है जो विटुमिनी कोयले से निर्माण की गयी है।

कार्वन मोनो आक्साइड	२४	प्रतिशत
हाइड्रोजन	८	"
मीथेन	२	"
कार्वन डाइ आक्साइड	४	"
आक्सीजन	.५	"
नाइट्रोजन	६१.५	"
योग	१००.	प्रतिशत

ईंधन की प्राप्य ऊष्मा का ३० प्रतिशत भाग वायु गैस उत्पादक में मुक्त होता है। यदि गैस को सामान्य ताप तक ठंडा कर भट्ठी में प्रयोग में लाया जाय तो ईंधन की प्राप्य ऊष्मा का केवल ७० प्रतिशत भाग प्रयोग में आता है। गैसें उत्पादक में से ४००° सें० से ९००° सें० तक के ताप पर निकलती हैं और इस प्रकार ईंधन की कुछ ऊष्मा इन गरम गैसों में भी होती है। यदि तप्त अवस्था में ही गैसों को भट्ठी में जलाया जाय तो ईंधन की प्राप्य ऊष्मा का ९० प्रतिशत भाग भट्ठी में उपयोग में लाया जा सकता है।

ईंधन को उत्पादक में जलाने पर, उत्पादित ऊष्मा की मात्रा दहन की दर पर निर्भर करती है, जो कि ईंधन की परतों में वायु के प्रवेश की सरलता और वेग पर निर्भर है। वायु-गैस उत्पादक में ताप की वृद्धि तब तक होती है जब तक कि ऊष्मा उत्पादन का गैसों, भस्मों इत्यादि में ऊष्मा-हानि की दर का सन्तुलन नहीं हो जाता है। यदि वायु की उपलब्धि अत्यधिक है तो सम्पूर्ण ईंधन जलने लग सकता है। अतः ईंधन की गहराई काफी रखी जाती है जिससे वायु और गैस के गमन को अधिक प्रतिरोध मिले। उत्पादक में गैस उत्पादन की दर का नियंत्रण चिमनी वहति या संपीडक[1] द्वारा किया जाता है। गैस उत्पादन में वृद्धि करने से ऊष्मा का अधिक मात्रा में जनन होता है, जिसके प्रझाम या झावाँ (भस्म द्रवण) और उत्पादक की ऊष्मसह परतों के द्रवण के कारण बाधा होती है।

जलवाष्प को उत्पादक में प्रवेश कराकर उत्पादक का ताप नियमित किया जा सकता है। इस प्रणाली से और दाह्य गैसें, जैसे हाइड्रोजन, कार्बन मानोआक्साइड, और अधिक मात्रा में उपलब्ध होती हैं।

(२) जल गैस

यदि ऊँचे ताप पर तप्त कोयले या कोक में वायु-अभिवमन द्वारा जलवाष्प गमन करायी जाय तो निम्न प्रतिक्रिया होगी—



$$C+H_2O \rightarrow CO+H_2 \quad \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots (१)$$

इस प्रतिक्रिया में कुछ ऊष्मा का अवशोषण होता है और ईंधन कुछ ठंडा हो जाता है। परन्तु जब ताप ९००° सें० से कम हो जाता है तो प्रतिक्रिया (१) के स्थान पर निम्न होती है—

1. Compressor



$$C + 2H_2O \rightarrow CO_2 + 2H_2 \quad \ldots \quad \ldots \quad \ldots \quad \ldots \quad (२)$$

इस प्रतिक्रिया में भी ऊष्मा का अवशोपण होता है, परन्तु कार्बन-मात्रा के क्षय के अनुपात में, जैसा कि समीकरण (१) में है, उससे कम होता है।

अतः ईंधन का ताप जितना ही कम होता जाता है उतनी ही गैसों में कार्बन डाइ आक्साइड की मात्रा बढ़ती जाती है।

एक स्थिति ऐसी आ जाती है जब कि जल-वाष्प एवं कार्बन की रासायनिक क्रिया से उत्पन्न गैस खराब हो जाती है और ईंधन में से जलवाष्प अपरिवर्तित रूप में ही निकल जाती है। तब जलवाष्प का प्रवेश रोक देना होता है और सिर्फ वायु को अकेले ईंधन में गमन करने देते हैं।

जल-गैस-निर्माण के लिए ईंधन का वायु और जल-वाष्प द्वारा पर्याय क्रम से विच्छेदन किया जाता है।

वायु-धमन द्वारा उत्पादित वायु गैस को कारखानों में तापन के लिए, विशेपकर जलवाष्प के प्रति तापन के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इस तरह 'जल वाष्प प्रवेश' से जल-गैस का निर्माण होता है। क्योंकि जल-गैस का उत्पादन रुक रुक कर होता है, अतः प्रयोग के लिए इसका गैसघरों में संचय किया जाता है। क्योंकि उत्पादन रुक-रुक होता है, अतः जलगैस का भट्ठियों में प्रयोग नहीं किया जाता। जल-गैस को कोयला गैस के साथ मिश्रण कर उत्तापदीप्त प्रकाश के प्रयोग में लाते हैं। कोयला गैस की ज्वाला के ताप की अपेक्षा जल-गैस की ज्वाला का ताप उच्च होता है, अतः इन दोनों गैसों के मिश्रण की ज्वाला का ताप उच्च होता है।

निम्न उदाहरण सामान्य जल-गैस का है—

कार्बन मानोआक्साइड	४३.०	प्रतिशत
हाइड्रोजन	४८.०	"
मीथेन	.५	"
कार्बन डाइ आक्साइड	३.५	"
नाइट्रोजन	५.५	"

(३) मिश्रित उत्पादक गैस

जब जल-वाष्प को ईंधन में प्रविष्ट कराया जाता है तब गैस में कार्बन मानो-आक्साइड और हाइड्रोजन की मात्रा की वृद्धि हो जाती है और ईंधन कुछ ठंडा पड़

आता है। जल-वाष्प इस प्रकार उत्पादक का ताप नियंत्रित करता है और झामन[1] की कठिनाई दूर करता है। उत्पादित गैस सरल उत्पादक गैस की अपेक्षा अधिक ऊष्मीय मान की होती है। वायु और जल-वाष्प की सापेक्ष मात्रा का संमंजन[2] कर, उत्पादक के ताप में सन्तुलन लाया जा सकता है और विशिष्ट रचना की गैस का उत्पादन किया जा सकता है। साधारणतः प्रायः ५०° से ५५° सें० ताप के जल-वाष्प से संतृप्त वायु, काँच भट्ठी के प्रयोग के लिए उत्पादक में धमन की जाती है और इस प्रकार की गैस को "जल वाष्प संयुक्त उत्पादक गैस" कहा जाता है।

"दहन भाग" का ताप कभी १२५०° सें० से कम नहीं होने देना चाहिए, परन्तु यदि ईंधन की राख का इस से कम ताप पर ही द्रवण होता हो, तो ताप कम किया जा सकता है।

जल-वाष्प की मात्रा जो उत्पादक के उपयोग में आती है, उत्पादक की बनावट, ईंधन के गुण, वायु की उपलब्धि, जल-वाष्प का ताप और ईंधन-राशि की गहराई पर निर्भर करती है।

ईंधन की गहराई साढ़े तीन फुट से अधिक नहीं होनी चाहिए, नहीं तो वायु एवं गैसों को ईंधन में से होकर गमन करने में अधिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ेगा और गैस उत्पन्न होने की दर कम हो जायगी। दरारदार पिण्डी[3] कोयले के लिए, ईंधन की गहराई का अधिक होना आवश्यक है। कम गहराई के ईंधन में अधिक मात्रा में बिना विच्छेदित हुए कार्बन डाइ आक्साइड के गमन करने की प्रवृत्ति होती है, क्योंकि सम्पूर्ण ईंधन तापदीप्त[4] हो जाता है। वायु की मात्रा कम कर देने से गैस उत्पन्न होने की दर कम हो जाती है। ईंधन की कुछ गहराई में वृद्धि कर देने से, कार्बन-डाइ-आक्साइड की मात्रा कम हो सकती है और गैस उत्पन्न होने की दर में कोई विशेष अन्तर नहीं आता।

उत्पादक विभिन्न प्रकार के होते हैं और प्रत्येक की अपनी विशेषताएँ होती हैं।

ब्रुक-विल्सन उत्पादक

इसमें एक ठोस पेंदा होता है और अग्नि छड़ें नहीं होतीं। पेंदे में ईंटों की एक नाली होती है, जिसके एक तरफ छिद्रों से वायु और जल-वाष्प उत्पादक में प्रवेश करती हैं। गैस-निकास इस प्रकार से व्यवस्थित होता है कि ताजे ईंधन के आसवन उत्पादों को नीचे उत्तापदीप्त ईंधन में से गमन करना पड़ता है और तत्पश्चात् वलयाकार नाली में से होकर वे बाहर आते हैं।

1. Clinker 2. Adjusting 3. Caking coal 4. Incandescent

इस उत्पादक के एक रूपान्तर में जल-वाष्प और वायु काफी ऊँचाई से प्रवेश करते हैं और राख दो बड़े आर्किमीडियन पेचों द्वारा हटायी जाती है। उत्पादक के पेंदें में जल भरा रहता है जो कि गैस को बाहर निकलने से रोकता है और इस प्रकार संमुद्रण[1] का कार्य करता है।

डफ गैस-उत्पादक

यह उत्पादक वेलनाकार डब्बे में वेलनाकार या आयताकार कक्ष-सा होता है। पेंदे में तिरछी झुकी हुई जालियों में से जलवाष्प और वायु धमित किये जाते हैं। पेंदे में जल भरा रहता है। भस्म या राख झुकी हुई झर्झरी से पानी में गिरती है। जल उत्पादक के पेंदे का संमुद्रण करता है। भस्म नियत समय पर पेंदे से निकाल कर हटायी जाती है। उत्पादक के एक तरफ के छिद्रों से ईंधन को कुरेदा जाता है। यह उत्पादक अविराम गैस उत्पन्न करता है और भस्म हटाने के समय भी इसको वन्द करने की आवश्यकता नहीं होती।

भ्रमित झर्झरी गैस-उत्पादक

वायु-जलवाष्प उत्पादकों में भ्रमित झर्झरी के आविष्कार से (१) झावाँ की कठिनाई दूर हो गयी है। (२) किसी भी निम्न प्रकार के कोयले का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे (अ) अति पिण्डी कोयले, (आ) अतिभस्म युक्त कोयले। (इ) एक समान गुणवाली गैस का उत्पादन होता है, क्योंकि भस्म अविराम हटायी जाती है। भ्रमित झर्झरी के उत्पादकों में साधारणतः आत्मग प्रदाय-यंत्र लगे रहते हैं, जिसके कारण गैस के गुण, मात्रा और समता में वृद्धि होती है।

डब्लू० जे० टेलर गैस-उत्पादक

यह भ्रमित झर्झरी प्रकार का उत्पादक है और यह जल-संमुद्रण रहित है। इसमें अग्नि-ईंटों की वेलनाकार कोठरी होती है और कुछ उत्पादकों में कोठरी का नीचा भाग धातु का होता है। धातु की दो परतें होती हैं, जिनके भीतर जल भरा रहता है। झाँवा कोयला[2] अग्नि-ईंट की दीवाल की अपेक्षा ठंडी धातु से इतनी शीघ्रता से नहीं चिपकता। कोयला जब उत्पादक में डाला जाता है तो वह विभाजक से गमन करता है और ईंधन की सतह पर एकसमान फैला दिया जाता है।

1. Seal 2. Clinkering coal

वायु और जल-वाष्प केन्द्रीय ऊर्ध्वाधर[1] नली से प्रवेश करते हैं। इस नली के सिरे पर छत्रक आकार की टोपी होती है जिससे कोयला या झामन नली के छिद्र को वन्द न कर दे। इस सावन से वायु-जलवाष्प की अभिवमन-क्रिया का क्षेत्र भी वढ़ जाता है। ईंधन काफी गहरा होता है और भस्मों के वड़े ढेर पर ठहरा रहता है। भ्रमित पेंदा ईंधन के निचले भाग को मरोड़कर तोड़ देता है और अभिवमन से उत्पन्न दरारों को वन्द कर देता है, जिससे कि अपरिवर्तित कार्वन डाइ आक्साइड और जल-वाष्प उत्पादक के निकास पर पहुँच ही न सकें।

यंत्रीय परावप[2] द्वारा राख वाहर निकाली जाती है और एक चक्र को नियत समय पर घुमाने से ईंधन इकट्ठा हो जाता है।

कर्पले[3] का उत्पादक

इस उत्पादक का पेंदा जल से संमुद्रित रहता है। भ्रमित झर्झरी वहुभुज आकार की होती है, जिसमें चिपटे ताखों का असकेन्द्र कोन (शंकु) होता है। ताखों के मध्य से वायु एवं जल-वाष्प का प्रवेश उत्पादक में होता है।

भ्रमित झर्झरी का कोयले एवं भस्म पर ऐसा दवाव पड़ता है कि झाँवें वड़े होने के पूर्व ही टूट जाते हैं। राख जलगर्त में गिरती है, जहाँ से वह स्थिर लोह-परावपों[2] एवं आत्मग यंत्रों द्वारा वाहर फेंक दी जाती है।

उत्पादक के पेंदें का भाग विशिष्ट इस्पात का होता है और यह जल-शीतित होता है, जिससे उत्पादक वहुत तप्त नहीं होने पाता और झाँवें को चिपकने से रोकता है।

कर्पले का उत्पादक[4] (विलोडकों सहित)

यह पूर्ण आत्मग उत्पादक है और वेन्टले प्रणाली से इसमें कोयला झोंका और कुरेदा जाता है। ईंधन शंकु-आकार के ईंधन-प्रसारक पर गिरता है और इस प्रकार एकसमान फैल जाता है। चार यांत्रिक जलशीतित कुरेदने की छड़ों का प्रयोग किया जाता है, जिनमें दो वक्र होती हैं और दो के सिरे 'T' आकार के होते हैं। प्रथम दो कुरेदने की छड़ें ईंधन को उकसा देती हैं और झाँवें को संचित होने से रोकती हैं, वाकी दो कुरेदने की छड़ें ईंधन को फैला कर संमतल करती हैं और पिण्डियों को तोड़ देती हैं।

1. Vertical 2. Shovel बेलचा 2. Kerpley producer

वेलमैन[1] का उत्पादक

यह अति सर्वप्रिय यांत्रिक उत्पादक है और इसमें दो स्वचालित कोयला डालने के यंत्र और एक कोयला कुरेदने की छड़[2] होती है। यह छड़ ऊपर नीचे ऊर्ध्वाधर समतल में चलती है। उत्पादक ढाँचें के नीचे का भाग ईंधन सहित परिक्रमण करता है और ढाँचे का ऊपरी भाग स्थिर रहता है, परिक्रमण नहीं करता।

कुरेदने की छड़ जलशीतित होती है और कई पाशियों में उत्तापदीप्त भाग में घुसी रहती है।

उत्पादक प्रति घंटा ७ या ८ परिक्रमण (चक्कर) करता है और राख २४ घंटों में एक या दो बार एक छड़ से हटायी जाती है। यह छड़ घूमती हुई झर्झरी के ऊपर आकर स्थित हो जाती है।

मारगन का उत्पादक

यह बिलकुल आधुनिक गैस उत्पादकों में से एक है। कोयला, स्वचालित यंत्र द्वारा उत्पादक में थोड़े-थोड़े समय पश्चात् डाला जाता है और 'U' आकार के नलीदार वेलन से कोयला समतल कर दिया जाता है। यह वेलन ईंधन के ऊपर तैरने के सदृश रहता है। अभिधमन तीन सुपिर-अरीय भुजाओं[3] से और सुपिर-वलय की पूर्ण परिधि से उत्पादक में पहुँचता है। उत्पादक में एक पतली जलशीतित अग्नि-ईंटों की परत होती है, जो कि झामनों को चिपकने नहीं देती। उत्पादक की दीवालें, मय ईंधन के और भस्म-नाँद प्रायः १२ मिनटों में एक परिक्रमण करती हैं। भ्रमित भस्म-नाँद में कुन्तल[4] आकार की एक छड़ स्थित होती है और यह भस्म को एकसमान कर जल-संमुद्रण से बाहर फेंक देती है।

गैस-उत्पादक की कुशलता

ईंधन के रूप में उत्पादक गस का प्रयोग ठोस ईंधनों की अपेक्षा तभी अल्पव्ययी हो सकता है जब कि इसके उपयोग के लाभ, गैस बनते समय जो ऊष्मा नष्ट होती है, उसको संतुलित कर दें।

उत्पादक में ऊष्मा की क्षति को कम करने के लिए अग्नि-ईंटों की उत्तम परत अत्यावश्यक है, क्योंकि ऊष्मा को विकिरण द्वारा नष्ट होने से यह रोकेगी।

1. Wellman 2. Poker 3. Hollow radial arms 4. Spiral सर्पिल

भस्मों में ऊष्मा वहुत कम नष्ट होती है और जल युक्त पेंदेवाले उत्पादकों में यह न्यूनतम रूप में नष्ट होती है, क्योंकि कुछ जल का उद्वाष्पन करने में ऊष्मा का उपयोग हो जाता है।

यदि भस्म में कुछ विना जला कार्वन रह जाता है तो कुछ स्थितिज ऊर्जा का ह्रास होता है। उत्पादक गैस में कार्वन डाइ आक्साइड की मात्रा ४.५ प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि कार्वन-डाइ-आक्साइड की मात्रा इस प्रतिशतता से अधिक होती है तव या तो ईंधन की गहराई काफी नहीं है अथवा अवकरण भाग इतना तप्त नहीं है कि सम्पूर्ण कार्वन डाइ आक्साइड को विच्छेदित कर सके।

यदि उत्पादक गैस तप्त अवस्था में ही भट्ठी के प्रयोग में लायी जाती है तो ठोस ईंधन का ऊष्मीय मान ८५ से ९३ प्रतिशत तक उपलव्ध हो सकता है। तप्त अवस्था में गैसों से ऊष्मा की जितनी प्रतिशतता उपलव्ध होती है, उसको "तप्त गैस कुशलता" कहकर व्यक्त किया जाता है।

यदि उत्पादक गैस प्रयोग के पूर्व ठंडी कर दी जाती है तो संवेद्य ऊष्मा नष्ट हो जाती है।

१००° सें० के ताप से कम ठंडी गैस में ठोस ईंधन से उपलव्ध ऊष्मा की प्रतिशतता को "शीतल गैस कुशलता" कहकर व्यक्त किया जाता है।

अधिक जल-वाष्प के प्रयोग से गैसों में कार्वन डाइ आक्साइड, हाइड्रोजन और जल-वाष्प की मात्रा वढ़ जाती है और कार्वन-मानो-आक्साइड का अनुपात कम हो जाता है।

गैस-उत्पादक की कुशलता वहुत कुछ उसकी रचना और कार्यन पर निर्भर करती है। उत्तम कार्यन (वर्किंग) के लिए निम्न वातों की आवश्यकता है—

(१) सही आकार के ईंधन का अविरत प्रयोग;

(२) ईंधन झोंकने की दर का उत्तम नियंत्रण;

(३) पूर्ण ईंधन के सतह पर ईंधन का समान विभाजन;

(४) विशेषकर ईंधन के ऊपरी भाग को अच्छी तरह कुरेदना जिससे ईंधन एक समान और ठोस हो जाय;

(५) उत्पादक के भीतर सही ताप के लिए, वायु और जल वाष्प के अनुपात का सही नियंत्रण और वितरण।

.७५ से २.५ इंच व्यास के परिमाण का ईंधन अधिक उपयुक्त होता है।

कोयले की धूल को प्रयोग में नहीं लाना चाहिए क्योंकि इससे झाँवे की प्रवृत्ति होती है। धूल गैसों के साथ चली जाती है, अतः उत्पादकों में धूलि-रोक होने चाहिए अथवा जल से धुला कोयला प्रयोग में लाना चाहिए।

यदि ईंधन में पिण्डी और दरारें बनने[1] की अधिक प्रवृत्ति हो तो ईंधन की गहराई बढ़ा देनी चाहिए। अधिक गहराई से गैस बनने की दर कम हो जाती है। राख, वायु-नली से १० से १४ इंच तक ऊपर होनी चाहिए। दहन एवं अवकरण भाग मिलकर ६ से २० इंच तक होने चाहिए और इसके ऊपर १२ से १८ इंच गहराई की ईंधन की तह होनी चाहिए।

झाँवाँ की प्रवृत्ति में वृद्धि होने पर जलवाष्प की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। साधारणतः जलवाष्प का दाब २० से ३० पाउंड तक होना चाहिए। ८ से १० फुट व्यास-वाले उत्पादक में, कोयले से गैस बनने की दर निम्न होती है—

(१) उत्पादक, जिनमें हाथ से कोयला झोंका और कुरेदा जाता है
९०० से १००० पाउंड कोयला

(२) अर्ध आत्मग उत्पादक २००० से २५०० ,, ,,

(३) आत्मग उत्पादक ३००० से ४००० ,, ,,

गैसीय ईंधनों के लाभ

(१) ईंधनों के दहन के लिए सिद्धान्ततः जितनी वायु की आवश्यकता होती है ठोस ईंधनों के लिए उससे अधिक हवा आवश्यक है। गैसीय ईंधनों में, कुछ ही अतिरिक्त वायु काफ़ी होती है। अतिरिक्त वायु से ऊष्मा बहुत नष्ट होती है।

(२) निष्क्रम गैसों की ऊष्मा को पुनः प्राप्त कर, वायु एवं गैस को पूर्व तापन के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है।

(३) गैस-दहन से ऊष्मा का उत्पादन भट्ठी के अन्दर, जहाँ आवश्यकता होती है, होता है। ठोस ईंधनों से ऊष्मा का उत्पादन, भट्ठी से दूर स्थित चूल्हे में होता है।

(४) वायु एवं गैस का प्रदाय नियंत्रित रहता है और भट्ठी का वातावरण आवश्यकतानुसार आक्सीकारक या अवकारक बनाया जा सकता है।

1. Caking & channeling

(५) क्योंकि वायु एवं गैस का पूर्व तापन किया जा सकता है, अतः उच्च ताप प्राप्त किया जा सकता है।

(६) गैसीय ईंधन की व्यवस्था सुविधापूर्वक और कम व्यय में हो जाती है। कारखाने में किसी भी स्थान पर गैस बनायी जा सकती है और आवश्यकतानुसार नलियों द्वारा वितरित की जा सकती है। इस प्रकार समूचे ईंधन को एक ही स्थान से प्रयोग में लाया जा सकता है और प्रत्येक भट्ठी तक ढुलाई की आवश्यकता नहीं होती। इससे काफी स्वच्छता रहती है और धूल से बचाव होता है।

(७) निम्नकोटि के ईंधन, जो सीधे जलाने योग्य नहीं होते हैं, उत्पादक गैस के उत्पादनार्थ प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

नवाँ अध्याय

उत्तापमापन

उत्तापमापन का महत्त्व

आजकल अधिकांश काँच की वस्तुएँ यंत्र द्वारा निर्मित होती हं। अतः भट्ठी के द्रुत काँच में विशिष्ट श्यानता होनी चाहिए। ताप में ५०° सें० का अन्तर भी कार्य में सफलता अथवा असफलता ला सकता है। काँच के निस्तापन में लेयरों में सही ताप और उसके नियंत्रण से काँच की वस्तुओं की न्यूनतम क्षति होती है और लेयर की लम्वाई एवं निस्तापन के समय में कमी की जा सकती है। उत्पादक, गैस नली और क्षीण गैसों के तापों के नियंत्रण से ईंधन की वहुत वचत हो सकती है। काँच के कारखाने में तापों के उत्तम नियंत्रण से, उत्पादन का मूल्य कम हो जाता है, जिससे उत्तापमापकों का मूल्य निकल आता है।

ताप मापने के यंत्रों की किस्में

ताप मापने के लिए छः प्रकार के यंत्र होते हैं--

(१) प्रसारीय, (२) द्रवणीय, (३) वैद्युत प्रतिरोध, (४) ताप विद्युतीय, (५) विकिरणीय, (६) प्रकाशीय।

(१) प्रसारीय उत्तापमापक

इस प्रकार के यंत्रों में ताप मापना, ताप-अन्तर से पदार्थों की लम्वाई एवं आयतन में अन्तर आ जाने के कारण पर निर्भर है। साधारण पारद थर्मामीटर, स्प्रिट थर्मामीटर, वंग एवं गैस थर्मामीटर, इस प्रकार के उदाहरण हैं।

(२) द्रवणीय उत्तापमापक

(क) रिकार्डर—यह ऊष्मसह पदार्थों के पिण्ड होते हैं। इनकी ऊपरी सतह पर वृत्ताकार अवकाश होते हैं। इन अवकाशों में नियत रचना एवं द्रवणांकों-वाली द्रवणीय पदार्थों की गोलियाँ रखी जाती हैं। तप्त होने के पश्चात् जो गोलियाँ द्रवित हो जाती हैं उनसे उच्चतम ताप का देशन मिल जाता है।

(ख) पायरस्कोप—ये विभिन्न सिलीकेटों एवं द्रावकों के मिश्रण हैं और साँचों द्वारा विशिष्ट आकारों में बनाये जाते हैं। तप्त होने पर आकार नष्ट हो जाता है। ये ऊष्मा के प्रभाव के सूचक हैं, परन्तु इनसे वास्तविक ताप नहीं ज्ञात होता।

(ग) होल्डक्रैफ्ट थर्मस्कोप—एक बक्स में द्रवणीय पदार्थों की बनी छड़ें क्रम से रखी रहती हैं। छड़ों के सिरे आधारित होते हैं। छड़ें, गर्मी के कारण मध्य में लटक जाती हैं। एक बक्स में तीन या चार छड़ें होती हैं।

(घ) सेगर शंकु[1]—ये ढाई इंच ऊँचे चतुरनीक स्तूप होते हैं और ये क्वार्ट्ज़, चीनी मिट्टी, फेल्सपार, अल्युमिना तथा निम्नताप पर द्रवित होनेवाले द्रावकों, जैसे लोह आक्साइड, संगमरमर, बोरिक आक्साइड से रचित होते हैं। ये शंकु (कोन) मिट्टी के पिण्डों पर दबाकर भट्ठी (किल्न) में रख दिये जाते हैं।

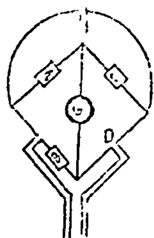
(३) वैद्युत प्रतिरोध प्रकार के उत्तापमापक

इस विधि में ताप में अन्तर होने से, तार के वैद्युत प्रतिरोध में जो अन्तर आ जाता है उसको मापने से ताप ज्ञात किया जा सकता है। वैद्युत प्रतिरोध बहुत ही सही मापा जा सकता है। ९००° सें० के निम्न तापों के लिए वैद्युत प्रतिरोध उत्तापमापक अति उपयुक्त होते हैं, परन्तु इससे ऊपर के ताप के लिए न तो ये अविराम प्रयोग में लाये जा सकते हैं और न सन्तोषजनक होते हैं, क्योंकि अधिक समय तक उच्चताप पर ये नष्ट हो जाते हैं। कुन्तल[2] के लिए शुद्ध धातु का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि मिश्र धातुओं का तापन करने पर वैद्युत धारा का भिन्न प्रतिरोध होता है।

वैद्युत प्रतिरोध उत्तापमापक (केम्ब्रिज साइन्टिफिक इन्स्ट्रूमेन्ट कंपनी) अभ्रक (माइका) के ढाँचे के ऊपर .०१ इंच व्यासवाला प्लेटिनम का तार लिपटा रहता है और इसके दोनों स्वतन्त्र सिरे प्लेटिनम के दृढ़ तारों द्वारा उत्तापमापक के अंतिम भागों से जुड़े होते हैं। इसी प्रकार प्लेटिनम के दो और दृढ़ तार, कुन्तल को स्पर्श किये बिना उत्तापमापक की पूरी लम्बाई में होकर दो और छोरों से जुड़े होते हैं। इन क्षतिपूरक तारों और कुन्तल से लगे तारों की तापस्थिति सर्वदा एक-सी होती है, इसलिए ताप-परिवर्तन से तारों के प्रतिरोध का परिवर्तन, क्षतिपूरक तारों के प्रतिरोध

1. Cone 2. Spiral

को सन्तुलित कर देता है। सम्पूर्ण तार एवं कुन्तल एक पोर्सलीन-नली के भीतर स्थित होते हैं। जिस भट्ठी का ताप मापना होता है उसमें यह नली रख दी जाती है। जैसे-जैसे कुन्तल तप्त होता है, उसका प्रतिरोध बढ़ता जाता है और अन्त में भट्ठी और नली का ताप एक-सा हो जाता है। मापक यंत्रके आच्छुरित सिर को घुमाकर परिधि में विरोधी प्रतिरोध उत्पन्न करते हुए इस प्रतिरोध को सन्तुलित किया जाता है। इस सन्तुलन का देशन तब मिलता है जब कि धारामापी[1] की सुई शून्य अंक पर होती है। अंकित माप श्रेणी द्वारा ताप सीधे ही पढ़ लिया जा सकता है। चित्र नम्बर ९ में, प्रतिरोध मापने का ह्वीट स्टोन रोध सिद्धान्त दिखाया गया है।



[चित्र ९—वैद्युत प्रतिरोध मापने की विधि]

A और C ज्ञात मान के स्थिर प्रतिरोध हैं। B संमंजनीय प्रतिरोध है और D वह प्रतिरोध है जिसे मापना है। जब कि कुन्तल एवं क्षतिपूरक तारों का ताप स्थायी हो जाता है, तब B प्रतिरोध का संमंजन किया जाता है जिसमें कि धारामापी में शून्य अंकित हो। उस स्थिति में,

$$\frac{A}{B}=\frac{C}{D} \text{ या } B=\frac{A\times D}{C}$$

यदि A=C हो तो B=D यानी धारामापी में B का प्रतिरोध ही, D के ताप का माप है।

प्रतिरोध उत्तापमापक उतना शीघ्र कार्य नहीं कर पाते, जितना कि ताप विद्युतीय उत्तापमापक करते हैं। अंकित ताप, उत्तापमापक सिर के ताप एवं भट्ठी से उत्तापमापक की दूरी स्वतन्त्र होती है। इसका यंत्र एवं देशक या मापकयंत्र, ताप विद्युतीय उत्तापमापक से अधिक मूल्यवान् होता है। इसकी मरम्मत करना अधिक कठिन है। यह शीघ्र बिगड़ जाता है और इसके प्रयोग में अधिक सतर्कता की आवश्यकता होती है।

(४) ताप विद्युतीय प्रकार के उत्तापमापक

जब दो विषम धातुओं की सन्धि को तापित करते हैं तो उस सन्धि पर वैद्युतगामी बल उत्पन्न हो जाता है। दो भिन्न तारों की पूर्ण परिधि बनती है और जब दोनों तारों

1. Galvonometer

की सन्धियों का भिन्न ताप हो तब परिधि में वैद्युतवाह उत्पन्न हो जाता है। यदि परिधि-प्रतिरोध स्थायी हो तो वैद्युतवाह दोनों संधियों के ताप के अन्तर के अनुपात में होता है। दोनों सन्धियों में से एक सन्धि का जिसको "शीतल संधि" कहा जाता है, ताप स्थायी रखा जाय तो दूसरी सन्धि का, जिसको "उष्ण सन्धि" कहा जाता है, ताप, सिर्फ परिधि में वैद्युतवाह को मापकर जाना जा सकता है।

ताप-युग्मों की[1] किस्में

१. प्लेटिनम के साथ

(क) लोहा (ख) पलाडियम।

(ग) प्लेटिनम-इरिडियम मिश्र धातु (१० प्रतिशत इरिड़ियम)

(घ) प्लेटिनम-रोडियम मिश्र धातु (१० प्रतिशत रोडियम)

२. भस्म-धातुयुग्म

(क)	ताम्र-कांसटनटन	३००° सें० तक के लिए उपयुक्त।
(ख)	रजत-कान्सटैनटन { निकिल ४० प्रतिशत, ताम्र ६० प्रतिशत }	७०० सें० तक के लिए उपयुक्त।
(ग)	लोह-कान्सटैनटन	७००° से १०००° सें० तक के लिए उपयुक्त।
(घ)	निकल-निकल-क्रोम { ह्रास किन्स मिश्रधातु— क्रोमियम १० प्रतिशत }	" " " " "
(ङ)	क्रोमेल-अल्यूमेल { क्रोमियम १०%, निकल ९०% } { अल्युमिनियम २½%, निकल ९८% }	" " "

ताप-युग्मों की उपयुक्तता

प्रयोगशाला में ३००° से १४००° सें० तक का ताप मापने के लिए प्लेटिनम-प्लेटिनम-रोडियम युग्म को प्रामाणिक माना जाता है। यदि इसकी उचित रीति से रक्षा की जाय तो औद्योगिक व्यवहार में भी इसका उपयोग किया जा सकता है। यह उच्च तापों पर बिना खराब हुए बहुत समय तक काम दे सकता है। इस ताप-युग्म

1. Thermocouples

म सिर्फ इतनी कठिनाई है कि यह कुछ महँगा है और इसकी आपेक्षिक सुग्राहिता[1] कम होती है।

३००° सें० से निम्न ताप के लिए ताम्र-कान्सटनटन युग्म उपयुक्त है। यह सस्ता तथा अधिक सुग्राही है और इसके दोनों तार आवश्यक व्यास एवं यथेष्ट समांग के मिल सकते हैं। ताम्र एवं कान्सटैनटन ३००° सें० के ऊपर शीघ्र ही आक्सीकृत हो जाते हैं, विद्युतगामी बल निम्न हो जाता है और तार भंगुर होकर अन्त में टूट जाते हैं। लोहे का आक्सीकरण भी अति शीघ्र होता है, अतः इसका प्रयोग कान्सटैनटन के संयोग में अवकारक वातावरण में होना चाहिए। हासकिन्स मिश्र धातुओं और क्रोमेल-अल्यूमेल का प्रयोग आक्सीकारक वातावरण में होना चाहिए।

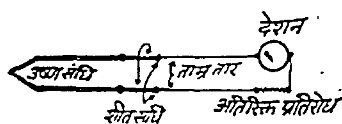
१०००° सें० ताप के ऊपर सब भस्म-धातु ताप युग्म शीघ्र ही खराब हो जाते हैं।

ताप-विद्युतीय उत्तापमापन की सीमा तारों के द्रवण के कारण प्रायः १४००° सें० तक है, यद्यपि प्लेटिनम-प्लेटिनम-रोडियम उत्ताप मापक, कुछ अल्प समय के लिए १५००° सें० पर प्रयोग किये जा सकते हैं।

तारों को संक्षारण से बचाने के लिए सिलिका आवरण या पोर्सलीन की नलियों में रखना चाहिए।

ताप-युग्म की परिधि में एक अतिरिक्त प्रतिरोध रखा जाता है जो कि ताप-युग्म का कुछ भाग तप्त हो जाने के कारण उत्पन्न हुए ताप परिवर्तनों को सन्तुलित करता है। यह अतिरिक्त प्रतिरोध ऐसे पदार्थ का बना होता है जिसमें कि ताप परिवर्तन होने से प्रतिरोध में परिवर्तन नहीं आता। परिधि के अन्य प्रतिरोधों की अपेक्षा इसका प्रतिरोध बहुत अधिक होता है और ताप-परिवर्तन के कारण अन्य प्रतिरोधों में परिवर्तन अपेक्षाकृत बहुत कम होता है तथा देशक[2] की तापव्यक्ति पर कोई उल्लेख योग्य प्रभाव नहीं पड़ता।

तापयुग्म साधारणतः लम्बाई में छोटा ही रखा जाता है और इसका "शीत-सन्धि" भाग दो ताम्र तारों द्वारा देशक (इन्डीकेटर[2]) से जोड़ा जाता है और उस हालत में बहुधा देशक के बक्स के भीतर ही अतिरिक्त प्रतिरोध सम्मिलित किया जाता है।



[चित्र १०—ताप विद्युतीय परिधि]

1. Sensitivity 2. Indicator

ताप मापना

उत्पादित विद्युतगामी वल को मापने की दो विधियाँ हैं—

(१) एक संचायक[1] का विद्युतगामी वल प्रामाणिक कोशिका की सहायता से ज्ञात किया जाता है। फिर तापयुग्म और संचायक का विद्युतगामी वल संतुलित किया जाता है। यह 'शक्यमान की विधि' कहलाती है और इससे बहुत सही फल मिलता है।

(२) इस विधि में तापयुग्म परिधि में उत्पन्न विद्युतगामी वल को सीधा व्याकुंचन धारामापी या सहस्र वोल्टमापी के द्वारा माप लेते हैं। सहस्र वोल्टमापी भ्रमत कुंतल प्रकार का अति अवरोधयुक्त होता है। कारखानों में साधारणतः वहु वोल्टमानवाली मापने की सीधी विधि अपनायी जाती है।

देशक दो प्रकार के होते हैं—(१) सुवाह्य, (२) दीवाल में लगाया जानेवाला। स्विचों के द्वारा एक देशन अनेक उत्तापमापकों से सम्वन्धित हो सकता है। ये उत्ताप-मापक कारखाने में कहीं पर भी लगे हों और किसी भी समय किसी एक उत्तापमापक का ताप पृथक् रूप से पढ़ा जा सकता है।

तापों का अभिलेखन[2]

(१) रावर्ट आस्टन की विधि में प्रकाश को देशक की सूई से जुड़े एक छोटे दर्पण द्वारा परावर्तित करते हैं। गतिशील फोटोग्राफ पट्टिका[3] पर प्रकाशविन्दु के मार्ग का चित्र अंकित हो जाता है। पट्टिका को विकसित करके ही ताप जाना जा सकता है।

(२) फीते का अभिलेखन यंत्र—इस प्रकार के अभिलेखन में धारामापी की सूई, घड़ी या विद्युत यंत्र द्वारा स्याहीदार धागे या टाइप राइटर के फीते को घड़ी-यंत्र से घूमनेवाले ढोल के ऊपर एक नकशे पर नियमित समय से दवाती है और इस प्रकार नकशे पर स्याही के दाग एक पंक्ति में अंकित हो जाते हैं।

ताप विद्युतीय उत्तापमापकों से लाभ

(१) सरलता, (२) सस्तापन, (३) सुविघाजनकता, (४) मरम्मत में आसानी, (५) दृढ़ता, (६) केन्द्रीय नियंत्रण के लिए उपयुक्तता।

इनमें केवल एक ही दोष है कि "शीतसन्धि"वाले ताप के परिवर्तन के कारण कुछ गलती आ सकती है, परन्तु यह सुधारी जा सकती है।

(५) विकिरण प्रकार के उत्तापमापक

प्रत्येक पदार्थ अपने वातावरण में ऊष्मा विकीर्ण करता है। जो पदार्थ जितना

1. Accumulator 2. Recording 3 Photographic plate

ही अधिक तप्त होता है वह उतना ही अधिक ऊष्मा विकीर्ण करेगा। प्राय: ५००° सें० के ऊपर के ताप पर विकीर्ण ऊर्जा का कुछ भाग प्रकाश के रूप में दृष्टिगोचर होता है और बाकी भाग ऊष्मा के रूप में अदृश्य रहता है।

किसी पदार्थ से विकिरण होना पदार्थ की प्रकृति, उसकी सतह की दशा एवं उसके ताप पर निर्भर है। कर्चोफ[1] ने "काले पदार्थ" की व्याख्या की है। यह अपने ऊपर गिरनेवाले सम्पूर्ण विकिरणों का अवशोषण करता है और उन विकिरणों का कोई भी भाग पदार्थ से न तो परावर्तित होता है और न पारगमित ही होता है। उन्होंने यह भी बताया है कि इस प्रकार के काले पदार्थ से विकिरण की मात्रा केवल ताप की मात्रा का कार्य (फंक्शन) है और यह उस समावरण के भीतरी विकिरणों के ही समान है जिसके प्रत्येक स्थान का एक ही ताप होता है।

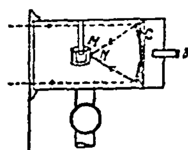
साधारण औद्योगिक भट्ठियाँ व्यवहारत: "काले पदार्थ" की शर्तों को पूरा करती हैं। काले पदार्थ के विकिरण, विकिरण-उत्तापमापक के ताप-युग्म पर फोकस किये जाते हैं और उत्पन्न विद्युतगामी बल, ताप मापने के प्रयोग में लाया जाता है।

विकिरण उत्तापमापक इस प्रकार अंशांकित[2] किये जाते हैं कि "काले पदार्थ" जैसी अवस्था के पदार्थों का ताप पढ़ा जा सके। परन्तु यदि स्थितियाँ 'काले पदार्थ' के अनुकूल नहीं होतीं तो अंकित ताप कुछ निम्न होगा।

उच्च तापों के माप के लिए विकिरण-उत्तापमापक अधिक उपयोगी होते हैं, क्योंकि प्रतिरोध या ताप-विद्युतीय उत्ताप-मापक व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण प्रयोग में नहीं लाये जा सकते।

फ़ेरी विकिरण उत्तापमापक—

यह प्रथम व्यावहारिक विकिरण-उत्तापमापक होते हुए भी, अब भी उच्च ताप मापने के लिए एक अत्यन्त उत्तम यंत्र है। केम्ब्रिज साइंटिफिक इंस्ट्रूमेंट कम्पनी के यंत्र में एक दूरबीन होती है जो कि गरम पदार्थ पर फोकस की जाती है। ऊष्माकिरणें एक अवतल[3] दर्पण पर गिरती हैं और वहाँ से एक छोटे ताप-युग्म पर फोकस की जाती हैं। उत्पन्न विद्युतगामी बल एक धारामापी द्वारा मापा जाता है जिसके अंक ताप को सीधा व्यक्त करते हैं।

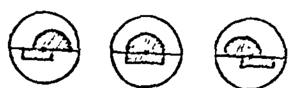


[चित्र ११—फेरी विकिरण उत्तापमापक]

1. Kirchoff 2. Graduated 3. Concave नतोदर

ऊष्मा किरणें (A) अवतल दर्पण (C) द्वारा फोकस (N) पर केन्द्रित होती हैं। भट्ठी का प्रतिबिम्ब चक्षु लेन्स (E) से, छोटे दर्पण (M) में देखा जाता है और यह दर्पण दो जुड़े हुए अर्धवृत्तीय स्फान[1] आकार के दर्पण का होता है। जहाँ का ताप ज्ञात करना होता है, ठीक उसी स्थान पर इस यंत्र को फोकस किया जाता है। दर्पण (M) के ठीक एक छिद्र के पीछे सुग्राही तापयुग्म स्थित होता है जो कि किरणों के फोकस होने के कारण तप्त हो जाता है।

यदि यह यंत्र ठीक से फोकस किया जाय तो यही प्रतिबिम्ब ऐसा दिखलाई देगा जैसा कि मध्यवाले चित्र में है। उसमें बाहरी वृत्त दर्पण है, छायादार भाग तप्त पदार्थ का परावर्तित प्रतिबिम्ब है जिसे दूरबीन से देखा जा सकता है। काला केन्द्र उत्ताप-मापक का सुग्राही तत्त्व है, इसे तप्त पदार्थ के प्रतिबिम्ब से ढक जाना चाहिए।



[चित्र १२—फेरी उत्तापमापक का फोकस करना]

यदि फोकस बहुत कम है तो प्रतिबिम्ब दो भागों में विभक्त दिखलाई देगा, जैसा कि बायें चित्र में है, और यदि फोकस बहुत अधिक है तो प्रतिबिम्ब वैसा ही, परन्तु विपरीत दिखलाई देगा, जैसा कि दाहिने चित्र में है।

सही फोकस लाने के लिए, यंत्र में आक्षुरित[2] शीर्ष द्वारा ऊपर एवं नीचे के अर्ध प्रतिबिम्बों को एक दूसरे पर सरकाया जा सकता है। यंत्र के फोकस करने में व्यक्ति-गत भूल नहीं हो सकती। पदार्थ या छिद्र के परिमाण या इनकी उत्तापमापक से दूरी का ताप-अंकन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। पदार्थ के प्रतिबिम्ब का इतना परिमाण अवश्य होना चाहिए कि वह दूरबीन के सुग्राही तत्त्व को चतुर्दिक् ढँक ले। इसके लिए वस्तु और उत्तापमापक की प्रति दो फुट दूरी के लिए वस्तु का न्यूनतम माप एक इंच व्यास का होना चाहिए। जब कि भट्ठी की दीवाल के छिद्र का परिमाण, छिद्र और पीछे की दीवाल की दूरी की तुलना में बहुत कम होता है तब विकिरण "काले पदार्थ" के जैसा होता है और विकिरण पर दीवाल की सतह का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

अवलोकन छिद्र और पीछे की दीवाल के मध्य यदि लपटें भी आ जायें तो भी ताप अभिलेखन पर इसका कोई प्रभाव नहीं होता क्योंकि लपटें इतनी पारदर्शी[3] होती हैं कि वे शायद ही विकिरण का कुछ विशेष अवशोषण या उत्सर्जन[4] कर सकें।

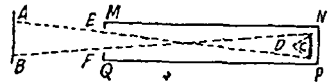
1. Wedge कीलक, पच्चर। 2. Milled 3. Transparent 4. Emitting

फोस्टर का "निश्चित फोकस" विकिरण उत्तापमापक—

तप्त पदार्थ (AB) से विकीर्ण ताप यंत्र (MNPQ) में छिद्र (EF) से प्रवेश कर अवतल दर्पण (C) द्वारा D पर फोकस होता है और वहाँ एक तापयुग्म स्थित होता है। छिद्र (EF) दर्पण (C) के संवद्ध फोकस पर होता है।

D पर वना हुआ प्रतिविंव केवल प्रकाश प्रतिविंव ही नहीं होता, परन्तु ताप प्रतिविंव भी होता है, इस कारण D का ताप वढ़ जाता है। उत्पादित विद्युतगामी वल को मापने से तप्त पदार्थ का वास्तविक ताप मापा जा सकता है। यंत्र को गरम पदार्थ से एक निश्चित अधिकतम दूरी से अधिक नहीं होना चाहिए। ताप मापने के लिए यह अधिकतम दूरी तप्त पदार्थ यानी छिद्र के व्यास या छिद्र की न्यूनतम लम्बाई की दस गुनी होनी चाहिए। इस अधिकतम दूरी से कम पर भी कार्य करने से ताप अंकन में कोई वड़ा अन्तर नहीं होता। यंत्र में एक दृष्टि साधन भी होता है जिससे कि यंत्र की दूरी और ठीक दिशा ज्ञात हो जाती है।

ताप विद्युतीय उत्तापमापकों के समान, ऊपर जैसे ताप-युग्म उत्तापमापकों में भी देशक और अभिलेखक प्रयोग में लाये जा सकते हैं।



[चित्र १३–फोस्टर विकिरण उत्तापमापक का काट]

(६) प्रकाशीय प्रकार के उत्तापमापक

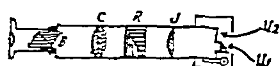
किसी पदार्थ के ताप-देशन के लिए, इन उत्तापमापकों में गरम पदार्थ के दृश्य विकिरण का प्रयोग किया जाता है।

वैनर उत्तापमापक

यह दीप्तिमापी[1] प्रकार का उत्तापमापक है। छः वोल्ट के विद्युत वल्व के प्रकाश की तुलना तप्त पदार्थ, जैसे कि भट्ठी की प्रकाश किरणों से की जाती है। ये दृश्य विकिरण उत्तापमापक यंत्र में क्रमशः (U_1 और U_2) छिद्रों से प्रवेश करते हैं और संयुक्त लेन्स (U) इन्हें समानान्तर करता है। प्रिज़म प्रणाली (R) प्रकाशरश्मियों को संतत वर्णक्रम[2] में विक्षेपित करती है। अर्ध प्रिज़म लेन्स (C) रश्मियों को इस प्रकार घुमाता है कि दोनों छिद्रों के प्रतिविम्व एक दूसरे की वगल में वन जायें। उपयुक्त व्यवस्था द्वारा इस दृश्य क्षेत्र का अर्ध भाग वर्णक्रम (U) के लाल प्रकाश

1. Photometric 2. Continuous spectrum

से और अर्ध भाग वर्णक्रम (U_2) के लाल प्रकाश से आलोकित होता है और दोनों अर्ध भाग एक दूसरे से लम्ब कोण पर ध्रुवीयित होते हैं। इस दृश्य क्षेत्र को निकोल प्रिज्म विश्लेपक (B) के सामने लाते हैं। यदि विश्लेपक ध्रुवीयण समतल से ४५° के कोण पर हो और U_1 एवं U_2 समान आलोकित हों तो दृश्य क्षेत्र समान रूप से प्रकाशित दिखाई देगा। यदि वे समान रूप से आलोकित न हों तो क्षेत्र का एक अर्ध भाग दूसरे अर्ध भाग से अधिक प्रकाशित होगा। विश्लेपक (B) को घुमाने से दोनों उजाले एक समान किये जा सकते हैं। विश्लेपक में एक मापदण्ड इस प्रकार अंकित होता है कि तप्त पदार्थ का ताप सीधा ही पढ़ लिया जा सके।



[चित्र १४—वैनर प्रकाशीय उत्तापमापक]

केम्ब्रिज प्रकाशीय उत्तापमापक

यह यंत्र एक प्रकार का दीप्तिमापी[1] है। तप्त पदार्थ की एकवर्णिक विशिष्ट प्रकाशरश्मि को विद्युत वल्व की उसी प्रकार की प्रकाशरश्मि की तीव्रता के बराबर संलग्न किया जाता है। इसमें वर्णों की तुलना अनावश्यक होने के कारण, वर्णान्ध पुरुष भी सही ताप पढ़ सकता है। ७००° सें० से अधिक ताप के लिए यह यंत्र अत्यन्त उपयुक्त है।

इस यंत्र में, उत्तापमापक के सामनेवाले भाग में पीछे दो छिद्र होते हैं। एक छिद्र से गरम पदार्थ का प्रकाश और दूसरे छिद्र से विद्युत वल्व का प्रकाश गमन करता है। दोनों प्रकाश रश्मियाँ कई लेंसों एवं प्रिज्मों की प्रणाली में गमन करती हैं और विरुद्ध समतलों में ध्रुवीयित होती हैं तथा उपनेत्र[2] में लाल काँच द्वारा एकवर्णिक[3] हो जाती हैं। अन्त में दोनों प्रकाश रश्मियाँ एक अकेले उपनेत्र से होकर गमन करती हैं। दृष्टिक्षेत्र में एक प्रकाशित वृत्त दिखाई देता है जो कि दो अर्धवृत्तों में विभाजित होता है। एक अर्धवृत्त में तप्त पदार्थ का प्रतिविम्ब होता है और दूसरा अर्धवृत्त विद्युत वल्व से एक समान प्रकाशित होता है। उपनेत्र को घुमाकर दोनों अर्धवृत्तों में एक समान तीव्रता की जाती है। उपनेत्र गरम पदार्थ के तापों को सीधे पढ़ने के लिए अंशित[4] रहता है। विद्युत वल्व के प्रकाश को नियत अंपियरमात्रक की विद्युतधारा द्वारा प्रतिरोध नियमित कर, स्थिर रखा जाता है। फिलामेंट पुराना होने के कारण,

1. Photometer 2. Eye piece 3. Monochromatic 4. Calibrated

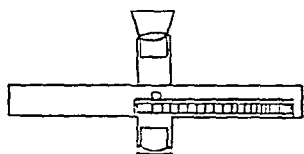
विद्युत वल्व की वर्त्ति शक्ति[1] को स्थिर रखने के लिए, वल्व को समय-समय पर प्रामाणिक एमाइल एसीटेट दीप के प्रति अंशित कर लिया जाता है।

इस उत्तापमापक के विद्युत वल्व को प्रकाशित करने के लिए ४ वोल्ट के संचायक की आवश्यकता होती है।

प्रकाशीय उत्तापमापकों में भी पूर्ण विकिरण-उत्तापमापकों की भाँति "काले पदार्थ" के नियम लागू होते हैं। इनसे एक वार में एक स्थान का ताप मापा जा सकता है, पर ये अंकन के लिए प्रयोग में नहीं लाये जा सकते। परन्तु ये सस्ते होते हैं और उन परिस्थितियों में भी प्रयोग में आ सकते हैं जहाँ कि अन्य उत्तापमापक प्रयोग में नहीं लाये जा सकते।

कीलक[2] प्रकाशीय उत्तापमापक

यह एक पीतल की नली होती है जिसमें एक छोटी दूरवीन लगी रहती है। दूरवीन का लेन्स तप्त पदार्थ के प्रतिविंव को नली के अन्दर स्थित गतिशील प्रिज्मपर फोकस करता है। नली में एक तरफ स्थित आक्षुरित[3] सिर द्वारा प्रिज़्म दृश्य क्षेत्र में ऊपर नीचे किया जा सकता है। ऊपर से नीचे तक काँच का प्रिज्म क्रम से गहरे से हलके रंग में अंशांकित[4] होता है। साधारण तप्त पदार्थ प्रिज़्म के हलके रंग के भाग से दृष्टिगोचर होता है परन्तु गहरे रंग के भाग से अदृश्य हो जाता है। इस प्रकार प्रिज्म में एक ऐसा विन्दु होता है जहाँ कि तप्त पदार्थ से उत्सर्जित[5] प्रकाश, दृष्टि से ठीक ओझल हो जाता है। जब गरम पदार्थ का ताप ज्ञात करना होता है, तो प्रिज्म के हलके रंगवाले भाग को दृष्टिक्षेत्र में व्यवस्थित करते हैं। आक्षुरित सिर को घुमाने से, एक विन्दु पर गरम पदार्थ दृष्टि से ओझल हो जाता है। इस आक्षुरित सिर को ऐसा अंशित[6] किया जाता है कि उससे गरम पदार्थ के ताप ज्ञात हो सकें।



[चित्र १५—कीलक उत्तापमापक का काट]

इस प्रकार का उत्तापमापक वहुत ही सस्ता होता है और शीघ्र विगड़ता भी नहीं है। यह ताप को काफी सही मापता है और कोई भी श्रमिक इसका प्रयोग कर सकता है।

1. Candle power 2. Wedge स्फान, पच्चर 3. Milled 4. Graduated 5. Emitted 6. Calibrated

दसवाँ अध्याय

ऊष्मसह पदार्थ

ऊष्मसह पदार्थ काँचद्रावण भट्ठियों, नालियों, पात्रों इत्यादि के निर्माण या काँच-निर्माण के औज़ारों के रूप में प्रयोग में आते हैं। ये तीव्र ऊष्मा होते हुए भी काँच, काँच-निर्माण के पदार्थों, धूलि एवं गैसों की रासायनिक एवं संक्षारण क्रिया का प्रतिरोध करते हैं। ये अचानक ताप-परिवर्तन, अत्यधिक दवाव एवं तनाव को सहन कर सकते हैं।

द्रव्यों, रासायनिक स्थितियों और विशिष्ट ताप सहन करने की क्षमता पर ही विशिष्ट ऊष्मसह पदार्थ का चुनाव निर्भर करता है। काँच उद्योग में कई प्रकार के ऊष्मसहों का प्रयोग किया जाता है। क्योंकि द्रुत काँच में सिलिका एवं अल्यूमिना भी घुल जाते हैं, अतः पात्र या कुण्ड-भट्ठी[1] के लिए ऊष्मसहों का प्रश्न अत्यन्त जटिल होता है।

ऊष्मसह पदार्थों का वर्गीकरण इस तरह किया जाता है—

(१) उदासीन ऊष्मसह,

(२) भास्मिक ऊष्मसह,

(३) अम्लीय ऊष्मसह।

(१) उदासीन ऊष्मसह

(क) लोहा एवं इस्पात—इनका प्रयोग साँचों, धमनाडों (ब्लो पाइप्स) और काटने एवं आकार देनेवाले औजारों के लिए होता है।

(ख) ग्रेफाइट—यह कभी कभी पात्र-निर्माण और लेपी साँचों के लिए लेपी के प्रयोग में आता है।

(ग) क्रोमाइट या क्रोम लोह अयस्क (Cr_2O_3 FeO)—इसकी ईंटें, चूना और केओलिन को मिलाकर बनायी जाती हैं। यह अत्यन्त ऊष्मसह है और इस पर धातुमल[2] या सिलिका का कोई प्रभाव नहीं

1. A pot or a tank furnace 2. Slag

पड़ता। इसका प्रयोग काँच-भट्ठियों में नहीं किया जाता। शुद्ध क्रोमाइट का द्रवणांक २१८०° सें० है।

(घ) **कार्वोरण्डम या सिलिकन कार्बाइड (SiC)**—यह उच्च ताप पर विच्छेदित होनेवाला, अत्यन्त कठोर, उत्तम ऊष्माचालक, निम्न प्रसार, गुणांकीय, उच्च ताप पर उत्तम यांत्रिक शक्तिवाला और स्पर्शित गैस तथा ज्वालाओं का प्रतिरोधक है। काँच के द्रवणांक पर द्रुत सोडियम कार्वोनेट, द्रुत क्षारीय सलफेटों, द्रुत सोहागा तथा चूना और मैगनीशिया की इस पर प्रतिक्रिया होती है, अतः काँच द्रवण में द्रुत काँच के स्पर्श के लिए इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता। काँच भट्ठियों में कुछ पुनराप्त्र[1] नलियाँ और पुनर्जनित्र पट्टियाँ कार्वोरण्डम से वनायी जाती हैं। इससे वनी ईंटें अचानक ताप-परिवर्तनों से नष्ट नहीं होतीं। अवगुंठी[2] भट्ठियों एवं सर्व प्रकार की भट्ठियों के लिए जो परोक्ष रूप से तापित की जाती हैं, कार्वोरण्डम ऊष्मसह अति श्रेष्ठ है।

विद्युत भट्ठियों में 'दीप्त छड़ें[3]' सिलिकन कार्वाइड से, जिसमें मिट्टी का बंध होता है, निर्माण की जाती है।

(ङ) **जिरकोनिया (ZrO_2)**—यह उत्तम श्रेणी का ऊष्मसह है। यह सुघट्यता[4] रहित है। एक प्रतिशत स्टार्च और कुछ मात्रा मैगनीशिया या अग्नि-मिट्टी मिश्रण कर शिलाएँ (व्लॉक) वनायी जाती हैं। २०००° सें० ताप पर प्रयोग करने के लिए १ प्रतिशत अल्यूमिना मिलाना चाहिए। अग्नि-मिट्टी मिलाने से इसकी ऊष्मसहता कम हो जाती है और तव इसका १७००° सें० से निम्न ताप पर ही प्रयोग किया जा सकता है। प्राकृतिक ज़िरकोनिया का द्रवणांक प्रायः २५६०° सें० है। अशुद्धि के रूप में सिलिका की उपस्थिति हानिकारक नहीं है, क्योंकि ३३ प्रतिशत तक सिलिका मिलाने से इसकी द्रावकता दूर हो जाती है और उत्पाद उच्च तापों पर उतना ही ऊष्मसह हो जाता है जितना कि शुद्ध ज़िरकोनिया होता है। इसके प्रसार-गुणांक की दर अति निम्न है। इसकी वनी घरियाएँ[5] रक्तोष्ण अवस्था में, जल में डाली जा सकती हैं और उन्हें

1. Recuperative tubes 2. Muffle furnaces 3. Glow bars
4. Plasticity 5. Crucibles

कोई हानि नहीं पहुँचती। इसकी ऊष्मचालकता भी अति निम्न है। यह अम्लों, द्रुत क्षारों, द्रुत क्वार्ट्ज या द्रुत काँच का अति प्रतिरोधक है। परन्तु यह काँच में घुल जाता है। उच्च तापों पर नाइट्रोजन और कार्बन के संयोजन से यह क्रमशः नाइट्राइड और कार्बाइट बनाता है। कार्बाइड यद्यपि अति कठोर और ऊष्मसह होता है, परन्तु ज़िरकोनिया जैसे मूल्यवान् गुण[३] इसमें नहीं होते। ज़िरकोनिया को पीसकर उसमें जलपिष्ट अति सूक्ष्म ज़िरकोनिया, चूना या जल काँच के बन्ध का प्रयोग कर, ईंटें बनायी जाती हैं। यदि बन्ध पदार्थ के रूप में अग्नि-मिट्टी का प्रयोग किया जाय तो ईंटें १६५०° सें० तक अच्छी तरह ताप सहन कर लेंगी। अच्छा तो यह है कि किसी पदार्थ को जितना ताप सहन करना है उससे अधिक ताप पर वह पदार्थ पकाया जाय।

ज़िरकोनिया का प्रयोग विद्युत बल्ब के भीतरी उत्ताप दीप्त तारों और प्रयोगशालाओं के पात्रों के लिए भी होता है। द्रुत सिलिका में, इसकी कुछ मात्रा का योग करने से विकाचरण[१] रोका जा सकता है।

(च) एसबेसटस ($CaO, 3Mg(Fe)O, 4SiO_2$)—यह चादर या धागों के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। यह ऊष्मा का निम्न चालक है। अग्नि-मिट्टी मिलाकर इसकी ईंटें बनायी जाती हैं। ईंटें हलकी और सरन्ध्र[२] होती हैं तथा उन स्थानों के लिए उपयुक्त हैं जहाँ उच्च ताप तो सहन करना आवश्यक है, परन्तु धातुमलों या अपघर्षण[३] का प्रतिरोध नहीं है।

अग्नि-मिट्टी, मैगनीशिया, ग्रेफाइट और जलकाँच मिलाकर एसबेसटस की घरियाँ बनायी जाती हैं।

(२) भास्मिक ऊष्मसह

चूना, लोह अयस्क, डोलोमाइट और मैगनेसाइट भास्मिक ऊष्मसह हैं, परन्तु काँच-निर्माण में इनका बहुत कम उपयोग होता है।

अल्यूमिना—शुद्ध अल्यूमिना अत्यधिक ऊष्मसह है, परन्तु इसमें सुघट्यता नहीं है। ऊष्मसहों के निर्माण में बाक्साइट ($Al_2O_3, 2H_2O$) जो कि अल्यूमिना का एक साधारण रूप है, प्रयोग में आता है।

1. Devitrification 2. Porous 3. Abrasion

बाक्साइट को धोने और तापन करने के पश्चात् इसमें एक तिहाई से छठा भाग अग्निमिट्टी मिलाकर कुछ जल का योग भी किया जाता है। अपघर्षण से प्रतिरोध के लिए, बाक्साइट की ईंटें श्रेष्ठ ईंटों में गिनी जाती हैं। इसकी यांत्रिक शक्ति अति उच्च है, परन्तु यह सिकुड़ता भी बहुत अधिक है। ऊँचे ताप पर ईंटों का दाहन करने से सिकुड़न की कठिनाई कम की जा सकती है। अग्निमिट्टी की ऊष्मसहता बढ़ाने के लिए, अग्निमिट्टी में बाक्साइट का योग किया जाता है।

(३) अम्लीय ऊष्मसह

अम्लीय ऊष्मसहों में या तो अकेली सिलिका होती है या वह उच्च अनुपात में रहती है।

सिलिका के अपर रूप

सिलिका के तीन मुख्य रूपान्तर क्वार्ट्ज, ट्रिडिमाइट और क्रिस्टोबेलाइट हैं। इनमें से प्रत्येक, दो विभिन्न दशाओं में पाया जाता है जिन्हें α और β रूप में व्यक्त किया जाता है। साधारण तापों पर α रूप होता है और जैसे-जैसे ताप बढ़ता है, यह β रूप में परिवर्तित हो जाता है। α से β में परिवर्तन प्रतिवर्त्य[1] है और शीघ्र गति से होता है। एक केलासीय रूप से दूसरे में परिवर्तन विशेषकर अपवर्तन[2] ताप के निकट, बड़ी मन्दगति से होता है। अपवर्तन ताप इस प्रकार है—

α क्वार्ट्ज	$\rightarrow$	β क्वार्ट्ज	५७५° सें० पर,
β क्वार्ट्ज	$\rightarrow$	α क्वार्ट्ज	५७० सें० पर,
क्वार्ट्ज	$\rightleftarrows$	ट्रिडिमाइट	८७०° सें० ± १०° सें० पर,
α ट्रिडिमाइट	$\rightleftarrows$	β_1 ट्रिडिमाइट	११७° सें० पर,
β_1 ट्रिडिमाइट	$\rightleftarrows$	β_2 ट्रिडिमाइट	१६३° सें० पर,
ट्रिडिमाइट	$\rightleftarrows$	क्रिसटोबेलाइट	१४७०° सें० ± १०° सें० पर,
α क्रिसटोबेलाइट	$\rightarrow$	β क्रिसटोबेलाइट	२७४.६ सें० से २१९.७° सें० तक,
β क्रिसटोबेलाइट	$\rightarrow$	α क्रिसटोबेलाइट	२४०.५ सें० से १९८.१ सें० तक।

1. Reversible 2. Inversion temperature

ठंडा करने पर अपवर्तन तुरन्त नहीं होते। जब क्वार्ट्ज़ को बिना किसी द्रावक के उच्च तापों तक गरम किया जाता है तो वह ट्रिडिमाइट में परिवर्तित न होकर क्रिसटोबेलाइट में परिवर्तित हो जाता है, परन्तु यह ताप १४७०° सें० से ऊपर न होना चाहिए। उच्च तापों तक गरम की गयी कुछ ईंटों में ट्रिडिमाइट की उपस्थिति पायी गयी है। इसका कारण यह हो सकता है कि तापन-अवधि के अधिक भाग में ताप अपवर्तनांक से काफी निम्न रहा हो। जब सिलिका में कुछ द्रावक होता है तब प्रायः १२५०° सें० पर क्वार्ट्ज़ क्रिसटोबेलाइट में परिवर्तित हो जाता है और तत्पश्चात् क्रिसटोबेलाइट ट्रिडिमाइट में अपवर्तित होता है। कितने ही परीक्षणों में ज्ञात हुआ है कि अपवर्तन का प्रथम उत्पाद क्रिसटोबेलाइट होता है। कितने ही निस्तापनों[1] में अन्तिम अपवर्तन उत्पाद ट्रिडिमाइट होता है। बालू क्वार्ट्ज़ाइट, गैनिस्टर, अग्नि-पत्थर और अग्नि-मिट्टियाँ ही अति सिलिका युक्त प्रयोग में आनेवाले ऊष्मसह पदार्थ हैं।

बालू

इसमें विशेषकर सिलिका ही होती है तथा अन्य अशुद्धियाँ, जैसे लोहा, चूना और अल्यूमिना की उपस्थिति ऊष्मसहता को कम करती है।

सिलिका चट्टानें

सिलिका चट्टानों की संरचना[2] में विशेषकर क्वार्ट्ज, या क्वार्ट्जाइट होता है और उसमें सिलिका की मात्रा ९९.६ प्रतिशत तक हो सकती है। क्वार्ट्ज सुघटयता-रहित होता है, अतः मिट्टी में यह तनुकारक[3] का काम करता है। उत्तम कोटि की सिलिका की ईंटों के लिए प्रयोग में आनेवाले क्वार्ट्ज़ाइट के निम्न गुण होने चाहिए—

(१) अशुद्धियाँ[4] अति सूक्ष्म होनी चाहिए।

(२) सूक्ष्मदर्शी से परीक्षण करने पर इसमें भास्मिक सीमेन्ट की उपस्थिति मिलनी चाहिए।

(३) प्रथम निस्तापन में, उच्चतम प्रस्तर और अल्पतम विशिष्ट गुरुत्व १४५०° सें० पर पहुँच जाना चाहिए।

(४) कोमलांक (मृदुकरणांक) ३३ नम्बर के कोन[5] (शंकु) (१७३०° सें०) से कम नहीं होना चाहिए।

(५) इसमें ९६ से ९८ प्रतिशत सिलिका होनी चाहिए।

1. Burning 2. Composition 3. Diluent 4. Impurities अपद्रव्य 5. Cone

गैनिस्टर—यह मृन्मय बालू पत्थर है और इसमें १० से १५ प्रतिशत मिट्टी होती है।

ईंटें बनाने के लिए इसको सिर्फ पीसकर जल में मिश्रित कर दिया जाता है, क्योंकि इसमें उपस्थित मिट्टी आवश्यक सुघट्यता प्रदान करती है। बड़ी ईंटों के निर्माण के लिए इसमें कुछ चूना एवं अग्निमिट्टी मिलायी जाती है।

काँच कुण्ड-भट्ठियों की दीवालों एवं फर्श के लिए ८० से ९० प्रतिशत सिलिका-युक्त अग्नि पत्थर का प्रयोग किया जाता है।

सिलिका-ईंटों का निर्माण

सिलिका-ईंटें किसी भी प्रकार के क्वार्ट्ज पत्थर से बनायी जा सकती हैं। परन्तु इसके लिए बालू का प्रयोग नहीं किया जाता, क्योंकि बालू उन्हें अति सरन्ध्र बना देती है और निम्न शक्ति उत्पन्न करती है।

बन्धन पदार्थ[1] के लिए साधारणतः चूने का घोल[2] प्रयोग में लाया जाता है। यह ईंट के दो प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। अल्यूमिना की उपस्थिति हानिकारक है क्योंकि यह ईंटों की ऊष्मसहता को कम करता है। इसकी मात्रा ईंट में १.५ प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। लोह आक्साइड इतना हानिकारक नहीं है क्योंकि यह न तो सिलिका के साथ संयुक्त होता है और न उच्च तापों पर ठोस घोल ही बनाता है। सिलिका की ईंटों के मिश्रण में लोह आक्साइड ५ प्रतिशत तक प्रयुक्त किया जा सकता है। इसकी इतनी मात्रा से ऊष्मसहता कम नहीं होती।

निर्माण-विधि—ऊपर और नीचे खुले हुए लोहे के साँचों में ईंटें, साधारणतः हाथ से ढालकर बनायी जाती हैं। यंत्र द्वारा ईंटों के निर्माण में कुछ शुष्क पदार्थ प्रयोग में लाया जा सकता है और अधिक दाब उत्पन्न किया जा सकता है, अतः ऐसी ईंटों में अधिक दृढ़ता आ जाती है। हाथ से बनी ईंटों की अपेक्षा यंत्र की उत्तम ईंटें आकार, और धातुमलों के संक्षारण प्रतिरोध में अधिक अच्छी होती हैं। ईंटों को वायु में शीघ्रतापूर्वक सुखाया जाता है, तब वे भट्ठों में वर्गाकार ढेरों में रख दी जाती हैं। फिर ताप क्रमशः बढ़ाकर १५००° सें० कर दिया जाता है और चार घंटे तक यही ताप रखा जाता है।

1. Bonding material 2. Slurry

सिलिका ईंटों के गुण—

सिलिका के अपवर्तनों में[1], आयतन के परिवर्तन भी होते हैं। क्वार्ट्ज़ के क्रिसटोवेलाइट में पूर्ण परिवर्तन से आयतन में १३.६ प्रतिशत की वृद्धि होती है और क्वार्ट्ज़ से ट्रिडिमाइट में १६.८ प्रतिशत की। किंतु सिलिका-ईंटों का स्थायी प्रसार आयतन का १० या ११ प्रतिशत होता है।

भट्ठी में होनेवाला सिलिका ईंटों का पूर्ण प्रसार तीन रूपों में विभाजित किया जा सकता है—

(१) साधारण ऊष्मीय अथवा अस्थायी प्रसार, जो कि प्रतिवर्त्य[2] होता है। यह दो कारणों—(अ) साधारण ऊष्मीय प्रसार और (आ) प्रतिवर्त्य ($\alpha-\beta$) क्वार्ट्ज़ एवं ($\alpha-\beta$) क्रिसटोवेलाइट के अपवर्तनों के आयतन परिवर्तन से होता है। यह परिवर्तन रोका नहीं जा सकता।

(२) स्थायी प्रसार, जो कि मौलिक क्वार्ट्ज़ के क्रिसटोवेलाइट या ट्रिडिमाइट के अपवर्तन के कारण होता है। यदि पकाते समय सम्पूर्ण सिलिका ट्रिडिमाइट में परिवर्तित हो जाय, तो ईंट का स्थायी प्रसार पूर्ण हो जाता है। जिस ईंट में समस्त ट्रिडिमाइट होता है उसके दवाव की शक्ति और तापीय प्रतिरोध में उन्नति हो जाती है।

(३) आयतन में वृद्धि का एक कारण यह भी है कि क्वार्ट्ज़ से परिवर्तित क्रिसटोवेलाइट या ट्रिडिमाइट के केलास न्यूनतम आयतन स्थान नहीं लेते; परन्तु इस प्रकार फैल जाते हैं कि उनके लिए अधिक स्थान की आवश्यकता होती है।

यतः सिलिका ईंटें गरम करने पर प्रसारित होती हैं और ठंडा करने पर संकुचित होती हैं, अतः भट्ठी के संयोजक दण्डों (Tie-rods) को गरम करते समय ढीला कर देना चाहिए और ठंडा करते समय कस देना चाहिए, इससे (Tie-rods) का तनाव क्रमशः कम और अधिक हो जायगा। भट्ठी की छत और दीवालें यदि सिलिका की होती हैं तो भट्ठी के गरम होते समय बहुत कस जाती हैं, इसलिए गैसों की ज्वाला पूर्णरूप से भीतर ही रह जाती है।

सिलिका की ईंटों की सरन्ध्रता लगभग ४ से २० प्रतिशत तक होती है। विशिष्ट ऊष्मा लगभग .२६ होती है। इसकी तापीय चालकता अग्नि-मिट्टी की ईंटों से कम होती है। परन्तु उन ईंटों की जो ऊँचे ताप पर पकायी जाती हैं, तापीय चालकता अधिक

1. Inversions 2. Reversible

होती है। अग्नि-मिट्टी की ईंटों की अपेक्षा सिलिका की ईंटें अधिक ऊष्माभार सहन कर सकती हैं। उच्च ताप पर गरम करने पर भी सिलिकायुक्त ईंटों में यांत्रिक प्रतिरोध ज्यों का त्यों बना रहता है। इस कारण काफी चौड़ाई की दीर्घवृत्ताकार[1] मेहरावें बनायी जा सकती हैं। अपघर्षण[2] और मलधातु क्रिया का प्रतिरोध निम्न होने के कारण ये भट्ठियों के ऊपरी भागों और छतों के प्रयोग में आती हैं। क्षारीय धूल और भापें, काँचकुण्ड भट्ठियों की सिलिका की छत पर "भट्ठी बिन्दु" (furnace drops) बनाती हैं। ये काँच में घुलनशील होती हैं और उसमें पत्थर का रूप नहीं ग्रहण करतीं। अग्नि-मिट्टी की ईंटों से टपकनेवाली बूँदों द्वारा पत्थर शीघ्र बन जाते हैं।

निर्देशन—सिलिका ईंटों से निम्नोक्त आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए।

(१) ईंटों में न्यूनतम ९४ प्रतिशत सिलिका (SiO_2) होनी चाहिए और चूना २ प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए।

(२) परीक्षण खण्ड शंकु ३२ (१७१०° सें०) से अधिक गलनीय[3] नहीं होना चाहिए।

(३) परीक्षण खण्ड शंकु १२ के समान ताप तक दो घंटा गरम किया जाय तो ठंडा होने पर उसमें .७५ प्रतिशत से अधिक रेखीय प्रसार नहीं आना चाहिए।

(४) ईंटों को एक समान पकाना चाहिए और उनमें सम गठन (बनावट[4]) होना चाहिए जिसमें छिद्र या कोई और खराबियाँ न हों।

(५) सब सतहें सयुक्तिक रूप से सही होनी चाहिए और विशिष्ट परिमाणों से दो प्रतिशत से अधिक अन्तर नहीं होना चाहिए।

सिलिका सीमेन्ट

इसमें उच्च गुणवाला सिलिका पत्थर और अच्छे गुण की अग्नि-मिट्टी होनी चाहिए जो कि ५ या ६ प्रतिशत से अधिक न हो। निर्माताओं के अनुसार इसमें न्यूनतम ९२ प्रतिशत सिलिका होनी चाहिए और ऊष्मसहता की सभी परीक्षाओं में इसको सिलिका-ईंटों के समकक्ष होना चाहिए। इसको महीन पीसना चाहिए, जिससे यह ईंटों के जोड़ने के उपयुक्त हो जाय।

अग्नि-मिट्टियाँ

अग्नि-मिट्टी कोई समांग रासायनिक यौगिक नहीं है, परन्तु इसको साधारणतः निम्नलिखित सूत्र का मिश्रण मानते हैं—

1. Elliptical 2. Abrasion 3. Fusible 4. Texture

(१) वास्तविक मिट्टी, Al_2O_3, $2SiO_2$, $2H_2O$,
(२) क्वार्ट्ज़, SiO_2 (वालू इत्यादि),
(३) अविच्छेदित फेल्सपार या माइका (अभ्रक)।

वहुत-सी अग्नि मिट्टियाँ कोयले के साथ पायी जाती हैं।

मिट्टियों का वर्गीकरण

मिट्टियों के वर्गीकरण की कोई सन्तोपजनक विधि नहीं है। तथापि वर्गीकरण मिट्टियों के मूल स्रोत, प्रयोग, रचना और गुणों के अनुसार किया जा सकता है।

आरटन का वर्गीकरण निम्न प्रकार का है—

(अ) उच्च क्रम की मिट्टियाँ—(इनमें ५० प्रतिशत या अधिक "वास्तविक मिट्टी" और सिलिका होती है)।

(१) केओलिन,
(२) चीनी मिट्टी,
(३) पोर्सलीन मिट्टी,
(४) अग्निमिट्टी (तीव्र),
(५) अग्निमिट्टी (सुघट्य),
(६) कुम्हार की मिट्टी।

(आ) निम्न क्रम की मिट्टियाँ—(इनमें १० से ७० प्रतिशत "वास्तविक मिट्टी" और विभिन्न मात्रा में कुछ द्रावक होता है)।

(१) मृण्मय मिट्टी,
(२) लोहजन्य मिट्टी,
(३) सिलिकामय मिट्टी,
(४) टाईल की मिट्टी,
(५) ईंट की मिट्टी,
(६) चूना युक्त मिट्टी।

मिट्टियों की रासायनिक रचना

मिट्टियों का सदा रासायनिक विश्लेपण किया जाता है और रचना को आक्साइडों तथा "प्रज्वलन हानि" में व्यक्त किया जाता है। मिट्टियों के अंत्य विश्लेपण[1] से उपस्थित अशुद्धियों (अपद्रव्यों)[2] की मात्रा और प्रकृति का देशन मिलता है। काँच के पात्र या भट्ठी के लिए लोहा अति हानिकारक अपद्रव्यों में से एक है। अन्य अपद्रव्य, जैसे चूना, मैगनीशिया, सोडा और पोटाश, मिट्टी में द्रावक[3] का कार्य करते हैं, अतः ये ऊष्मसहता[4] को कम कर देते हैं।

1. Ultimate Analysis 2. Impurities 3. Flux 4. Refractoriness

मिट्टी और उसकी ऊष्मसहता

मिट्टी की रासायनिक रचना और ऊष्मसहता के सम्बन्ध को व्यक्त करने के लिए कुछ प्रयत्न किये गये हैं।

सेगर ने निम्न सूत्र प्रस्तावित किया है—

$$ऊ = \frac{अ \times (अ + स)}{स}$$

ऊ=मिट्टी का ऊष्मसह गुणांक।

अ=अल्यूमिना और इकाई द्रावकों का अनुपात।

स=सिलिका और इकाई द्रावकों का अनुपात।

और बातों, जैसे कि समांगता, सरंध्रता, कण की सूक्ष्मता और वातावरण की स्थितियों से भी मिट्टी की ऊष्मसहता पर बहुत प्रभाव पड़ता है।

सेगर शंकु—आरम्भ में मिट्टियों और द्रावकों के मिश्रण इस प्रकार बनाये गये थे कि उनके द्रवांक[1] २०° सें० या ३०° सें० के क्रम से थे। ये साँचों में छोटे-छोटे चतुरनीक[2] आकार के बनाये जाते हैं। इनका आविष्कार सेगर ने किया। इनकी मौलिक श्रेणी में रूपान्तर आ गया है और अब ६४ शंकु हैं जिनके ५९०° सें० से २०००° सें० तक विभिन्न गलनांक[3] हैं। अल्यूमिना का गलनांक प्रायः २०००° सें० होता है। सेगर शंकुओं के निर्माण में मुख्य आक्साइड SiO_2 और Al_2O_3 हैं और मुख्य द्रावक Na_2O, K_2O, PbO, CaO, B_2O_3 और Fe_2O_3 हैं।

शंकु नम्बर	द्रवांक
०२२	५९०° सें०
०१५	८००° सें०
०१७	१०१०° सें०
१	११५०° सें०
११	१३५०° सें०
२१	१५५०° सें०
२७	१६७०° सें०
२८	१६९०° सें०
३६	१८५०° सें०
४२	लगभग २०००° सें०

1. Squatting points 2. Tetrahedrons 3. Fusion points

मिट्टियों का यांत्रिक विश्लेषण

मिट्टी के कणों का परिमाण प्रोद्धावन[1] द्वारा मापा जाता है। एक कम्पन यंत्र द्वारा मिट्टी को पानी में खूब हिलाया जाता है, जिससे वह छिन्न-भिन्न हो जाती है और फिर उस पर जलप्रवाह की क्रिया की जाती है। प्रवाह की गति में परिवर्तन कर विभिन्न परिमाणों के कण छाँट लिये जाते हैं। इस प्रकार बालू, सूक्ष्म बालू, धूलि बालू, सिल्ट और मिट्टी के कण पानी से छँट जाते हैं। जल के स्थिर होने पर ही मिट्टी नीचे बठती है। मिट्टी के प्राकृतिक गुणों पर उसके कणों के परिमाण का स्पष्ट प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ, सूक्ष्म अवस्था में क्वार्ट्ज द्रावक का कार्य कर सकता है, पर स्थूल कणों से यह सम्भव नहीं है।

मिट्टियों में अशुद्धियाँ और उनका प्रभाव

(१) सिलिका—क्वार्ट्ज के स्थूल कण मिट्टी को फटने से या अधिक संकोचन से रोक सकते हैं। सिलिका की अधिक मात्रावाली अग्नि-ईंट भट्ठी में सहज संक्षारित और चूर्ण हो जाती है। यह सुघट्यता तथा सुखाते और पकाते समय के संकोचन को कम करती है। यदि फेल्सपार, अभ्रक और अन्य सिलीकेट, अशुद्धियों के रूप में उपस्थित हों तो मिट्टी की ऊष्मसहता कम होती है। शुद्ध मिट्टी में यदि सिलिका मिला दी जाती है तो मिट्टी की ऊष्मसहता कम होती है, किन्तु यदि निम्न गलनांकवाली अग्नि-मिट्टी में मिश्रित की जाती है तो ऊष्मसहता बढ़ जा सकती है, पर साथ ही निम्न ताप पर पकाये हुए खण्डों में सुघट्यता, संकोचन-विकुंचन प्रवृत्ति, तनाव एवं दबाव शक्ति और सरन्ध्रता कम हो जाती हैं। इससे मिट्टी के सुखाने की दर, कठोर पकी मिट्टी की सरन्ध्रता, मिट्टी की अतिवेध्यता और ताप में शीघ्र परिवर्तनों के कारण होनेवाली टूट का प्रतिरोध बढ़ जाता है। परन्तु यदि क्वार्ट्ज सूक्ष्म अवस्था में होता है तब इन सबका प्रभाव विपरीत हो सकता है।

(२) अल्यूमिना—साधारणतः कच्ची मिट्टी में यह नहीं पाया जाता। मिट्टी में अल्यूमिना का योग करने से मिट्टी की ऊष्मसहता बढ़ जा सकती है, परन्तु यदि यह संयुक्त रूप में प्रयुक्त किया जाता है तो मिट्टी की सुघट्यता घटती है और साधारणतः ऊष्मसहता भी घट जाती है। अति अल्यूमिना युक्त मिट्टी श्यान होती है और कोमल होने पर शीघ्र बैठती नहीं है। साधारण तौर पर कहा जा सकता है कि केओलिन की

1. Eleutriation

रचना के अनुरूप सीमा तक, मिट्टी में जितना ही अधिक अल्यूमिना होता है उतनी ही अधिक मिट्टी अच्छी मानी जाती है; किन्तु उस अवस्था में जब कि उसमें यथेष्ट सुघट्यता और उपयुक्त गुण हों।

(३) लौह यौगिक—यह मिट्टियों में बहुधा रूपामाखी और सिडराइट के रूप में और कदाचित् लिमोनाइट, फेरस आक्साइड, फेरिक आक्साइड और मैगनेटाइट के रूप में पाये जाते हैं।

रूपामाखी हाथ से छाँटकर अलग की जा सकती है। पकाने के पश्चात् बचे हुए रूपामाखी के छोटे खण्ड छिद्र बना देते हैं और पात्रों में उनसे शहद के छत्ते-जैसे आकार बन जाते हैं। यदि मिट्टी को पात्र-निर्माण के प्रयोग में लाना हो तो रूपामाखी और सिडेराइट को पूर्णतः निकाल देना चाहिए क्योंकि ये लाल सीस को काँच-मिश्रण में अवकरण कर सीस धातु में परिवर्तित कर सकते हैं।

मिट्टी की ऊष्मसहता पर फेरिक आक्साइड का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। मिट्टी में फेरस आक्साइड कदाचित् ही पाया जाता है, परन्तु यदि मिट्टी अवकारक वातावरण में पकायी जाती है तो फेरस आक्साइड बन सकता है। फेरिक आक्साइड, लोह सिलीकेट का मलधातु बनाता है जो कि ११००° सें० से १२००° सें० पर शीघ्र द्रवित हो जाता है। सिलिकायुक्त काँच-मिश्रण में यह हरे वर्ण का सिलीकेट बनाता है।

यदि मिट्टी को ईंट निर्माण के उपयोग में लाया जाय तो उसे धीरे-धीरे पकाना चाहिए, जिससे कि सम्पूर्ण उपस्थित लोहा फेरिक आक्साइड में परिवर्तित हो जाय। मिट्टियों के पकाने पर, लोह यौगिक उनको हलके मक्खनवर्ण से प्रायः काले वर्ण तक को कर देते हैं। लोह यौगिक यदि ऊष्मसह मिट्टी में मिलाये जाते हैं तो मिट्टी का द्रवांक (गलनांक)[1] कम हो जाता है, परन्तु आक्सीकरण वातावरण में पकाने पर, संसक्ति[2] बढ़ जाती है, क्योंकि वे हलके द्रावकों का कार्य करते हैं। मिट्टी की सुघट्यता में कोई अन्तर नहीं आता। अच्छी अग्नि-मिट्टियों में लोह यौगिकों की मात्रा, यदि वे फेरिक आक्साइड में व्यक्त किये जायँ तो, १.५ से २.० प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए।

(४) कैलशियम यौगिक—चूना, चूना स्पार, चूना-पत्थर, कैलशियम कार्बोनेट और हरसौंठ अग्नि-मिट्टियों की ऊष्मसहता कम करते हैं।

1. Fusion point 2. Cohesion

(५) मैगनीशियम यौगिक भी कैलशियम यौगिकों के समान क्रियाशील होते हैं और ऊष्मसहता कम करने की प्रवृत्ति रखते हैं। चूने के समान, मैगनीशिया इतना शीघ्र विकाचरण उत्पन्न नहीं करता, परन्तु इससे कोमलता धीरे-धीरे आती है।

(६) क्षार-सोडा एवं पोटाश अधिकतर फेल्सपार और अभ्रक के रूप में पाये जाते हैं। ये मिट्टी की ऊष्मसहता कम करते हैं। ईंट में यदि थोड़ी ही मात्रा में क्षार उपस्थित हो तो ईंट की शक्ति कुछ बढ़ सकती है। क्षारों की मात्रा २ प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए।

(७) टाइटेनियम यौगिक—मिट्टी की ऊष्मसहता को रुटाइल, इलेमिनाइट और टाइटेनाइट कम करते हैं। मिट्टियों का टाइटेनिया काँच में घुल जाता है।

मिट्टियों में जल

मिट्टी अत्यन्त आर्द्रताग्राही है।[1] इसमें रहनेवाले जल के साधारणतः दो रूप हैं।

(अ) यांत्रिक संयोजक जल—मिट्टी को ११०° सें० पर तप्त करन से यह पूर्ण रूप से निकल जाता है। मिट्टी १ से १२ प्रतिशत तक संकुचित हो जाती है।

(आ) रासायनिक संयोजक जल—मिट्टी को ४००° सें० के ऊपर तप्त करने पर ही यह निकलता है। इस प्रकार के जल की मात्रा ३ से १२ प्रतिशत तक होती है।

मिट्टियों में कार्बनिक पदार्थ

अवसादीय[2] मिट्टियों में कार्बनिक पदार्थ, वास्तविक पौधा अंतक के रूप में जैसे कि पत्तियों, पेड़ों के तनों के रूप में रहता है। इसमें जीर्णक[3], कोयला या जतुक्य[4] कोयले के लक्षण भी पाये जा सकते हैं। यदि कार्बनीय पदार्थ मिट्टी से ६ प्रतिशत मात्रा में अधिक हैं तो पकाने में कठिनाई होती है। कुछ मिट्टियों में काला रंग कार्बनीय पदार्थ के कारण होता है। मिट्टियों का यह कार्बनीय पदार्थ हटाया नहीं जा सकता, जब तक कि ताप ९००° सें० तक न पहुँच जाय।

सुघट्यता

जल या वसीय[5] तेल मिलाने से, मिट्टियाँ सुघट्य हो जाती हैं। अधिक सुघट्यता-वाली मिट्टियाँ स्थूल (शक्तिशाली) कहलाती हैं और निम्न सुघट्यतावाली मिट्टियाँ

1. Hygroscopic 2. Sedimentary कल्कीय 3. Peat 4. Bituminous 5. Fatty

तनु (कोमल) कही जाती हैं। सुघट्यता का कारण अभी तक पूर्ण रूप से ज्ञात नहीं हुआ है। इसके लिए कई सिद्धान्त प्रचलित हैं।

मिट्टी की सुघट्यता उसके 'संयुक्त जल' के कारण हो सकती है। उत्तम सुघट्यता तब होती है जब कि कण आकारों के अनुसार इस प्रकार प्रसरित हों कि एक दूसरे के अति निकट हों और इस प्रकार उन कणों की अधिकतम सतहें खुली हों। मिट्टी में कलिलों की मात्रा की उपस्थिति भी उसकी सुघट्यता का कारण बतलायी जाती है। ऋतु-प्रभाव और समय से भी मिट्टी की सुघट्यता बढ़ती है, इसका कारण कार्बनीय अम्लों की उत्पत्ति बतलाया जाता है। अम्लीयता से सुघट्यता बढ़ती है और क्षारीयता प्रतिकूल प्रभाव डालती है। सुघट्यता तब भी बढ़ती है जब कि मिट्टी जल में भींगने से और कोहरे से छिन्न-भिन्न हो जाती है। मिट्टी को जल के साथ पीसकर, हलके अम्ल या कलिलमय पदार्थ का, जैसे सिलिका, अल्यूमिनियम हाइड्रेट इत्यादि का, बन्ध देकर भी मिट्टी की सुघट्यता बढ़ायी जा सकती है। मिट्टी में क्षारीय पदार्थ, जैसे चूना जल, सोडा या पोटाश, जल काँच या असुघट्य पदार्थ, जैसे बालू या पकी मिट्टी मिलाने से या ४००° सें० से अधिक तप्त करने से सुघट्यता घटती है।

मिट्टी की सुघट्यता का मापना कठिन होता है। मिट्टी की व्यावहारिक जाँच भींगी मिट्टी का "स्पर्श" है जब कि भींगी मिट्टी हाथ या पैर से दबायी जाती है। अति उत्तम कार्य-योग्य मिट्टी तब होती है जब कि वह दबाकर आकार बनाये जाने पर उँग-लियों में न्यूनतम चिपके। सुघट्यता मापने की विधियाँ दो हैं—(१) भींगी मिट्टी को बेलनाकार साँचे से दबाकर निकालना और टूटने के पूर्व, निकली हुई मिट्टी की लम्बाई या भार मापना, (२) भींगी मिट्टी के पिण्ड में एक सूई को स्थिर दाब से प्रवेश कराना। दोनों विधियों में आपत्तियाँ हैं। प्रथम विधि में कोई आश्वासन नहीं है कि मिट्टी की सुघट्यता अधिकतम बिन्दु पर पहुँच गयी है और दूसरी में यह मान लिया गया है। मिट्टी को सुघट्य स्थिति में लाने के लिए जो जल की मात्रा आवश्यक होती है उसी मात्रा के अनुपात में सुघट्यता होती है। काँच-कारखानों के ऊष्मसहों की मिट्टी पर्याप्त सुघट्य होनी चाहिए जिसमें कि जब उसमें निस्तापित मिट्टी मिलायी जाय तो उसको आकार में लाने के लिए कठिनाई न हो और वह शीघ्र सूख सके और संकोचन कम हो।

मिट्टी पर तापन का प्रभाव

शुष्क होते समय संचकित[1] मिट्टी का रंग सर्वदा हलका पड़ जाता है और आयतन संकुचित हो जाता है। जितने धीरे मिट्टी शुष्क की जाती है उतना ही अधिक संकोचन

1. Moulded

होता है। तापन का प्रथम परिणाम यह होता है कि मिट्टी की आर्द्रताग्राही[1] नमी दूर हो जाती है और कलिलमय सिलिसिक अम्ल का निर्जलन[2] होता है। प्रायः ५००° सें० पर निर्जलन-क्रिया ऊष्मा-शोषक[3] होती है। मिट्टी स्वतन्त्र सिलिका, अल्यूमिना और जल के रूप में विच्छेदित हो जाती है और आयतन में स्पष्ट वृद्धि होती है। मिट्टी को ६००° सें० से ९००° सें० तक पकाने के समय कार्बनीय पदार्थ दूर हो जाता है और लोह यौगिक फेरिक अवस्था में आक्सीकृत हो जाते हैं। पकी हुई मिट्टी में "काली गाँठें और काले धब्बे" बिना जले कार्बनीय पदार्थ का या फेरस अवस्था में लोहे का या दोनों की ही उपस्थिति का संकेत देते हैं। इस समय तापन की गति धीमी होनी चाहिए और वातावरण आक्सीकारक होना चाहिए। ९००° सें० के बाद मिट्टी काचरण के कारण सिकुड़ जाती है। केओलिन को १०००° सें० तक तापित करने पर ऊष्मा का आकस्मिक उद्विकासन[4] होता है जिसका कारण या तो स्वतन्त्र अल्यूमिना का पुरभाजन या अल्यूमिनियम सिलीकेट का Al_2O_3, SiO_2 और सिलिका में विच्छेदन होता है। जब मिट्टी १४००° सें० तक तापित की जाती है और द्रुत पदार्थ की मात्रा अधिक नहीं होती है तो सिलेमिनाइट या कियेनाइट (Al_2O_3, SiO_2) में परिवर्तन होता है। काँच द्वारा संक्षारण का प्रतिरोधक तत्त्व वास्तव में मुलाइट($3Al_2O_3$, $2SiO_2$) के रूप में अल्यूमिना ही है। अधिक समय तक तापन करने से अति अल्यूमिना युक्त ऊष्मसहों की प्रवृत्ति मुलाइट में परिवर्तित होने की होती है। १५००° सें० पर मिट्टी संपुंजित होकर पत्थर सदृश और १६५०° सें० पर कोमल तथा १७००° सें० पर भूरे वर्ण का अति श्यान तरल द्रव्य बन जाती है।

जैसे-जैसे पकाने का ताप बढ़ता है मिट्टी का वाह्य आयतन संकुचित होता जाता है और जब सब छिद्र बन्द हो जाते हैं तब मिट्टी काँचीय हो जाती है। अग्नि-मिट्टियों और चीनी मिट्टी में तो बहुत कम काँचीयता आती है; परन्तु अधिक द्रवणवाली मिट्टियों में अभेद्य झाँवा बन जाता है। मिट्टी का निम्न ताप पर काचरण[5] करने पर, अन्तिम उत्पाद में अधिक यांत्रिक दृढ़ता होती है। मिट्टी के ऊष्मसहों में अल्यूमिनायुक्त पदार्थ, जैसे कि बाक्साइट और डायसपोर का मिश्रण करने से उनकी उन्नति होती है। मिट्टी के ऊष्मसहों में निस्तापित[6] सिलेमिनाइट, एन्डालुसाइट और कियेनाइट मिश्रित किये जाते हैं। इनका सूत्र Al_2O_3, SiO_2 है, परन्तु केलासीय संरचना भिन्न है।

1. Hygroscopic 2. Dehydration 3. Endothermic 4. Evolution 5. Vitrification 6. Calcined

तापीय अवकल विश्लेपण

आजकल मिट्टियां और सिलीकेट पदार्थों का तापीय अवकल विश्लेपण किया जा रहा है और खोज द्वारा यह पता लगाया जा रहा है कि पदार्थ के तपाये जाने पर विभिन्न तापों पर कौन-कौन से रासायनिक यौगिक संयोजित अथवा नियोजित होते हैं। पदार्थ का तापन करने पर, तापीय अवकल विश्लेपण उपकरण द्वारा अवशोपित अथवा उद्विकासित ऊष्मा को मापा जा सकता है। इस प्रकार किसी भी पदार्थ का, जिसका तापन होने पर स्वल्प परिवर्तन होता है, अध्ययन किया जा सकता है, क्योंकि उन तापों से जिन पर परिवर्तन होता है और परिवर्तनों के परिमाण से, उन तापों पर पदार्थ की गुणात्मक रचना का निर्देशन मिल जाता है। पदार्थ को प्रामाणिक स्थिर दर से तापित किया जाता है और उसके ताप की तुलना एक अक्रिय[1] पदार्थ से अवकल ताप युग्म द्वारा की जाती है। तापीय अवकल विश्लेपण के उपकरण में एक पदार्थ-अवलम्बन, ताप-वृद्धि की दर नियंत्रण करने के लिए एक वेरियक[2] और स्वचालित अंकन यंत्र-युक्त एक ताप-देशक होता है।

मिट्टी के भौतिक गुण

शुष्क करने और पकाने पर संकोचन—मिट्टी को प्रायः ७०° सें० पर शुष्क कर, २८ नम्बर की चलनी से छानने योग्य पीसकर इतना जल मिलाते हैं कि उसमें कार्य के योग्य श्यानता आ जाय। फिर इसको खूब फेंटकर साधारणतः पीतल के साँचें में $४\frac{१}{२}'' \times १\frac{५}{८}'' \times \frac{३}{१६}''$ आकार की पट्टियाँ ढालते हैं। इन पट्टियों पर ४ इंच की दूरी पर अनुलम्ब रेखाएँ अंकित की जाती हैं, ये पट्टियाँ वायु में साधारण ताप पर और फिर ११०° सें० ताप पर शुष्क की जाती हैं ? जब तक कि इनकी लम्बाई स्थायी न हो जाय। तब रेखीय शुष्क संकोचन मापा जाता है जो कि ३ से ८ प्रतिशत होता है। फिर पट्टियाँ आवश्यक ताप पर भट्ठी में पकायी जाती हैं, जब तक कि उनके ठंडे होने पर संकोचन स्थायी न हो जाय। पकाने की क्रिया आक्सीकारक वातावरण में होनी चाहिए।

कुछ मिट्टियों के पकाने पर जब तक कि ताप ७५०° सें० नहीं हो जाता तब तक संकोचन प्रायः नगण्य होता है और कुछ हालतों में इस ताप के निकट वास्तविक प्रसार होता है। संकोचन १५००° सें० तक साधारणतः ८ से १५ प्रतिशत होता है। अच्छी

1. Inert जड़ 2. Variac

मिट्टी में आरम्भ में संकोचन कम होना चाहिए और ७५०° सें० या ९००° सें० तक धीरे-धीरे नियमित वृद्धि होनी चाहिए तथा ९००° सें० ताप के ऊपर जितना संभव हो उतना कम संकोचन और नियमित परिवर्तन होना चाहिए। मिट्टियों का मिश्रण करने या सूक्ष्म कणों का क्वार्ट्‌ज़्, निस्तापित मिट्टी या अन्य असुघट्य पदार्थ मिलाने से पकाने पर संकोचन घटाया जा सकता है।

सरन्ध्रता

मिट्टी की सरन्ध्रता कणों के परिमाण और मिट्टी के वालूपन पर निर्भर है। इस गुण से मिट्टी की शक्ति का तथा टक्कर, रगड़, और द्रवण के प्रतिरोध, तापीय परिवर्तन की विकृतियों का, गैसों एवं तरल द्रव्यों की रासायनिक क्रियाओं का, उसकी पारगम्यता[1] और तापीय चालकता का गहरा सम्बन्ध है। यह सब ऊपर लिखित पट्टियों पर ज्ञात किया जा सकता है। सबसे पहले शुष्क अवस्था में पट्टियों का भार लिया जाता है और फिर ४८ घंटे तक शून्यक अवस्था में जल में भिगोया जाता है, फिर उन्हें जल में आलम्बित कर तौल लिया जाता है। अन्त में जल पोंछ कर उन्हें वायु में तौला जाता है।

$$\text{सरन्ध्रता, स} = \frac{१०० (\text{ग}-\text{क})}{\text{क}-\text{ख}}$$

स = सरन्ध्रता,
क = वायु में (शुष्क) पट्टिका का भार,
ख = जल में भार (भींगने के पश्चात्),
ग = वायु में भार (भींगने के पश्चात्)।

यह विधि सिर्फ उन मिट्टियों के लिए उचित है जो ६००° सें° या अधिक ताप पर पकायी जाती हैं। जिनका संकोचन वर्णित किया गया है उन मिट्टियों की सरन्ध्रता निम्न थी—

६००° सें० पर	१८.२ से ३४ प्रतिशत तक
१४००° सें० पर	५.२ से ३१ ,, ,,
१५००° सें० पर	१.४ से ३० ,, ,,

साधारणतः सबसे उपयुक्त मिट्टी वह है जिसका सरन्ध्रता-परास अधिक हो।

1. Permeability

तनाव-शक्ति

मापने पर, मिट्टी में अत्यधिक तनाव शक्ति तव पायी जाती है जव कि उसकी वनावट समांग[1] होती है और वह वायु के वुलवुलों, परतों और दरारों से रहित होती है। मिट्टी की तनाव-शक्ति विशिष्ट यन्त्र द्वारा मापी जा सकती है। कच्ची मिट्टियों में तनाव-शक्ति का मान १० पाउंड से ४०० पाउंड प्रतिवर्ग इंच होता है।

दवाव-शक्ति

दवाने के संवंध में ऊष्मसहों का प्रतिरोध, ठंडी अवस्था में इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि गरम अवस्था में होता है। दवाव शक्ति के साथ मिट्टी की वनावट[2] का अधिक सम्वन्ध है। सहज में द्रवण होनेवाले अवयवों की उपस्थिति से ऊष्मसहों की दवाव-शक्ति ठंडी अवस्था में तो वढ़ती है, परन्तु गरम अवस्था में घटती है। पकी मिट्टी यदि अधिक मात्रा में उपस्थित हो तो उसकी दवाव-शक्ति घटती है।

ऊष्मसहता

मिट्टी की स्वाभाविक ऊष्मसहता ज्ञात करने के लिए उसका डेढ़ इंच ऊँचा शंकु वनाया जाता है और इसको सेगर शंकुओं के सहित एक ऊष्मसह विम्व पर स्थापित कर, भट्ठी में तापित करते हैं। मिट्टी का शंकु जिस ताप पर झुक या वैठ जाय या द्रवण के लक्षण दिखाये, वही उसका कोमलांक[3] होता है। इसको उस सेगर शंकु से ज्ञात किया जाता है जो अन्त में झुकता है। मिट्टी में द्रावकों[4] की उपस्थिति से ऊष्मसहता घटती है।

ऊष्मसहता और दवाव

भट्ठी में ऊष्मसह पदार्थों पर दवाव होने के कारण ऊष्मसहता वहुत कम हो जाती है और जैसे-जैसे मिट्टी पर दवाव वढ़ता है, वैसे-वैसे वह कम होती जाती है।

दवाव पर ऊष्मसहता जाँचने के लिए एक आयताकार पटिया, जिसकी चार वर्ग इंच सतह पर भार रखा जा सके, एक ऊष्मसह आलम्वन के केन्द्र में, भट्ठी की भीतरी नली में रखी जाती है। उसके चतुर्दिक् सेगर शंकु रखे जाते हैं। भट्ठी के वाहर से यांत्रिक साधन द्वारा परीक्षण पटिया पर स्थिर दवाव दिया जाता है। तापन करने पर परीक्षण-पटिया वैठ जाती है और पूर्व विधि के अनुसार शंकुओं द्वारा ताप अनुमानित

1. Homogeneous 2. Texture 3. Softening point मृदुकरणांक 4. Fluxes

किया जा सकता है। प्रकारान्तर से किसी विशिष्ट ताप पर, पदार्थ को उस ताप तक पकाकर, बिठाने या दवाव से तोड़ने के लिए भार ज्ञात किया जा सकता है।

प्रयोग के पूर्व, जितने ही अधिक ताप पर अग्नि-मिट्टी की ईंट पकायी जाती है उतनी ही अधिक ऊष्मसहता होती है। अति पकाने पर यह नियम लागू नहीं होता। अग्नि-मिट्टी की ऊष्मसहता, भार की वृद्धि करने पर वढ़ जाती है। साधारणतः मिट्टी में जितना ही अधिक अल्यूमिना होता है उतना ही अधिक भार और जितनी ही अधिक सिलिका हो उतना ही कम भार सहन किया जा सकता है। मिट्टी में सूक्ष्म निस्तापित मिट्टी जितने ही कम अनुपात में होती है उतनी ही अधिक दवाव ऊष्म सहता होती है। इसका अधिकतम प्रभाव तव होता है जब कि मिट्टी और सूक्ष्म आकार की निस्तापित मिट्टी का विशिष्ट अनुपात हो। प्रत्येक मिट्टी के लिए अधिकतम मात्रा भिन्न होती है। मध्य और स्थूल आकारों की निस्तापित मिट्टी का प्रभाव इसी प्रकार, परन्तु कम होता है।

विशिष्ट ऊष्मा और चालकता

तापवृद्धि से विशिष्ट ऊष्मा की वृद्धि होती है। अग्नि-ईंट (SiO_2 ५९.२ प्रतिशत, Al_2O_3 ३५.३) के ताप की ६००° सें० से १४०० सें० तक वृद्धि होने से विशिष्ट ऊष्मा .२२८ सें० ·२९७ तक वढ़ जाती है। भट्ठी की दीवालों का पृथक्करण, पुनर्जनित्र में निष्कासित गैसों से प्रवेश, गसों में ऊष्मा का संक्रमण, काँचमिश्रण का तापन और द्रावण, यह सब ऊष्मसह पदार्थों की ऊष्माचालकता पर निर्भर है। रासायनिक रचना, सरन्ध्रता, कणों के आकार, पदार्थ के पकाने के ताप और विपरीत दीवालों के ताप-अन्तर पर विभिन्न चालकताएँ होती हैं। दो विपरीत दीवालों की सतहों में जितना ही अधिक ताप-अन्तर होता है उतना ही अधिक ऊष्मा का पारगमन होता है।

मिट्टियों का शोधन

अलोप्टन विधि[1]—मिट्टी जल में आलम्बित की जाती है और कास्टिक सोडा, सोडियम कार्वोनेट या सोडियम-सिलीकेट जसे क्षारीय पदार्थों की कुछ मात्रा का योग करने से मिट्टी के कण वहुत समय तक जल में आलम्बित रह सकते हैं। परन्तु अभ्रक (माइका), रूपामाखी फेल्सपार, स्वतन्त्र सिलिका और अन्य अशुद्धियों के स्थूल कण

1. Deflocculation method

तरल में बैठ जाते हैं। मिट्टी का निथरा हुआ आलम्बन उड़ेल लिया जाता है और कुछ मात्रा अम्ल की मिलाकर फिर से स्कंदन[1] या लोष्टन कर लिया जाता है। इस विधि में निम्न हानियाँ हैं—(१) कुछ सूक्ष्म आलम्बित अशुद्धियाँ रह जाती हैं, (२) मिट्टी की भौतिक अवस्था पूर्ण रूप से परिवर्तित हो जाती है, (३) मिट्टी का ऐसा रूप रह जाता है जिसका सुखाना, एवं संचय करना कठिन होता है। लाभ यह है कि ऐसी शुद्ध की हुई मिट्टी निम्न तापों पर सपुंजित होती[2] है, द्रवणांक अधिक हो जाता है और इसका फल यह होता है कि पकाने के पश्चात् थोड़ा ही और आकुंचन होता है।

निस्तापित मिट्टी[3] का प्रभाव

निस्तापित मिट्टी या पाट के टूटे हुए खण्डों को कच्ची मिट्टी में मिश्रण कर ईंटें, पट्टियाँ और पात्र निर्माण किये जाते हैं। कच्ची मिट्टी को पका और पीसकर बनायी गयी निस्तापित मिट्टी अधिक घनी और अधिक कोणीय कणों की होती है, अतः यह निस्तापित मिट्टी अति उत्तम होती है। उच्च ताप पर पकायी हुई निस्तापित मिट्टी अधिक सन्तोषजनक होती है। इसमें अनुपात इस प्रकार होना चाहिए कि छोटे कण, बड़े कणों के मध्य रिक्त स्थानों को भर दें। इसमें सूक्ष्म धूलि होने से मिट्टी के शुष्क होने और पकाने पर संकोचन कम हो जाता है, अतः दरारों के बनने की प्रवृत्ति न्यूनतम हो जाती है। पकाने पर इसके सूक्ष्म भाग कच्ची मिट्टी से संयोजित हो जाते हैं जिससे घनी रन्ध्रहीन मिट्टी बनती है और काँच के पात्रों में इस गुण का होना आवश्यक है।

निस्तापित मिट्टी के स्थूल कणों से मिट्टी काय में दृढ़ता आती है और काय ताप-परिवर्तनों से कम प्रभावित होती है। उत्तम फल के लिए इसकी मात्रा आवश्यकतानुसार अधिक-से-अधिक इतनी प्रयोग में लानी चाहिए जिसमें ढाँचा बनाने में कठिनाई न हो और काँच के शुष्क होने और पकाने पर दरारें न पड़ें। निस्तापित मिट्टी के बहुत अधिक होने से मिट्टी का पिंड (काय) अति सरन्ध्र और चटक जानेवाला हो जाता है। पात्र-निर्माण में निस्तापित मिट्टी की सही मात्रा इन बातों पर निर्भर करती है—(१) पात्र के परिमाण पर, (२) प्रयोग में आनेवाले ताप और (३) पात्र को मिलने वाले उपचार पर। उच्च ताप पर प्रयोग में लाये जानेवाले बड़े पात्रों के लिए निस्तापित मिट्टी की अधिक मात्रा प्रयोग में लायी जा सकती है। उन पात्रों के लिए अधिकतम निस्तापित मिट्टी आवश्यक है जो भट्ठी के बाहर निकालकर खाली कर लेने के बाद पुनः

1. Coagulation 2. Sinter 3. Grog

भट्ठी में रखे जाते हैं, जैसा कि पट्टिका काँच-निर्माण में होता है। निस्तापित मिट्टी की मात्रा व्यक्तिगत पात्र-निर्माता की कुशलता और अनुभव पर भी निर्भर है। पात्र-निर्माण के प्रयोग में आनेवाले मिश्रण में साधारणतः ४० प्रतिशत सुघट्य अग्नि-मिट्टी और ६० प्रतिशत १२ अक्षि की चालनी से नीचे की निस्तापित मिट्टी होती है। कच्ची मिट्टी को अति सूक्ष्म पीस लेना चाहिए। निस्तापित मिट्टी का सही अनुपात उसकी सुघट्यता पर निर्भर है।

सिलिमेनाइट (Al_2O_3, SiO_2)

सिलिमेनाइट उत्तर भारत में पाया जाता है। यह अग्नि-मिट्टी से उत्तम और अधिक मूल्यवान् है। इसका द्रवणांक १८५०° सें० है। शुद्ध पदार्थ वर्णरहित है, परन्तु प्राकृतिक खनिज का वर्ण कुछ काले लोह आक्साइड के कारण भूरा होता है। यह सुघट्यता रहित है, अतः इच्छित आकार में ढालने के पूर्व इसमें कुछ मिट्टी मिश्रित करनी पड़ती है। यह द्रावकों, काँच इत्यादि से संक्षारण का प्रतिरोधी है और इस पर हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल का भी बहुत ही कम असर होता है। पिसे हुए सिलिमेनाइट् को, चुंबकीय पृथक्करण यंत्र में गमन कराकर, लोह-रहित कर लेना चाहिए।

जब मिट्टी में पर्याप्त अल्यूमिना मिश्रित कर १४००° सें० ताप पर अधिक समय तक तापित करते हैं तो कृत्रिम सिलिमेनाइट का निर्माण होता है। मिट्टी में कुछ द्रावक, जैसे लोहा, टाइटेनियम, फ्लोराइड एवं फेल्सपारों की उपस्थिति से सिलि-मेनाइट का बनना सुगम हो जाता है। इस प्रकार के खनिज सिलिमेनाइट का द्रवणांक १८००° से १९००° सें० तक होता है। यह तापों के अचानक परिवर्तनों से प्रभावित नहीं होता। यह अम्लों का, यहाँ तक कि हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल का भी प्रतिरोधी है। उच्च ताप पर यह भार सहन कर सकता है।

सिलिमेनाइट ईंटें

ये ईंटें प्राकृतिक या कृत्रिम सिलिमेनाइट से बनायी जाती हैं और इनमें १० प्रति-शत अग्नि-मिट्टी या मुलतानी मिट्टी का बन्ध दिया जाता है।

काँच-पात्र

काँच-पात्रों के लिए सिलिमेनाइट उपयुक्त अवयव है। अतः अल्यूमिना की प्रतिशतता निस्तापित पदार्थ के ५६ प्रतिशत तक बढ़ायी जा सकती है।

निस्तापित मिट्टी (ग्रॉग)

सिलिमेनाइट उत्तम प्रकार की निस्तापित मिट्टी है। इसकी सरन्ध्रता और चालकता निम्न तथा ऊष्मसहता अधिक होती है। यह अचानक ताप-परिवर्तन का प्रतिरोधी है।

काँच कारखानों के लिए पात्रों और पट्टियों का निर्माण

अग्नि-मिट्टी की पट्टियाँ[1] उसी मिट्टी के मिश्रण की बनानी चाहिए जिससे काँच-द्रावण के लिए पाट (पात्र) बनाये जाते हैं। अग्नि-मिट्टी को खान से निकालकर वायु-संक्षारण के लिए खुले स्थान में रखा जाता है जिससे मिट्टी छिन्न-भिन्न हो जाती है, उसकी सुघट्यता में वृद्धि होती है और अशुद्धियाँ न्यून हो जाती हैं। फिर मिट्टी को चक्की द्वारा पीसकर, उसमें मिट्टी के कुछ और पदार्थों का योग किया जाता है। अनुभव द्वारा ही भिन्न मिट्टियों से उपयुक्त मिश्रण तैयार किया जा सकता है। मिश्रण में जल मिलाकर फिर उसे अच्छी प्रकार से फेंट कर कुछ समय तक पूर्णतया ठीक हो जाने के लिए छोड़ दिया जाता है। पट्टियों के निर्माण की निम्न विधियाँ हैं —

(१) साँचे द्वारा,

(२) मिट्टी का ऐसे आयताकार छिद्र से निष्कासन किया जाता है, जिसका आकार पट्टियों की चौड़ाई और स्थूलता के अनुरूप होता है।

(३) लेपी द्वारा ढालना।

पिछली दो विधियों से निर्मित पट्टियाँ वायु बुलबुलों से रहित होती हैं।

इनके शुष्क होने में छः सप्ताहों से तीन महीने तक लग जाते हैं। यह अधो वहति भट्ठियों[2] में प्रायः १३५०° सें० ताप पर पकायी जाती हैं। उच्च वेग से भ्रमित होने-वाली शातित इस्पात की आरी द्वारा पट्टियाँ सही आकारों में काटी जाती हैं।

पाट (पात्र)

काँच-द्रावण पात्रों की मिट्टी भी ईंटों और पट्टियों की मिट्टी के समान तैयार की जाती है। निस्तापित मिट्टी भी उसी मिश्रण की होती है जिसकी कि कच्ची मिट्टी होती है। निस्तापित मिट्टी और मिट्टी को अच्छे प्रकार से मिश्रित कर, उसमें जल मिलाया जाता है जिससे कि मिश्रण सुघट्य हो जाय। तब कई महीनों के लम्बे समय

1. Blocks 2. Down draft kilns

के लिए उसे यों ही छोड़ दिया जाता है। इस अवधि में मिट्टी कभी-कभी उलटी-पलटी जाती है और फिर वायु-बुलबुलों से रहित करने के लिए पैरों से खूब रौंदी जाती है या मिट्टी का दाबक यंत्र में से गमन कराया जाता है।

फिर पात्र-निर्माता मिट्टी को प्रायः ८ इंच लम्बे और ३ इंच व्यासवाले बेलनों के आकार में बनाता है और इसके छोटे खण्डों को काष्ठ के तख्ते पर बलपूर्वक फेंकता है। पात्र-निर्माता मिट्टी को फिर इस प्रकार फैलाता है कि उसका प्रत्येक भाग पहले फैलाये हुए भाग से संघनित हो जाय और किसी स्थान में वायु न रह सके। तख्ते में मूठों के दो जोड़े लगे होते हैं। तख्तों का ऐसा आकार होता है कि पात्र का पेंदा उस पर आ जाये और वह उसका भार सहन कर सके।

जब पेंदे की स्थूलता ३ से ६ इंचों तक की हो जाती है तो तख्ता उठाकर उलट दिया जाता है और पात्र का पेंदा उलट कर एक दूसरे तख्ते पर रखा जाता है। इस दूसरे तख्ते पर $\frac{1}{4}$ इंच निस्तापित मिट्टी या कंकड़ों की तह होती है, जिससे कि पाट का पेंदा शुष्क होते समय बिना दरार पड़े आसानी से संकुचित हो सके। पहले तख्ते को मिट्टी से पट्टी-आरी द्वारा इस प्रकार काटा जाता है कि मिट्टी की स्थूलता आवश्यकता-नुसार रह जाय। पात्र की प्राचीर बनाने के पूर्व, पात्र का पेंदा शुष्क होने के लिए कुछ समय तक योंही छोड़ दिया जाता है और मिट्टी के किनारों को कपड़ों से ढाँक दिया जाता है जिसमें शुष्क होने में शीघ्रता न हो। पदे की स्थूलता, मिट्टी के गुण और पात्र-निर्माता की कुशलता पर ही मिट्टी के शुष्क होने के लिए आवश्यक समय की मात्रा निर्भर करती है।

इस प्रकार कई पात्रों के पेंदे बनाकर छोड़ दिये जाते हैं, फिर पहले पेंदे की प्राचीर बनाने का कार्य आरम्भ किया जाता है। किनारे पर का कपड़ा हटा लिया जाता है और उन्हें हाथों से इस प्रकार दबाया जाता है कि पेंदे के चतुर्दिक् तीन इंच ऊँची मिट्टी की प्राचीर उठ जाती है। पात्र-निर्माता, तत्पश्चात् पहले तैयार की हुई ७ इंच लम्बी और २ इंच व्यास की बेलनाकार मिट्टी अपने दाहिने हाथ में लेता है। हाथ और उँगलियों द्वारा किनारों पर बेलनाकार मिट्टी को इस प्रकार फैलाता है कि वायु के बुलबुले मिट्टी में न रह जायँ। प्रत्येक समय जब कि पाट (पात्र) की प्राचीर पर मिट्टी की परत लगायी जाती है तो चहारदीवारी प्रायः चौथाई इंच स्थूल हो जाती है। दाहिने हाथ से दबाव के विपरीत, पाट की चहारदीवारी के अन्तरीय भाग को बायें हाथ का सहारा देकर निर्माता पाट के चतुर्दिक मिट्टी की परतें इस प्रकार चढ़ाता है कि

आवश्यकतानुसार २ से ४ इंच स्थूल और तख्ते से १ फुट ऊँची दीवाल वन जाती है। फिर किनारे की मिट्टी का ऊपरी भाग हाथों की हथेलियों से दवाया जाता है और सव पृथक् परतें एक दूसरे में विलीन हो जाती हैं, तव सम्पूर्ण दीवाल को उँगलियों से सहलाया जाता है। फिर इसको कपड़े से ढक कर कम से कम ४८ घंटे धीरे-धीरे शुष्क होने के लिए छोड़ दिया जाता है।

पात्र की प्राचीर को पूर्ण चिकना करने के लिए, काठ के चपटे टुकड़े से एक ही दिशा में मला जाता है। पात्र का पहला खण्ड जव शुष्क हो जाता है तव उसी प्रकार दूसरा खंड वनाया जाता है। प्रत्येक समय ८ से १२ इंच ऊँची पात्र की दीवाल वनायी जाती है। एक ही खण्ड को अति शुष्क नहीं होना चाहिए, नहीं तो उसके ऊपर का खण्ड उससे अच्छी तरह जुड़ नहीं सकेगा, परन्तु यदि कहीं वह इतना अधिक शुष्क हो जाय कि दूसरे खण्ड को थाम न सके, तो पात्र के आकार को हानि पहुँचेगी। जव कि आवश्यक ऊँचाई हो जाती है तो दीवाल को भीतर झुकाकर पात्र का कन्धा वनाया जाता है। कन्धे का झुकाव संमितीय होना चाहिए। छत-निर्माण की प्रत्येक अवस्था में पर्याप्त शुष्कता हो जानी चाहिए जिससे कि पात्र का ऊपरी भाग स्वयं थमा रह सके और नीचे न गिर जाय। पात्र की छत में वड़े कलश के संकीर्ण मुख के आकार का छिद्र वनाया जाता है। वाद में या तो यह दवाकर वन्द कर दिया जाता है या पात्र-निर्माता पात्र में एक नली प्रवेश कर वायु धमन करता है और नली के निकालन पर छिद्र वन्द कर दिया जाता है। पात्र के अन्दर की वायु, चाह उसमें दाव हो या न हो, छत को थामे रखती है। यदि पात्र में वहुत समय तक दाव रहता है तो शुष्क होते समय छत फट जा सकती है। परन्तु यदि उचित समय पर पात्र के मुख में एक छिद्र वनाकर दाव दूर कर दिया जाता है तो दाव-विधि से अच्छी छत वनती है। विना दाव के छत कुछ नीचे दव जा सकती है और इस प्रकार कन्धे का आकार विगड़ जाता है। इस समय पात्र ऊर्ध्वाधर प्राचीरोंवाले मधु-मक्खी-छत्ते के समान लगता है।

सही ऊँचाई पर, पात्रमुख के लिए वेलनाकार मिट्टियाँ इस प्रकार फैलाकर लगायी जाती हैं कि पात्रमुख वनाने के प्रयोग में आनेवाला काष्ठ का साँचा आधारित रह सके। मुख के चतुर्दिक मिट्टी उसी प्रकार फैलाकर लगायी जाती है जैसे कि दीवाल वनाते समय लगायी गयी थी। जव पात्र का मुख वन जाता है तव काष्ठ का साँचा हटा लिया जाता है। कुछ शुष्क होने पर पाटमुख का अन्तरीय भाग काटकर हटा दिया जाता है और छत तथा पात्र के वाहरी भागों को चिकना दिया जाता है।

दूसरी विधि के अनुसार, पात्र आवश्यकता से प्राय: एक फुट अधिक ऊँचा बनाया जाता है और फिर पीटकर उसे सही आकार का किया जाता है। अन्दर की वायु दब जाने के कारण छत का भार थामे रहती है। इस विधि में कुछ कठोर मिट्टी का प्रयोग करना पड़ता है और बनाते समय अधिक निपुणता की आवश्यकता होती है। पात्र का मुख पहली ही तरह बनाया जाता है और बनाने के समय काट लिया जाता है। पात्र कक्ष का ताप प्राय: १५° से २२° सें० पर स्थिर रखा जाता है। मिट्टी में धूलि या कोई और पदार्थ की अशुद्धि नहीं आनी चाहिए। पात्र के पेंदे की स्थूलता ४ इंच होती है और ऊपर कम होती जाती है, इस प्रकार छत प्राय: दो इंच स्थूल होती है।

खुले पात्र भी इसी प्रकार बनाये जाते हैं और काष्ठ के साँचे में भी बनाये जा सकते हैं। मिट्टी को पीस और हाथ से दबाकर आवश्यक ऊँचाई और स्थूलता दी जा सकती है। दीवाल की स्थूलता, नीचे चार इंच और ऊपर तीन इंच होती है।

घोल निस्सादन द्वारा पात्र का निर्माण

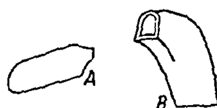
मिश्रित या सनी हुई मिट्टी मिश्रक यंत्र में रखी जाती है और फिर इस यंत्र में कुछ सोडियम कार्बोनेट या सोडियम सल्फेट या दोनों लवणों युक्त जल (प्राय: शुष्क मिट्टी के भार का .२ से .३ प्रतिशत) मिलाया जाता है। यह बहुत ही शीघ्र मिट्टी को तरल घोल में परिवर्तित कर देता है। इस यंत्र के निकास से घोल पैरिस प्लास्टर के साँचे में पहुँचता है। इस साँचे का कोर[1] भी इसी पदार्थ का होता है। जल अवशोषित हो जाता है और २४ घंटे से कम ही समय में एक समान और दृढ़ पाट (पात्र) तैयार हो जाता है। घोल की श्यानता सही होनी चाहिए (विशिष्ट गुरुत्व १.९० से १.९५ तक), नहीं तो पाट की दीवालें खोखली बनेंगी। ऐसे पाटों में अधिक निस्तापित मिट्टी मिलायी जा सकती है। हस्तविधि की अपेक्षा इस विधि से पात्र शीघ्र तैयार हो जाता है और कुशल श्रमिक की आवश्यकता नहीं होती। पात्रों की बनावट[2] में अधिक समानता और अधिक घनत्व होता है। बन्द पात्रों के लिए छत साँचे से पृथक् ढाली जाती है और फिर दोनों भाग उस समय जोड़े जाते हैं जब कि कुछ नम हों, परन्तु इतने दृढ़ हों कि आकार स्थिर रहे।

पात्रों के परिमाण (साइज)

काँच-द्रावण-पात्र विभिन्न आकारों और परिमाणों के बनाये जाते हैं। पूर्ववर्णित पात्र जो कि काँच कारखानों में प्रयोग में लाये जाते हैं, वृत्ताकार या अंडाकार होते हैं

1. Core 2. Texture

और उनका व्यास ६ फुट तक हो सकता है। अन्य आकारों के पाट निम्न हैं—(१) "मुगदर पात्र"—यह भट्ठी में तिरछा रखा जाता है और इसमें से काँच सुविधापूर्वक संगृहीत किया जा सकता है। (२) "लघु पात्र"—यह अधिकतर कुण्ड भट्ठियों में प्रयोग में लाया जाता है। इसके पेंदे में एक दरार होती है जिसमें से अद्रुत पदार्थों रहित और अधिकांश काँच के ताप से कम का काँच प्रवेश करता है।



[चित्र १६—(ए) मुगदर पात्र (वी) लघु पात्र]

साधारणतः पात्र की ऊँचाई और अधिकतम व्यास समान होते हैं और पेंदे की स्थूलता, अधिक ताप व्यास के १/१० से १/१२ तक होती है, प्राचीरों की स्थूलता का अधिकतम व्यास १।१५ से १।२० तक होता है। पाट का परिमाण उसके उद्देश्य पर भी निर्भर करता है। स्थूल पात्र अधिक संक्षारण सहन कर सकते हैं, परन्तु इनका विना फटे शुष्क अथवा तप्त होना अति कठिन होता है। द्रवण और शोधन के लिए अति स्थूल पात्र के अन्दर ताप उच्च लाने में अधिक ईंधन की आवश्यकता होती है। यदि पात्र अन्दर से संक्षारित हो जाता है तो काँच में पत्थर और असमांगता की प्रवृत्ति हो जाती है। काँच द्रवण और कार्यकरण के लिए संकीर्ण तथा ऊँचे पात्रों की अपेक्षा चौड़े, छिछले और मध्यम स्थूलतावाले पात्र अधिक उपयुक्त होते हैं। जिन पात्रों के पेंदे ऊपर की अपेक्षा नीचे संकीर्ण होते हैं उनमें उच्च ताप पर विस्तृत होने की कम प्रवृत्ति होती है।

विशेष पात्र

प्रकाशीय काँचों के निर्माणोपयोगी पात्र, अति शुद्ध पदार्थों द्वारा बहुत सावधानी से बनाना चाहिए। कुछ निर्माता कठोर पोर्सलीन-जैसी रचना प्रयोग में लाते हैं। ऐसे पात्रों में काँच-मिश्रण भरने के पूर्व पात्र को कम से कम १४००° सें० तक तप्त कर लेना चाहिए जिससे कि पात्र पूर्णतया काँचीय बन जाय। कुछ पात्रों के अन्दर आधी इंच स्थूलता की विशेष परत बनायी जाती है। ऐसे पात्र में पकाने पर अन्दर घनी काँचीय परत बन जाती है। इस प्रकार का व्यवहार उन पात्रों के लिए बतलाया गया है जिनमें भारी सीस पोटाश युक्त संक्षारक काँच द्रवित किये जाते हैं।

पात्रों का पकाना

पात्र एक कमरे में २७° सें० से निम्न ताप पर और ६५ से ७० प्रतिशत की आपेक्षिक नमी में शुष्क किये जाते हैं। शुष्क होने के पश्चात्, भट्ठी में रखने के पूर्व एक लघु भट्ठी में उन्हें पकाया जाता है। लघु भट्ठी के तापन की दर और ताप नियंत्रण अत्यन्त आवश्यक हैं। पात्रों को ज्वाला के सीधे स्पर्श से भी बचाना चाहिए। धीमी आँच और धूमयुक्त ज्वाला से तापन आरम्भ कराना चाहिए। पाँच या सात दिवसों में ताप १२००° सें० तक ले जाया जाता है। अति घनत्ववाले और काफी बड़े पात्रों के लिए निम्नलिखित तापनसूची उपयुक्त है —

१ दिन या २४ घंटे के पश्चात् ७५° सें०
२ दिन „ ४८ „ „ १२०° सें०
३ दिन „ ७२ „ „ ३७१° सें०
४ दिन „ ९६ „ „ ५९७° सें०
६ दिन „ १२० „ „ ८१६° सें०
८ दिन „ १४४ „ „ १०२५° सें०
९ दिन „ १६८ „ „ ११६०° सें०

निम्न सूची किसी भी पात्र के लिए उपयुक्त है।

आन्तरिक ताप	आवश्यक समय (घंटों में)	तापन की दर
३०° से २००° सें० तक	३८	४.५° सें०
२००° से ५०० सें० तक	४६	६.५° सें०
५००° से ८०० सें० तक	५५	५.५° सें०
८००° से १२०० सें० तक	३६	११.० सें०

पात्र ३० घंटे की अवधि तक लघु भट्ठी में अधिकतम ताप में रखा जाता है और तत्पश्चात् भट्ठी में स्थानान्तरित किया जाता है। भट्ठी में पात्र का ताप १३५०° से १४००° सें० तक बढ़ाया जाता है और यह ताप एक से दो दिनों तक रखा जाता है, तब पात्र पूर्ण रूप से काँचीय हो जाता है। यदि भट्ठी का कार्यकरण ताप १२००° सें० से अधिक नहीं है तो पात्र का अन्तिम तापन-व्यवहार छोड़ दिया जाता है।

कुछ टूटे हुए काँच का भट्ठी में द्रावण कर, द्रुत काँच को भीतरी सतहों पर गहराई तक फैलाकर पात्र को काँचित किया जाता है। काँचीय पात्र जब काँचित किया जाता है तब उस पर काँच-मिश्रण क्षारों की घोलनेवाली क्रिया होती है जिससे पात्र की भीतरी सतहों पर सिलिमेनाइट की परत बनती है। यह परत पात्र को और अतिरिक्त संक्षारण से बचाती है। जो पात्र काँच-मिश्रण भरने के पूर्व अधिक ताप पर नहीं पकाया जाता वह अधिक समय नहीं चलता और उसमें परतें तथा गड्ढे बनने की प्रवृत्ति आ जाती है। प्रकाशीय काँच-निर्माण में, एक पात्र का प्रयोग एक बार होता है। पट्टिका-काँच निर्माण में, एक पात्र १५ से २० बार तक प्रयोग में लाया जाता है। सीसयुक्त काँच के लिए एक पात्र २० से ३० बार प्रयोग में लाया जाता है, जब कि चूनायुक्त काँच के लिए पात्र छः मास तक प्रयोग में लाया जा सकता है। जब पाट संक्षारित हो जाता है तब काँच में पत्थर आ सकते हैं।

पात्र को भट्ठी में बैठाना

लघु भट्ठी में पात्र साधारणतः ईंटों पर ठहरे रहते हैं। गाड़ी की लम्बी छड़ें, पात्र के नीचे रखकर, पात्र गाड़ी द्वारा लघु भट्ठी से स्थानान्तरित किये जाते हैं। इस भट्ठी का ताप, पात्र के ताप के समान ही होता है। पात्र बिठाने का कार्य अति कठिन है। लघु भट्ठी[1] एवं भट्ठी के सामने की दीवालों को गिरा देना पड़ता है और स्थानान्तरण अत्यधिक गरमी में होता है। जब पात्र ठीक से बैठ जाता है तो भट्ठी में पात्र के सामने की ईंटें एवं विभाग (पटिये) फिर से जोड़ दिये जाते हैं।

कोरहार्ट पटिये

कोरहार्ट पटिये आधुनिक उत्पादन हैं। और ऐसे निस्तापित बाक्साइड तथा केओलिन या मिट्टी के मिश्रण का द्रवण कर ढाल कर बनाये जाते हैं। इसके लिए प्रायः २०००° सें० के ताप का विद्युत चाप प्रयोग किया जाता है। द्रुत मिश्रण, शुद्ध बालू और तिल्ली तेल के बन्धयुक्त साँचों में उड़ेला जाता है। पटियाओं के अन्तर्गत म्यूलाइट एवं कुछ करन्डम के केलास और सिलिकामय काँच का बन्ध होता है। सरन्ध्रता ३ प्रतिशत से कम होती है। निस्तापित मिट्टी की मात्रा ८० प्रतिशत तक होती है। पटियाएँ बहुत धीरे-धीरे ठंडी की जाती हैं। पटियाएँ काँच का संक्षारण

1. Pot-arch

अच्छे प्रकार से सहन कर सकती हैं और बहुत स्थायी होती हैं। ये ताल भट्ठियों में १५ से २० वर्षों तक चलती हैं। पटियों से बनी हुई कुण्ड भट्ठी में काँच द्रावण करने से उसके गुणों में उन्नति हो जाती है।

ग्यारहवाँ अध्याय

काँच भट्ठियाँ

काँच भट्ठी ऐसा ढाँचा है जो इस प्रकार बनाया जाता है कि उच्च ताप पर काँच द्रावण में कम व्यय हो और उच्च ताप या तो सब स्थानों में एक समान हो या विभिन्न भागों में आवश्यकतानुसार भिन्न-भिन्न हो। काँच भट्ठियाँ कई प्रकार की होती हैं।

अव्यवहित तापित भट्ठी

इस प्रकार की भट्ठी में ईंधन दहन के लिए सम्पूर्ण आवश्यक वायु झंझरी और ईंधन में से गमन करती है और चूल्हा, दहन-कक्ष का ही भाग होता है। दहन-कक्ष में काँच द्रावण किया जाता है।

अर्ध अव्यवहित तापित भट्ठी

इस प्रकार की भट्ठी में चूल्हे द्रावण भट्ठी से कुछ दूर पर स्थित होते हैं और ईंधन का झंझरी पर कुछ ही अंशों में दहन होता है। अतः झंझरी में से सिर्फ "प्राथमिक वायु" ही जो ईंधन का झंझरी पर दहन करती है, गमन करती है। ईंधन से प्राप्त गैसें, दहनकक्ष में संकीर्ण प्रवेश द्वार से, जिसको "चक्षु" कहते हैं, प्रवेश करती हैं। अतिरिक्त वायु, जिसको "द्वितीयक वायु" कहा जाता है, चूल्हे के चतुर्दिक नाली में से गमन करती है और पूर्व तापित होकर ईंधन से प्राप्त गैसों से, भट्ठी के चक्षु के ठीक नीचे मिश्रित होती है जिसके फलस्वरूप गैसों का दहन होता है।

उत्पादक-गैस-तापित भट्ठी

इस प्रकार की भट्ठी में तापन के लिए उत्पादक गैस जलायी जाती है। दहन-कक्ष में प्रवेश के पूर्व उत्पादक गैस में आवश्यकतानुसार द्वितीयक वायु मिश्रित की जाती है, जिससे कि दहन हो सके। क्षय गैसों की ऊष्मा से पुनर्जनन या पुनस्तापन का सिद्धान्त प्रयोग में लाकर, भट्ठी में जानेवाली गैसों को तापित किया जाता है।

तेल-तापित भट्ठी

इस भट्ठी में, ईंधन के लिए तेल का प्रयोग होता है। तेल या तो छिड़का जाता

है या दाव की जलवाष्प या वायु के मिश्रण का सीकरण किया जाता है। तेल दहन-कक्ष में द्वितीयक वायु[1] मिश्रित कर जलाया जाता है।

काँच भट्ठियों को दो अन्य भागों में भी बाँटा जा सकता है।

(१) पात्र भट्ठी—इस प्रकार की भट्ठी में काँच बन्द या खुले पात्रों में, जो दहन-कक्ष के अन्दर स्थित होते हैं, द्रवित किया जाता है।

(२) कुण्ड भट्ठी—इस प्रकार की भट्ठी में, दहन-कक्ष के फर्श और चतुर्दिक दीवालों के निम्न भाग में द्रुत काँच रहता है।

पात्र भट्ठियों से कुण्ड भट्ठियों की तुलना

अधिक मात्रा में उत्पादन के लिए कुण्ड भट्ठियाँ अच्छी पड़ती हैं, अतः यन्त्र द्वारा वस्तुओं के निर्माण में ये सर्वदा प्रयोग में लायी जाती हैं। यन्त्र द्वारा निर्माण में द्रुत काँच की मात्रा स्थिर और सतह स्थायी होनी चाहिए। काँच की उत्तमता और द्रुत काँच के भट्ठी गसों से बचाव के लिए, पात्र भट्ठी (पाट फरनेस) उत्तम होती है। जब कि एक समय में, काँच का अधिक मात्रा में स्थानान्तरण करना होता है, जैसा कि प्रकाशीय और पट्टिका काँचों के निर्माण में, तब पात्र-भट्ठियाँ उपयुक्त समझी जाती हैं, क्योंकि काँच से भरे हुए पाट हटा दिये जा सकते हैं।

आधुनिक कुण्ड भट्ठी में यह लाभ होता है कि ईंधन में २५ से ५० प्रतिशत कम व्यय पड़ता है। इसके निम्न कारण हैं—

(१) तप्त होनेवाली सतहों का उत्तम उपयोग, (२) कुण्ड से काँच की अधिक प्राप्ति, (३) अविराम कार्य एवं (४) बड़ी भट्ठियों का निर्माण।

एक कुण्ड २४ घण्टों में १२० टन तक काँच प्रदान कर सकता है, जब कि पाट-भट्ठी में २५ टन से अधिक तैयार काँच उपयोग में नहीं लाया जा सकता।

पात्र भट्ठियों में कई असुविधाएँ हैं, जैसे कि भट्ठियों का निर्माण, मेहराब बनाना, पात्र को भट्ठी में स्थित करना, पात्र का स्थानान्तरण, पात्रों का टूटना और काँच द्वारा संक्षारण।

1. Secondary air

उचित रीति से बनायी गयी कुण्ड भट्ठी में भी शोधन काँच का निर्माण किया जा सकता है, जो उतना ही अच्छा होता है जितना पात्र भट्ठी का काँच।

ऊष्मा का विभाजन

ईंधन की किसी मात्रा से प्राप्य ऊष्मा की मात्रा स्थिर होती है। ईंधन के जलने पर यह ऊष्मा उद्विकासित होती है और दहन के उत्पादों को तापित करने के उपयोग में आती है। वहाँ से वह काँच का द्रवण और शोधन करने और कार्यकरण के लिए उपयुक्त तरल अवस्था रखने के प्रयोग में आती है। कुछ ऊष्मा की मात्रा भट्ठी की छत और दीवालें लेती हैं और कुछ विकिरण द्वारा नष्ट हो जाती हैं। बची हुई ऊष्मा को चेतन ऊष्मा के रूप में क्षय गैसें[1] ले जाती हैं। अव्यवहित तापित भट्ठियों में, अधिकतर गैसों का दहन तब होता है जब कि गसें दहन-कक्ष छोड़कर आगे बढ़ती हैं। गैस-तापित भट्ठी में गति, दाब, गैस एवं वायु की मात्रा और चिमनी-वहति[2] का नियंत्रण कर, दहन को नियमित किया जा सकता है। तेल-तापित भट्ठी में गैस-तापित भठ्ठी के लाभों के अतिरिक्त यह भी लाभ सम्भव है कि दहनकक्ष के किसी भाग में चाहे विशिष्ट या भिन्न ताप रखा जा सकता है।

जापानी ढंग की अव्यवहित तापित भट्ठी

इस प्रकार की भट्ठी में पात्र, 'मध्य चक्षु' या एक छिद्र के चतुर्दिक एक वृत्त में रखे जाते हैं। पात्रों को अग्नि-मिट्टी की दीवालें घेरे रहती हैं। और उनके ऊपर नीची मेहराबदार छत होती है। 'चक्षु' से दहन उत्पाद निष्कासित होते हैं। असली भट्ठी 'चक्षु' के नीचे एक आयताकार चूल्हा होता है जहाँ कि झर्झरी के ऊपर कोयला जलाया जाता है। इस चल्हे के सामने की दीवाल में एक द्वार से कोयला चूल्हे में झोंका जाता है। झर्झरी के नीचे भस्म स्थान होता है। ज्वालाएँ चक्षु से गमन कर पात्र कक्ष में प्रवेश करती हैं। पात्रों को तप्त करने के पश्चात्, ज्वालाएँ छोटी नालियों से चिमनी में निकल जाती हैं। ये नालियाँ या तो प्रत्येक पात्र के बीच के स्तंभों में, जिन पर छत आधारित होती है, या प्रत्येक पात्र के सामने की दीवाल में होती हैं।

इन नालियों को उदग्र[3] नालियाँ मुख्य वृत्ताकार नाली से मिलाती हैं और यह मुख्य नाली भट्ठी के बाहर पात्रकक्ष और फर्श की सतह के नीचे होती है एवं चिमनी से

1. Waste gases 2. Chimney draught 3. Vertical

जुड़ी रहती है। चिमनी में जानेवाली नाली में रुकावट या ईंटें लगाकर भट्ठी की वायु का नियंत्रण किया जाता है।

जब कि मेहराब के आधारभूत खम्भों में नालियाँ होती हैं तब पात्र सुविधापूर्वक बदले जा सकते हैं और यदि नालियाँ प्रत्येक पात्र के सामने की दीवाल में होती हैं तो पात्र अधिक अच्छी तरह से तापित होते हैं।

साधारणतः पात्रों को बदला नहीं जाता, परन्तु जब ६० प्रतिशत पात्र टूट जाते हैं तब भट्ठी बन्द कर दी जाती है। पात्र कक्ष में उदग्र अग्नि-ईंटों के खम्भे मध्य चक्षु के चतुर्दिक स्थित होते हैं और मेहराबदार छत या गुम्बद इन्हीं पर आधारित होती है।

साधारणतः भट्ठी या फर्श और जहाँ धमन क्रिया होती है वहाँ का फर्श, एक ही सतह पर होते हैं। कोयला झोंकने का स्थान जमीन खोदकर नीचे से बनाया जाता है और इसका फर्श भट्ठी के फर्श से ६ या ७ फुट नीचे होता है।

कोयला झोंकने का द्वार, झोंकने के स्थान के फर्श से प्रायः ३ फुट ऊपर होता है। चूल्हे के छड़ों के नीचे से, भस्म कोष्ठक के रिक्त स्थान से होकर वायु दहन के लिए गमन करती है। दीर्घ-ज्वाला किस्म का कोयला प्रयोग में लाया जाता है। पात्रों को ज्वाला से पूर्णतया घेर देने के लिए, वहति की वृद्धि की जाती है जिससे भट्ठी में अतिरिक्त वायु प्रवेश करती है और भट्ठी का ताप निम्न हो जाता है। अधिकतम ताप भट्ठी के "चक्षु" में होता है और उस स्थान में बड़े अग्नि-पटिये प्रयोग में लाये जाते हैं। पात्र के अन्दर कदाचित् ही ताप १३००° सें० तक होता है।

इन भट्ठियों में प्रायः ६ से १२ पात्र रखे जाते हैं और प्रत्येक पात्र की समाई ६०० से ८०० पाउंड तक होती है। चिमनी ६० से १०० फुट तक ऊँची होती है। इन भट्ठियों की छत अति तप्त हो जाती है जिससे विकिरण के कारण बहुत कुछ ऊष्मा नष्ट हो जाती है। विकिरण को निम्न करने के लिए या तो दीवालें स्थूल या विसंवाहक बनानी चाहिए। विसंवाहन[1] प्रकार ही उत्तम है।

इन भट्ठियों का ताप घटता-बढ़ता रहता है, अतः पात्र बहुधा टूट जाते हैं।

चूड़ियों के लिए काँच-पिंड[2] निर्माणार्थ विशेष प्रकार की अव्यवहित भट्ठियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। इन चूल्हों की एक कतार होती है, जिनके ऊपर खुले पात्र एक सीध में रखे रहते हैं। पात्रों के ऊपर अग्नि-ईंटों की मेहराब या छत होती है और चतु-

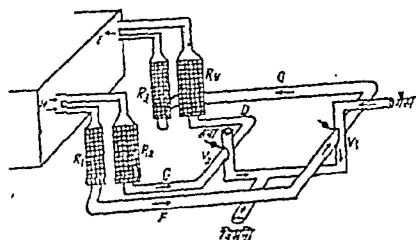
1. Insulation 2. Block glass

दिक अग्नि-ईंटों की दीवालें होती हैं। पात्रों के सामने की दीवालों में काँच निकालने के लिए छिद्र होते हैं जहाँ से चिमचे द्वारा काँच निकाला जाता है। इन भटिठयों में चिमनी नहीं होती और क्षय गैसें भी इन्हीं छिद्रों से निष्कासित होती हैं। इस भट्ठी की समाई प्राय: दो टन होती है। क्योंकि ताप निम्न होता है, इसलिए क्षार की अधिक प्रतिशतता प्रयोग में लायी जाती है। इन भट्ठियों में निर्मित काँच निम्न गुणों का होता है, उसमें अधिक चमक नहीं होती। इस कारण इन भट्ठियों में या तो रंगीन या निम्न कोटि का वर्णरहित काँच बनाया जाता है।

पुनर्जनन गैस-तापित भट्ठियाँ

पुनर्जनन के सिद्धान्त

दहन के उत्पाद भट्ठी से निर्गत होने पर पहले (R_1) और (R_2) दो कक्षों में, जिनमें ईंटों की जालियाँ होती हैं, फिर नालियों और (V_1) (V_2) परिवर्त्य कपाटों[1] से एक नाली में होते हुए अन्त में चिमनी में पहुँचते हैं। उसी समय उत्पादक गैस (V_1) कपाट में प्रवेश करती है और (C) नाली में होती हुई पुनर्जनित्र (R_3) में, और तत्पश्चात् भट्ठी में पहुँचती है। चिमनी वहति के उभाड़ने से, वायु (V_2) परिवर्त्य कपाट में प्रवेश करती है और (D) नाली में होती हुई पुनर्जनित्र (R_4) में, तत्पश्चात् भट्ठी के संगम (E) में जाती है जहाँ गैस से मिलन होता है। इस अवधि में कक्ष (R_1) और (R_2) तापित हो जाते हैं और प्रायः आध घंटे पश्चात् गैस एवं वायु (R_1) और (R_2) तापित कक्षों से होकर भट्ठी में प्रवेश करती है तथा क्षय गैसें (R_3) और (R_4) में से होकर बाहर निकल जाती हैं। वायु एवं गैस, कक्ष (R_1) और (R_2) में से गमन के कारण तापित हो जाती हैं और इस प्रकार भट्ठी में प्रवेश के पूर्व ही तापित हो जाती हैं।



[चित्र १७—पुनर्जनन प्रणाली]

1. Reversal valves

पुनर्जनित्र[1]

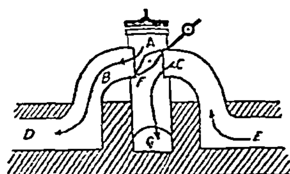
ये ऊष्मसह ईंटों के बने होते हैं और इनकी चुनाई एकान्तरिक रूप में अनुप्रस्थ और अनुदैर्घ्य होती है। पुनर्जनित्रों का विसंवाहक (पृथक्कारी) ईंटों द्वारा पृथक्करण करना चाहिए और इनको लाल ईंटों द्वारा सुरक्षित करना चाहिए।

परिवर्त्य कपाट

ये दहन उत्पादों और भट्ठी तापन के लिए आवश्यक गैसों को, प्रथम एक दिशा में और फिर दूसरी दिशा में भेजने के साधन हैं। कपाटों (वाल्वों) को शीघ्रता और आसानी से काम कर सकने योग्य होना चाहिए और उनका पूर्ण रूप से गैस-टाइट होना चाहिए।

वायु कपाट

यह एक सिलिण्डर (A) सा होता है जिसमें दो बाहुएँ (कोनियाँ) (B) और (C) ढलवें लोहे की होती हैं, जो नालियों (D) और (E) से जुड़ी रहती हैं। बाहुओं के मध्य में, सिलिण्डर के भीतर एक दीर्घवृत्ताकर[2] कपाट (F) होता है और यह किन्हीं दो विकर्ण स्थितियों में रखा जा सकता है। वायु सिलिण्डर (A) के ऊपर से गमन करती है और (B) बाहु से होकर (D) नाली में से होती हुई भट्ठी में प्रवेश करती है। भट्ठी से क्षय गैसें, नाली (E) से होकर, और (C) बाहु से गमन कर, फिर चिमनी की नाली (G) में चली जाती है। जब कपाट परिवर्त्य किया जाता है, तब वायु (A, C और E) से होती हुई भट्ठी में जाती है और इस अवधि में क्षय गैसें (D और B) से होकर चिमनी की नाली (G) में चली जाती हैं।



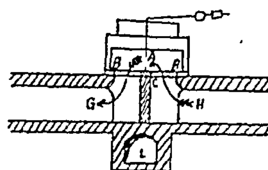
[चित्र १८—
वायु परिवर्त्य कपाट]

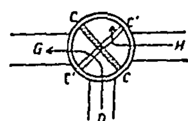
गैस परिवर्त्य कपाट

यह चद्दरी लोहे का बेलनाकार डिडिम[3] होता है। इसके मध्य में अनुव्यास पट्टिका[4] (A) इसको दो भागों में विभक्त करती है जो कि जल-भरी वृत्ताकार नाली

1. Regenerator 2. Elliptical valve 3. Cylindrical sheet-iron drum 4. Diametrical plate

(BB) में आधारित होती है और जिसमें आड़ी वेड़ी नालियाँ (CC) और (C′C′) रहती हैं। जव पट्टिका (CC) स्थिति में होती है तव गैस उत्पादक से गैस (D) नाली द्वारा डिंडिम में प्रवेश करती है और नाली (G) में से होकर भट्ठी में प्रवेश करती है। उसी समय भट्ठी के दहन के उत्पाद (H) नाली से होकर चिमनी की नाली (L) में जाते हैं। परिवर्त्य करने पर विभाजन पट्टिका (C′C′) स्थिति में हो जाती है। और उत्पादक गैस (H) में से होकर भट्ठी में प्रवेश करती है तथा क्षय उत्पाद (G) में होकर चिमनी की नाली (L) में जाते हैं। ऊष्मा के कारण, गैस कपाट में टेढ़े हो जाने की प्रवृत्ति होती है और इससे गैस निकल जाने की सम्भावना रहती है। टेढ़ेपन को रोकने के लिए गैस-कपाट जल-संमुन्द्रित किया जाता है जिससे सव तापों पर कपाट गैस-टाइट हो जाता है।





[चित्र १९—
गैस परिवर्त्य कपाट]

पुनर्जनन कक्ष

ये कक्ष, भट्ठी की क्षय गैसों की ऊष्मा को संचित करते हैं और जाली की ईंटों द्वारा संचित ऊष्मा से भट्ठी में जानेवाली उत्पादक गैस एवं वायु को तापित करते हैं। परिवर्त्यों की जितनी कम अवधि होती है उतना ही भट्ठी का ताप नियमित होता है और ज्वाला के ताप का भी उच्च होना सम्भव हो जाता है। पुनर्जनित्र वहुत वड़े और वहुत छोटे न होने चाहिए। यदि ये वहुत वड़े होंगे तो क्षय गैसों का ताप इतना निम्न हो जायगा जिससे चिमनी वहति भी कम हो जायगी। वायु पुनर्जनित्र सर्वदा गस पुनर्जनित्र से वड़ा वनाया जाता है, क्योंकि गैस उच्च ताप पर और वायु में कम आयतन में, पुनर्जनित्र में प्रवेश करती है। पुनर्जनित्र ऐसे परिमाण का होना चाहिए जिससे वायु एवं गैस दोनों भट्ठी में एक ही गति से प्रवेश करें। पुनर्जनन कक्षों में निर्माण में छोटी अक्षि उदग्र होनी चाहिए और तीव्र कोण न वनने चाहिए। जाली के लिए ईंट ऐसी होनी चाहिए जो ऊष्मा का शीघ्र अवशोपण या उद्विकासन कर सके और धमित काँच-मिश्रण के पदार्थों की द्रावक क्रिया का प्रतिरोध कर सकें।

दहन-कक्ष

दहन-कक्ष[1] इतने माप का होना चाहिए कि दहन उत्पाद भट्ठी में अधिक से अधिक समय तक रह सकें, पर वह ऐसा भी हो कि ताप निम्न हो जाय।

संगम

संगम[2] वह रिक्त स्थान है जहाँ से गैस एवं क्षय उत्पाद भट्ठी में आते-जाते हैं। पात्र भट्ठी में ये उसके फर्श के नीचे या लम्बाई चौड़ाई की दीवालों के खम्भों में बनाये जाते हैं। कुण्ड भट्ठी में संगम या तो लम्बाई की दीवालों में होते हैं जिससे आर-पार की ज्वाला बनती है या चौड़ाई की दीवालों में, जहाँ कि घोड़े की नाल के आकारवाली ज्वाला प्राप्त होती है। कुण्ड भट्ठी में संगम इस प्रकार बनाये जाते हैं कि ज्वाला छत से टक्कर न खाये। ज्वाला चादर के रूप में, काँच के ऊपर फैली हुई रहनी चाहिए। संगम, इसलिए चौड़े और कम गहराई के होते हैं और फर्श की दिशा में झुके रहते हैं। वायु-संगम साधारणतः गैस-संगम के ऊपर होता है।

प्लवक[3]

कुछ कुण्ड भट्ठियों में सेतु-भीत के स्थान पर अग्नि-मिट्टी के प्लवक प्रयोग में लाये जाते है। ये अनुप्रस्थ काट में १८ वर्ग इंच और लम्बाई में ८ से १० फुट होते हैं और इस प्रकार से निर्मित होते हैं कि द्रुत काँच में वांछित स्थान में उतराते हैं। इनके सिरे गोलाकार होते हैं या उनमें वृत्ताकार दाँतें होते हैं, जिसमें वे दीवालों के गोल सिरों या दाँतों में बैठ जायें। लम्बी कुण्ड भट्ठियों में दो या अधिक प्लवकों के समूह प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

पुनर्जनन पाट भट्ठियाँ

कुछ विशेष सिद्धान्तों का प्रयोग कर कई प्रकार की गैस तापित पुनर्जनन पाट भट्ठियाँ बनायी जाती हैं।

सीमन्स की भट्ठी

इस प्रकार की भट्ठी के मध्य में नीचे की तरफ चार पुनर्जनित्र, दो वायु के लिए और दो गैस के लिए, होते हैं। पात्र दो पंक्तियों में रखे जाते हैं। संगम चौड़ाई की दीवाल में स्थित होते हैं, इस कारण ज्वाला आरपार के किस्म की होती है। प्रत्येक पात्र के सामने कार्य-छिद्र होता है।

1. Combustion chamber 2. Port 3. Floater

'स्लिट' वूटेन भट्ठी

इस भट्ठी में भी नीचे की तरफ ४ पुनर्जनित्र, दो वायु के लिए और दो गैस के लिए होते हैं। पात्र दो पंक्तियों में रखे जाते हैं। संगम भट्ठी के फर्श में स्थित होते हैं। किसी टूटे हुए पात्र का द्रुत कांच हटाने के लिए, भट्ठी के मध्य में फर्श के नीचे एक कोष्ठ (पाकेट) सा होता है।

हार्वे सीमन्स की भट्ठी

इस भट्ठी में सिर्फ वायु के लिए पुनर्जनित्रों का एक कुलक होता है। गैस-उत्पादक, भट्ठी में बना होता है, इस कारण उत्पादक गैस भट्ठी में सीधी जाती है। संगम भट्ठी के फर्श में स्थित होते हैं। पात्र, फर्श पर दो पंक्तियों में रखे जाते हैं। प्रत्येक पात्र के सामने एक कार्य-छिद्र होता है।

साइमन कार्वे की भट्ठी

इस भट्ठी में चार पुनर्जनित्र होते हैं, दो वायु के लिए और दो गैस के लिए। पुनर्जनित्र पृथक् बनाये जाते हैं और उन पर भट्ठी का कोई भार नहीं होता। संगम भट्ठी के फर्श पर स्थित रहते हैं। किसी टूटे पात्र से निकलनेवाले द्रुत कांच के संचयार्थ मध्य में एक कोष्ठ होता है।

पुनर्जनन गैस-तापित कुंड भट्ठियाँ

कुण्ड भट्ठी का सामान्य वर्णन

कुण्ड भट्ठी में एक द्रवण-कक्ष और एक कार्य-कक्ष होता है। साधारणतया द्रवण-कक्ष आयताकार और कार्य-कक्ष अर्धवृत्ताकार होता है। बहुधा दोनों कक्षों के बीच एक दीवाल होती है जिसको 'सेतु' कहा जाता है। साधारणतः "सेतु-भीत" दोहरी होती है और इसके मध्य में वायु के लिए रिक्त स्थान होता है, जिसमें ईंटे और पट्टियाँ[1] ठंडी रह सकें और संक्षारण देर में हो। काँच की सतह के नीचे, सेतु में एक छिद्र होता है जिससे होकर द्रुत काँच, द्रवण-कक्ष से कार्य-कक्ष में गमन करता है। इस छिद्र को "कंठ" या "कूकर छिद्र" कहा जाता है। काँच-मिश्रण, द्रवण-कक्ष के अंतिम भाग में एक द्वार से या "कूकर-वाड़ी" में से डाला जाता है। "कूकर-वाड़ी" एक बक्स के आकार का द्रवण-कक्ष का विक्षेप होता है। यह काँच-मिश्रण से भर दिया जाता है।

1. Blocks काँचपिन्ट

"कूकर-वाड़ी" में मिश्रण-पदार्थों की सतह के नीचे एक छिद्र से, काँच-मिश्रण समय-समय पर भट्ठी में प्रविष्ट कराया जाता है। इस विधि से भरनेवाले छिद्र से, भट्ठी में ठंडी हवा प्रवेश नहीं कर पाती और काँच-मिश्रण के पूर्व-तापित होने के कारण भट्ठी की क्षमता बढ़ जाती है।

लघु कुण्ड भट्ठियाँ

लघु कुण्ड भट्टी में एक दिन में ही कई टन काँच का द्रवण, शोधन और निर्माण किया जा सकता है। एक पाँच टन लघु कुण्ड भट्ठी के द्रवण कक्ष का माप ८ फुट लम्बा, ४ फुट चौड़ा और २ फुट गहरा होना चाहिए। बगल की भीतें १८ इंच तथा छत सिलिका ईंटों की होनी चाहिए और मेहराब की त्रिज्या ४ फुट होनी चाहिए। इसमें सेतु दीवाल नहीं होती और कार्य-छिद्र पर वलय प्रयोग में लाये जाते हैं। लघु कुण्डों में ईंधन के लिए तेल का अधिकतर उपयोग किया जाता है और तापन की विधि या तो अव्यवहित होती है या पुनराप्त्र[1] प्रयोग में लाये जाते हैं।

अविराम कुण्ड भट्ठियाँ

इन भट्ठियों में काँच स्थिर सतह पर रखा जाता है और इसके लिए काँच-मिश्रण के प्रदाय की दर, काँच-निर्माण की दर के समान होती है। द्रवण-कक्ष और कार्य-कक्ष के मध्य में "सेतु-भीत" होती है। सेतु-भीत के ठीक नीचे या निकट एक राह होती है जिसको "कंठ" या "कूकर छिद्र" कहा जाता है, जिसमें होकर शुद्ध काँच द्रुत काँच से कार्य-कक्ष में जाता है।

तापन प्रणालियाँ

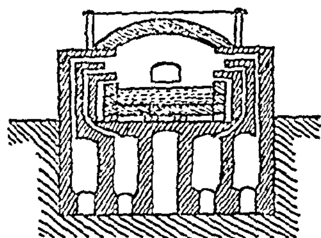
"अश्व-नाल ज्वाला"—इस प्रणाली में वायु एवं गैस भट्ठी के द्रवण-कक्ष में एक या अधिक संगमों से प्रवेश करती हैं। ज्वाला, भट्ठी की लम्बाई में फैलकर फिर वापस आती और प्रवेश संगम के निकट निष्क्रम संगमों में से होकर भट्ठी के बाहर चली जाती है। भट्ठी के अन्दर ज्वाला का रूप अश्वनाल-जैसा होता है।

"पारगमित ज्वाला"—इस प्रणाली में गैस एवं वायु भट्ठी के द्रवण-कक्ष में, लम्बाई की दीवाल और क्रम से स्थित कई संगमों से प्रवेश करती है तथा सामने की दीवाल और अनुरूप संगमों में से होकर ज्वाला भट्ठी के बाहर चली जाती है।

1. Recuperator

जब उत्क्रमण[1] किया जाता है तो दोनों प्रकार की प्रणालियों में प्रवेश-संगम निष्क्रम-संगम, और निष्क्रम-संगम प्रवेश-संगम बन जाते हैं।

कुण्ड भट्ठियों का परिमाण—इंगलैण्ड में कुण्ड भट्ठियों का परिमाण भट्ठी की काँचधारिता से व्यक्त किया जाता है और अमेरिका में काँच के प्रति दिवस उत्पादन से व्यक्त किया जाता है। द्रवण-कक्ष की लम्बाई, चौड़ाई से डेढ़ गुनी होती है और काँच की गहराई ३ से ५ फुट और औसत गहराई ३½ फुट होती है। प्रति टन द्रवित काँच के लिए १५ से १७ वर्गफुट द्रवण क्षेत्र होना आवश्यक है। नालियाँ, पुनर्जनित्र, संगम, दहन-कक्ष इत्यादि के विभिन्न मापों की गणना ताप, वेग और भट्ठी के विभिन्न भागों में गैसों के रहने के समय से की जा सकती है।



[चित्र २०—पुनर्जनन कुण्ड भट्ठी का काट]

पुनर्जनन कुण्ड भट्ठियाँ

कई प्रकार की गैस-तापित पुनर्जनन कुण्ड भट्ठियाँ होती हैं और प्रत्येक की अपनी अलग विशेषता और अनुरूप लाभ होते हैं।

सिमेन की भट्ठी

इस भट्ठी में चार पुनर्जनित्र; दो वायु और दो गैस के लिए होते हैं। गैस उत्पादक पृथक् बनाया जाता है और भट्ठी से निरपेक्ष रहता है। ज्वाला पारगमित प्रकार की होती है जो कि एक लम्बाई की दीवाल के संगम स्थान से सामने की लम्बाई की दीवाल के संगमों में होकर गमन करती है। कार्यकक्ष के सामने कई कार्य-छिद्र होते हैं।

हार्वे सीमेन्स की भट्ठी

इस भट्ठी में वायु के लिए सिर्फ दो पुनर्जनित्र होते हैं। गैस-उत्पादक भट्ठी का ही भाग होता है और गैस पूर्व तापित नहीं की जाती। ज्वाला जब अश्वनाल के प्रकार की होती है तब संगम पिछली चौड़ाई की दीवाल में स्थित होते हैं, या जब वह पारगमित प्रकार की होती है तब लम्बाई की दोनों दीवालों में कई संगम होते हैं।

1. Reversal

साइमन कार्वे की भट्ठी

इस भट्ठी में चार पुनर्जनित्र होते हैं, दो वायु के और दो गैस के लिए। पुनर्जनित्र भट्ठी से निरपेक्ष बनाये जाते हैं, इनका पेंदा इस्पात की शहतीरों और चपटी छड़ों के समूह पर आधारित होता है और छत की मेहराब, लोहे की पट्टियों से थमी रहती है।

गैस-तापित पुनराप्त्र भट्ठियाँ

पुनराप्ति—इस प्रणाली में गैस या वायु नलियों या संकीर्ण कक्ष से गमन करती है और कक्ष या नलियों के बाहर क्षय-गैसें गमन करतीं हैं। इस प्रकार क्षय-गैसों की ऊष्मा से गैस या वायु तापित हो जाती हैं। अतः यह अविराम प्रणाली है।

पुनराप्त्र

आरम्भ में लोहे की ढली हुई नलियाँ प्रयोग में आती थीं, परन्तु यह ५००° सें० से अधिक ताप पर नष्ट हो जाती हैं। अभी हाल में, गैस-टाइट रचना के लिए, विशेष इस्पात की नलियों का प्रस्ताव रखा गया है। परन्तु इसका मूल्य अधिक बैठता है। सिलिकन कार्बाइड का भी प्रस्ताव रखा गया है, यह मिट्टी की तुलना में ऊष्मा का अच्छा चालक है और धूलि-प्रतिरोधक भी है। व्यवहार में प्रायः ३१ प्रतिशत अल्युमिना युक्त मिट्टी प्रयोग में लायी जाती है।

पुनराप्त्रों के लिए यह आवश्यक है कि न्यूनतम आयतन में अधिक से अधिक स्पर्श सतह होना चाहिए। छोटे पुनराप्त्र कम झंझटयुक्त होते हैं और उनमें विकिरण-हानि कम होती है। आयतन कम होने पर रुकावट कम हो जाती है और सन्धियों की मरम्मत की कम आवश्यकता रहती है।

कई प्रकार की गैस-तापित पुनराप्त्र भट्ठियाँ होती हैं और प्रत्येक की अपनी-अपनी विशेषता रहती है।

स्टाइन एवं एटकिन्सन् की पुनराप्त्र पाट भट्ठी

इस भट्ठी में प्रयोग में आनेवाला पुनराप्त्र विशेष आकार का होता है। गैस उत्पादक भट्ठी में ही बनाया जाता है और गैस अव्यवहित रूप से भट्ठी में जाती है। भट्ठी के फर्श की सतह के नीचे और गैस उत्पादक से संलग्न पुनराप्त्र बनाये जाते हैं। द्वितीयक वायु कई उदग्र नालियों में गमन करने के कारण पूर्व तापित हो जाती हैं। भट्ठी के चक्ष में, वायु और गैस का मिलन होता है। क्षय गैसें अनुप्रस्थ दिशा में

और टेढ़े-मेढ़े ढंग से पुनराप्त्रों के रिक्त स्थानों की नालियों में से गमन करती हैं। इस प्रकार की पुनराप्ति प्रणाली में पुनराप्त्रों में च्याव का संकट न्यूनतम होता है, क्योंकि अनुप्रस्थ संधियों पर पुनराप्त्रों का दाब रहता है। पुनराप्त्रों में वायु और क्षय गैसों का सन्तुलन रहता है। इस प्रकार पुनराप्त्रों में च्याव नहीं होने पाता। टूटे पात्र से द्रुत काँच का संचय करने के लिए भट्ठी के नीचे एक कोष्ठ होता है।

हर्मेन्सन की पुनराप्त्र पाट भट्ठी

इस भट्ठी का पुनराप्त्र विशेष आकार का होता है। इसमें वायु और क्षय-गैसों की नालियाँ लम्ब कोण पर होती हैं। एक दूसरे में फँसने के कारण इन पुनराप्त्रों में च्याव का बहुत कम भय होता है। इन पुनराप्त्रों का बहुत ही आसानी से, सामने से निरीक्षण किया जा सकता है और आसानी से साफ किये जा सकते हैं। ये पुनराप्त्र भट्ठी में निरपेक्ष बनाये जाते हैं और बनाते समय भट्ठी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। ये पुनराप्त्र सहज में पृथक् हो सकते हैं जिससे इन पर किसी टूटे हुए पात्र के द्रुत काँच का कोई प्रभाव नहीं पड़ता।



[चित्र २१—
हर्मेन्सन का पुनराप्त्र]

टाइसन की पुनराप्त्र पात्र भट्ठी

इस भट्ठी के मध्य में एक या दो सीढ़ी-झंझरी के गैस उत्पादक[1] होते हैं और दोनों तरफ दो पुनराप्त्र कक्ष होते हैं। टूटे हुए पाटों से द्रुत काँच रोकने की व्यवस्था होती है और पुनराप्त्र सुगमता से पृथक् हो जाते हैं जिसमें उनके अन्दर द्रुत काँच प्रवेश न कर सके। उत्पादक से गैसें "चक्षु" में अव्यवहित गमन करती हैं और पूर्व तापित द्वितीयक वायु बर्नर में गैस से स्पर्श-रेखा पर मिलती है। पात्रों के सामनेवाले खम्भों के छिद्रों से क्षय गैसें बाहर निकल जाती हैं।

पुनराप्त्र कुण्ड भट्ठियाँ

इन्हीं सिद्धान्तों के अनुसार पुनराप्त्र कुण्ड भट्ठियाँ बनायी जाती हैं। साधारणतः इनमें द्वितीयक वायु को पूर्व तापित किया जाता है और गैस-उत्पादकों में से गैस अव्यवहित भट्ठी में जाती है। छोटे कुण्डों में ज्वाला एकल या युग्म अश्वनाल के आकार की होती है और बड़े कुण्डों में वह पारगमित प्रकार की होती है।

1. Step-Grate gas-producer

टाइसन की पुनराप्त्र कुण्ड भट्ठी

इस भट्ठी में दो सीढ़ीनुमा झर्झरी उत्पादक होते हैं। सिर्फ वायु पूर्व तापित की जाती है। छोटी भट्ठियों में सेतु नहीं होता, जब कि अविराम कुण्डों में संगम लम्बाई की दीवालों में और ज्वाला पारगमित प्रकार की होती है तथा द्रवण-कक्ष और कार्य-कक्ष के मध्य कोई सेतु नहीं होता।

स्टाइन की पुनराप्त्र कुण्ड भट्ठी

यह भट्ठी "टाइसन" भट्ठी की तरह होती है। सिर्फ इसके पुनराप्त्र "स्टाइन" के होते हैं।

पुनराप्त्र एवं पुनर्जनन प्रणालियों की तुलना

दोनों ही प्रणालियाँ अति प्रचलित हैं और दोनों में ऊँचा ताप आ जाता है जिससे ईंधन में बचत होती है। पुनराप्त्र प्रणाली में, साधारणतः गैस को पूर्व तापित नहीं किया जाता, परन्तु उत्पादक को भट्ठी से संलग्न बनाया जाता है। यह प्रणाली कम स्थान लेती है और इसमें परिवर्त्य कपाटों की आवश्यकता नहीं होती। यह सस्ती भी पड़ती है। प्रणाली के अविराम होने के कारण भट्ठी का ताप अधिक नियमित होता है। पुनराप्त्र प्रणाली में त्रुटि यह है कि पुनराप्त्रों की सन्धियों में च्याव हो सकता है और वायु एवं क्षय गैसें मिल जा सकती हैं। पुनराप्त्रों में धूलि और कालिख भी भर जा सकती है। गैस के अव्यवहित रूप से जा सकने के कारण भट्ठी में भी धूलि और कालिख भर जा सकती है।

पुनराप्त्र प्रणाली की अपेक्षा, पुनर्जनित्रों की जाली से अधिक सतहें उपयोग में लायी जा सकती हैं। पुनर्जनन से अधिक ऊँचा ताप आ सकता है। गैस को तप्त करने से, जैसा कि पुनर्जनन में किया जाता है, ज्वाला का कम विकिरण होता है। पुनर्जनन प्रणाली में भट्ठी का ताप घटता-बढ़ता है और यदि पात्र-भट्ठी हो तो पात्र टूट जा सकते हैं। पुनर्जनन भट्ठी निर्माण करना सहज है क्योंकि पुनराप्त्र प्रणाली की तरह इसमें उत्तम गुणों के तथा उच्च ऊष्मा चालकता और जटिल आकारों के पटियों (काँच-पिण्डों)[1] की आवश्यकता नहीं होती। क्योंकि गैस पूर्व तापित की जाती है, इसलिए गैस उत्पादक कहीं भी स्थापित किये जा सकते हैं। अन्त में यही कहना पड़ता है कि दोनों प्रणालियों में प्रतिद्वन्द्विता चलती ही रहेगी।

1. Blocks

भट्ठी की क्षमता

भट्ठी की क्षमता निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त की जा सकती है—

$$\text{क्षमता} = \frac{\text{द्रवण में ऊष्मा का व्यय}}{\text{सम्पूर्ण प्रदत्त ऊष्मा}} \times १००$$

सर्वोत्तम काँच की भट्ठी की क्षमता २० प्रतिशत से अधिक नहीं होती। ईंधन से जनित ऊष्मा का ८० प्रतिशत भाग, कुछ क्षय गैसों में, और अधिकतर भट्ठी के खुली सतहों से विकिरण द्वारा नष्ट हो जाता है।

संवहन-धाराएँ

पात्र या कुण्ड में भिन्न स्थलों में, ताप की भिन्नता होने के कारण, द्रुत काँच में संवहन धाराएँ होती हैं।

वन्द पात्र में, पेंदे और सामने की अपेक्षा, ऊपर और पीछे अधिक उच्च ताप होता है, इस कारण पीछेवाला गरम काँच, सामने की दिशा में वहता है और सामने का ठंडा काँच नीचे की दिशा में, फिर पेंदे से होता हुआ वह पात्र के पीछे की तरफ वहता है। इस प्रकार काँच-संचरण से काँच में समांगता आ जाती है और उसके शुद्धिकरण में सहायता मिलती है।

सेतु-भित्ति युक्त अविराम कुण्ड में तीन प्रकार की काँच धाराएँ होती हैं।

(१) क्योंकि कुण्ड का मध्य भाग किनारों से अधिक गरम होता है इस कारण दीर्घ-वृत्तीय प्रवाहों का एक युग्म वनता है जो कि काँच की सतह के मध्य भाग से लम्वी दीवालों की दिशा में वहता है, फिर ठंडी दीवालों से होकर नीचे की तरफ और फिर पेंदे से होते हुए मध्य में और यहाँ से धारा फिर ऊपर उठती है।

(२) मध्य की अपेक्षा काँच-मिश्रण-भित्ति और सेतु-भित्ति ठंडी होती है। इसलिए धाराएँ वहने लगती हैं। कुण्ड के मध्य से धारा ठंडी सेतु-भित्ति और काँच-मिश्रण-भित्ति की तरफ और फिर दीवालों से होते हुए नीचे की तरफ जाती है, फिर पेंदे से होते हुए मध्य में और यहाँ से फिर ऊपर उठती है।

(३) एक तीसरी धारा तव वनती है जवकि काँच कंठ में होकर द्रवण-कक्ष से कार्य कोष्ठ में जाता है और सेतु भित्ति से होता हुआ ऊपर तथा वहाँ से सतह पर होता हुआ कार्य-छिद्रों की तरफ नीचे जाता है, फिर पेंदे से होता हुआ कंठ की तरफ। यहाँ से, वास्तव में कुछ काँच द्रवण-कक्ष में लौट जाता है।

धाराएँ काँच के मिश्रण में सहायता देती हैं और इस प्रकार उसको समांग बनाती हैं। अद्रवित काँच-मिश्रण और कूड़े-करकट को कंठ से पृथक् रखने में भी ये सहायता देती हैं। कंठ और कार्य कोष्ठ में ये ऊँचा ताप भी कायम रखती हैं।

कुण्ड की दीवालों को, धाराएँ अति शीघ्र संक्षारित कर देती हैं क्योंकि ये मिट्टी-काँच का घोल हटाती रहती हैं और ऊष्मसह पदार्थों की नयी सतहें खोलती रहती हैं। जितना काँच व्यवहार में आता है उससे अधिक कंठ में से गमन करता है और इससे कुण्ड की द्रावण क्षमता[1] निम्न हो जाती है और कंठ अति शीघ्र संक्षारित हो जाता है।

चिमनी

चिमनी के निर्माण का उद्देश्य है कि दहन-उत्पाद वायुमण्डल में निकल जायँ और भट्ठी या उत्पादक में विभिन्न गैस-धाराओं का संचरण[2] हो सके। ज्वाला को भट्ठी के प्रायः मध्य तक लाने के लिए, और संगमों से गमन करने एवं पुनराप्त्रों या पुनर्जनित्रों तथा नालियों के घर्षण का अतिक्रम करने के लिए वहति की मात्रा यथेष्ट होनी चाहिए। वहति की तीव्रता, क्षय गैसों के उस समय के ताप पर, जब कि वे पुनर्जनित्रों से निकलकर चिमनी में प्रवेश करती हैं, और चिमनी की ऊँचाई एवं व्यास पर निर्भर करती हैं।

वहति का दाव या चिमनी निर्वात निम्न प्रकार से व्यक्त किया जाता है।

$$(\text{जल आभान}^{3}\ \text{इंचों में})\ \text{ज} = .०१२ \times \text{ऊ} \times \left(\frac{३५५}{\text{ता}_{\text{वा}}} - \frac{३५५}{\text{ता}_{\text{क्ष}}}\right)$$

ऊ = चिमनी की फुटों में ऊँचाई।

$\text{ता}_{\text{वा}}$ = वायु का प्रकेवल[4] ताप।

$\text{ता}_{\text{क्ष}}$ = क्षय-गैसों का प्रकेवल ताप।

चिमनी का व्यास इतना होना चाहिए कि क्षय गैसों की गति १२ से २५ फुट प्रति सेकण्ड हो सके। चिमनी की रोक इस प्रकार नियमित करनी चाहिए जिससे दाव इतना हो कि जल-आभान (जल-प्रमाप) सिर्फ एक इंच के कुछ सौवें भाग के बराबर

1. Capacity 2. Circulation चक्रण 3. Watergauge जलप्रमाप 4. Absolute

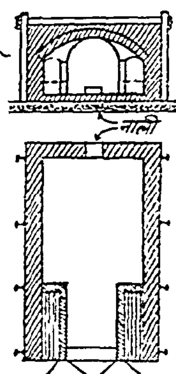
हो। इससे भट्ठी में दाव अति अल्प धनात्मक रहता है। यदि दाव ऋणात्मक होता है तो किसी भी छिद्र या दरार से, बाहर की वायु भट्ठी में प्रवेश कर सकती है। यदि दाव अधिक धनात्मक होता है तो भट्ठी में दहन उत्पाद अधिक समय तक रहेंगे और गैस एवं वायु-मिश्रण के आने में बाधा पड़ेगी तथा भट्ठी का ताप गिर जायगा।

अनुप्रस्थ काट—चिमनी के लिए वृत्ताकार अनुप्रस्थ काट उत्तम होता है क्योंकि इस आकार में गैसों का सरल प्रवाह रहता है और चिमनी वायु के दाव को सहन कर सकती है। निष्क्रम गैसों की अधिकतम और न्यूनतम गतिक्रम से २५ फुट और १२ फुट प्रति सेकन्ड से अधिक न होनी चाहिए। चिमनी में गैसें ३° से ५° सें० प्रति रेखीय फुट की दर से ठंडी होती हैं। प्रत्येक भट्ठी के लिए पृथक् चिमनी होना उत्तम है। यदि एक चिमनी एक से अधिक भट्ठियों के लिए बनायी गयी है और एक भट्ठी क्रियात्मक है तब चिमनी का अनुप्रस्थ काट बहुत बड़ा हो जायगा और चिमनी में ऊपर से बाहरी वायु प्रवेश कर सकेगी। दो भट्ठियाँ यदि एक ही चिमनी से सम्बन्धित होती हैं तो दोनों परस्पर प्रभाव डालती हैं जिससे कार्य में कठिनाई होती है। चिमनी की गैसों को बाहर निकालने की सामर्थ्य उसके अनुप्रस्थ काट एवं ऊँचाई के वर्गमूल के अनुपात में होती है। १५० टन समाई की भट्ठी के लिए ९० से १०० फुट ऊँची चिमनी यथेष्ठ है। इस ऊँचाई को उत्पादक की झर्झरी की सतह से नापना चाहिए।

पात्र-तापन भट्ठी

पात्र-तापनभट्ठी[1] वास्तव में एक प्रकार की छोटी भट्ठी होती है जिसमें द्रावण-भट्ठी में रखने के पूर्व, पात्र धीरे-धीरे तप्त किये जाते हैं।

अव्यवहित तापित[2] पात्र-तापन-भट्ठी—इसमें पात्र रखने के लिए एक कक्ष होता है। कक्ष के सामने एक द्वार होता है जिससे होकर पात्र भीतर या बाहर किये जाते हैं। द्वार के दोनों तरफ चूल्हे होते हैं और फर्श के निकट पीछे की दीवाल में क्षय-गैसों के लिए निकास होता है। पात्र-तापनभट्ठी का ताप प्रायः एक सप्ताह में क्रमशः १०००° सें० तक बढ़ाया जाता है। अव्यवहित तापन में, अति ऊँचा ताप लाना सम्भव नहीं है जिससे कक्ष में बहुत से स्थान ठंडे रह जाते हैं।

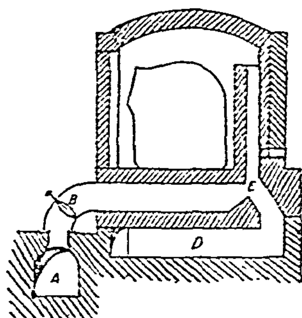


[चित्र २२—पात्र-तापनभट्ठी]

1. Pot arch 2. Direct fired

गैसतापित पात्र-तापनभट्ठी—आधुनिक पात्र-तापन भट्ठी गैस द्वारा तापित की जाती है, जिसके कारण ताप का उत्तम नियंत्रण सम्भव हो जाता है। क्योंकि द्वितीयक वायु पूर्व तापित्त होती है, इस कारण ताप भी अधिक उच्च आता है।

एक प्रकार की भट्ठी में, गैस को मुख्य गैस नाली (A) (धूममार्ग) से जल संमुद्रित लोहे की ढलवाँ कपाटयुक्त नली (B) से, भट्ठी के फर्श के नीचे की नाली में ले जाया जाता है। द्वितीयक वायु, गैस के नीचे नाली (D) में प्रवेश करती है और पूर्व तापित हो जाती है। गैस और वायु (E) में मिश्रित होकर, भट्ठी में जाती हैं और इससे खूब विकसित ज्वाला निकलती है। निष्क्रम-संगम[1] फर्श के निकट, द्वार के दोनों तरफ कक्ष के सामने होते हैं।



[चित्र २३—गैस-तापित पात्र-तापनभट्ठी]

पात्र को भट्ठी में रखने योग्य उपयुक्त ताप पर लाने के लिए ५ या ७ दिवस की अवधि आवश्यक होती है।

सुरंग भट्ठी—जब कि अधिक पात्रों की आवश्यकता होती है तब पात्रों का तापन बजाय पात्र-तापन भट्ठी के सुरंग भट्ठी में किया जाता है। यह सुरंग भट्ठी, मिट्टी के बर्तनों के तापनार्थ व्यवहार में आनेवाली सुरंग भट्ठी के ही सदृश होती है, सिर्फ अन्तर यह होता है कि इसमें पात्रों को ठंडे करने की व्यवस्था नहीं होती। पात्र गाड़ी में रखे जाते हैं। जब एक गाड़ी सुरंग के ठंडे सिरे से आगे ढकेली जाती है तब दूसरी गाड़ी मय एक भट्ठी के उपयुक्त तप्त पात्र सहित सुरंग के दूसरे सिरे पर बाहर निकलती है।

पुनस्तापन छिद्र—औजारों इत्यादि से रूपण करने[2] के पूर्व काँच-वस्तुओं को पुनस्तापन छिद्रों में अल्प समय के लिए एक-समान तप्त किया जाता है। ये साधारणतः कोयले से और कभी-कभी उत्पादक गैस या कोयला-गैस से भी तापित किये जाते हैं। कुछ स्थानों में तेल-तापित पुनस्तापन छिद्र भी प्रयोग में आते हैं।

सबसे सरल प्रकार का पुनस्तापन छिद्र अग्नि-ईंटों या शिलाओं (खण्डों) का बना

1. Exit Ports 2. Shaping

एक कक्ष होता है। इसका आन्तरिक परिमाण प्रायः १२″×९″×९″ होता है। इसके दोनों तरफ एक-एक छिद्र होता है जिसमें से काँच वस्तुएँ पुनस्तापन के लिए रखी जाती हैं।

कक्ष के एक तरफ के छिद्र से तेल या गैस और संपीडित वायु को धमन किया जाता है। कोयले की तापन-विधि में, फर्श पर एक चूल्हा होता है। दहन-उत्पाद छत पर एक छोटी चिमनी द्वारा बाहर निकल जाते हैं।

अभितापन भट्ठियाँ[1]

किलन भट्ठी

इसमें एक कक्ष ईंटों का बना होता है, जिसमें काँच-वस्तुएँ रखी जाती हैं और अभितापन ताप तक तापित कर धीरें-धीरे ठंडी की जाती हैं। कक्ष में एक द्वार होता है और द्वार में उचित परिमाण का एक छिद्र, जिसमें से काँच-वस्तुएँ रखी जाती हैं। द्वार की एक तरफ चूल्हा होता है और चूल्हे की झंझरी पर इतनी देर तक कोयला जलाया जाता है कि कक्ष का ताप अभितापन ताप के बराबर हो जाय। क्षय-गैसें कक्ष की पिछली दीवाल के ऊपर एक निकास से बाहर निकल जाती हैं। काँच वस्तुएँ तैयार हो जाने पर इसी तप्त कक्ष में लबालब भर दी जाती हैं और द्वार का छिद्र बन्द कर दिया जाता है। फिर यथाविधि ताप क्रमशः कम किया जाता है। भट्ठी ठंडी हो जाने पर द्वार खोला जाता है और अभितापित काँच वस्तुएँ बाहर निकाली जाती हैं।

यदि अभितापन निपुणता और वैज्ञानिक ढंग से नियमित हो तो किलन भट्ठी में प्रायः पूर्ण अभितापन हो जाता है। परन्तु इसमें अधिक समय और व्यय लगता है। साधारणतः यह विधि भारी काँच-वस्तुओं के लिए या उन कारखानों में जहाँ लेयर नहीं बनी है, प्रयोग में लायी जाती हैं।

अविराम पेटी या तसलों की लेयरें

लेयर, ईंटों की बनी सुरंग होती है और इसमें एक सिरा रहित पेटी या शृंखला पार-गमन करती है, और उस पर क्रम से तसले या थालियाँ रखी रहती हैं। सुरंग का एक सिरा कोयला या गैस द्वारा तापित किया जाता है। सुरंग के एक सिरे पर तसलों में निर्माण के पश्चात् ही काँच की वस्तुएँ रख दी जाती हैं। जैसे ही एक तसला काँच-वस्तुओं से भर जाता है वैसे ही दूसरा तसला सुरंग में ढकेल दिया जाता है और इस प्रकार तसले तप्त भाग से धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं। दूसरे सिरे तक पहुँचने तक वे

1. Annealing furnaces

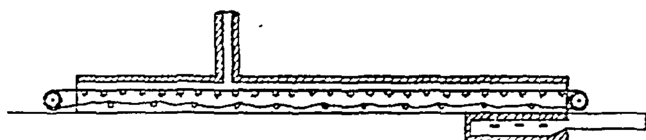
क्रमशः ठंडे होते जाते हैं, क्योंकि सुरंग के एक सिरे से दूसरे सिरे तक ताप क्रमशः कम होता जाता है। लेयर के सामने अग्नि-ईंटों का १० से १५ फुट लम्बा दहनकक्ष होता है और इसी से लगी हुई ५ से १२ फुट चौड़ी और ४० से १०० फुट लम्बी सुरंग होती है। तसले या तो एक दूसरे से कड़ी द्वारा सम्बन्धित होते हैं या एक अविराम पेटी होती है जो यंत्र द्वारा ऐसे प्रवेग से चलायी जाती है जो कि काँच-वस्तुओं के परिमाण और गुण के उपयुक्त हो। वहतियों को रोकने के लिए, लेयर के आरम्भ में शृंखलाओं का परदा होता है। अभितापित काँच-वस्तुएँ निकालनेवाले सिरे से कुछ उपयुक्त दूरी पर छत में क्षय-गैसों के निकास के लिए एक छोटी चिमनी होती है। तसलों की लेयरों में हानि यह है कि उनमें बहुधा वहति का प्रवेश होने लगता है और ताप-प्रवणता[1] को ठिकाने से नियमित करना सम्भव नहीं है। क्योंकि क्षय-गैस वायु से हलकी होती है इसलिए इन लेयरों में गैसें छत के नीचे होती हुई आगे बढ़ती हैं। तसलों या पेटी के नीचे रिक्त स्थानों में वायु-धाराएँ प्रवेश कर जाती हैं और वहाँ पर गरम गैसों की पहुँच नहीं हो पाती, अतः लेयर तसलों या पेटी की सतह पर आपेक्षिक ठंडी होती है, इसलिए इस सतह पर और ऊपर के तापों में अन्तर रहता है। छत के नीचे ताप-प्रवणता सन्तोषजनक हो सकती है, परन्तु पेटी के निकट ताप शीघ्रता से कम होता जाता है, इसलिए काँच-वस्तुओं के पेंदे अवांछित दर से शीघ्र ठंडे होते हैं। भारी पेंदेवाली बड़ी काँच-वस्तुओं के लिए यह अति हानिकारक हैं, क्योंकि उनके पेंदों के ठंडे होने की दर और कम होनी चाहिए। छत की मेहराब मध्य में बगलों की अपेक्षा अधिक दूरी पर होती है और यह भी अभितापन (निस्तापन) में खराबी ला सकती है। यदि ताप बढ़ा दिया जाय तो बगलोंवाली काँच-वस्तुएँ द्रवित हो जाती हैं। इन लेयरों में काँच वस्तुओं पर मृदुलक[2] जम जाता है अर्थात् वे "गन्धक मय" हो जाती हैं।

'हार्वे सीमन्स' की लेयर

यह लेयर उत्पादक गैस से तापित की जाती है। काँच-वस्तुएँ, निर्माण के पश्चात् तुरन्त ही लेयर के तप्त सिरे पर सिरा-रहित पेटी पर रखी जाती है। यह सिरा दोनों तरफ स्थित संगमों से निकलती हुई गैस से तापित होता है। पेटी कई बेलनों की कतारों या पहियों पर आगे बढ़ती है और कोण-लोहे पेटी को सीधा रखते हैं। पेटी, भिन्न वेग की विद्युत मोटर या हाथ से ही चलायी जाती है और इसकी गति ८ से १६ फुट प्रति घंटा होती है। कर्षण-शृंखला पेटी ढले हुए कुट्य लोहे की होती है और इसमें इस्पात

1. Temperature gradient 2. Bloom

के पट्टे लगे होते हैं। यही पेटी लेयर में होकर गमन करती है। लेयर का अधिकांश भाग गैस-ज्वाला के दहन-उत्पादों से गरम होता है। लेयर में ताप क्रमशः कम होता जाता है। लेयर के एक उपयुक्त स्थान में छोटी चिमनी होती है जो गैस-ज्वाला को उभाड़ती है और दहन-उत्पादों को लेयर में से गमन कराती है। लेयर के दूसरे सिरे पर काँच-वस्तुएँ जब पहुँचती हैं तो वे काफी ठंडी हो जाती हैं, वहाँ वे निकाल कर धोने के पश्चात् संचित की जाती हैं।



[चित्र २४—हार्वे सीमेन्स की लेयर]

'टाइज़न' की लेयर

इस लेयर में तप्त कक्ष के नीचे झर्झरी सीढ़ियों का उत्पादक होता है। तापन-कक्ष की दोनों दीवालों में दहन-कक्ष होते हैं। प्रत्येक वर्नर पर पूरा नियंत्रण होने के कारण, काँच-वस्तुओं के उपयुक्त ताप में भिन्नता लायी जा सकती है। लेयर के तापन-कक्षवाले फर्श के नीचे कई तापन-नालियाँ होती हैं जिनका दहन-कक्षों से सम्बन्ध रहता है। ये नालियाँ ईंटों को गरम कर देती हैं और नीचे से विकिरण द्वारा पेटी गरम हो जाती है। तापन-कक्ष का फर्श और बगल की दीवालें अवगुंठन[1] का कार्य करती हैं। ऊष्मा विकिरण द्वारा प्राप्त होती है, इसलिए भीतर का ताप स्थिर रखा जा सकता है। ज्वलित गसें ठंडे कक्ष की दिशा में कर्षित होती हैं जिसके फर्श के नीचे एक या दो अनुदैर्घ्य नालियाँ होती हैं जो कि अन्य नालियों द्वारा तसलों की सतह या पेटी के निकट कक्ष से सम्बन्धित होती हैं और कक्ष की पूर्ण लम्बाई में विभाजित रहती हैं। पेंदे की नाली से चिमनी में एक या अधिक निकास होते हैं। लेयर में गमन करती हुई तप्त गैसें पेटी की तरफ कर्षित होती हैं और नीचे की नाली मे प्रवेश कर तप्त हो जाती हैं। क्षय-गैसें चिमनी में होकर वाहर निकल जाती हैं। इस व्यवस्था से अनुप्रस्थ काट में ताप-अन्तर न्यूनतम किया जा सकता है। दो चिमनियाँ होने के कारण, फर्श का दूर का सिरा बहुत तप्त नहीं हो पाता। वायु की ठंडी धाराओं को रोकने के लिए, लेयर की लम्बाई

1. Muffle

में ऐसबसटस के परदे होते हैं। काँच-वस्तुएँ लेयर के ठंडे सिरे पर पहुँचने पर काफी ठंडी हो जाती हैं और लेयर से हटा दी जाती हैं।

'सिम्पले' की अवगुंठ लेयर

अवगुंठ लेयरों में काँच पर मृदुलक नहीं जमता क्योंकि काँच-वस्तुओं का ज्वालाओं से सम्पर्क नहीं होता। लेयर की छत सूक्ष्म टाइलों की बनी और चपटी होती है। बर्नर चूल्हे के ऊपर स्थित होता है और ज्वाला दोनों बगलों से तसलों के नीचे कंपित होती है। वहति का नियंत्रण करने से समूचे चूल्हे में नियमित ताप सम्भव होता है। पहले २५ फुट तक तापक्रम से नियमित ढंग से कम होता है और इससे काँच-वस्तुओं का अभितापन सकुशल हो जाता है। टाइलों के पतले होने के कारण ऊष्मा का अधिक विकिरण और ईंधन का कम क्षय होता है। चूल्हों में रुकावटों की प्रणाली होती है जिससे ऊष्मा का आवश्यकतानुसार स्थानान्तरण किया जा सकता है।

बारहवाँ अध्याय

हाथ से सुषिर काँच-वस्तुओं का निर्माण

बोतल-निर्माण

बोतल-निर्माण के लिए श्रमिकों का एक कुलक होता है जिसको "अड्डा" कहा जाता है। इस अड्डे में ५ व्यक्ति काम करते हैं—(१) संग्राहक, (२) धमक, (३) पूर्णक, (४) भिगोनेवाला और (५) ढोनेवाला। पूर्णक ही बोतल-निर्माता होता है और वही अड्डे का मुखिया है।

कुण्ड भट्ठी का कार्य-छिद्र द्रुत काँच की सतह के ऊपर रहता है जो कि आकार में प्रायः १० इंच ऊँचा और ८ इंच चौड़ा होता है। इसका आकार या तो अश्व नाल के सदृश या प्रायः अर्धवृत्त होता है।

भट्ठी के अन्दर और कार्य-छिद्र के सामने या तो एक छोटा पात्र होता है जिसके पेंदे में कुछ खुली जगह होती है या अग्नि-मिट्टी का एक वलय काँच में उतराता रहता है। यह काँच संग्रह करते समय सतह के उतराते हुए मैल को नाड पर नहीं आने देता। सेतुयुक्त भट्ठियों में साधारणतः वलय प्रयोग में आते हैं। जब भट्ठी में सेतु नहीं होता तब पाट (पात्र) या लघु पाट प्रयोग में लाये जाते हैं।

वलय अग्नि-मिट्टी से बनाये जाते हैं और इनका आन्तरिक व्यास १२ से १४ इंच, चौड़ाई ३ इंच, और गहराई ४ से ५ इंच होती है। ये सतह पर उतराते रहते हैं और इनका दो तिहाई भाग द्रुत काँच में डूबा रहता है। पात्र या लघु पात्र वलयों की अपेक्षा काँच में अधिक गहराई तक प्रवेश करते हैं, इनका आकार प्रायः शंकु-जैसा होता है और इनके पेंदे में एक छिद्र होता है। लघु पात्रों का ताप भी बहुत कम होता है।

धमनाड

संग्राहक धमनाड पर द्रुत काँच संग्रह करता है। धमनाड ५ फुट लम्बी, तीन चौथाई से एक इंच बाह्य व्यास और चौथाई इंच छिद्रवाली लोहे की नली होती है। संग्रह करनेवाला सिरा "नासिका" कहा जाता है और यह साधारणतः कुछ स्थूल होता है। इसकी स्थूलता काँच के परिमाण और आकार पर भी निर्भर होती है। बड़ी वस्तुओं के लिए अधिक काँच की आवश्यकता होने के कारण कुछ और भारी

और स्थूल नासिका की आवश्यकता होती है। अधिक मात्रा में संग्रह किया हुआ काँच देर में ठंडा होता है, इससे नाड तप्त हो जाता है। यदि नाड की नासिका तनु हुई तब काँच में कचरा आ जाता है और धमित वस्तुओं में "लोहधाराएँ" निकल आती हैं। परन्तु यदि नाड ठंडा है तो काँच ठीक से नहीं पकड़ पायेगा और यदि पकड़ भी गया तो वह ठंडा हो जायगा और धमन के लिए अति श्यान होगा।

'विराम पट्ट'[1] पर बहुत से नाड रखे रहते हैं, जिनकी नासिकाएँ कार्य-छिद्र के भीतर होती हैं। संग्राहक पट्ट से सबसे अधिक तप्त नाड उठाता है और उसके स्थान में ठंडा नाड रख देता है।

संग्रह-विधि

नाड पर काँच "डुबोने" या "लपेटने" की विधि से संग्रह किया जाता है।

डुबोने की विधि

इस विधि में नाड को द्रुत काँच में कुछ इंचों तक धीरे से प्रविष्ट किया जाता है। नाड को निकालते समय, शीघ्रता से घूर्णन कराया जाता है। भट्ठी के बाहर निकालने के पूर्व या निकालने के पश्चात् तुरन्त ही, नाड में मुख द्वारा थोड़ा-सा धमन किया जाता है। इस विधि में हानि यह है कि धमन के कारण संगृहीत काँच में और कुण्ड के काँच में भी बुलबुले बन जा सकते हैं। यदि द्रुत काँच में बुलबुले बन जाते हैं तो अनुवर्त्ती संग्रहों में भी यह खराबी हो सकती है।

लपेटने की विधि

इस विधि में, नाड की नासिका काँच की सतह को कुछ स्पर्श करती है और नाड को उठाते समय तथा भट्ठी से निकालते समय, लपेट कर घुमाया जाता है। इस विधि से संग्रह अधिक ठोस और बल्ब के आकार का होता है। यह संग्रहविधि अधिक प्रयोग में लायी जाती है।

संग्रह करने के पश्चात् नाड को जलयुक्त नाँद के पास ले जाया जाता है और वहाँ उपयुक्त रीति से झुकाकर और एक ही दिशा में घुमाकर काँच को सही आकार में बनाया जाता है। यह आकार नाशपाती से कुछ मिलता-जुलता होता है।

नाड को एक मेज़ के किनारे पर रखकर संग्राहक या भिगोनेवाला उसे इधर-उधर बेलता है।

1. Resting plate

धमनकरण[1]

धमक संग्राहक या भिगोनेवाले से नाड लेता है और एक विशेष पट्टी पर काँच वेला जाता है। यह एक चिकनी चपटी पट्टिका होती है जिसका आकार प्रायः ३′×१′×$\frac{1}{8}$″ होता है। यह धमक से कुछ झुका रहता है। संगृहीत काँच पट्टी के किनारे पर घुमाया जाता है, इससे वह नासिका के अन्तिम किनारे पर आ जाता है। संगृहीत काँच को, चिकनी पट्टी पर इधर-उधर घुमाने से एक चिकना ठोस नियमित आकार प्राप्त होता है।

संगृहीत काँच के आकार में पट्टी द्वारा नोक वनायी जाती है और उसी समय मुख से थोड़ा-सा धमन किया जाता है। संगृहीत काँच को 'गाँठ' या 'गोले' का रूप दिया जाता है जिसका पारिभाषिक नाम "पैरीसन" "शून्य" या "प्रारम्भिक आकार" कहलाता है।

पैरीसन वनाना भी एक कला है क्योंकि इसका आकार और परिमाण काँच-वस्तु के सदृश होना चाहिए।

कुछ हालतों में पैरीसन को फिर से पट्टी के सहारे वेलते हैं जिससे वोतल का इच्छित व्यास का कंठ वन जाय। पैरीसन का पेंदा, चिपटे पत्थर या चिकने लोहे की पट्टिका पर चिपटा किया जाता है। पैरीसन के पेंदे का परिमाण प्रायः वोतल के पेंदे के समान रखा जाता है और पैरीसन की लम्बाई को सही करने के लिए नाड को उद्ग्र थाम कर, पैरीसन को लम्बा होने दिया जाता है। फिर धम साँचे में पैरीसन को धमित कर अभीष्ट आकार वनाया जाता है।

साँचे

काँच को धमन या पीडन द्वारा आकार में लाने के लिए साँचों का प्रयोग होता है। आदर्श साँचा ऐसा होना चाहिए जिससे काँच-वस्तु की सतह चमकीली और मखमली तैयार हो सके और प्रयोग काल में शीघ्र नष्ट न हो। उसमें उच्च ऊष्मा चालकता होनी चाहिए। साँचे विभिन्न पदार्थों के वनाये जाते हैं।

साँचे ऐसे पदार्थों के होने चाहिए जिनमें सघन कण हों और वनावट[2] एक समान हो। इसमें काँच साँचे में चिपकता नहीं है। साँचों के पदार्थों में ऐसी विशेपता होनी चाहिए कि वे उच्च ताप पर गर्तन, शल्कन की क्रिया सह सकें और उनमें टेढ़ापन न आने पाये। ऐसे पदार्थ खराद योग्य और सस्ते भी होने चाहिए।

1 - The blowing operation 2.- Texture

काष्ठ के साँचे

काष्ठ के साँचे उन लकड़ियों के वनाये जाते हैं जिनसे प्राप्त कोयला कोमल प्रकृति का होता है। जिनसे कठोर एवं चमकीला काष्ठ कोयला प्राप्त होता है, वे काष्ठ असम हो जाते हैं और उनमें वलय पड़ जाते हैं। अच्छे प्रकार से शुष्क और स्पष्ट सूत्रों की लकड़ियाँ इस कार्य के प्रयोग में लायी जाती हैं। लकड़ियों को सूत्रों के आड़े भाग से काटा जाता है अर्थात् वढ़ने की लम्व दिशा में। साँचे रुखानी द्वारा या खराद कर वनाये जाते हैं। ये साँचे धीरे-धीरे जलकर नष्ट होते रहते हैं, अतः इनमें वनायी गयी वस्तुओं का परिमाण क्रमिक रूप से दीर्घ होता जाता है।

एक साँचे से प्रायः १००० से १५०० तनु और ५०० स्थूल काँच -वस्तुएँ वनायी जा सकती हैं। लकड़ी के साँचों से वनी वस्तुओं में अग्नि प्रमार्ज रहता है यानी उनकी सतह चिकनी और पालिशदार होती है। काठ के साँचे वहुधा पेंदा रहित होते हैं। साधारणतः काठ के साँचे एक या दो भागों में वनाये जाते हैं और ये भाग कब्जों द्वारा जुड़े होते हैं। यदि आकार सरल होता है तो पैरीसन को वमन करते समय, नाड सहित साँचे में घूर्णन किया जाता है और इस प्रणाली से काँच की सतह सम एवं चिकनी हो जाती है।

कार्वन के साँचे

कार्वन के साँचे वनाने के लिए, चूर्ण किया हुआ गैस का कार्वन कोयला, या ग्रेफाइट और तार या राल के मिश्रण को काठ के साँचे में इस प्रकार दवाकर लगाया जाता है कि कार्वन की उपयुक्त स्थूलता की परत वन जाती है। इस प्रकार वने हुए साँचे को काट कर दो भाग किये जाते हैं और उनको तप्तकर, वन्धन पदार्थ को वाष्पित कर दिया जाता है। तव साँचे को एक लकड़ी की पेटी में रखा जाता है और यह प्रयोग के लिए तैयार हो जाता है। कार्वन के वने साँचे भी काठ के साँचों के सदृश वमित काँच-वस्तुओं को अग्नि पालिश युक्त कर देते हैं। लकड़ी के साँचों की अपेक्षा ये अधिक स्थायी होते हैं।

लोहे के ढलवाँ साँचे

साधारणतः ये ही साँचे प्रयोग में लाये जाते हैं और ये वहुत स्थायी होते हैं। यदि ढले लोहे में कार्वन संयुक्त रूप में अधिक होता है तो खराद करने में कठिनाई होती है, परन्तु इसमें अधिक चिकनाई और तीव्र किनारे आते हैं। ग्रेफाइट के रूप में अधिक कार्वन से लोहा कोमल और सहज में खराद योग्य हो जाता है। इसकी सतह सरन्ध्र होती है जिससे काँच की सतह में अच्छी पालिश नहीं आती। साँचों का लोहा

श्लिष्ट कणों का होना चाहिए और उसमें ग्रेफाइट की न्यूनतम मात्रा रहनी चाहिए। ग्रेफाइट को सूक्ष्म कणों के रूप में एक समान वितरित होना चाहिए। ढले लोहे को शीघ्र ठंडा करने से यह गुण उत्पन्न होता है। यदि विशेष पदार्थों का प्रयोग किया जाय और निर्माण में सावधानी रखी जाय तो ढला लोहा, बगैर ठंडा किये हुए भी, प्रयोग में लाया जा सकता है। ऐसे साँचे, धमित काँच वस्तुओं की सतह को खुरदरा कर देते हैं जो देखने में बिना पालिश की मालूम पड़ती हैं। परन्तु विभाजित साँचों में, काँच की वस्तुओं की सन्धि पर एक उभरी रेखा आ जाती है जिसको "साँचा चिन्ह" कहा जाता है। इन दोषों को दूर करने के लिए, लकड़ी के साँचों का प्रयोग या लोहे के साँचों में लेपी का प्रयोग करना चाहिए। साँचों का ताप लाल ऊष्मा के निकट होना चाहिए जिसमें कि इनसे स्पर्श होने पर काँच ठंडा न हो जाय। साँचों को अति तप्त भी न होना चाहिए नहीं तो उनमें काँच चिपक जायगा।

निकल के एक मिश्र धातु की ढलाई घनी और सूक्ष्म कणों से युक्त होती है।

क्रोमियम की एक मिश्र धातु (क्रोमियम १ प्रतिशत) स्थायित्व को बढ़ाती है और संयुक्त कार्बन के विच्छेदन के कारण आयतन के अन्तर को न्यूनतम करती है। मिश्रित धातुओं में सबसे अधिक कठिनाई यह है कि उनको खरादना कठिन होता है और उनकी ऊष्मीय चालकता निम्न होती है। कुछ भी हो, फिर भी, निकल, क्रोमियम, सिलिकन और मैंगनीज़ की पृथक् या संयुक्त मिश्र धातुएँ काँच के साँचों के लिए बन गयी हैं। इस्पात की भी एक मिश्र धातु जिसमें निकल, क्रोमियम, टन्गस्टेन, ताम्र और सिलिकन हैं, प्रयोग में आ रही है। इनका मूल्य अधिक, खराद करना कठिन और ऊष्मीय चालकता निम्न होती है। परन्तु ये संक्षारण-प्रतिरोधक हैं और इनमें चिकनी पालिश रहती है।

लेपी साँचे

ये साँचे लोहे से ढालकर बनाये जाते हैं और इनकी भीतरी या आकार देनेवाली सतह पर लेपी की एक परत होती है, जिससे काँच की सतह पर अग्नि-पालिश आ सके। तापन होने पर, साँचे की भीतरी सतह पर एक समांग कार्बन की तनु परत बन जाती है। इन साँचों में, दोनों प्रकार के, अर्थात् कार्बन एवं लोहे के साँचों का लाभ है। धमन करते समय परीसन को साधारणतः घुमाया जाता है, इससे साँचों के चिह्न और सतह की असमांगता नहीं आने पाती।

लेपी साँचों को तैयार करना अति कठिन होता है। लेपी लगाने की विधि उतनी ही आवश्यक है जितनी कि लेपी की संरचना।

लेपी साँचों की तैयारी

(१) काष्ठ कोयला और राल के सूक्ष्म चूर्णों को मिश्रित कर, साँचे पर फैलाया जाता है और तप्त काँच के संग्रह द्वारा इसको एकसमान चिकना किया जाता है।

(२) साँचे की सतह तप्त की जाती है। अलसी के तेल और राल को इतना उबाला जाता है कि उसमें गोंद की जैसी श्यानता आ जाय। तब इसे गाढ़ी वार्निश की तरह तप्त साँचे की भीतरी सतह पर ब्रुश से लगा दिया जाता है, और इसके ऊपर लकड़ी का बुरादा या आटा छिड़क दिया जाता है। साँचे को पुनः तापन करने पर कार्बन की दानेदार परत बन जाती है।

(३) वार्निश और राल की बराबर मात्राओं का द्रवण कर उसमें एक तिहाई भाग लाल सीस का मिश्रित किया जाता है। साँचे में लेपी बराबरी से लगायी जाती है और तब इसके ऊपर काष्ठ कोयले का सूक्ष्म चूर्ण चालनी से छिड़क दिया जाता है।

प्रयोग के पूर्व या तो लेपी साँचों को कई घंटे तक ऐसा ही पड़े रहने देते हैं या भट्ठी पर तप्त करते हैं। लेपी साँचे, पानी में भिगोकर प्रयोग में लाये जाते हैं और प्रत्येक वस्तु के वमन करने के पूर्व, साँचे पानी में डुबोये जाते हैं।

पीतल के साँचे

सतहों पर गहरी नकाशी बनाने के लिए पीतल के साँचे प्रयोग में आते हैं।

विशेष प्रकार के कार्यों के लिए अल्यूमिनियम, लोहनिकल मिश्रधातु और अकलुष इस्पात के साँचे प्रयोग में लाये जाते हैं। इन साँचों में मोरचा नहीं लगता।

क्रोमियम रोपित साँचे

इन साँचों पर ताप, रसायन और ऋतु का कोई प्रभाव नहीं पड़ता, इस कारण इनमें मोरचे का भय नहीं है। क्रोमियम का कोमल ढले हुए लोहे पर विद्युदंशिक रोपण अधिकतर उत्तम होता है। यह संक्षारण रोकता है और कठोर होने के कारण घर्षण, धक्के और टक्कर सहन कर लेता है। इसकी नक्काशी की रेखाएँ तीव्र और सतह चिकनी होती है। इन साँचों से काँच पूर्णतया पृथक् हो जाता है। साँचों को बार-बार स्वच्छ करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। यद्यपि यह महँगा है, परन्तु अधिक समय तक काम देता है।

निकल एवं रजत-रोपित साँचे

इन साँचों में मोरचा नहीं लगता और न इनमें लेपी लगाने की आवश्यकता होती है। इनकी सतह अति सम और चिकनी होती है। यद्यपि ये साँचे महँगे पड़ते हैं और

कुछ ही समय में रोपण अनियमित ढँग से नष्ट हो जाता है जिसको फिर से करना पड़ता है।

धमन साँचे

धमन साँचे दो प्रकार के होते हैं—

(१) अभ्याकर्षण प्रकार—इसमें पेंदा लोह-पट्टिका का होता है जिसको "साँचा पट्टिका" नाम से व्यक्त किया जाता है। इसमें दो अर्ध भाग होते हैं। साँचा पट्टिका में एक अर्ध भाग उदग्र स्थापित रहता है और दूसरा भाग पहले से अनुप्रस्थ दिशा में कब्जों से जुड़ा रहता है। जब पैरीसन को प्रथम अर्ध भाग में स्थित करते हैं तब दूसरा अर्ध भाग संलग्न छड़ या शृंखला द्वारा घुमाया जाता है और तब साँचा पूर्ण रूप से बन्द हो जाता है।

(२) पदचालित प्रकार—इस प्रकार के साँचे का भाग जिसमें बोतल का निचला भाग बनता है, अखण्डित और सुषिर सिलिन्डरनुमा होता है। साँचे के कंधा और कंठ दो भाग होते हैं और प्रत्येक भाग नीचे के भाग से अनुप्रस्थ दिशा में कब्जों से जुड़ा होता है। पैरीसन साँचे के पेंदे तक ले जाया जाता है और ऊपरी भाग को धमनकर्त्ता पैर से दबाकर बन्द कर देता है। तत्पश्चात् धमनकर्त्ता अपनी पूरी शक्ति के साथ नाड में वायु धमन करता है और पैरीसन धमन साँचे के आकार का बन जाता है।

'पूर्णक क्रिया' या 'कंठ-निर्माण'

धमन के पश्चात् जब साँचे में बोतल ठोस हो जाती है तब धमक साँचे से बोतल और नाड निकालकर भिगोनेवाले श्रमिक को देता है और वह सूक्ष्म नलीदार बर्तन से या किसी और ढंग से नाड की नासिका के सामने कंठ पर जल की कुछ बूँदें गिराता है जिससे बोतल के कंठ पर बहुत-सी छोटी-छोटी दरारें बन जाती हैं। बोतल पर थोड़ी-सी चोट लगाने से वह नाड से पृथक् हो जाती है और एक पेटी में गिर पड़ती है।

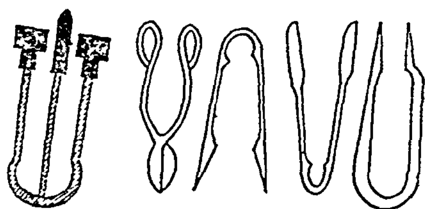
चौड़े मुँह की वस्तुओं के लिए, धमन के पश्चात् और नासिकावाले काँच के ठोस होने के पूर्व, धम-नाड को ऊपर की दिशा में उठाया जाता है और धम-नाड का आन्तरिक दाब पूर्व-जैसा ही स्थिर रखा जाता है। इस प्रकार काँच-वस्तु के ऊपर तन्तु काँच की एक नली बन जाती है जिससे काँचवस्तु जुड़ी रहती है। साँचे से निकालने के पश्चात् थोड़े से ही स्पर्श से तनु नली टूट जाती है और इस प्रकार बोतल नली से पृथक् हो जाती है। काँच-वस्तु को धम-नाड से पृथक् करने की इस विधि को 'कागज स्फार' कहा जाता

है। इस विधि में यह हानि है कि पतले काँच के टुकड़े काँच-वस्तु के भीतर गिर जा सकते हैं और यदि काँचवस्तु यथेष्ट गरम हुई तो टुकड़े भीतर चिपक जा सकते हैं।

वोतल-निर्माता पृथक् की हुई वोतल को एक औजार से, जिसको 'पन्टी' या 'पान्टिल' कहा जाता है, हटाता है। यह एक लोहे की छड़ होती है जिसके सिरे पर लोह का चिरा हुआ सिलिण्डर होता है। सिलिण्डर का परिमाण इतना होता है कि जिसमें वोतल ठीक से फँस जाय।

पन्टी को कार्य-छिद्र से संलग्न एक खूँटी पर रखा जाता है। एक छोटी लोहे की छड़ के, जिसको "लोह वलय" कहा जाता है, सिरे पर पूर्णक कुछ काँच संग्रह करता है और इसको वोतल के कंठ के सिरे के चतुर्दिक एकसमान लगाता है।

वोतल-निर्माता कुर्सी पर वैठकर, वोतल का कंठ पूर्ण करता है। कुरसी में अनुप्रस्थ लम्वी भुजाएँ होती हैं। उन पर पन्टी रखी जाती है और वोतल-निर्माता वायें हाथ से पन्टी को इधर-उधर घुमाता है। उसके दाहिने हाथ में वोतल का कंठ वनाने के लिए एक औजार होता है। यह औजार चिमटा के प्रकार का होता है जिसके दोनों सिरों पर साँचे होते हैं और मध्य में एक छड़ होती है जिसके उपर एक डाट होती है। यह डाट कंठ के आन्तरिक माप की होती है, इसको वोतल के मुँह में प्रविष्ट किया जाता है और चिमटे के दवाने पर कंठ के ऊपर का कोमल काँच, साँचों द्वारा दवता है। जैसे ही पन्टी घुमायी जाती है, काँच दवकर वांछित आकार का हो जाता है और इस प्रकार वोतल का 'कंठवलय' वन जाता है।



[चित्र २५—चिमटे एवं कैंचियाँ]

पूर्ण की हुई वोतल को पन्टी से पृथक् कर एक पेटी में गिराते हैं और वहाँ से ढोनेवाला व्यक्ति, एक लम्वी लोहे की छड़ या काँटों द्वारा वोतल को किलन या लेयर में ले जाता है।

निर्माण की गति

उत्पादन की दर, वस्तुओं के परिमाण और आकार पर निर्भर है। दस छटाँक की वोतल के, जिसका भार $\frac{1}{2}$ सेर होता है, औसत उत्पादन की दर प्रायः १ ग्रोस प्रति घंटा होती है। किसी भी समय ५ वोतलें वनती रहती हैं, क्योंकि अड्डे का प्रत्येक व्यक्ति विधि के किसी विशिष्ट भाग में लगा होता है। इस विधि में एक कार्य-छिद्र

के लिए ३६ धमनाडों की आवश्यकता होती है। जब कि भिगोनेवाला धमनाड से बोतल को चटका कर पृथक् करता है तब धमनाड एक लोहे या जाली की पेटी में खड़ी कर दी जाती है, जिसमें कि नाड की नासिका पर लगा हुआ काँच चटककर पृथक् हो जाय। जब यह काँच पृथक् हो जाता है, तब नाड को कार्य-छिद्र में तप्त होने के लिए पुनः रख दिया जाता है।

बोतल-निर्माण की अन्य विधियाँ

(अ) इस विधि में अड्डे में चार व्यक्ति काम करते हैं। दो संग्राहक धमक, एक निर्माता या पूरक और एक ढोनेवाला।

संग्रह करनेवाले व्यक्ति लोह नलियों पर काँच संग्रह करते हैं और लोह-पट्टिका पर तुरन्त आकार देते हैं। यह पट्टिका पृथ्वी से ३ फुट ऊपर श्रमिक के विपरीत कुछ झुकी रहती है। पैरीसन धमन के पश्चात् कंठ का भाग, पट्टिका के किनारों द्वारा संकीर्ण बना दिया जाता है। साधारणतः कागज-स्फार की विधि अपनायी जाती है। चौड़े मुँह की वस्तु के लिए, बोतल के कंठ और धमन-नासिका के मध्य का काँच, बोतल के कंठ के काँच से कुछ तनु रखा जाता है। बोतल सहित नाड कुरसी पर रखा जाता है और उसको इधर-उधर घुमाया जाता है। धमक, भोंथरी कैंची से, बोतल में कंठ के निकट काँच की एक नलिका बनाता है। नाड पर एक हलकी चोट देते ही, कैंची के चिह्न के निकट बोतल नाड से पृथक् हो जाती है।

पूर्णक पन्टी से बोतल उठाता है और पुनः तापन छिद्र में कंठ को पुनः तापित करता है। ठीक पिछली विधि के अनुसार कंठ बनाया जाता है।

(आ) इस विधि के अनुसार, अड्डे में ६ श्रमिक कार्य करते हैं जिनमें ३ पुरुष और ३ लड़के होते हैं। काँच संग्रह के पश्चात् तुरन्त ही छिछले प्याले में घुमाया जाता है, जिसमें निरन्तर जल पहुँचाया जाता है। संगृहीत काँच इस प्रकार शीघ्र ठंडा हो जाता है और उसका धमन कर पैरीसन बनाया जा सकता है।

पदचालित साँचे में धमन के पश्चात्, नाड से बोतल को कागज-स्फार विधि द्वारा पृथक् किया जाता है। एक लड़का बोतल को साँचे से निकाल कर पन्टी में लगा देता है। दूसरा लड़का पुनः तापन छिद्र के पास ले जाता है जहाँ कि पूर्णक कंठवलय निर्माण करता है। दो पुनः तापन छिद्र प्रयोग में आते हैं और इस प्रकार एक न एक बोतल पुनः तापित होती रहती है। जब पूर्णक बोतल को पूर्ण रूप से बना लेता है, तब दूसरा लड़का पण्टी और बोतल थाम लेता है और साँचे के निकट खुली आलमारी

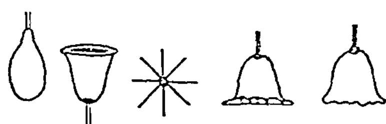
में रख देता है। ढोनेवाला, वोतल को पण्टी से पृथक् करता है और पण्टी को पहले लड़के के संलग्न रख देता है।

इस विधि में पेटी की आवश्यकता नहीं पड़ती, अतः संग्राहक प्रत्येक संग्रह के लिए अव्यवहित भट्ठी पर जाता है।

विधि (अ) में तीन ही नाडों से काम होता है जब कि साधारण विधि में ३६ नाड उपयोग में लाये जाते हैं। पुनः तापन के कारण वोतल का कंठ अच्छा और चिकना वनता है। भिगोनेवाले की सेवा की आवश्यकता नहीं होती। परन्तु भारी प्रकार की काँच-वस्तु, जैसे कि दूध-वोतल, और सोडा, जल इत्यादि की वोतलों के लिए विधि (अ) प्रयोग में नहीं लायी जा सकती। विधि (आ) में विधि (अ) की अपेक्षा, निर्माण की दर दूनी होती है।

नालीयुक्त लैम्पशेड का निर्माण

काँच को धमनाड पर संग्रह किया जाता है, तत्पश्चात् धमन कर वल्व के आकार का वनाया जाता है। फिर इस पर इतना आवश्यक काँच संग्रह किया जाता है कि जो लट्टू वनाने के लिए पर्याप्त हो। लपेट और धमन कर काँच का पैरीसन इस प्रकार का वनाया जाता है कि निम्न भाग शेड के ऊपरी भाग के आकार का लगभग हो जाय। वल्व के नीचे कुछ मात्रा द्रुत काँच की लगायी जाती है जिसमें वह भाग कोमल हो जाता है और नाड में धमन करने पर उस विन्दु पर एक छिद्र वन जाता है। छिद्र को वृत्ताकार कैंची द्वारा काट दिया जाता है। इसी छिद्र द्वारा शेड प्रकाश व्रेकट में लगाया जा सकता है। एक सहायक श्रमिक कुछ काँच पण्टी पर संग्रह कर खुले छिद्र भाग पर लगाता है और तव नाड को चटका कर पृथक् कर लिया जाता है। चटके हुए सिरे को पुनः तापित कर काटकर, फिर एक आकार देनेवाले काष्ठ निर्मित औजार से खोला जाता है। फिर किनारे को थोड़ा अनुप्रस्थ स्फार दिया जाता है और जमीन पर रखे हुए आकार देनेवाले औज़ार पर पण्टी को उदग्र थामा जाता है। इस औजार में वहुत-सी तनु लोह छड़ें केन्द्र से विकिरण होती हैं और अग्नि मिट्टी या दूसरे आधार में स्थित रहती हैं। पण्टी को इतना ही नीचे किया जाता है कि काँच का स्फारी भाग अरीय छड़ों को कुछ ही स्पर्श करे। लोह छड़ों को



[चित्र २६—नालीयुक्त लैम्प शेड का उत्पादन]

स्पर्श करनेवाला काँच ठंडा, अतएव कठोर हो जाता है, जब कि छड़ों के मध्य का काँच

कोमल रहने के कारण कुछ लटक जाता है। उचित समय पर पण्टी शीघ्रता से ऊपर उठायी जाती है और हाथ से घुमाने पर स्फार में आवश्यक गिरावट आ जाती है, इससे शेड में एक समान नालीमा अत्ता जाती है। तव शेड को पण्टी से चटकाकर पृथक् कर लिया जाता है और लेयर में निस्तापन के लिए रख दिया जाता है।

नालीयुक्त या सकूट काँच

एक विशेप प्रकार के साँचे में धमन कर पैरीसन वनाया जाता है। यह साँचा लोहे की चादर का वृत्ताकार होता है और इसकी ऊँचाई ६ से १२ इंच तक होती है, इसमें लोहे की चादर के कई अरीय प्रक्षेप होते हैं। इस प्रकार के साँचे में पैरीसन को धमन करने पर, काँच की वाहरी सतह सकूट (रिव्ड) हो जाती है। काँच को दूसरे साँचों में भी कार्य करने पर यह नालीयुक्तता वनी रहती है।

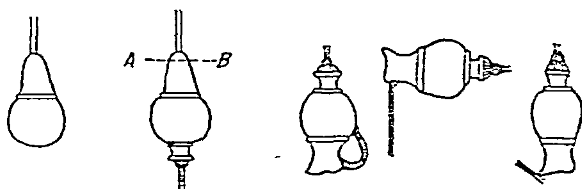
कुंतल प्रकार की नालीयुक्तता लाने के लिए काँच को साँचे के वाहर निकालने के पश्चात्, पैरीसन के अन्तिम सिरे को चिमटे से पकड़ और स्थिर कर, नाड को घुमाया जाता है।

कुम्भी-निर्माण

काँच को संगृहीत एवं लपेटकर काष्ठ के साँचे में धमन करते हुए कुम्भी के ऊपरी भाग के समान आकार का वनाया जाता है। दूसरा श्रमिक एक दूसरे धमनाड पर पर्याप्त काँच संग्रह करता है और उसको साँचे में धमन कर कुम्भी के पेंदे के आकार के सम वनाता है। जव पेंदा साँचे में घूमता रहता है उस समय एक गहरा वलय चिह्न चिमटे द्वारा वनाया जाता है, जहाँ से चटकने पर काँच को पृथक् करने में सुविधा हो। ऊपरी एवं निचला भाग भट्ठी में तापित किया जाता है और कोमल होने पर दोनों भाग दवाकर आपस में मिला दिये जाते हैं। तव ऊपरी भाग वलय चिह्न (A B) पर नम लोहे द्वारा चटका कर पृथक् कर लिया जाता है और खुला भाग छिद्र में पुनः तापित किया जाता है। कोमल होने पर, ऊपरी भाग चिमटे द्वारा फैलाया जाता है और पुनः तापित किया जाता है। दो स्थानों में कैंची द्वारा किनारा नीचे झुकाया जाता है और प्रक्षेपित भाग को चिमटा या कोई और आकार देनेवाले औज़ार से दवाकर कुम्भी की चंचु वनायी जाती है।

फिर एक सहायक, पण्टी पर कुछ काँच संग्रह करता है और उसको लपेट और दवाकर लम्वे सिलिन्डर के रूप में वनाता है। सिलिन्डर को उदग्र थामकर, उसके नीचे कुम्भी अनुप्रस्थ दिशा में इस प्रकार रखी जाती है कि सिलिन्डर का निचला सिरा

कुम्भी से किनारे के निकट और चंचु के व्यासीय विपरीत चिपक जाय। सिलिन्डर को इतना दबाया जाता है कि वह कुम्भी से उस विन्दु पर जुड़ जाता है। धमक बायें हाथ से कुम्भीवाला नाड पकड़कर, सिलिन्डर की लम्बाई में से इतना काटता है कि कुम्भी की मुठिया के अनुसार वह वांछित लम्बाई में रहे। तब वह सिलिन्डर के कटे हुए सिरे को झुकाकर कुम्भी के उस स्थान पर दबाता है जहाँ मुठिया का निचला जोड़ होना चाहिए। कुम्भी को तब संकीर्ण स्थान पर चटकाया जाता है और नाड से पृथक्कर, अभितापन के लिए लेयर में ले जाया जाता है।



[चित्र २७—कुम्भी-निर्माण]

काँच पर आवरण

कभी-कभी रंगहीन काँच की भीतरी सतह पर लाल या नीले रंग के काँच की बहुत सूक्ष्म परत-आवरण के रूप में लगायी जाती है। कभी-कभी रंगीन काँच की पतली परत दो रंगहीन परतों के मध्य में भी दी जाती है।

इस प्रकार की सजावट की विधि को 'आवरण' नाम से व्यक्त किया जाता है। स्फटिक काँच की सतह पर रंगीन काँच का आवरण कर और फिर उस पर कोई चित्र काटकर या निक्षारण कर देने से बहुत सुन्दर प्रभाव आता है। दूसरे रूपान्तर में स्फटिक काँच पर दो या अधिक रंगों के आवरण किये जाते हैं, फिर एक भिन्न गहराई की नकाशी काटकर बनायी जाती है, जिससे बहुत ही आकर्षक रंग की विभिन्नता आती है। पात्रों में रंगीन काँच द्रावण कर, उसको संग्रह कर या रंगीन काँच की छड़ों का प्रयोग कर आवरण किया जा सकता है।

पात्र पर आवरण चढ़ाना

रंगीन काँच से बाह्य आवरण बनाना

धमनाड पर रंगहीन काँच का संग्रह कर फिर उसको धमन कर लट्टू बनाया जाता है। लट्टू को रंगीन काँच के पाट में डुबोकर इतना घुमाते हैं जिससे आवश्यकता

से कुछ अधिक स्थूलता का आवरण चढ़ जाय। इस प्रकार आवृत पैरीज़न को धमन कर आकार वनाया जाता है।

रंगीन काँच से आन्तरिक आवरण वनाना

धमनाड पर रंगहीन काँच का संग्रह कर फिर उसको धमन कर लट्टू वनाया जाता है। लट्टू को रंगीन काँच के पात्र में डुवोकर घुमाया जाता है। फिर उसके ऊपर रंगहीन काँच को वस्तु-निर्माण की उपयुक्त मात्रा में संग्रह कर धमन द्वारा आकार वना दिया जाता है। रंगीन काँच दो निरंग काँच की परतों के मध्य रखा जाता है।

भिन्न स्थूलता की रंगीन परत का निर्माण

धम-नाड पर रंगहीन काँच का लट्टू वनाकर उसके ऊपर रंगीन काँच संग्रह किया जाता है। लट्टू के सिरे पर, रंगीन काँच में लोह छड़ से एक छिद्र किया जाता है, अतः वहाँ पर काँच तनु हो जाता है। लट्टू को धमन कर अव कुछ वड़ा वनाया जाता है और तव उस पर कुछ और निरंग काँच संग्रह किया जाता है जिसके कारण आन्तरिक भाग में रंगीन काँच का वलय वन जाता है जो कि वीच में स्थूल और ऊपर-नीचे गावदुम होता है। लट्टू को दवाने और लपेटने के वाद धमन कर काँच-वस्तु वनायी जाती है जिसमें भिन्न स्थूलता और असम रंग का रंगीन काँच निर्मित होता है।

काँच की रंगीन छड़ों के प्रयोग से आवरण चढ़ाना

काँच की रंगीन छड़ें १० से १२ इंच लम्वी और डेढ़ इंच व्यास की वनायी जाती हैं और जव रंगीन काँचों के पात्र उपलव्ध नहीं होते तव इनका प्रयोग किया जाता है।

एक रंगीन काँच की छड़ को तोड़कर प्रायः दो समान भागों में वाँटा जाता है और फिर भट्ठी के निकट एक पट्टिका पर तापित एवं कोमल होने के लिए रखा जाता है। एक लोहे की छड़ के सिरे पर कुछ संगृहीत काँच में यह संलग्न किया जाता है और फिर कोमल होने के लिए इसे कार्य छिद्र में रखा जाता है। उसी समय एक धम-नाड पर रंगहीन काँच का लट्टू वनया जाता है। जव लट्टू ठंडा हो जाता है तव धमनाड को भट्ठी के निकट क्षैतिज दिशा में थामते और कोमल की हुई रंगीन छड़ को लट्टू पर इतना दवाते हैं कि लट्टू छड़ में आधी दूर तक धँस जाय। रंगीन छड़ कुछ फैल जाती है और लट्टू के निकट कैंची से काट दी जाती है। पैरीज़न को पुनः तापन छिद्र में तापित कर रंगीन काँच को काष्ठ के औज़ार द्वारा सतह पर एकसमान फैलाते हैं। लट्टू के ऊपर कुछ और निरंग काँच संग्रह कर पूर्व ढंग से वस्तु निर्माण की जाती है।

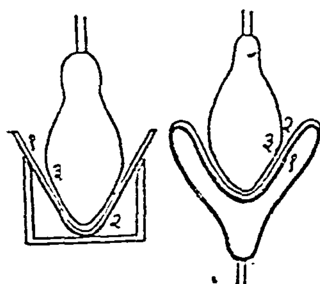
कीप विधि से आवरण चढ़ाना

यदि काटने या निरेखण करने के लिए रंगीन आवरण काँच की पतली परत बनाना है तो यह विधि उपयुक्त है।

इस विधि के दो रूपान्तर हैं—

(१) धमनाड पर रंगहीन काँच का बड़ा लट्टू बनाकर उस पर रंगीन काँच का आवरण दिया जाता है। लट्टू को धमन कर अधिक से अधिक परिमाण का बनाया जाता है, जिससे आवरण की परत सूक्ष्म हो जाय। लट्टू के निचले भाग को पण्टी से संलग्न कर, धम-नाड से चटकाकर पृथक् कर दिया जाता है। खुले भाग को चौड़ा कर, कीप के आकार का बनाते हुए, पण्टी उससे पृथक् कर दी जाती है। इस काँच की कीप को लकड़ी की पेटी पर सीधा रखा जाता है। धमनाड पर रंगहीन काँच का लट्टू बनाया जाता है। इसको काँच कीप पर आलम्बित करते हैं। आरम्भ में लट्टू का सिरा ही कीप के पेंदे को स्पर्श करता है। धीरे-धीरे एवं क्रमशः धमन से आवृत कीप लट्टू से संलग्न हो जाता है।

(२) धमनाड पर उपयुक्त परिमाण का रंगहीन काँच का लट्टू बनाया जाता है। निचले भाग पर रंगीन काँच से आवरण कर तब लट्टू को धमन कर इसे बनाया जाता है। निचले आवृत भाग को कोमल करने के लिए लट्टू को कार्य-छिद्र में तापित किया जाता है। धमनाड को उदग्र थामा जाता है जिससे कोमल भाग नीचे लटक जाय। धमनकर्ता संकुचन के लिए, धमनाड से वायु मुंह द्वारा कर्षण करता है। तब लट्टू को धमनाड से पृथक् कर दिया जाता है और काँच की रंगहीन वाह्य परत (१) पर जल छिड़का जाता है जिससे वह चटककर पृथक् हो जाती है और सिर्फ कीप के आकार का आवृत काँच (२) रह जाता है। एक दूसरे धमनाड पर निरंग काँच का लट्टू (३) बनया जाता है और इसको धमन कर, पहली विधि के अनुसार कीप आकार के आवृत काँच (२) के ऊपर आलम्बित किया जाता है।

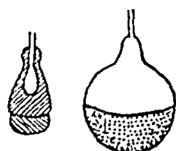


[चित्र २८—कीप विधि से आवरण]

अर्ध-आवृत काँच

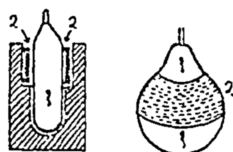
अर्ध आवृत काँच प्रकाशदीपों के लिए प्रयोग में लाया जाता है। साधारणतः रंगहीन काँच पर आवरण देने के लिए उपलीय काँच प्रयोग में लाया जाता है।

(१) निम्न अर्ध आवृत—धमनाड पर रंगहीन काँच का लट्टू धमन कर उसका सिरा चपटा किया जाता है। उस सिरे पर पर्याप्त रंगीन काँच एकसमान लगाया जाता है। कुछ और धमन करने पर ऐसा लट्टू बनता है जिसका निम्न भाग आवृत होता है।



[चित्र २९—निम्न अर्ध आवृत काँच]

(२) ऊपरी अर्ध आवृत—रंगीन काँच का एक बेलनाकार ट्यूब जिसका व्यास वांछित वस्तु से कुछ कम होता है, साँचे द्वारा बनाया जाता है। आवरण की गहराई के अनुसार, सिलिन्डर से वलय काट लिये जाते हैं। प्रत्येक वलय का एक सिरा घिसकर चिकना कर लिया जाता है। फिर वलय को कोमल करने के लिए तापित किया जाता है, तब उसे एक उपयुक्त साँचे के ऊपरी अर्ध भाग के आले में रखते हैं। फिर इस साँचे में रंगहीन पैरीसन धमन किया जाता है और इससे कोमल वलय चिपक जाता है। पुनः तप्त करने से, दोनों काँच ठीक से जुड़ जाते हैं और तब पैरीसन को धम-साँचे में धमन कर आकार बना दिया जाता है।



[चित्र ३०—ऊपरी अर्ध आवृत काँच]

प्रसार गुणांक का समंजन

काँचों को आवृत करने में यह आवश्यक है कि उनके प्रसार-गुणांक प्रायः एक समान हों।

होवस्टाट एवं शार्प की विधि

जोड़ने योग्य काँच की सम लम्बाईवाली दो छड़ें अगल-बगल रखी जाती हैं, किनारों को तप्तकर चिमटे द्वारा उन्हें दबाया जाता है जिसमें काँच जुड़ जायें। संधित भाग को कर्षित कर पतली पट्टी बनायी जाती है जिसमें दोनों पहले के काँच परस्पर विपरीत रहते हैं। ठंडी होने पर पट्टी उस काँच की तरफ झुकती है जिसका सम्पूर्ण प्रसार कोमल काँच की अपेक्षा कोमलांक तक अधिक होता है। पट्टी में अति अल्प या शून्य वक्रता

हो, या बिलकुल न हो, तो उससे यह सूचित होता है कि सावधानी से अनितापन करने पर दोनों काँचों का जोड़ संतोषजनक हो सकता है परन्तु यदि वक्रता अधिक है तो यह सम्भव नहीं है।

दूसरी विधि में आवृत काँच का दो इंच व्यास का सिलिन्डर बनाया जाता है। फिर इसके वलय काटे जाते हैं और इनका अनुदैर्घ्य विपाटन किया जाता है। यदि दो काँचों में प्रसार-गुणांक एक समान होते हैं तो कटे हुए सिरे काफी निकट रहते हैं। यदि सिरे काफी दूर-दूर हो जायँ, या बहुत कुछ या एक-दूसरे पर चढ़े हों, तो दोनों काँचों के प्रसार गुणांक भिन्न और आवरण के अनुपयुक्त होते हैं।

तेरहवाँ अध्याय

यंत्रों द्वारा सुषिर काँच-वस्तुओं का निर्माण

वाष्प इंजन का उद्भाव[1] होते ही काँच तथा सभी उद्योगों में यंत्रों का प्रयोग आरम्भ हुआ। पिछले पचास वर्षों में कई प्रकार के उद्भाव हुए और बड़ी उन्नति हुई है, सर्व प्रकार की काँच की वस्तुएँ बनाने के लिए भी जो पहले हाथ से निर्मित होती थीं, यंत्रों का निर्माण हो गया है।

यद्यपि यंत्र-निर्मित काँच की वस्तुओं में कला और अपनी विशिष्टता की कमी है, परन्तु सही परिमाणों के लिए ये उत्तम होती हैं। काँच के यांत्रिक निर्माण से कठिन परिश्रम दूर हो गया है और उत्पादन में वृद्धि हुई है जिससे काँच वस्तुएँ सस्ती हो गयी हैं।

बोतल-निर्माण यंत्र

बोतल-निर्माण यंत्र का उद्भाव करनेवालों ने इसके लिए मुंह से बोतल-धमन-क्रिया की नकल की है। बोतल-निर्माण यंत्र में साधारणतः तीन प्रकार के साँचों की आवश्यकता होती है।

(१) पैरिज़न या प्रारम्भिक आकार साँचा—यह लोहे का ढलवाँ अखण्ड साँचा होता है। यह ऊपर से खुला होता है और भीतर का आयतन, काँच-वस्तु से प्रत्यक्ष में कुछ कम होता है। इसका भीतरी आकार ऐसा होता है कि इसमें ढालने पर काँच का ऐसा आकार बने जो कि धम-साँचे में धमन करने पर सहज में धम-साँचे का आकार ग्रहण कर ले।

(२) कंठवलय साँचा—इस साँचे में दो स्वतन्त्र अर्ध वृत्ताकार खण्ड कब्जों पर गठित होते हैं। बंद करने के लिए एक मुठिया और फँसाने की डक होती है। इस साँचे का आकार ऐसा होता है कि यह पैरिज़न साँचा और धम साँचा, दोनों के ही ऊपर ठीक से बैठ जा सकता है। यह पैरिज़न का धम साँचे में बदल देने का काम करता है।

(३) धम साँचा—यह भी ढलवाँ लोहे का होता है। इसका भीतरी आकार काँच की वस्तु के बाह्य आकार सदृश होता है। साँचा दो अर्धों का बना होता है।

1. Invention

संकीर्ण कंठ या चौड़े मुँह की बोतलों और कलशों के निर्माण में कई प्रकार के यंत्र प्रयोग में आते हैं।

पीड एवं धमन-यंत्र

यह यंत्र चौड़े मुँह की वस्तुओं, जैसे बोतलों और कलशों के निर्माण के लिए उपयुक्त है।

यंत्र का चालन[1]

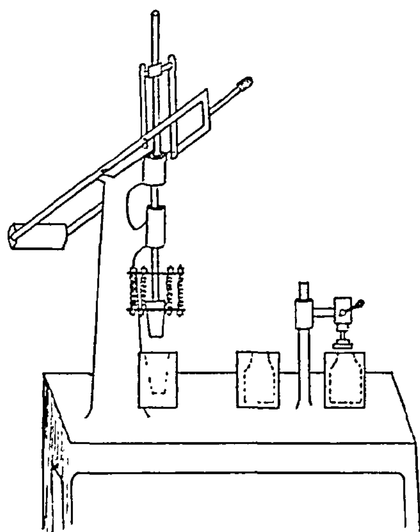
लोहे की ढलवाँ मेज पर एक दिशा में पैरिज्न साँचा होता है। इसके पीछे एक स्तम्भ पर मज्जक[2] स्थित होता है। मज्जक एक हस्तक से चलाया जाता है। मज्जकभुजा पर चार लम्बे बाल्टुओं[3] और कमानियों से समावर्तित पट्टिका लगी होती है। द्रुत काँच, लोहे के बरतन में इकट्ठा किया जाता है और पैरिज्न साँचे में आवश्यकतानुसार कैंची से काटकर गिराया जाता है। कंठ वलय साँचा तब इसके ऊपर रखा जाता है और हस्तक को नीचे झुकाया जाता है। हस्तक झुकाने से, पट्टिका नीचे आकर कंठवलय साँचे को ऊपर से बन्द कर देती है। लीवर (हस्तक) को कुछ और झुकाने से, द्रुत काँच में मज्जक प्रवेश करता है और काँच को साँचे के आकार का बना देता है, तथा काँच को वलय साँचे तक पहुँचाता है। चूँकि मज्जक और पट्टिका साँचे पर पूर्णरूप से बैठ जाती हैं इस कारण दबाने से द्रुत काँच साँचे के बाहर नहीं निकल पाता।

कुछ ही समय पश्चात् हस्तक को ऊपर उठाया जाता है और नीचे लटकते हुए पैरिज्न सहित कंठ वलय साँचे को, मेज की दूसरी तरफ स्थित, दो में से एक धम साँचे के ऊपर रखा जाता है। धम साँचे के पीछे एक और स्तम्भ होता है जिस पर धम शीर्ष[4] होता है और इसको घुमाकर किसी भी धन साँचे के ऊपर लाया जा सकता है। हस्तक को घुमाने से एक पिस्टन नीचे आता है। पिस्टन के नीचे सिरे पर एक चपटा बिम्ब होता है जो कि कंठवलय साँचे के ऊपर पूर्णरूप से सटीक बैठ जाता है। ज्योंही कंठवलय साँचे पर बिम्ब बैठ जाता है त्योंही एक कपाट[5] अपने आप खुल जाता है और संपीडित वायु अति दबाव के साथ बोतल को धमन द्वारा निर्माण करने के लिए प्रवेश करती है। जब धमशीर्ष का हस्तक फिर से घुमाया जाता है तब पिस्टन ऊपर उठता है और संपीडित वायु का प्रदाय बन्द हो जाता है। बन्द साँचा तब खोला जाता

1. Operation 2. Plunger 3. Bolts 4. Blow Lead 5. Valve

है और कंठवलय साँचे को उठाकर बोतल बाहर निकाली जाती है। तत्पश्चात कंठवलय साँचे को खोलने पर बोतल एक पट्टिका पर गिर पड़ती है और अभितापन[1] के लिए ले जायी जाती है।

चित्रित यंत्र में एक पैरिज़न साँचा और दो धम साँचे हैं। धमशीर्ष दो साँचों में किसी एक पर घुमाकर किया जा सकता है। पैरिज़न को पर्यायक्रम से दो धम साँचों में रखा जाता है और इस प्रकार उत्पादन में वृद्धि हो जाती है। इस यंत्र में चूड़ीदार गर्दन की बोतलें भी बनायी जा सकती हैं। इसके लिए कंठवलय साँचा एक ही नग या टुकड़े का होता है और उसमें उपयुक्त सूत्र बने रहते हैं। बोतल के धमसाँचे से निकालने के पूर्व यह साँचा घुमाकर अलग कर दिया जाता है।



[चित्र ३१—पीड एवं धमन-यंत्र]

अर्ध आत्मग बोतल-निर्माण यंत्र

इस प्रकार के यंत्र दोनों प्रकार की, संकीर्ण गर्दनवाली और चौड़े मुँह की काँच-वस्तुओं के निर्माण के लिए उपयुक्त है। साधारणतः यंत्र में लोह की ढलवाँ मेज़ पर बायीं तरफ पैरिज़न साँचा उलटा स्थित होता है। मेज़ के नीचे और पैरिजन साँचे के निकट हस्तक से चलनेवाला वायु-सिलिन्डर होता है। जब हस्तक को सामने किया जाता है तब पैरिजन साँचे में शून्यक (निर्वात)[2] स्थापित हो जाता है और जब पीछे किया जाता है तब साँचे में दबाव हो जाता है। पैरिज़न साँचा दो अर्धों में होता है जो कि कब्जों पर लगे रहते हैं। पैरिज़न साँचे के ठीक नीचे कंठवलय साँचा होता है। इस साँचे के कंठ में एक मज्जक ऊपर की तरफ निकला होता है और काँच डालते समय

1. Annealing 2. Vacuum

यह ऊपर की तरफ स्थित होता है और हस्तक के खींचने के पश्चात् यह स्वयं हट जाता है। धम साँचे के ऊपर एक धमशीर्ष होता है जो कि संपीडित वायु प्रदाय करता है।

यंत्र का क्रियाकरण

कंठवलय साँचा पैरिज़न साँचे के नीचे रखा जाता है और तब पैरिज़न साँचा बन्द कर दिया जाता है। पैरिज़न साँचे में संगृहीत लोहे से द्रुत काँच डाला जाता है और कैंची से आवश्यकतानुसार काट लिया जाता है। इस समय कंठवलय साँचे में मज्जक ऊपर होता है। हस्तक को आगे खींचा जाता है और इससे पैरिज़न साँचे में शून्यक हो जाता है। इस प्रकार द्रुत काँच शून्यक और गुरुत्वाकर्षण के कारण, कंठवलय और मज्जक के मध्य में भर जाता है। आघात के अन्त में, हस्तक शून्यक (निर्वात) का अन्त कर देता है और मज्जक नीचे चला जाता है, तब हस्तक को विपरीत दिशा में करने से मज्जक के स्थान में संपीडित वायु प्रवेश करती है और पैरिज़न को धमनकर साँचे का आकार देती है। पैरिजन साँचा तब खोला जाता है और पैरिज़न को कंठ-वलय साँचे सहित उठाया जाता है। पैरिज़न को उलटा जाता है और कंठवलय साँचे को, जिसमें पैरिज़न लटकता होता है, धम साँचे के ऊपर रखा जाता है। धम साँचे को तब बन्द कर दिया जाता है। धम शीर्ष से संपीडित वायु का प्रयोग कर बोतल या कोई और वस्तु धमन कर बनायी जाती है। अन्त में धम साँचे को खोलकर और कंठ-वलय साँचे से स्वतन्त्र कर, धमन की हुई काँच वस्तु हटा ली जाती है।

बहु-साँचों के बोतल-निर्माण यंत्र

इन साँचों में दो परिक्रामक मेजें होती हैं, एक मेज पैरिजन साँचों के लिए और दूसरी उतने ही धम साँचों के लिए। मेजें यंत्रों द्वारा परिक्रमण करती हैं और उनकी एकसमान सविराम गति होती है। जब साँचा संग्राहक के निकट पहुँचता है तब प्रत्येक में सही मात्रा का काँच डाला जाता है और पैरिजन बनाया जाता है। एक लड़का परिज़न सहित कंठवलय साँचे को उठाकर शीघ्रता से दूसरी मेज पर संलग्न धम साँचे पर स्थानान्तरित करता है। धम साँचा जब एक धमशीर्ष के नीचे पहुँचता है तब धमन द्वारा बोतल बन जाती है। फिर आगे बढ़कर धम साँचा खुलता है और कंठ-वलय साँचे से बोतल बाहर निकाली जाती है।

इन यंत्रों में कार्यकरण के लिए साधारणतः तीन मनुष्यों की निम्न रूप से आवश्यकता होती है—

(१) काँच देने के लिए एक संग्राहक,

(२) पैरिज़न का धम साँचे में स्थानान्तरण करने के लिए एक लड़का,
(३) धम साँचे से पूर्ण की हुई बोतल को निकालने के लिए एक पुरुष।

डब्लू जे मिलर यंत्र (नम्बर V—२)

यह यंत्र ६ से ३२ औंस समाई की संकीर्ण कंठवाली वस्तुओं के निर्माणार्थ उपयुक्त है। बायीं मेज़ पर ५ उलटे पैरिज़न साँचे और दाहिनी मेज पर ५ धम साँचे स्थित होते हैं। दोनों मेजें समान वेग से परिक्रमण करती हैं और समान विराम होते हैं। द्रुत काँच परिज़न साँचे में डाला जाता है और कैंची द्वारा आवश्यक मात्रा में काट लिया जाता है। संग्राहक जब एक मुठिया संगृहीत लोह द्वारा स्पर्श करता है तब यंत्र गतिशील हो जाता है। पहली स्थिति में, मेज़ के नीचे एक मज्जक होता है जो संपीडित वायु द्वारा ठंडा होता रहता है। काँच में एक कूप बनाने के पश्चात् मज्जक खींच लिया जाता है। दूसरी स्थिति में एक पट्टिका ऊपर से नीचे आकर, पैरिज़न साँचों के मुख को बन्द कर देती है। संपीडित वायु नीचे धमन की जाती है और पैरिज़न तैयार हो जाता है। आगे की दूसरी स्थिति में, पैरिज़न साँचा स्वयं खुल जाता है और एक लड़का पैरिज़न सहित कंठवलय साँचा निकालता है। पैरिज़न को उलट कर, कंठवलय साँचा पैरिज़न सहित दूसरी मेज़ पर निकट के धम साँचे पर रखा जाता है और वही लड़का पैर से धम साँचे को बन्द कर देता है। आगे चलकर यह धम साँचा एक धमशीर्ष के नीचे आता है और संपीडित वायु धमन करने पर बोतल का आकार बन जाता है। अन्त में धम साँचा स्वयं खुलता है और बनी हुई बोतल निकालता जाता है। इस यंत्र में धमन के लिए वायु का दाब ३० पाउंड प्रति वर्गइंच आवश्यक होता है। इस यंत्र से प्रतिमिनट १५ बोतलों का उत्पादन होता है।

स्वयमेव स्थानान्तरण एवं निष्कासन करनेवाले साधनों से युक्त यंत्र

दो साँचेवाले यंत्रों में ऐसी हिकमत लगायी गयी है कि पैरिज़न का पैरिज़न साँचे से धम साँचे में और तैयार की हुई काँच वस्तु का धम साँचे से वाहन पर अपने आप स्थानान्तरण हो जाता है।

हार्टफोर्ड-फ़ेयरमाण्ट यंत्र (चौड़े मुंह की काँच वस्तुओं के लिए)

इस यंत्र में एक ही परिक्रामक मेज होती है और उस पर ८ पैरिज़न साँचे और ८ धम साँचे पर्यायक्रम से स्थित होते हैं। धम साँचे केन्द्रीय स्तम्भ के कुछ अधिक निकट होते हैं। पैरिज़न साँचे एक ही टुकड़े के बने होते हैं और पैरिजन कंठवलय से क्रमशः

पतले होते जाते हैं। धम साँचे कब्जे पर खुलते हैं। प्रत्येक परिज़न साँचे के पेंदे में एक कील मेज़ से होकर ऊपर निकली होती है। एक परिक्रमण में मेज़ ८ स्थानों में ठहरती है। पैरिज़न साँचे में द्रुत काँच डाला जाता है। आगे बढ़ने पर दूसरे स्थान में, ऊपर से एक मज्जक नीचे आता है और काँच को पीडित कर पैरिज़न का आकार देता है। दूसरे स्थान में, पैरिज़न कील द्वारा इतना उठाया जाता है कि कंठ पूर्ण रूप से साँचे के बाहर आ जाय। तब एक विशेष युक्ति या साधन[1] जिसको 'निरसक'[2] कहा जाता है, नीचे आता है और पैरिज़न को पकड़कर ऊपर उठाता है एवं पैरिज़न को साँचे से पूर्णरूप से निकाल लेता है। पैरिज़न सहित निरसक क्षैतिज दिशा में दो लम्बकोण सम परिक्रमण करता है और तब पैरिज़न संलग्न धम साँचे के ऊपर आ जाता है। निरसक तब नीचे आता है और पैरिज़न को धम साँचे में स्थापित कर देता है। फिर निरसक, पैरिज़न को मुक्त कर, ऊपर उठकर और परिक्रमण कर वापस आ जाता है। धम साँचा तब बन्द हो जाता है और आगे बढ़कर यह एक धमशीर्ष के नीचे आता है। तब संपीडित वायु धमन कर बोतल तैयार कर देती है। धम साँचे से एक लड़का, पूर्ण की हुई बोतल को एक पट्टिका पर रखता है।

ओनील यंत्र (नम्बर २५), संकीर्ण कण्ठ और चौड़े मुंह की वस्तुओं के लिए

इस यंत्र में वृत्ताकार दो परिक्रामक मेज़ें होती हैं। एक मेज़ पर ६ उलटे पैरिज़न साँचे और दूसरी मेज़ पर ६ धम साँचे होते हैं। प्रत्येक मेज़ पर एक केन्द्रीय स्तम्भ होता है जिसके चतुर्दिक् मेज़ें एक समय में ६०° कोण परिक्रमण करती हैं और एक ही समय विराम करती हैं। यंत्र वायु-चालित है और सब क्रियाएँ वायु-कपाटों द्वारा समय से होती हैं। ये कपाट (वाल्व) ठीक समय पर यंत्र के गति-नियंत्रक सिलिन्डरों को सही मात्रा में वायु प्रदान करते हैं। संग्राहक द्रुत काँच को एक वलय से परिज़न साँचे में डालता है और लोह-छड़ से एक कुत्ते[3] को स्पर्श करने पर, यांत्रिक कैंची, काँच की आवश्यकतानुसार सही मात्रा काट देती है। आगे चलकर पैरिज़न साँचा धमशीर्ष के नीचे पहुँचता है और धमन करने पर उलटे हुए पैरिजन साँचे के नीचे गर्दन में मज्जक के चतुर्दिक् काँच भर जाता है। धमशीर्ष तब ऊपर उठता है और मज्जक नीचे गर्दन से हट जाता है। आगे बढ़ने पर पैरिज़न साँचे के ऊपर एक पट्टिका आ जाती है और पैरिज़न साँचे के ऊपरी मुख को ढँक देती है। नीचे से संपीडित वायु धमन की जाती है और पैरिज़न बनकर तैयार हो जाता है। पट्टिका तब ऊपर उठती है और पैरिज़न

1. Device 2. "Take out" 3. Trigger (बन्दूक का) घोड़ा

साँचा अगली स्थिति में उदग्र तल में १८०° कोण घूमता हुआ पहुँचता है, इस प्रकार पैरिज़न सामान्य स्थिति में आ जाता है। पैरिज़न साँचा तब खुलता है और पैरिज़न कंठवलय से लटकता रहता है, तब कंठवलय साँचा दूसरी मेज पर स्थित खुले हुए संवादी[1] साँचे के ऊपर पहुँचता है। धम साँचा काँच को भीतर बन्द कर लेता है और कंठवलय साँचा पैरिज़न को स्वतन्त्र कर देता है। धम साँचा तब आगे बढ़कर धमशीर्ष के नीचे आता है और धमन द्वारा बोतल तैयार हो जाती है। दूसरी स्थिति में धम साँचा खुलता है और अपने आप चलनेवाली सँड़सी पूर्ण की हुई बोतल को थामकर आत्मग वाहन पर पहुँचा देती है।

इस यंत्र में वायु का दाब ४० पाउंड प्रति वर्गइंच होना चाहिए, जिसमें सात पाउंड धमन में लगता है। इस यंत्र को चलाने के लिए एक लड़के की आवश्यकता होती है। वस्तु के प्रकार पर उत्पादन निर्भर होता है और साधारणतः उत्पादन की दर प्रति घंटा १६ औंस की बोतलें ४ ग्रोस या ८ औंस की ५ ग्रोस होती है।

ओनील यंत्र (नम्बर ३०, ३८)

यह यंत्र संकीर्ण एवं चौड़े मुंह की वस्तुओं के लिए बनाया गया है। इनमें काँच, प्रदायक द्वारा दिया जाता है और ये विद्युत् से चलते हैं। इनमें ८ पैरिज़न साँचे और ८ धम साँचे होते हैं।

३८ नम्बर का यंत्र आन्तरिक पेंचदार गलेवाली और उभरे पेंदेवाली वस्तुओं के लिए उपयुक्त है।

ओनील यंत्र (नम्बर ५०)

यह यंत्र निरन्तर घूमता रहता है और विद्युत् से चलता है। इसमें ६ पैरिज़न साँचे और ६ धम साँचे होते हैं। पैरिज़न शून्यक (निर्वात) या वायु या दोनों के द्वारा बनाया जा सकता है।

लिंच यंत्र (नम्बर LA), सकरे गले एवं चौड़े मुँह की वस्तुओं के लिए

इस यंत्र में दो परिक्रामक मेजें होती हैं। एक मेज पर उलटे ६ पैरिज़न साँचे और दूसरी पर ६ धम साँचे होते हैं। दोनों प्रकार के साँचों में कब्जे होते हैं और साँचे मेजों के बाहर निकले रहते हैं। पैरिज़न साँचे के नीचे एक कंठवलय साँचा होता है। इसमें भी कब्जे होते हैं और यह पैरिज़न साँचे से स्वतन्त्र कार्य करता है। पैरिज़न और कंठ-

1. Corresponding

वलय साँचे उदग्र समतल में परिक्रमा कर सकते हैं। धम साँचे के नीचे एक आधार-पट्टिका होती है जिसके ऊपर साँचा वन्द होने पर पूर्णरूप से वैठ जाता है। पैरिज़न के धम साँचे में स्थानान्तरण के विन्दु पर, वन्द स्थिति में, पैरिज़न साँचे और वन साँचे के केन्द्रीय अक्ष पूर्णरूप से मिल जाते हैं। इस विन्दु पर, इस स्थिति में सिर्फ एक साँचा खुला रह सकता है और दूसरा अवश्य वन्द रहता है।

द्रुत काँच उलटे पैरिज़न साँचे में डाला जाता है। एक खटके को दवाने से यंत्र कार्य करने लगता है। अपने आप चलनेवाली कैंची आवश्यक मात्रा का काँच काट देती है और वायु शीतित पिस्टन साँचे के कंठ में उठता है। पैरिज़न साँचा आगे वढ़कर जव एक धमशीर्ष के नीचे पहुँचता है तव संपीडित वायु द्वारा काँच साँचे के कंठ में भर दिया जाता है। दूसरे स्थान में वायु नीचे से प्रवेश करती है और धमन द्वारा पैरिज़न वनाया जाता है। आगे वढ़कर परिज़न साँचा और कंठवलय साँचा उदग्र समतल में १८०° परिक्रमण करते हैं और इस प्रकार पैरिज़न वजाय उलटे होने के सामान्य स्थिति में आ जाता है। संवादी धम साँचा भी वहीं पर होता है पर खुला रहता है। पैरिज़न साँचा खुलता है और पैरिज़न कंठवलय साँचे से लटका रहता है। उस विन्दु पर आधारित पट्टिका धम साँचे के नीचे आती है और धम साँचा वन्द होकर पैरिज़न को भीतर कर लेता है। कंठवलय साँचा अव खुलता है और पैरिज़न को मुक्त कर देता है। पैरिज़न साँचों की मेज आगे वढ़ती है। धम साँचा भी वढ़कर धमशीर्ष के नीचे आता है और धमन कर वोतल का आकार वना देता है। अन्त में वायु-चालित निरसक[1] वोतल को खुले हुए धम साँचे से उठाकर वाहन पर रख देता है।

इस यंत्र में प्रति मिनट २०० घनफुट वायु, ४० से ४५ पाउंड प्रति वर्गइंच दाव की आवश्यकता होती है जिसमें से ७ पाउंड धमन करने में व्यय होती है। साँचों को ठंडा करने के लिए ६ से ८ इंच जल दाव की ६००० से ८००० घनफुट वायु प्रति-मिनट की आवश्यकता होती है। उत्पादन दर ३ से ३२ औंस समाईवाली २८ वोतलें प्रति मिनट होती है।

लिंच यंत्र (नम्वर L-B)

यह यंत्र नम्वर L-A यंत्र के ही प्रकार का है, परन्तु इसमें वजाय ६ धम साँचों के ८ धम साँचे और दो अतिरिक्त धमशीर्ष होते हैं। इसका फल यह होता है कि इसमें वोतलें वड़ी और अधिक मात्रा में वनायी जा सकती हैं।

1. "Take-out"

लिच यंत्र (नम्बर B)

यह यंत्र विशेषकर छोटी वस्तुओं के उत्पादन के लिए है। इसकी बनावट और सिद्धान्त यंत्र नम्बर LA के समान हैं। इस यंत्र में काँच-प्रदायक भी होता है जो इस के क्रियाकरण[1] का नियंत्रण करता है। यंत्र में दो धमशीर्ष लगे होते हैं। यंत्र को ३० से ४० पाउंड प्रति वर्गइंच दाव की १२५ घनफुट वायु प्रति मिनट आवश्यक होती है। साँचों को ठंडा करने के लिए ६ से ८इंच दाव की ३००० से ४००० घन-फुट वायु आवश्यक है। उत्पादन की दर चौथाई औंस से ४ औंस समाईवाली ४५ बोतलें प्रति मिनट है।

ऊपर वर्णित यंत्रों को चलाने के लिए कई प्रकार के साधनों की आवश्यकता होती है। मेज़ों का परिक्रमण एक ही समय और समान कोणों पर होना चाहिए। साँचों का खुलना, बन्द होना, मज्जक का उठना, नीचे आना, ठहरना और धमशीर्ष का कार्य; यह सब उचित समय से होना चाहिए। ठंडा करनेवाली वायु के झोंके, तथा तप्त करने-वाली ज्वालाएँ भी उचित समय पर पहुँचनी चाहिए। मज्जक को जल से यथाविधि ठंडा करना चाहिए। ऐसे सब अवयवों का जुटाना, जैसे वायु-सिलिन्डर, दन्तचक्र, कैम[2] छड़ें, नल, अभिनालें; जिनकी सहायता से ऊपर वर्णित क्रियाएँ की जाती हैं, सुषिर वस्तुओं के निर्माण को अति जटिल कार्य बना देता है।

लिच यंत्र (नम्बर १०)

यह यंत्र, लिच यंत्र नम्बर LA के समान है। इसमें ६ पैरिज़न साँचे और ६ धम साँचे होते हैं। LA, LB, B, R, और RS नम्बरवाले यंत्रों के साँचे भी इसमें प्रयोग में लाये जा सकते हैं। प्रत्येक पैरिज़न साँचे के लिए एक पृथक् मज्जक होता है। इसी प्रकार प्रत्येक धम साँचे के लिए एक पृथक् धम-शीर्ष होता है। इस प्रकार एक समय में भिन्न आकार की, परन्तु समान भारवाली ६ बोतलों का उत्पादन सम्भव है। यह यंत्र २ औंस से ६४ औंस समाईवाली वस्तुओं के लिए उपयुक्त है और उत्पादन की दर प्रति मिनट ४८ बोतल है।

हार्टफोर्ड एम्पायर (I. S. यंत्र)

विशिष्ट खंड (इंडिविजुअल सेक्शन) वाली इस मशीन में दो, चार या पाँच भाग होते हैं। ४ या ५ भाग यदि युग्म में बनाये जायँ तो यह यंत्र ८ या १० भागों का हो जाता है। यह यंत्र वायुचालित[3] होता है और इसमें काँच-प्रदायक की भी व्यवस्था

1. Co-operation चालन 2. Cams 3. Pneumatically operated

होती है। प्रत्येक भाग में काँच गोले गिराये जाते हैं। हाथ से काँच संग्रह कार्य के लिए एक भाग का यंत्र भी उपलब्ध है। यह यंत्र १ औंस के प्रभाग से लेकर १ गैलन तक की समाईवाली वस्तुओं का निर्माण कर सकता है। इस यंत्र के उत्पादन की दर किसी भी यंत्र से अधिक है।

मिलर यंत्र (नम्बर J P)

इस यंत्र में १० पैरिज़न साँचे और १० धम साँचे होते हैं। पैरिज़न साँचे में, मज्जक द्वारा स्थूल पैरिज़न बनता है। तत्पश्चात् धम साँचे में वह धमन किया जाता है। धम-साँचा ऊपर स्थित होता है और पैरिज़न साँचा, धम साँचे के उदग्र अक्ष में ऊपर-नीचे फिसलता है। प्रथम स्थिति में जब धम साँचा खुला होता है और पैरिज़न साँचा ऊपर रहता है तब पैरिज़न का पीडन किया जाता है। तत्पश्चात् पैरिज़न साँचा गाम[1] पर नीचे की दिशा में फिसल जाता है और पैरिज़न, कंठवलय साँचे से लटका रहता है, तब धम साँचा, पैरिज़न को अपने भीतर बन्द कर लेता है और बोतल धमन द्वारा बन जाती है। इस यंत्र में एक पीडन और ३ धम शीर्षों की व्यवस्था होती है। यह यंत्र ४ औंस से ६४ औंस समाईवाली चौड़े और अर्ध चौड़े मुँह की काँच वस्तुओं के लिए उपयुक्त है। उत्पादन की दर ४२ वस्तु प्रति मिनट है।

रायराण्ट यंत्र (नम्बर M ८)

इस यंत्र में ८ पैरिज़न साँचे और ८ धम साँचे होते हैं जो कि एक ही केन्द्रीय स्तम्भ के चतुर्दिक् परिक्रमण करते हैं। पैरिज़न साँचा और धम साँचा एक ही उदग्र अक्ष में स्थित होते हैं। प्रदायक यंत्र काँच को पैरिज़न में डालता है। पैरिज़न साँचे के खुलने के पश्चात्, पैरिज़न १८०° कोण पर परिक्रमण करता है। इस प्रकार वह खुले हुए धम साँचे के समतल आ जाता है तब धम साँचा पैरिज़न को अपने अन्दर कर लेता है और धम साँचे में धमन कर बोतल बनायी जाती है। पैरिजन को आकार देने के लिए और धम साँचों में बोतलों को फुलाने के लिए शून्यक (निर्वात) का प्रयोग किया जाता है। बोतलें, आकार में विभिन्न प्रकार की बनायी जा सकती हैं बशर्ते कि उनका भार एक-सा हो।

काँच-प्रदाय के साधन

काँच-प्रदायक साधन, भट्ठी में एक यान्त्रिक व्यवस्था है जिससे आवश्यक मात्रा में द्रुत काँच, काँच की चीजें बनानेवाली मशीन में डाला जा सके। किसी भी अर्ध

1. Cam

आत्मग यंत्र, जैसे ओनील या लिंच में द्रुत काँच प्रदाय के लिए एक प्रदायक यंत्र लगा देने से, वह यंत्र पूर्ण आत्मग हो जाता है। काँच-प्रदायक यंत्र कई प्रकार के होते हैं।

होमर-ब्रुक काँच-प्रवाह प्रदायक यंत्र

भट्ठी के कार्य-क्षेत्र के आगे, एक छोटा, निकला हुआ सहायक कुण्ड (टैंक) होता है और उसके पेंदे में एक छोटा निकास रहता है। भट्ठी से काँच वहकर, इस कक्ष में आता है और फिर निकास से एक स्रोत के रूप में परिक्रमण करते हुए साँचों में गिरता है।

पैरिज़न साँचे एक मेज़ पर रहते हैं। जो केन्द्रीय उदग्र स्तम्भ के चतुर्दिक् परिक्रमण करते हैं। जब एक साँचा द्रुत काँच से भर जाता है तब वह आगे बढ़ता है और दूसरा साँचा काँच की गिरती हुई धार के नीचे आ जाता है। जिस समय साँचा बदलता है उस समय काँच की धार, कैंची के फलक और अर्ध प्याले के आकारवाले काटने के साधन की संयुक्त क्रिया से काट दी जाती है। यह केन्द्रीय स्तम्भ के विपरीत दिशाओं में परिक्रमण करते रहते हैं। जब प्याला और कैंची के फलक मिलते हैं तब काँच-स्रोत कट जाता है। तब प्याला ऊपर उठता है जिससे कि दूसरे साँचे के उसके नीचे आने तक स्रोत आलम्बित किया जा सके। जब वहाँ नया साँचा आ जाता है तब प्याला कुछ उलटता है और प्याले तथा स्रोत का काँच पैरिजन साँचे में गिरता है। यह स्रोत, फिर से प्याले और फलक से पृथक् कर दिया जाता है।



[चित्र ३२—होमर-ब्रुक प्रदायक यंत्र]

वेंड्स्वर्थ काँच-प्रवाह प्रदायक यंत्र

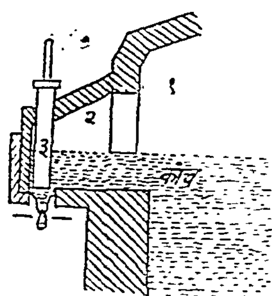
इसकी व्यवस्था होमर ब्रुक प्रदायक यंत्र के समान है। काँच की धारा काटने के लिए विभाजित प्यालों का प्रयोग किया जाता है। जब ये दो अर्ध प्याले मिलते हैं तब गिरती हुई धारा पृथक् हो जाती है और इस प्रकार जो प्याला बनता है उसमें काँच संगृहीत होने लगता है। इसी अवकाश में, एक खाली पैरीसन साँचा द्रुत काँच से भरे हुए पैरीसन साँचों के स्थान में आ जाता है। जब प्याले पृथक् होते हैं तो प्यालों का संगृहीत काँच और गिरते हुए स्रोत का काँच, दोनों ही खाली पैरीज़न साँचे में गिरते हैं।

प्रवाह प्रदायक यंत्रों के चालन में कठिनाइयाँ

इनमें काँच बेहद ठंडा हो जाता है, क्योंकि जब पैरिज्न साँचा बदलता है तब प्याले में काँच को काफी समय तक रहना पड़ता है। पैरिज्न साँचे में श्यान काँच के स्रोत में भी कुन्तल बनाने का स्वभाव होता है जिससे डोरे और रेखाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। साँचे में गिरते हुए काँच के भार और आकार का नियंत्रण भी अति कठिन होता है।

मिलर का गोला प्रदायक यंत्र

टैंक के कार्यकारी हिस्से से निकल कर काँच सहायक या काँच प्रदायक कक्ष में जाता है जिसके पेंदे में एक छिद्र होता है। इस छिद्र के नीचे कैंची के फलक होते हैं जो कि छिद्र में से निकलते हुए काँच स्रोत को नियमित समय से काटते हैं। एक अग्नि-मिट्टी का बेलनाकार मज्जक होता है जो कि कक्ष की छत में से गमन करता है और ठीक छिद्र के ऊपर तरल काँच में रहता है। यह मज्जक यान्त्रिक क्रिया से उदग्र समतल में ऊपर-नीचे चलता है। काँच प्रदायक कक्ष का ताप इतना होता है कि काँच का तरल स्रोत बनने के बजाय "गाब" या "गोला" बन जाता है। जब एक पैरिज्न साँचा काँच भरकर आगे बढ़ता है, तो मज्जक ऊपर जाता है और इस प्रकार गिरते हुए काँच को रोकता है। उसी समय कुछ विशिष्ट आयतन और नियमित रूप से घटती हुई वायु, कुछ विशिष्ट समय के लिए छिद्र की दिशा में धमन की जाती है। इससे गिरते हुए काँच को रोकने में सहायता मिलती है। जब छिद्र के नीचे दूसरा पैरिज्न साँचा आता है तब वायु का धमन बन्द कर दिया जाता है और काँच का स्थूल स्रोत में नीचे गिरना बन्द हो जाता है। जैसे-जैसे गोला भारी होता जाता है वैसे-वैसे उसमें अधिक कर्षण आता है और वह सूक्ष्म हो जाता है। ठीक इसी समय मज्जक शीघ्रता से नीचे आता है जिससे और अधिक काँच आने लगता है और कंठ का अधिक सूक्ष्म होना रुक जाता है। मज्जक पूर्णरूप से नीचे की स्थिति में पहुँचकर ऊपर उठता है, इस कारण गोले का कंठ बहुत सूक्ष्म बनता है जो कि आसानी से कैंची से बिना किसी कैंची चिह्न के काटा जा सकता है। गोला पैरिज्न साँचे में गिरता है और तुरन्त छिद्र की दिशा में वायु



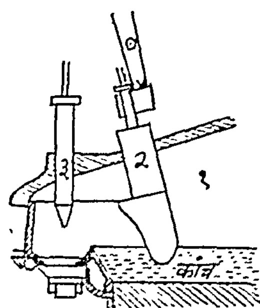
[चित्र ३३—मिलर काँच प्रदायक यंत्र]

चमन की जाती है जिससे जब तक नया साँचा न आ जाय तब तक काँच का गिरना बन्द रहे।

इस प्रकार के काँच प्रदायक यंत्र में कैंची और मज्जक की आपेक्षिक गति तथा मज्जक की राह की दूरी को नियमित करने से, साँचे के उपयुक्त, गोले का भार और आकार नियंत्रित किया जा सकता है। इस प्रकार के प्रदायक यंत्र में, काँच के गोले प्रति मिनट ८ से ६० बार कैंची से काटे जा सकते हैं और गोले का भार १ औंस के प्रभाग से कई पाउंड तक हो सकता है। गोले का व्यास एक इंच के प्रभाग से कई इंच तक, छिद्र वलयों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

हार्टफोर्ड फेयरमान्ट काँच-प्रदायक-यंत्र

प्रदायक कक्ष के अन्त में एक ओष्ठ के आगे एक छिद्रीय निकास होता है जिसके ठीक ऊपर मज्जक होता है। प्रदायक कक्ष में काँच ओष्ठ के समतल तक रहता है। कक्ष में ऊष्मसह डाँड़, द्रुत काँच में डुबकी लगाये रहता है और इसका ऊपर का सिरा प्रदायक कक्ष की छत से बाहर निकला रहता है। डाँड़, यान्त्रिक क्रिया से चलता है। छिद्र में काँच का प्रदाय डाँड़ द्वारा किया जाता है। डाँड़ के नियमित गति से चलने के कारण एक-समान परिमाण की काँच की अनुक्रमिक लहरें ओष्ठ के ऊपर से होकर जाती हैं। डाँड़ काँच में नीचे जाकर, फिर वहाँ से ओष्ठ की दिशा में विशिष्ट दूरी तक बढ़ता हुआ काँच की सतह तक ऊपर उठकर, फिर पूर्व स्थिति में पीछे लौट जाता है और इसी प्रकार आगे-पीछे, ऊपर-नीचे चलता रहता है। छिद्र के ठीक ऊपर मज्जक के ही समान एक सुई होती है। यह सुई उदग्र दिशा में ऊपर-नीचे चलती है। छिद्र से निकलते हुए काँच का आकार कुछ मात्रा में, सुई के निचले सिरे के अनुरूप होता है। छिद्र से काँच गोला के रूप में गिरता है और छिद्र के नीचे यान्त्रिक क्रिया से चलनेवाली कैंची के फलों से काटकर पृथक् किया जाता है। गोले का आकार और परिमाण (१) डाँड़ के मार्ग की दूरी, (२) काँच में डूबने की गहराई, (३) सुई के निचले सिरे के आकार और (४) सुई तथा कैंची की आपेक्षिक गति पर निर्भर होता है।



[चित्र ३४—हार्टफोर्ड फेयरमान्ट काँच प्रदायक यंत्र]

गोला प्रदायक यंत्र

किन्हीं दशाओं में गोला ६ से ८ फुट की ऊँचाई से सीधा पैरिज़न साँचे में गिरता है और कुछ हालतों में एक नाली से होकर साँचे में गिरता है। एक ही (टैंक) कुण्ड में, भिन्न ताप की विभिन्न अग्र भट्ठियों में, कई काँच-प्रदायक स्थित हो सकते हैं। गोले का भार, १ छटाँक से साढ़े तीन सेर तक, नियंत्रण कर रखा जा सकता है। गोले का आकार, भार से स्वतन्त्र होता है। चाल में अन्तर लाकर भारी वस्तु के लिए ३ गोले प्रति मिनट और हलकी वस्तु के लिए ८० गोले प्रति मिनट, बनाये जा सकते हैं। गोला प्रदायक यंत्र पीडन या धमन कर या दोनों प्रकार की संयुक्त क्रिया द्वारा, काँच-वस्तु निर्माण के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। यह सविराम प्रणाली है। यह प्रणाली ऐसी है, जैसे कि छिद्रयुक्त बाल्टी से जल गिरता हो, परन्तु नियमपूर्वक और पूर्व निश्चित स्थान पर गिरता हो।

काँच-प्रदायक साधन से सफल प्रयोग के लिए आवश्यक है—

(१) काँच की सतह स्थिर होनी चाहिए, इसलिए द्रुत काँच के निर्माण की दर नियम से होनी चाहिए। आधुनिक बड़े आकार की भट्ठियों में काँच सामग्री प्रदाय के लिए अविराम यंत्र लगे होते हैं जिसके कारण काँच की सतह स्थिर रहती है।

(२) काँच-प्रदायक कक्ष का ताप ऐसा होना चाहिए जिससे कि काँच का विकाचरण न हो सके।

(३) काँच-प्रदायक साधन सरल, दृढ़ एवं सहज में नियम्य होना चाहिए और काँच-वस्तु बनानेवाले यंत्र के उपयुक्त काँच प्रदाय करने के योग्य होना चाहिए।

(४) काँच-प्रदायक यंत्र को आवश्यक परिमाण और आकार का काँच नियम से देने योग्य होना चाहिए।

(५) काँच किसी भी स्थान पर अधिक ठंडा न हो जाना चाहिए।

(६) बोतल-निर्माण यंत्र ऐसा होना चाहिए कि वह काँच-प्रदायक यंत्र से, प्राप्त होनेवाले काँच का ठिकाने से उपयोग कर सके।

पूर्ण आतमग पीडन एवं धमन-यंत्र

लिंच यंत्र (नम्बर P-B)

इस यंत्र का प्रयोग या तो स्वतः निष्कासन युक्ति के पीडन-यंत्र या स्वतः स्थानान्तरण एवं धमशीर्ष युक्तियों के पीडन एवं धमन यंत्र के लिए हो सकता है। इस यंत्र में वायुचलित सविराम परिक्रमण मेज पर ३, ६ या १२ पैरिज़न साँचे और धम साँचों

के कुलक पर्याय क्रम से स्थित होते हैं। साँचे ३ से ५ औंस वायु के दाव से ठंडे किये जाते हैं। मेज़ के केन्द्र के केन्द्रीय स्तम्भ और मेज़ की दाहिनी तरफ स्थित स्तम्भ के मध्य ढाँचे में स्कन्द शीर्ष[1] युक्त मज्जक आधारित होता है। मज्जक, ४० से ५० पाउंड वायु के दाव से चलता है। स्थानान्तरण युक्ति भी वायु से चलती है और यह पीडन किये हुए पैरिज़न का पैरिज़न साँचे से धम साँचे में स्वयं स्थानान्तरण करती है। मेज़ की दूसरी तरफ और मज्जक के विपरीत धमशीर्ष स्थित होता है और यह भी वायु से चलता है। यह यंत्र अग्र भट्ठी के नीचे स्थित होता है और वायु या यान्त्रिक प्रणाली से चलाया जाता है। यह यंत्र काँच-प्रदायक यंत्र से समकालिक होता है जिसके ठीक नीचे पैरिज़न साँचा रहता है जिसमें काँच-गोला गिरता है। यह यंत्र प्रति मिनट पीडन एवं धम से निर्मित १० से ४० वस्तुओं का उत्पादन कर सकता है, जिनकी समाई आधा छटाँक से १ सेर, आकार ५ इंच व्यास और ऊँचाई ९ इंच तक हो सकती है।

मोनिश यंत्र (चूषण और एक साँचायुक्त)

यह यंत्र वायु दाव से चलता है, और इसमें दो मेजें होती हैं जिनमें एक पर पैरिजन साँचा और दूसरे पर धम साँचा स्थित होते हैं। पैरिजन साँचा अग्र भट्ठी से ९०° कोण घूर्णन करता हुआ जब धम साँचे की मेज़ पर पहुँचता है तब मज्जक विवध[2] आगे बढ़कर पैरिज़न को धम साँचे में स्थानान्तरित कर देता है। जब बोतल धमन द्वारा तैयार हो जाती है तब कंठवलय साँचा खुलता है और मज्जक विवध अपनी मौलिक स्थिति में लौट आता है। बोतल आतमग पेटी पर स्थानान्तरित कर दी जाती है। इस यंत्र में एक विशेष अग्रभट्ठी होती है जिसमें एक डाँड़ होता है। अतः इस यंत्र को किसी काँच-प्रदायक यंत्र की आवश्यकता नहीं होती। पैरिज़न साँचा, अग्र भट्ठी से अव्यवहित काँच चूषण कर लेता है। यह यंत्र $\frac{1}{4}$ से ८० औंस समाई की ८ बोतलें प्रति मिनट उत्पादन कर सकता है।

मोनिश यंत्र (तीन साँचों की मेजर और तीन साँचों की माइनर)

यह यंत्र प्रत्येक प्रकार की काँच की वस्तुएँ और आन्तरिक चूड़ीदार कंठ की बोतल बनाने के लिए उपयुक्त है। एक ही समय में, ऊँचाई, भार और आकार में कुछ भिन्नता लिये हुए वस्तुएँ इस यंत्र में निर्माण की जा सकती हैं। मेजर यंत्र ५ से ८० औंस समाई की १२ बोतल प्रति मिनट और माइनर यंत्र छोटी वस्तुएँ $\frac{1}{4}$ औंस से ५ औंस समाई की २० बोतलें प्रति मिनट उत्पादन कर सकता है।

1. Springhead 2. Bracket (बहँगी), दोलक

ओवेन का यंत्र

यह प्रथम सम्पूर्ण आत्मग यंत्र है जिसका चालन सफलतापूर्वक किया गया है। यह अविराम परिक्रमण यंत्र है। इसके केन्द्रीय स्तम्भ के चतुर्दिक् अरीय ढंग से कई भुजाएँ या सिरे भ्रमित ढाँचे या वाहन पर स्थित होते हैं। प्रत्येक सिरा पूर्ण एकक होता है और उसमें (क) एक पैरिज्ञन साँचा, (ख) एक कंठवलय साँचा, (ग) एक वम साँचा, (घ) और एक मज्जक होता है। केन्द्रीय धुरा[1] और प्रक्षेपी भुजाएँ ढले लोहे के सुपिर होते हैं और उनमें तितली कपाटों से नियंत्रित निष्क्रम[2] होते हैं। साँचे, नलियों में वहती हुई वायु से ठंडे रहते हैं। इस यंत्र में दो मोटर होते हैं। एक से, ऊपर-नीचे, उदग्र दिशा में समायोजन होता है और दूसरी से यंत्र परिचालित होता है। ओवेन यंत्र छः प्रकार के होते हैं।

A और AE यंत्र—ये यंत्र छः भुजाओं के होते हैं और मध्यम तथा बड़ी वस्तुओं के लिए उपयुक्त हैं।

AN और AR यंत्र—ये यंत्र दस भुजाओं के होते हैं और छोटी तथा बड़ी वस्तुओं के लिए उपयुक्त हैं।

AQ और AV यंत्र—ये यंत्र पन्द्रह भुजाओं के होते हैं और छोटी तथा बड़ी वस्तुओं के लिए उपयुक्त हैं।

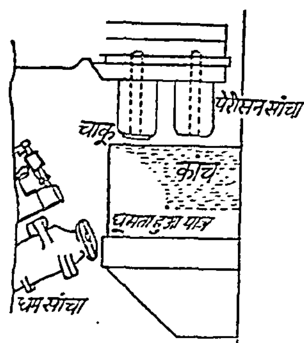
ओवेन यंत्र का क्रियाकरण

यह यंत्र एक सहायक पाट भट्ठी में संलग्न होकर चलता है। घूमते हुए पात्र में, कुण्ड भट्ठी के शोधन भाग से काँच का अविराम प्रदाय होता है। अविराम परिक्रमण करनेवाले इस पात्र का व्यास १० फुट तथा काँच की गहराई ८ इंच होती है। पात्र का एक भाग, भट्ठी के १६ इंच बाहर प्रक्षेप करता है। प्रत्येक भुजा के सिरे पर एक कंठवलय साँचा और एक पैरिज्ञन साँचा होता है। परिक्रमण यंत्र के पैरिज्ञन साँचे, परिक्रमण पात्र के द्रुत काँच में नम्बर से डुबकी लेते हैं। जैसे ही साँचा, द्रुत काँच को स्पर्श करता है वैसे ही उसमें शून्यक उत्पन्न हो जाता है और चूपण द्वारा काँच साँचे के अन्दर प्रवेश करने से पैरिज्ञन का निर्माण होता है। चूपण की युक्ति, काँच-प्रदायक का कार्य करती है। यंत्र और पात्र विपरीत कोणीय दिशाओं में परिक्रमण करते हैं और इस प्रकार दोनों की रेखीय गति एक ही दिशा में होती है। साँचे की गति, द्रुत काँच से कुछ अधिक होती है, इस कारण साँचा अशीतित तप्त काँच को स्पर्श करता

1. Shaft धुरा 2. Outlets

रहता है। जैसे ही साँचा ऊपर उठकर काँच से पृथक् होता है वैसे ही एक चाकू काँच के धागे को काट देता है और वायु का कुछ झोंका पैरिज़न को दृढ़ करता है। जब यंत्र आगे को परिक्रमण करता है तब पैरिज़न साँचा खुल जाता है और पैरिज़न कंठवलय साँचे के सहारे लटका रहता है।

कब्जे युक्त भुजा के अन्त में धम साँचा स्थित होता है और यह बेलनों पर गाम राह[1] पर चलता है। काँच चूपण के समय यह नीचे लटकता रहता है और साँचे तथा पात्र के मध्य काफी रिक्त स्थान होता है। इस साँचे की राह ऐसी चढ़ाई युक्त होती है कि यह साँचा आगे की स्थिति में स्वयं इतना ऊपर उठता है कि यह पैरिज़न साँचे के समतल आ जाता है और तब पैरिज़न साँचे से स्वतन्त्र हो जाता है। धम साँचा, पैरिज़न को अपने अन्दर बन्द कर लेता है। जब पैरिज़न पूर्णरूप से धम साँचे के अन्दर बन्द हो जाता है तब संपीडित वायु का प्रवेश कराया जाता है और धमन से बोतल तैयार हो जाती है। गाम राह पर फिर एक बार ढाल आता है, तब धम साँचा नीचे जाकर खुलता है। पूर्ण बनी हुई बोतल को, उत्तोलक गिरने से रोकता है। कुछ आगे बढ़ने पर यही उत्तोलक भुज बोतल को एक द्रोणी में गिराता है और वहाँ से बोतल फिसल कर वाहनपेटी पर पहुँचती है। १५ भुजाओंवाले यंत्र की उत्पादन दर, ४ औंस बोतल की २६ ग्रोस और १६ औंस बोतल की १४ ग्रोस प्रति घंटा होती है। यह यंत्र छोटे कंठ की बोतलों के लिए विशेष उपयुक्त है।



(चित्र ३५—ओवेन का यंत्र)

लेपी साँचों के यंत्र

लेपी साँचों के यंत्रों में, ढलवाँ लोह साँचों की आन्तरिक सतह पर लेपी आवृत की जाती है। काँच की वस्तुओं को धमन करते समय इन साँचों के अन्दर घूर्णन कराया जाता है। इससे काँच की वस्तुओं में चमक आती है और साँचे के चिह्न या उभार, वस्तुओं में नहीं आने पाते। विभाजित साँचों में, सन्धि की रेखा पर, काँच में साधारणतः उभार आ जाता है। साँचे में लेपी का आवरण करने के पश्चात्,

1. On a cam path

संगृहीत तप्त काँच से सतह चिकनी की जाती है जिससे साँचे के अन्दर की सतह समांग कार्बनित हो जाती है। लेपी साँचों के यंत्र पतली दीवालों के काँच की वस्तुओं के, जैसे विद्युत् प्रकाश दीपों के, निर्माण के लिए साधारणतः उपयुक्त है।

हार्टफोर्ड एम्पायर यंत्र (नम्बर २८)

इस यंत्र में एक समान १२ भाग होते हैं जो कि एक गुम्बज पर निरन्तर परिक्रमण करते हैं। प्रत्येक भाग के लिए एक काँच प्रदाय स्थान होता है जहाँ कि गोला प्रदायक यंत्र एक काँच का गोला पीडन साँचे में डाल देता है। इसको पीडन कर कंठयुक्त पैरिज़न का रूप दे दिया जाता है और इसको कंठवलय थामे रहता है। पैरिज़न साँचा अब हट जाता है और मज्जक ऊपर उठता है, जिससे पैरिज़न कंठवलय में लटका रह जाता है। पैरिज़न, आवश्यकतानुसार, पुनः तापित, विस्तारित और धमित किया जाता है। तब लेपी वर्तित घन साँचा पैरिज़न को अपने अन्दर कर लेता है। पैरिज़न, घन साँचे के अन्दर परिक्रमण करता रहता है और धमन पर पैरिज़न की पूर्ण वस्तु बन जाती है। यह यंत्र हर प्रकार के जल पीने के पात्र, चिमनी और विद्युत प्रकाश दीपों के निर्माण के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है और इसके उत्पादन की दर १५ से २० ग्रोस प्रति घंटा है।

वेस्टलेक का पूर्ण स्वात्मग बल्ब-निर्माण यंत्र

यह यंत्र एक छोटी कुण्ड भट्ठी से संलग्न रखा जाता है और इस कुण्ड में एक पुनर्जनन पात्र भट्ठी से नियमित अवकाश और स्थिर मात्रा में द्रुत एवं शोधित काँच दवों से प्रदाय किया जाता है।

इस यंत्र में ढाँचों के कई एकक होते हैं जो एक केन्द्रीय स्थिर डिडिम के चतुर्दिक् स्थित होते हैं। प्रत्येक एकक में (१) एक पैरिज़न या संग्राहक साँचा, (२) एक घन नाड और (३) एक घन साँचा (ब्लो मोल्ड) होते हैं। पैरिज़न साँचा उलटे प्याले के समान होता है। इस प्याले में नीचे कब्जे पर मध्य में एक ढक्कन होता है और ढक्कन के मध्य में एक छिद्र होता है। काँच संग्रह करते समय ढक्कन बन्द रहता है परन्तु छिद्र द्वारा प्याले में काँच चूषण द्वारा भर जाता है। ढाँचे के ऊपरी भाग में, झुके हुए आधार पर, सरकते हुए लम्बी भुजाओं के सिरे पर पैरिज़न साँचे स्थित होते हैं। जब भुजा भट्ठी के सामने पहुँचती है तब कार्य-छिद्र में से होकर भुजान्त प्याले के भट्ठी के अन्दर पहुँचती है और नीचे जाकर, प्याले का छिद्र काँच को स्पर्श करता है। बहुधा भुजाएँ युग्म में होती हैं और एक ही समय में दो प्याले द्रुत काँच से भर

जाते हैं। साँचे तब काँच की सतह से ऊपर उठते हैं और एक चाकू नीचे आकर काँच के धागे को काट देता है। संगृहीत काँच के सहित, प्याले वापस लौटते हैं और इस तरह स्थित होते हैं कि प्याले ठीक धमनाडों की नासिका के ऊपर हो जाते हैं। धमनाडों की नासिका में एक छोटा विवर्त जवड़ा होता है। जिस समय प्याले का ढक्कन खुलता है और द्रुत काँच नीचे धमनाड की नासिका पर गिरता है उस समय जवड़े खुले रहते हैं। फिर धमनाड के जवड़े वन्द हो जाते हैं और काँच को अच्छे प्रकार से जकड़ लेते हैं। धमनाड के अन्दर एक मज्जक होता है जो अब ऊपर उठता है और काँच को दवाकर उसमें एक कूप वना देता है। मज्जक के अन्दर वायु के लिए एक अनुदैर्घ्य नाली होती है और पैरिज़न को सही आकार देने के लिए कुछ वायु धम की जाती है। उदग्र धमनाड, जिनकी नासिका ऊपर होती है, अब दो बार १८०° कोण में घूमते हैं और इस प्रकार वे फिर उदग्र हो जाते हैं, परन्तु नासिका नीचे हो जाती है। जब धमनाड अनुप्रस्थ और उदग्र स्थितियों में रहता है तब दीर्घ अक्ष में घूर्णन करता हैं जिससे काँच-वस्तु की दीवालें एक समान हो जाती हैं।

लेपी धम साँचे प्रयोग में लाये जाते हैं। धम साँचा एक गतिशील भुजा पर स्थित होता है और वाकी समय में वह ठंडा होने के लिए जलयुक्त द्रोणी में डूवा रहता है। जव पैरिज़न कुछ लम्वा हो जाता है तव धम साँचा ऊपर उठकर खुलता है और लटकते हुए पैरिज़न को अपने अन्दर वन्द कर लेता है। संपीडित वायु अव धमनाड में प्रवेश करती है और धमन कर विद्युत् दीप वनाया जाता है। धमन के समय धमनाड घर्णन करती रहती है और इस प्रकार काँच-वस्तु में साँचों के चिह्न नहीं आते। धम साँचा अव खुलता है और जल की द्रोणी में चला जाता है, जहाँ जवड़े के खुलने से धमन किया हुआ वल्व नाड से पृथक् हो जाता है और वाहन पट्टी पर गिरा दिया जाता है।

पुराने यंत्र में १२ धमनाड होते थे परन्तु नये यंत्र में ४८ धमनाड और सिर्फ एक भुजा होती है जो कि ४८ धमनाडों को काँच प्रदाय करती है। यह भुजा घूमती नहीं है, परन्तु स्थिर रहती है। इस यंत्र पर प्रति मिनट १२० विद्युत वल्व या ४० पेय गिलासों का उत्पादन हो सकता है।

कार्निंग वल्व-निर्माण यंत्र (कार्निंग नम्बर ३९९)

काँच-प्रदायक यंत्र के छिद्र से तप्त काँच की धारा निकलकर दो जल-शीतित धातु के वेलनों से गमन करती है। एक वेलन में वृत्ताकार दवाव होता है और दूसरा वेलन चिकना होता है। इसका यह फल होता है कि तीन इंच चौड़ा काँच का फीता वन जाता है जिसकी ऊपरी सतह पर सन्निकट वेलनाकार उभारें होती हैं। यह फीता

आगे बढ़कर अनुप्रस्थ दिशा में हो जाता है और निरन्त पट्टी के ऊपर स्थित होकर धमशीर्षो की श्रेणियों के नीचे चलता है। प्रत्येक उभार के ठीक नीचे एक इंच व्यास का छिद्र होता है। काँच के फीते के यह गरम उभार, इन छिद्रों में से होकर लटक जाते हैं और तब इनको धमन कर छोटे सुपिर नासपाती आकार के पैरिज़न बना लिये जाते हैं। तब लेपी-चर्चित भ्रमित धम साँचे पैरिज़नों को बन्द कर लेते हैं। धमशीर्ष, धम साँचे और फीता एक ही वेग से चलते हैं। धमशीर्ष ऊपर और धम साँचे नीचे अन्तहीन पट्टियों पर स्थित होते हैं। धमन के पश्चात् धम साँचे खुलते हैं और साँचों से बल्व पृथक् हो जाते हैं। हथौड़ा साधन से एक हल्की चोट और संपीडित वायु का एक हल्का झोंका, फीते से बल्वों को पृथक् कर देता है। इस यंत्र पर बल्वों का उत्पादन २४,००० से ३६,००० प्रति घंटा होता है। अब इस यंत्र पर पतले काँच के गिलास भी धमन कर बनाये जाते हैं।

गुम्बज शृंखला यंत्र

इस यंत्र में फीता यंत्र की तरह एक छोटी पट्टी होती है। बटोरनेवाली भुजा द्वारा काँच पट्टी के छिद्रों के ऊपर रख दिया जाता है। काँच का गोला भुजा पर आता है और यह भुजा उसका स्थानान्तरण करती है। यह यंत्र लैम्पों की चिमनियाँ, थर्मस फ्लास्क इत्यादि ३० प्रति मिनट की दर से निर्माण करता है।

पीडन यंत्र

ये यंत्र चपटी और कुछ सुपिर वस्तुएँ, जैसे गिलास, कलश, प्याले, टाइल, दवातें, कलमदान, राखदानियाँ, काँच के डाँट आदि विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनाने के लिए प्रयोग में आते हैं। साँचों से वस्तु के बाहर की रूपरेखा बनायी जाती है और सुपिर वस्तुओं के भीतर का आकार निमज्जक बनाता है।

लिंच यंत्र (नम्बर P-B-M, P-B-S, M-P-S)

पीड में एक सविराम परिक्रामक मेज़ होती है जो काँच-प्रदायक यंत्र के समयानुसार घूमती है। काँच-प्रदायक यंत्र वायु के दबाव से या यान्त्रिक विधि से चलता है और इसकी अग्र भट्ठी साँचे तक होती है और काँच गोला, सीधे पैरिज़न साँचे में गिरता है। एक मेज़ पर ६ से १२ तक साँचे होते हैं, ये साँचे या तो एक खंड निर्मित या खुलने बन्द होनेवाले प्रकार के होते हैं। मेज़ के केन्द्र के स्तम्भ और मेज के दाहिने तरफ के स्तम्भ के मध्य ढाँचे में एक स्कन्द-शीर्ष-युक्त मज्जक आधारित होता है। यह मज्जक, वायु के ४० से ५० पाउंड दाब से चलता है। यह २५ पाउंड के दाब से जल

द्वारा ठंडा किया जाता है। साँचों को ठंडा करने के लिए ३ से ५ औंस दाव की १६० घनफुट वायु की आवश्यकता होती है। वस्तुएँ उत्तोलक या निरसक साधन से निकाली जाती हैं।

इस यंत्र में तेल देने की व्यवस्था प्रत्यक्ष होती है। यंत्र P-B-M और P-B-S वायु के दवाव से चलते हैं और यंत्र चलाने के लिए २५ से ३० पाउंड दाववाली वायु की आवश्यकता होती है। यंत्र M-P-S विद्युत से चलता है और उसके लिए तीन अश्वशक्तिवाली मोटर आवश्यक होती है।

यंत्र	प्रति मिनट वस्तुओं का उत्पादन	वस्तु का इंचों में माप		वस्तुओं का आयतन
		व्यास	ऊँचाई	
P-B-M	१२ से ४० तक	२ से १५ तक	८ तक	—
P-B-S	२० से ५० तक	१० तक	,, ५ तक	१ औंस के प्रभाग से १२ औंस तक
M-P-S	४० से ५५ तक	२० तक	,, ६ तक	१ औंस से १२ औंस तक

चौदहवाँ अध्याय

प्रकाशीय काँच का निर्माण

प्रकाशीय काँच-निर्माण के लिए स्वच्छ समांग काँच का होना आवश्यक है जिसके स्थिरांक आवश्यकतानुसार हों। किन्तु यह काँच की रचना[1] पर निर्भर करता है। ऐसी रचना प्राप्त करने के लिए दीर्घकालीन और ब्यौरेवार अनुसन्धान की आवश्यकता होती है। प्रकाशीय काँच-निर्माण झंझटों और कठिनाइयों से भरा है और निर्मित काँच का १० से २० प्रतिशत ही प्रकाशीय कार्य के योग्य होता है।

प्रकाशीय काँच के सफलतापूर्वक निर्माण के लिए निम्न विषयों पर पूर्ण ध्यान देना आवश्यक है।

(१) प्रत्येक निर्मित काँच में प्रकाश की विभिन्न तरंगों के लिए वर्तनांक स्थिर होना चाहिए। किसी एक काँच के द्रवित काँचों में अनुमेय भिन्नता न होनी चाहिए। D रेखा के वर्तनांकों में .००१ और ν में .१ से अधिक या कम का अन्तर न होना चाहिए।

(२) काँच टिकाऊ होना चाहिए, अन्यथा इसके निर्माण में धन और समय का अपव्यय होगा।

(३) काँच को पूर्णरूप से गैसीय बुलबुले रहित होना चाहिए। यह जितना रूप के लिए आवश्यक है उतना प्रकाशीय क्षमता के लिए भी। यद्यपि लेंस में एक छोटा बुलबुला प्रकाश का दस सहस्रवाँ भाग भी नहीं रोकता, फिर भी जनता ऐसे लेन्स को नहीं पसन्द करती।

(४) काँच पूर्णरूप से रंगहीन होना चाहिए और इसके निर्माण में किसी विरंजक का प्रयोग नहीं होना चाहिए।

(५) काँच पूर्णरूप से समांग होना चाहिए और उसमें Veins या रेखाएँ न होनी चाहिए।

(६) समूचे दृश्य वर्णक्रम परास में काँच प्रायः पारदर्शक होना चाहिए।

1. Composition

(७) काँच ऐसा होना चाहिए कि उससे लेन्स और प्रिज्में तैयार हो सकें और वह इतना कठोर या भंगुर न हो कि घिसाई तथा पालिश न हो सके।
(८) द्रुत अवस्था में काँच में ऐसी श्यानता होनी चाहिए कि वह आसानी से विलोडित किया जा सके।
(९) काँच-मिश्रण ऐसा होना चाहिए कि सामान्य स्थिति में उसका सहज द्रवण हो सके।
(१०) काँच ऐसा होना चाहिए कि धीमी गति से ठंडा करने की अवधि में, उसमें विकाचरण न हो।
(११) काँच को पूर्णरूप से अभितापित करना चाहिए जिससे उसके सम्पूर्ण विकार निकल जायँ।
(१२) काँच-द्रवण के लिए ऐसे पात्र होने चाहिए कि वे द्रुत काँच की संक्षारण-क्रिया को पर्याप्त मात्रा में सहन कर सकें और उनमें रखे हुए काँच की रचना में उल्लेखनीय अन्तर न होने पाये।

कांच-मिश्रण पदार्थ

प्रकाशीय काँच-निर्माण के प्रयोग में आनेवाले काँच-मिश्रण के "कच्चे" पदार्थ शुद्ध, प्रायः लोह एवं लोह-यौगिकों से रहित और रचना में स्थिर होने चाहिए। विश्लेषण द्वारा उनकी रचना की जाँच कर लेनी चाहिए। सामान्य व्यापारिक काँच में जो अनिर्मित पदार्थ प्रयोग में आते हैं प्रायः वही सब प्रकाशीय काँच में भी प्रयुक्त किये जाते हैं। परन्तु शुद्धता लाने के लिए कुछ द्रव्यों में हेर-फेर हो सकता है, जैसे कुछ संस्थाएँ पोटाश के स्थान में पोटेशियम वाइ कार्वोनेट प्रयोग में लाती हैं, क्योंकि यह अधिक शुद्ध अवस्था में प्राप्त होता है। फिर भी काँच में २५ से ३० प्रतिशत पोटाश के लिए शोरे का प्रयोग होता है। कुछ अवस्थाओं में, जव कि पात्र अधिक प्रतिरोधक होते हैं तव, पोटाश के स्थान पर पूर्णरूप से शोरे का प्रयोग किया जा सकता है।

प्रयोग के पूर्व द्रव्यों को सुखाकर छान लिया जाता है, फिर ठीक-ठीक तौलकर अच्छे प्रकार से उन्हें मिश्रित किया जाता है। पात्र से पर्याय मात्रा में सिलिका और अल्यूमिना का अवशोपण और द्रवण की अवधि में वाष्पशील होने के कारण, पदार्थों की हानि का ध्यान रखा जाता है। काँच-मिश्रण को या तो छिछले वर्तन में लकड़ी के फावड़े से मिश्रित कर छान लेते हैं या उसे डिडिम आकार के पात्र में मिश्रित करते हैं।

मिश्रित करने के उपकरण को प्रयोग के पूर्व पूर्ण रूप से स्वच्छ कर लेना चाहिए। मिश्रित करने के पश्चात् सम्पूर्ण मिश्रण का प्रयोग करना चाहिए। परन्तु यदि कुछ मात्रा संचय करनी हो तो शुष्क और ढक्कनदार पात्र प्रयोग में लाना चाहिए। क्योंकि बहुत-सा निर्मित काँच रेखाओं और बुलबुलों के दोष के कारण निरर्थक होता जाता है, अतः टूटा काँच पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सकता है।

काँच-मिश्रण में, प्रयोग में आनेवाले टूटे काँच की वही रचना होनी चाहिए जो काँच की हो। प्रत्येक समय जब काँच द्रवित किया जाता है तब कुछ अशुद्धियाँ, विशेषकर भारी सीस काँच में, आ जाती हैं। कुछ पदार्थों के वाष्पशील होने के कारण रचना में और भी अन्तर आ जाता है। इन सब कारणों से टूटे काँच के प्रयोग की सीमा होती है, अतः ऐसे काँच की कितनी मात्रा प्रयोग में लायी जाय, इसके लिए कोई भी नियम स्थिर नहीं हो सकता।

टूटे काँच को भंजक से तोड़कर फिर चुम्बकीय पृथक्कर्ता से गमन कराना चाहिए जिससे कि लोहकण दूर हो सकें।

भट्ठियाँ और पात्र

प्रकाशीय काँच का द्रवण करने के लिए साधारणतः एक ही बन्द पात्र धारण करनेवाली गैस-तापित पुनर्जनन भट्ठी का प्रयोग किया जाता है। कुछ विशेष दशाओं में ही २० पात्रों तक की बड़ी भट्ठियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं। पात्रों का व्यास साधारणतः ३ फुट और स्थूलता ३ से ४ इंचों तक होती है। पात्रों के निर्माण के लिए अति उत्तम पात्र मिट्टी प्रयोग में लायी जाती है। पात्र का निर्माण भी अति कुशलता से होना चाहिए जिसमें कि संक्षारण न्यूनतम हो। पात्र-तापन भट्ठी में कई दिनों तक पात्र धीरे-धीरे तापित किया जाता है। जिस प्रकार के काँच का द्रवण किया जाय उसी के अनुसार ताप बढ़ाया जाता है। उदाहरणार्थ घने सीस काँच के लिए १०००° सें० की आवश्यकता होती है, जब कि बोरो सिलिकेट और कठोर असीस काँच के लिए १५००° सें० ताप की आवश्यकता होती है। एक बार जब ताप आ जाय तब उसको स्थिर रखना चाहिए और उसमें १०° सें० से इधर-उधर का अन्तर नहीं पड़ना चाहिए। इसी उद्देश्य से सब भट्ठियों में ताप-अभिलेखित्र लगे होते हैं।

काँच की संक्षारण क्रिया को रोकने के लिए, पात्र एक घंटे तक द्रवण ताप पर रखा जाता है जिसमें कि वह पूर्णरूप से पक जाय और जितना अधिक घना सम्भव हो हो जाय। तत्पश्चात् पात्र भीतर से टूटे काँच द्वारा काँचित किया जाता है और काँच-मिश्रण भरने के पूर्व एक घंटे तक द्रवण काँच के ताप पर रखा जाता है।

काँच का द्रावण

कितनी ही बार काँच-मिश्रण पात्र में साधारण ढंग से भरा जाता है। बन्द पात्रों में काँच का द्रवण १८ से २० इंच की गहराई तक किया जाता है। खुले पात्रों में उसका इस प्रकार द्रवण किया जाता है कि द्रुत काँच पात्र के किनारे (कोर) से १ इंच नीचा रहे। द्रवण करने के लिए प्राय: १० घंटे का समय लगता है और इस अवधि में ताप स्थिर रखा जाता है, जिसमें पात्र का संक्षारण एवं वाष्पशीलता स्थिर रहे। फिर ताप-वृद्धि कर, कई घंटों तक उसी ताप पर रखकर काँच का शोधन किया जाता है। तब काँच की सतह पर से झाग निकाल लिया जाता है जिसमें कोई अशुद्धि हो तो वह हट जाय। इंग्लैंड में शोधन के पश्चात् काँच का विलोडन किया जाता है, परन्तु अमेरिका में द्रवण और शोधन के समय ही विलोडन किया जाता है, जब कि अर्ध पात्र भरने योग्य पर्याप्त मात्रा में काँच उपलब्ध हो। इससे द्रवण में शीघ्रता होती है और पात्र का संक्षारण न्यूनतम होता है।

काँच का विलोडन

समांग प्रकाशीय काँच तैयार करने के लिए विलोडन (स्टरिंग) बहुत आवश्यक क्रिया है। पूर्व समय में यह क्रिया हाथ से श्रमिकों द्वारा की जाती थी और अति कठिन थी, परन्तु अब यह यंत्र द्वारा की जाती है। अग्नि-मिट्टी का सिलिन्डर (वेलन) काँच में उदग्र स्थिति में रखा जाता है और विलोडित करनेवाली लोह-शलाका द्वारा घूर्णित किया जाता है। अग्नि-मिट्टी का सिलिन्डर लम्बाई में २४ इंच से कुछ अधिक होता है। खुले पात्रों के लिए, उसकी ऊँचाई पात्र की ऊँचाई से एक इंच कम होती है। ऊपर के सिरे का बाहरी व्यास प्राय: ४ इंच होता है और नीचे का सिरा ३ से ३.५ इंच व्यास का होता है, क्योंकि वेलन ऊपर से नीचे की ओर क्रमश: पतला होता जाता है। ऊपरी सिरे पर वृत्ताकार किनारा या उत्तट होता है जो एक इंच गहरा होता है और एक इंच बाहर भी निकला रहता है। जब सिलिन्डर विलोडन शलाका से पृथक् होता है तब इसी किनारे या उत्तट से सिलिन्डर पात्र पर आधारित रहता है। सिलिन्डर के ऊपर ७ इंच लम्बा छिद्र होता है और इसमें विलोडन शलाका की अलम्बन कील ठीक से लग जाती है। ऊपर के चार इंच में छिद्र वर्गाकार होता है और अलम्बन कील का यह भाग भी वर्गाकार होता है, अत: अलम्बन कील जकड़ी रहती है, फिसल नहीं सकती। अग्नि मिट्टी का सिलिन्डर साधारण विधि से बनाया जाता है और शुष्क होने के पश्चात्, पात्र तापित भट्ठी में काँच के ताप तक तापित किया जाता है, तदुपरान्त पात्र तापित भट्ठी से हटाकर द्रुत काँच के पात्र में रखा जाता है।

विलोडक पानी से ठंडा किया जाता है। दो वृत्ताकार विंवों के ऊपर स्थित दो असकेन्द्र[1] कीलों में यह अनुप्रस्थ दिशा में लगाया जाता है। ये विंव विलोडन यंत्र के ढाँचे में लगे होते हैं और मोटर द्वारा उसी अनुप्रस्थ समतल में परिक्रमण करते हैं।

सिरे के निकट विलोडन शलाका लम्वकोण पर झुकी होती है और इसके उदग्र वढ़ाव में अलम्वन कील होती है जो अग्नि मिट्टी के सिलिन्डर में फँस जाती है। यंत्र पट्टियों पर चलता है और पात्र के सामने इस प्रकार रखा जाता है कि शलाका का सिरा ढक्कन छिद्र से गमनकर पात्र में आ जाय। जव कील छिद्र में डाल दी जाती है तव मोटर चलायी जाती है। जव शलाका घूमने लगती है तव अग्नि-मिट्टी का सिलिन्डर भी घूमता है जिससे द्रुत काँच का क्षैतिज विलोडन होने लगता है।

विलोडक एक वृत्त में परिक्रमण करता है और वृत्त का माप परिक्रमण करने-वाले विम्वों में स्थित कीलों से होता है। विलोडन की व्यवस्था इस प्रकार की जाती है कि सम्पूर्ण काँच, सिवाय उस भाग के जो कि पात्र की दीवालों से संलग्न होता है, पूर्णरूप से उलट-पलट हो जाय। कुछ यंत्रों में विलोडन शलाका को उदग्र गति भी दी जाती है जिससे द्रुत काँच की क्षैतिज परतें भी मिश्रित हो जायँ। यह क्रिया भारी सीस काँचों के लिए आवश्यक होती है।

विलोडन की दर प्रति मिनट १२ से १६ परिक्रम होती है और यह काँच की किस्म पर निर्भर रहती है। जव विलोडन शलाका के प्रवेश के लिए पात्र से ढक्कन हटाया जाय तव ताप में ५०° सें० से अधिक कमी न आनी चाहिए। विलोडन अवधि में ताप जितना सम्भव हो, उतना स्थिर रहना चाहिए। विलोडन की प्रत्येक अवस्था के पश्चात्, ताप इतना वढ़ाना चाहिए कि जो वुलवुले वने हों वे दूर हो जायँ, परन्तु काँच में संवहन धाराएँ न वनें।

गैस वुलवुले वनने के कई कारण होते हैं, जैसे—(१) द्रवण अवधि में गैस का धीरे-धीरे निष्कासन, (२) विलोडक के परिक्रमण के कारण, वायु का खिंच आना, (३) विलोडन शलाका के सिरे पर आलम्वन कील के दोषपूर्ण संधान[2] के कारण, सन्धि में जल का च्यवन।

जव काँच शुद्ध और अच्छी तरह मिश्रित हो जाता है तव गैस वन्द कर पात्र को ठंडा किया जाता है। विलोडन की दर धीरे-धीरे कम की जाती है और अन्त में जव कि काँच का आवश्यक ताप कम हो जाता है तव विलोडन वन्द कर दिया जाता है।

1. Eccentric 2. Joint

विलोडक हटा लिया जाता है और पात्र को भट्ठी से उठाकर तरल काँच का पात्र शीघ्रता से ठंडा किया जाता है, जिसमें कि पेंदे और बगल की काँच की परतें ठोस हो जायँ।

जिस ताप पर विलोडन वन्द किया जाता है वह वहुत ध्यान देने योग्य है, क्योंकि काँच में रेखाओं की उपस्थिति उसी पर निर्भर होती है। पात्र को शीघ्रता से ठंडा करने के लिए वहुधा उस पर जल सीकरित किया जाता है। पात्र को तव पात्र-तापन भट्ठी में रख देते हैं। इस भट्ठी का ताप इतना अधिक नहीं होता कि काँच द्रवित हो जाय। पात्र तापन भट्ठी तव नियंत्रित दर से धीरे-धीरे ठंडी की जाती है। कुछ स्थानों में भट्ठी कक्ष के फर्श पर ही पात्र ठंडा किया जाता है।

कुछ विशेष हालतों में द्रुत काँच को ढालनेवाली मेज़ पर उड़ेल दिया जाता है और पट्टिका काँच के समान काँच को वेला जाता है।

काँच का द्रवण, शोधन और विलोडन करने में साधारणतः २० से २४ घंटे लगते हैं।

काँच के टुकड़े करना और आकार देना

पात्र जव ठंडा हो जाता है तव ढक्कन तोड़ दिया जाता है और इसके अन्दर के काँच के कई टुकड़े हो जाते हैं। यदि काँच नियम से ठंडा हुआ रहता है तो वहुत से आयताकार टुकड़े प्राप्त होते हैं। इन टुकड़ों को दोषों की दृष्टि से, जैसे कि रेखाओं, गैस वुलवुलों और कंकड़ियों के लिए, निरीक्षण किया जाता है और टुकड़ों से दोषयुक्त भाग तोड़कर पृथक् कर दिया जाता है। टुकड़ों को वांछित आकार देने के लिए हाथ से छीला जाता है। गैस तापित भट्ठी में ये टुकड़े मृदुलांक[1] तक तापित किये जाते हैं। फिर काँच के टुकड़े उपयुक्त माप के साँचों में रख स्थापित कर कोमल होने के लिए भट्ठी में रखे जाते हैं और पीडन कर उन्हें वांछित आकार दिया जाता है। कुछ लोग आकार देने के लिए एक ही भट्ठी का प्रयोग करते हैं। भट्ठी सुरंग के आकार की होती है और एक सिरे पर तापित की जाती है। साँचे, काँच की पट्टियों सहित, भट्ठी के ठंडे सिरे पर रखे जाते हैं और धीरे-धीरे गरम सिरे पर पहुँचाये जाते हैं। ये साँचे या तो वर्गाकार या आयताकार होते हैं। काँच कोमल होकर इन साँचों में भर जाता है। पट्टियों को धीरे-धीरे ठंडा किया जाता है जिससे काँच प्रायः अभितापित हो जाता है।

1. Softening point

काँच का परीक्षण

पट्टियों के आमने-सामने के सिरे, कार्बोरन्डम से घिसे जाते हैं और रूज से पालिश किये जाते हैं। पटियों के दोष, जैसे कि रेखाएँ, बुलबुले और कंकड़ इत्यादि, सिर्फ चक्षुओं से जाँचे जाते हैं। दोषयुक्त टुकड़े निकाल दिये जाते हैं।

अन्तिम अभितापन

पटियों का सूक्ष्म अभितापन विद्युत् तापित भट्ठी में किया जाता है। पहले पटियों को अभितापन ताप तक तापित किया जाता है, फिर कई सप्ताहों की अवधि तक बहुत धीरे-धीरे और सावधानी से ठंडा किया जाता है। यह सूक्ष्म अभितापन विद्युत् तापित किल्न या लेयर में किया जाता है। यह किल्न ऊष्मसह पदार्थों की अच्छे प्रकार की विसंवाहित[1] पेटी होती है और इसमें ६०० पाउंड काँच आ सकता है। काँच की पटियाएँ परात में रखकर किल्न में रख दी जाती हैं। लेयर में वे वृत्ताकार धातु के बक्सों में रखी जाती हैं और आवश्यक तापक्रमवाली विद्युत् तापित नली में से इनका गमन कराते हैं। विद्युत् तापन से ताप का पूर्णरूप से नियंत्रण होता है।

लेन्स निर्माण

इसके कई क्रम होते हैं—

(१) काटना—यह ६ इंच त्रिज्या के मृदु लोह या मिश्र धातु के चाक पर किया जाता है। यह चाक ३५० परिक्रम प्रति मिनट करता है। चाक का किनारा कोणीय और कुछ कटा होता है। काटने का माध्यम हीरे की धूलि होती है और स्नेहन सोडा जल या साबुन के फेन से किया जाता है। लेन्स, वांछित माप से कुछ अधिक बड़े ही काटे जाते हैं।

(२) घिसना—वृत्ताकार लोह मेज़ पर कुछ कटे हुए अधूरे लेन्स डामर द्वारा चिपकाये जाते हैं। इस मेज़ की कटी त्रिज्या होती है जो कि लेन्स के लिए आवश्यक है। सतहें गोलाकार या बेलनाकार घिसी जाती हैं। यह मेज़ एक केन्द्रीय उदग्र ईषा पर स्थित की जाती है और नीचे की तरफ से पेटी और घर्घरी द्वारा परिक्रमण करती है। एक ढलवाँ लोहे का बिम्ब, जिसकी वक्रता की त्रिज्या नीचे की मेज़ के समान होती है, घिसनेवाले औजार के रूप में प्रयुक्त होता है। यंत्र की सहायता से यह टेबिल के ऊपर घुमाया जाता है। घिसने के माध्यम के लिए एमरी[2] का प्रयोग किया जाता है जो कि मेज़ पर गिरती है और उसके कणों की सूक्ष्मता बढ़ती जाती है। काँच की

1. Insulated 2. Emery

सतह पर जल भी गिरता है। घिसने से काँच में आकार आ जाता है और वह चिकना हो जाता है।

(३) पालिश करना—इसकी विधि भी घिसने के ही सदृश है। पालिश के लिए जल और रूज प्रयोग में लाये जाते हैं।

जब एक तरफ के काँच का कार्य पूर्ण हो जाता है तब लेन्स हटा लिये जाते हैं और दूसरी मेज़ पर उलट कर रखे जाते हैं। इस मेज़ की भी उतनी ही वक्रता होती है। दूसरी तरफ के लेन्सों की सतह भी पहले की ही तरह घिसी और पालिश की जाती है।

(४) आकार देना—विशेष कोमल लोहों से, लेन्सों के किनारे का कुछ भाग तोड़कर वांछित आकार दिया जाता है। कुछ लेन्स राल, मोम या सीमेण्ट द्वारा आमने-सामने चिपका दिये जाते हैं और इस प्रकार बने हुए बेलन को घिसकर आकार दिया जाता है। तदुपरान्त बेलन को गरमकर लेन्सों को एक दूसरे से पृथक् कर लिया जाता है।

चश्मों के और उसी प्रकार के और लेन्सों के किनारे घिसने के लिए विभिन्न प्रकार के कोण-प्रवणन यंत्रों का प्रयोग होता है।

दूरबीन के लिए, २०० इंच का बिम्ब

ढले हुए काँच का यह अत्यन्त आश्चर्यजनक प्रयोग है। केलीफोर्निया की प्रौद्योगिकी संस्था के माउण्ट पालोमर वेधशाला के प्रयोग के लिए कार्निंग ग्लास-वर्क्स, कार्निग, न्यूयार्क ने इसका निर्माण किया था। इसका भार ५४० मन, व्यास १६ फुट ९ इंच और स्थूलता १ फुट २ इंच है। काँच का यह सबसे बड़ा टुकड़ा है जो कभी निर्मित किया गया होगा। भार कम रखने और अधिक दृढ़ता के लिए यह झरझर के रूप में बनाया गया है। इसकी सतह प्रकाशीय समतल में बनी है और स्वयं के भार से इसमें अवनमन नहीं होता। झरझर के कारण बहुत से आधार प्रयोग में लाये जा सकते हैं। इसके निर्माण में बोरोसिलीकेट काँच का प्रयोग किया गया है क्योंकि इस काँच का प्रसार निम्न होता है, जिससे इसके प्रयोग से काँच में अधिक स्थायित्व आ जाता है। बिम्ब ५००° सें० तक तो शीघ्रता से ठंडा किया गया और फिर ८° सें० प्रति दिवस की दर से ३००° सें० तक ठंडा किया गया। ठंडा होने में, इस प्रकार प्रायः एक वर्ष का समय लगा था। दो बिम्ब ढाले गये थे, प्रथम की ढलाई हुई थी, मार्च १९३४ में, जो खराब हो गया था। दूसरे की दिसम्बर १९३४ में हुई।

दृष्टीय काँच

इस वर्ग में दृष्टीय लेन्स, द्विफोकस और धूप चश्मों के रंगीन लेन्स अन्तर्हित हैं। जैसी सुतथ्यता इनमें आवश्यक होती है, उसके कारण इनका वर्गीकरण कभी-कभी प्रकाशीय काँच में भी होता है। प्रारम्भ में दृष्टि काँच के निर्माण के लिए धमनकर एक गोला बनाया जाता था, जिसको काटकर लेन्स के माप के बिम्ब बना लिये जाते थे। ये बिम्ब पुनः तापित किये जाते थे और पीडनकर इनको आवश्यक वक्रता का बनाया जाता था। अब सोडा चूना युक्त काँच को, जिसका n_D १.५२३ और ν ५८ होता है, बेलकर $\frac{1}{8}$ इंच से $\frac{3}{8}$ इंच मोटी चादर बना ली जाती है। इस प्रकार बेली और पालिश की हुई चादर से लेन्सों के वर्गाकार टुकड़े काट लिये जाते हैं। इस प्रकार के काँच को समांग, और रेखाओं, ग्रन्थियों तथा बुलबुलों से रहित होना चाहिए। आवश्यकतानुसार उसे रंगहीन भी होना चाहिए।

संधानित[1] द्विफोकस लेन्स

ऐसे लेंसों के निर्माण के लिए सीस काँच, जिनका n_D = १.६१ से १.६९ तक और ν=३-६.५ से ३१ तक होता है, काम में लाये जाते हैं। एक छोटे असीस काँच पर सीस काँच का कुछ वक्रता लिये बिम्ब पूर्णरूप से संधान किया जाता है। संधान[2] के समय ताप प्रायः ७००° सें० होता है। काँचों का संगलन ऐसा होना चाहिए जिसमें विकार, बुलबुले या धुंधलापन न आये। प्रयोग में आनेवाले सीस और असीस काँचों का कोमल बिन्दु से कक्ष-ताप तक का सम्पूर्ण प्रसार एक समान होना चाहिए।

रंगीन काँच

रंगीन काँचों का कोई स्वीकृत मानक नहीं है। प्रायः अम्बर, नीला, हरा, धूम्र इत्यादि ही जनप्रिय रंग है। कुछ काँच पारजम्बू प्रकाश का अधिक भाग अवशोषण करते हैं और वर्णक्रम में पीली D रेखाओं पर दो अवशोषित रेखा-समूह होते हैं।

1. Fused 2. Fusion संगलन

पन्द्रहवां अध्याय

चिपिटे काँच का निर्माण

द्वारी काँच* (विंडोग्लास) दो प्रकार का होता है–(१) चादरी काँच, जो कि हाथ से वेलन के रूप में या भट्ठी से यंत्र द्वारा कर्षित कर पतली चादरों के रूप में बनाया जाता है, (२) पट्टिका काँच, जो ढाल और वेलकर बनाया जाता है। साधारणतः किसी भी चिपिटे काँच की यदि दोनों सतहें पालिश द्वारा प्रकाशीय समतल की हों, तो उसको 'पट्टिका काँच' कहकर व्यक्त किया जाता है।

हस्त-प्रणाली द्वारा निर्माण

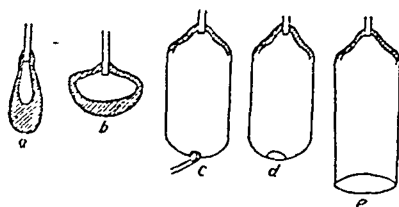
काँच का द्रवण साधारणतः ६ से १० खुले पात्रों की भट्ठी में किया जाता है। द्रवण और शोधन में प्रायः ३६ घंटे और निर्माण में १२ घंटे लगते हैं। भट्ठी के सामने बड़े आकार के कार्यछिद्र होते हैं, जिनमें वैसे ही आकार के परिज़न प्रवेश कर सकें। इन कार्यछिद्रों का ताप इतना ही ऊँचा रखा जाता है जितना कि भट्ठी का। कार्यछिद्र का मुख २८ से ३२ इंच चौड़ा होता है और इसका कुछ अंश परदे से बन्द कर दिया जाता है। नाड को सहारा देने के लिए, परदे में एक अर्द्ध वृत्ताकार मुख और एक काँटा होता है। परदा ऊष्मा से श्रमिकों की रक्षा करता है। भट्ठी के दोनों तरफ काष्ठ के चबूतरे होते हैं। पेरिज़न को आकार देने के लिए प्रत्येक कार्यछिद्र से संलग्न (१) लोहे की एक चिकनी पटिया, (२) एक जलनाँद और (३) आकारित काष्ठ की या लोहे की पटिया होती है। पटियों में कई कूप होते हैं जिनमें पटियों को ठंडा करने के लिए पानी छिड़का जाता है। काँच के बेलनों को लटकाने के लिए एक गड्ढा होता है। प्रत्येक श्रमिक के लिए, चबूतरे का अलग-अलग विभाजन कर दिया जाता है।

जहाँ कुण्ड भट्ठी का प्रयोग होता है वहाँ पुनस्तापन छिद्रों की आवश्यकता नहीं होती है, क्योंकि वहाँ पर काँच कार्यछिद्रों में पुनः तप्त किया जा सकता है। फिर भी इस क्रिया से भट्ठी का काँच ठंडा नहीं होता। फ्रांस एवं जर्मनी में पात्र भट्ठियाँ प्रयोग में आती हैं जब कि बेलजियम, इंग्लैंड एवं अमेरिका में कुण्ड भट्ठियों का प्रयोग होता है। काँच के सिलिण्डर (बेलन) बनाने की कई प्रणालियाँ हैं।

* अमेरिकन नामावली में द्वारी काँच को ही चादरी काँच कहकर व्यक्त किया जाता है।

फ्रैन्को जर्मन प्रणाली

धमनाड को द्रुत काँच में डुबोकर और उसमें एक दो वार घुमाकर, धमनाड के सिरे पर काँच संगृहीत किया जाता है। नाड में धीमी फूँक और काँच को चिकनी पटिया पर वेलने से, काँच का एक छोटा सुपिर गोला वन जाता है। जब यह पर्याप्त ठंडा हो जाता है तव इस पर पाँच वार तक और काँच संगृहीत किया जाता है। इस अवधि में लकड़ी के वने आकार



[चित्र ३६—चादरी काँच का हस्त निर्माण]

देनेवाले गोले औज़ार से गोले को आकार दिया जाता है और नाड में धीरे से फूँका जाता है। तव एक सहायक पेरिज़न सहित नाड को लेता है। (चित्र a और b) और पेरिज़न को लकड़ी की विशेप पाटी पर आकार देता है। इस बीच नाड के निकट ऊपर की पतली दीवाल ठंडी होकर दृढ़ हो जाती है, जब कि इसके नीचे का भाग कोमल और स्थूल रहता है। पेरिज़न का स्थूल भाग, तव पुन-स्तापन छिद्र[1] में तापित किया जाता है और नाड को परदे के काँटे पर आलम्वित रखा जाता है। जव तप्त भाग कोमल हो जाता है तव नाड को पुनस्तापन-छिद्र से निकाल लिया जाता है और नाड को गड्ढे में उदग्र स्थिति में रखकर लोलक के समान झुलाया जाता है। पेरिज़न कुछ अंश तक अपने भार के कारण और कुछ अंश में नाड में से जोर के साथ फूँकने के कारण, लम्वा हो जाता है। इस प्रकार काँच का लम्वा वेलन प्राप्त होता है जिसकी दीवालें एक समान स्थूल होती हैं। एक शलाका पर कुछ गरम काँच संग्रह कर सिलिण्डर के पेंदे के मध्य में लगाया जाता है, जिससे कि उस विन्दु पर काँच कोमल हो जाय। (चित्र c) नाड का खुला सिरा तव वन्द कर दिया जाता है और काँच का सिलिण्डर (वेलन) पुनस्तापनछिद्र में प्रविष्ट कराया जाता है। नाड में वायु प्रसार होने के कारण सिलिण्डर के अन्त में जहाँ पर काँच कोमल हो जाता है, वहाँ एक छिद्र वन जाता है (चित्र d)। सिलिण्डर तव निकाल लिया जाता है और एक लड़का कैंची से छिद्र को वड़ा करता है। काँच फिर से पुनस्तापन-छिद्र में तप्त किया जाता है और गड्ढे में झुलाया जाता है, तव नीचे का भाग, वाकी सिलिण्डर

1. Glory-hole

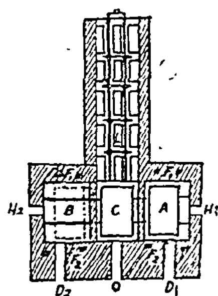
के व्यास के समान हो जाता है (चित्र e)। सिलिण्डर तब एक विशेप स्थान पर रखा जाता है और नाड से पृथक् किया जाता है। इस प्रणाली में सिलिण्डर की लम्वाई और परिधि क्रमशः चादरी काँच की लम्वाई एवं चौड़ाई के अनुसार होती है। इस प्रणाली से ९ फुट लम्वाई और चार फुट चौड़ाई तक के चादरी काँच प्राप्त हो सकते हैं।

वेलनों का खोलना

पहले वेलन के कंठ को चटकाने के लिए, गरम काँच का धागा वांछित स्थान के चतुर्दिक् लपेट दिया जाता है, फिर काँच को ठंडे लोहे से स्पर्श किया जाता है। मोटे वेलन को चटकाने के लिए तप्त लोहे के एक औज़ार से कंठ के चतुर्दिक् स्पर्श किया जाता है, फिर उस तप्त रेखा पर जल की एक वूंद डाली जाती है। सिलिण्डर लम्वाई में भीतर से दवाकर खोले जाते हैं। छोटे चौड़े सिलिण्डर हीरे से काटकर खोले जाते हैं और लम्वे सिलिण्डर खोलने के लिए लाल तप्त लोहे से सिलिण्डर के भीतर लम्वाई से स्पर्श किया जाता है। लकड़ी के छोटे स्फान[1] साधारणतः प्रत्येक सिरे में रखे जाते हैं जिससे विभक्त भाग मिल न सकें।

चिपटा करने की भट्ठी

इस भट्ठी में दो गैस-तापित कक्ष (A) और (B) होते हैं। इन कक्षों के मध्य में ठंडा करने की दो लेयरें (C) और (L) होती हैं। दहन गैसें नाली (F_1) से प्रवेश करती हैं और क्षय गैसें नाली (F_2) से निष्क्रमित होती हैं। रेल की पटरी कक्ष (A) से कक्ष (B) तक होती है, इस पटरी पर दो डिव्वे होते हैं और प्रत्येक में एक चिपटा करने की शिला होती है। विभक्त काँच का सिलिण्डर इस शिला पर रखा जाता है। यह चिपटी शिला अग्नि-मिट्टी की वनी और चिकनी होती है। एक श्रमिक (H_1) से गिरते हुए वेलन को देखता है और आवश्यकता होने पर गिरते हुए वेलन के दो अर्धों को लोह डाँड़ों से दवाता है, फिर वह उनको चिपटा करने के औज़ार से जो कि लोहे की मुठिया में काठ की एक पटिया होती है, दवाता है। इस अवधि में दूसरा डिव्वा कक्ष (C) में रहता है। फिर कक्ष (A) के डिव्वे को कक्ष (C) में ढकेला जाता है और इस प्रकार दूसरा डिव्वा स्वयं ही कक्ष (B) में चला जाता है और वहाँ प्रवेश-द्वार



[चित्र ३७—चिपटा करने की भट्ठी]

1. Wedges

(D_2) में से दूसरा काँच का वेलन चिपटी शिला पर रखा जाता है। यह वेलन भी पहले की ही तरह चिपटा, चिकना और समतल किया जाता है। इस वीच कक्ष (C) का काँच ठंडा हो जाता है और द्वार (O) से एक मजवूत छड़ से इस काँच को लेयर (L) में रखा जाता है। लेयर की लम्वाई में एक लोहे का ढाँचा, नालियों में डूवा होता है। ढाँचे में कई शलाकाएं होती हैं। ढाँचा लेयर के खुले सिरे पर एक अनुप्रस्थ छड़ से जुड़ा होता है। अनुप्रस्थ नालियों के भीतर नियमित दूरी पर लोह छड़ें होती हैं जिनके ऊपर वेलन स्थित होते हैं और यह ऊपर स्थित लोहे की छड़ों को सहारा देते हैं। ढाँचे को एक मुठिया से ऊपर नीचे करने से पूर्ण अनुप्रस्थ छड़ को फर्श की सतह से कुछ ऊपर या नीचे किया जा सकता है।

जव कक्ष (B) से वेलन कक्ष (C) में आता है और तीसरा वेलन (A) में चिपटा किया जा रहा होता है तव (L) में स्थित चादरी काँच को लेयर में इतना आगे वढ़ाते हैं कि (C) में स्थित दूसरा चादरी काँच उसकी जगह रखा जा सके। इसके लिए ढाँचे को फर्श की सतह के ऊपर उठाते हैं जिससे कि काँच की चादर कुछ ऊपर उठ जाय और ढाँचे के अन्त में स्थित मुठिया को आगे खींचकर आवश्यक दूरी तक ले जाते हैं। ढाँचे को नीचा कर और चादर को विना हटाये उसको धँसी हुई नालियों में पीछे ढकेल कर पहले की स्थिति में ले जाते हैं। अनुक्रमिक रूप में हटाने से कई चिपटे वेलन लेयर में रख दिये जाते हैं और इस प्रकार लेयर के दूसरे सिरे पर अभितापित चादरें प्राप्त होती हैं।

निर्माण के पश्चात्

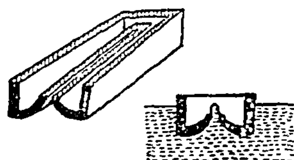
तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल के कुण्ड में अभितापित काँच चादरें डुवो दी जाती हैं। कुण्ड का माप चादरों के माप पर निर्भर होता है। अन्त में चादरों को जल से धोया जाता है और फिर शुष्क होने को रख दिया जाता है। शुष्क चादरें काटने के कक्ष या गोदाम में भेजी जाती हैं। सिलिण्डरों (वेलनों) को खोलते समय सव दोषी भाग यथासंभव किनारे पर रखे जाते हैं। इस प्रकार चादर के अधिक से अधिक वड़े भाग का अच्छा काँच निकालने की कठिनाई कम हो जाती है।

यांत्रिक कर्षण प्रणालियां

फूरकाल्ट प्रणाली

काँच की चादरें कर्षण विधि से सफलतापूर्वक वनाने का श्रेय वेल्जियम निवासी ई० फूरकाल्ट को है। एक प्लव जिसको 'डेविट्यज़' भी कहते हैं, ऊष्मसह पदार्थ

का प्रायः ८ फुट लम्बा नाँद सा होता है और उसके पेंदे में एक लम्बी दरार होती है। दरार मध्य में साधारणतः कुछ चौड़ी और किनारों पर कुछ सकरी रहती है। द्रुत काँच की सतह पर यह प्लव उतराता रहता है और दो 'U' आकार की भुजाओं द्वारा द्रुत काँच में प्लव के डूबने की गहराई नियमित की जा सकती है। द्रुत काँच दरार से निकलता है। काँच के निकलने की रफ्तार प्लव के[1] डूबने की गहराई पर निर्भर करती है। यदि यह ऐसा ही छोड़ दिया जाय तो दरार के अन्दर और बाहर काँच की सतह एक समान हो जायगी। काँच को पुराने काँच (bait) द्वारा पकड़कर, चादर के रूप में कर्पण किया जाता है। इस विधि से काँच की चादर का संकीर्ण होना रुक जाता है, क्योंकि तल-तनाव को कम करनेवाली गुरुत्वाकर्पण संबंधी प्रवृत्ति का, कर्पण विन्दु पर उपरि प्रवेग के कारण निवारण हो जाता है।



[चित्र ३८—फूरकाल्ट का प्लव]

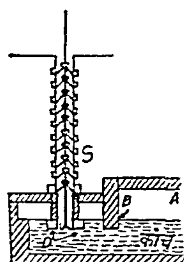
प्लव पर दवाव के कारण दरार में से होकर सम परिमाण का द्रुत काँच एक फीते के रूप में अविराम निकलता है। दरार के दोनों तरफ दो जल शीतित नलियाँ, निकलते हुए काँच को ठंडा कर देती हैं।

कुण्ड दो भागों में विभाजित होता है। कक्ष (A) में काँच का द्रवण होता है। काँच के ऊपर परदा (B), कर्पण-कक्ष और द्रवण-कक्ष को पृथक् करता है और दोनों कक्षों के तापों को नियमित रखता है। दो और परदों (D) के मध्य में प्लव स्थित होता है। एक साधारण द्रवण कुण्ड में, या तो कई यंत्रों के लिए एक वड़ा कर्पण कक्ष या प्रत्येक यंत्र के लिए एक कर्पण-कक्ष होता है। प्लवों के ऊपर कर्पण यंत्र होते हैं। ये यंत्र प्रायः १३ फुट ऊँची लोह चादरों की आयताकार मीनारें होती हैं जिनमें से होकर एक ढाँचा गमन करता है और इसमें क्रम से एसवेसटस के युग्म वेलन होते हैं ; इन वेलनों के परिक्रमण से चादर का कर्पण होता है। वेलनों का प्रथम युग्म, द्रुत काँच की सतह से प्रायः ३½ फुट की दूरी पर होता है। दाहिनी तरफ के वेलन, एक उदग्र वक्राक्ष[2] और दो कोणीय दन्तचक्रों[3] के द्वारा, सम गति से परिक्रमण करते हैं। वायीं तरफ के वेलन, काँच की चादर को दवानेवाले प्रतिभारों सहित कूर्पर उद्यामों[4] पर स्थित

1. Float 2. Vertical shaft 3. Bevelled gear-wheels 4. Levers

रहते हैं। ये लम्बी दन्तिका[1] से विपरीत वेलनों के दन्तचक्र से संबंधित होते हैं और काँच की चादरों की मोटाई के अनुसार, इनमें अन्तर किया जा सकता है।

अभिनत[2] धातु की चादरें (S) जिनका ऊपरी भाग वेलनों के समतल होता है, ऊष्म विकिरण को रोकती हैं और काँच काटते समय टूटे काँच को नीचे गिरने से रोकती हैं। दन्तचक्र विद्युत द्वारा सही सही चलाया जाता है और उसकी गति १२ से १२० फुट प्रति घंटा होती है। एक पुराने काँच की चादर का प्रयोग कर यंत्र को पहले उलटा चलाया जाता है। तव प्लव को दवाकर नीचा किया जाता है और यंत्र को सीधा चलाया जाता है। पुराना काँच दरार से निकलते हुए काँच को ऊपर उठा लेता है। वेलन उसी दर से परिक्रमण करते हैं जिस दर से दरार से काँच निकलता है। चादर को २० फुट ऊपर कर्पण कर वांछित लम्बाई के टुकड़े काट लिये जाते हैं।



(चित्र ३९—काँच चादर की फूरकाल्ट प्रणाली)

दो मिलीमीटर मोटाई के काँच के लिए कर्पण की दर १०० फुट प्रति घंटा है और १० मिलीमीटर स्थूलता के लिए दर सिर्फ १६ फुट से २० फुट प्रति घंटा है। एक यंत्र एक मास में, २ मिलीमीटर मोटाई की २,६५,००० वर्ग फुट चादर निर्मित कर सकता है।

इस यंत्र से वननेवाली चादर की चौड़ाई साधारणतः ३ से ५ फुट होती है। क्योंकि काँच एक समान और धीरे-धीरे ठंडा होता है, इसलिए इस प्रणाली से वने काँच की चादर समान मोटाईवाली चमकदार, पालिश की हुई और विकार रहित होती है। काँच की चादर, या तो हीरे से या काटने के चक्र से काटी जाती है। इन निर्मित चादरों में कुछ हलकी क्षैतिज रेखाएँ होती हैं।

कोल्वर्न प्रणाली

डब्लू कोल्वर्न ने चादरी काँच यंत्र के लिए एक विधि का पेटेन्ट लिया और उसके सर्वाधिकार लिब्बी ओवेन्स कम्पनी को दे दिये। इस कम्पनी ने कोलवर्न की सहायता से टोलिडो नगर के अपने कारखाने में इस यंत्र को कार्य योग्य वनाया।

इस प्रणाली से काँच चादरें $\frac{1}{\text{८६}}$″ से $\frac{1}{\text{८}}$″ इंच मोटाई तक की कर्पण की जा सकती हैं। इसलिए यह कई कार्यों के लिए, पट्टिका काँच के स्थान में प्रयोग में लायी जा सकती है।

1. Long toothed pinions 2. Inclined

आरम्भ के यंत्र में, दो लम्बी भुजाओं के सिरे पर द्रुत काँच की सतह पर, ऊष्म-सह पदार्थों के दो गोले विपरीत दिशा में शीघ्रता से परिक्रमण करते थे। इस प्रकार तरल काँच ऊपर को उठ जाता था और एक-समान चौड़ाई की चादर बन जाती थी।

आधुनिक यंत्र में द्रुत काँच की सतह के ठीक ऊपर चादर के दोनों किनारों पर जलशीतित नालीवत् बेलनों का एक युग्म होता है। ये बेलन चादर के किनारे पकड़ लेते हैं और इस प्रकार चादर की चौड़ाई स्थिर रहती है।

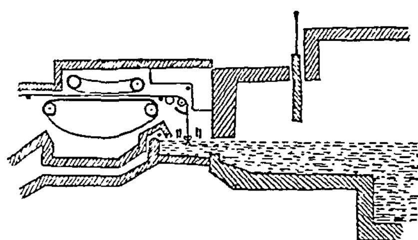
काँच की भट्ठी तीन भागों में विभाजित होती है, (क) द्रावण कुंड, (ख) शीतन कुंड, (ग) कर्षण कुंड। कुण्ड के द्रावण और शीतित भागों को एक परदा विभाजित करता है और शीतित तथा कर्षण कक्ष के मध्य में एक दीवाल होती है। कर्षण कक्ष का काँच वांछित ताप तक कई बर्नरों द्वारा तापित किया जाता है। क्षय गैसें एक पृथक् निष्क्रम से गमन करती हैं। जहाँ पर चादर का कर्षण होता है, वहाँ दो जलशीतित परदे काँच का बचाव करते हैं। काँच का कर्षण करने के लिए दो निरन्त पट्टियाँ होती हैं, जो कि चक्रों से चलती हैं। ऊपर की पट्टी में, काँच को पकड़ने के लिए निरन्त दाँतें[1] होते हैं। नीचे की पट्टी के नीचे एक समतल आधार होता है जिससे चादर टेढ़े-मेढ़े आकार की न बन जाय। ऊपर के कक्ष में ताप नियंत्रण करने से चादर कोमल हो जाती है और लम्ब कोण पर झुकायी जा सकती है। काँच को झुकाते समय दो बराबर सुपिर बेलनों और द्रुत काँच की सतह से ४५ इंच ऊपर एक छोटे बेलन पर आधारित करते हैं। बेलन वायु या जल शीतित होते हैं। बेलनों के नीचे जल एवं वायु नलियों से युक्त एक शीतल कक्ष होता है जो चादर के सम्पर्क में आनेवाले बेलन के भाग को ठंडा करता है।

कर्षण-कक्ष के आगे और सीध में अभितापन कक्ष होता है। दोनों कर्षण पट्टियों के मध्य में एक पुराना चादरी काँच रखा जाता है और यंत्र को विपरीत दिशा में चलाया जाता है। जब पुराना काँच, द्रुत काँच के सम्पर्क में आता है तब यंत्र सामान्य दिशा में चलाया जाता है और काँच की चादर अविराम गति से कर्षित होने लगती है।

चादर के किनारे पर, जहाँ से वह कर्षित होती है, एक जोड़ी जल-शीतित नालीवत् बेलन स्थित रहते हैं। बेलनों की गति, कर्षण यंत्र की गति से कम होती है। बेलन चादर की चौड़ाई को स्थिर रखते हैं और किनारों पर कुछ तनाव भी रखते हैं। चादरों

1. Caterpillar feet

में उत्तम समतलता तभी आती है जब नालीवत् वेलनों की वृत्ताकार गति, कर्पण पट्टियों की गति से १० या २० प्रतिशत कम होती है। वेलनों का अन्तर, चादर की स्थूलता से कुछ ही अधिक होता है। इस कारण चादर किनारे पर कुछ अधिक मोटी होती है। झुकानेवाले वेलन से चादर में कुछ चिह्न पड़ जाते हैं, इनको दूर करने के लिए विभिन्न चेष्टाएँ की गयी हैं। एक विधि में निरंत पट्टियों के मध्य में गमन करने के पूर्व, विशेष लोह से चादर को चिकना किया जाता है। दूसरी विधि में पानी में डुबोया हुआ, काठ का वेलन प्रयोग में आता है। बहुत से स्थानों में अग्र भट्ठी से, दो चादरें एक साथ कर्पित की जाती हैं और ये साथ ही वेलनों के ऊपर, पट्टियों के मध्य से गमन करती हैं। ऊपर की चादर, नीचे की चादर से सुरक्षित होने के कारण, अच्छे गुणवाली होती है। निर्माण के पश्चात्, चादरों को मन्द हाइड्रोक्लोरिक अम्ल में डुबोकर, परत साफ की जाती है और फिर पानी से धोकर शुष्क कर, चादरों को पेटियों में वन्द कर दिया जाता है। प्रत्येक पेटी में ५० वर्ग फुट चादर होती है।



[चित्र ४०—कोलवर्न की चादरी काँच प्रणाली]

जे. एस. लवर्स का सिलिन्डर कर्पण यंत्र

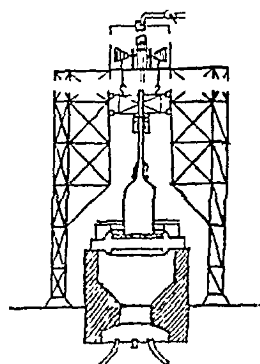
लोहे का एक वृत्ताकार काँटा, द्रुत काँच के पात्र में डुबोया जाता है और काँटे को उठाने पर, काँच सिलिण्डर (वेलन) के रूप में वनकर उठता है। सिलिण्डर की दीवालों को उदग्र रखने के लिए, संपीडित वायु भीतर प्रविष्ट करायी जाती है। भट्ठी के ऊपर एक पात्र, जिसमें एक दूसरे के आमने-सामने, ४० इंच व्यास के दो कूप होते हैं, रखा जाता है। पात्र ऊष्मसह पदार्थ का अखंडित होता है। भट्ठी में पात्र रखने के पश्चात् भट्ठी के ऊपर एक ऊष्मसह पटिया रखी जाती है। इस पटिया में, पात्र के व्यास के सम, वृत्ताकार मुख होता है। पात्र के सिरे यंत्र से इस प्रकार संयोजित रहते हैं कि एक हस्तक[1] के घुमाने से, पात्र परिक्रमण करता है और कोई भी कूप ऊपर लाया जा सकता है।

1. Lever

पात्र के प्रत्येक कूप से वेलन पारी-पारी कर्षित किये जाते हैं। प्रत्येक कर्षण के पश्चात्, पात्र भट्ठी में नीचे किया जाता है और १८०° सें० के कोण पर परिक्रमण करने पर फिर उठाकर पहले के स्थान में लाया जाता है। पात्र का काँच जो प्रयोग में नहीं आता वह नीचे स्थित वर्नरों द्वारा तप्त होकर द्रुत हो जाता है और भट्ठी के नीचे रिक्त स्थान में वह जाता है। पात्र भी नये काँच के लिए तप्त हो जाता है। पात्र के ऊपरी भाग में काँच, कुण्ड भट्ठी से दर्वी द्वारा डाला जाता है।

भट्ठी के ऊपर लोहे का एक ढाँचा होता है जिसमें एक उदग्र पथ वना रहता है, इस पथ पर गाड़ी चलती है। कोनीय[1] डिडिमों पर स्थित लौह रस्सियों पर गाड़ी आधारित रहती है। गाड़ी में लम्बी लोहे की एक नली होती है, इसका ऊपरी सिरा पिस्टन के सदृश दूसरी चौड़ी नली में चलता है। यह चौड़ी नली ढाँचे की अनुप्रस्थ छड़ में दृढ़ता से गठित होती है। एक टोंटी से नियंत्रित संपीडित वायु चौड़ी नली में धमित की जाती है। नीचे चलनेवाली नली का नीचेवाला सिरा एक धमनाड से गठित होता है। यह धमनाड तीन फुट लम्बा और बड़ी नासिका युक्त होता है।

पात्र में द्रुत काँच भरा जाता है और तप्त काँटा द्रुत काँच में डुवोया जाता है, तब नली को धीरे-धीरे ऊपर उठाया जाता है। आरम्भ में निम्न दाव पर वायु पहुँचायी जाती है और वाद में वायु का दाव और कर्षण की गति वढ़ा दी जाती है। फिर कुछ समय पश्चात् वायु स्थिर दाव से पहुँचायी जाती है, परन्तु मात्रा क्रमशः अधिक दी जाती है। ४० फुट लम्बा सिलिण्डर कर्षित करने में प्रायः १५ मिनट लगते हैं। गावदुम डिडिमों की स्थिर गति के कारण कर्षण की दर स्वयं ही वढ़ जाती है।



[चित्र ४१—लवर की चादरी काँच प्रणाली]

जब सिलिण्डर (वेलन) आवश्यक लम्बाई का बन जाता है तब कर्षण की दर वहुत शीघ्रता से वढ़ायी जाती है, जिसके कारण सिलिण्डर की दीवाल इतनी पतली हो जाती है कि वह पात्र से सहज में तोड़कर पृथक् की जा सकती है। सिलिण्डर के पेंदे को एक तरफ हटाया जाता है

1. Conical

और सिलिण्डर को नीचा कर एक आलमारी पर आधारित करते हैं। इसको विद्युत-तापित तार से ५ फुट की लम्बाइयों में काटते हैं और विभक्त कर चिपटा करते हैं।

अधिक आधुनिक यंत्रों में नाड के स्थान पर घंटे के आकार का १२ इंच व्यासवाला लोहे का काँटा[1] प्रयोग में आता है। इसके निचले सिरे के चतुर्दिक भीतर की ओर उभड़े हुए किनारे होते हैं। इस प्रकार एक नाली बन जाती है जिसमें काँच जाकर ठोस हो जाता है और कर्षण की अवधि में आधार बननेवाले ओष्ठ का काम देता है। काँटे को विद्युत् से तप्त किया जाता है। हाल में ही, लोह-निकिल-मिश्र धातु का काँटा बनाया गया है जिससे काँच और लोह के असम गुणांक के कारण असमय में चटकना रोका जा सकता है।

लबर की प्रणाली कुछ समय तक तो बहुत अधिक प्रयोग में आती थी, परन्तु अब इसका स्थान फूरकाल्ट या कोलबर्न प्रणाली ने ले लिया है।

पट्टिका या बेला हुआ काँच

साधारणतः यह भी चादरी काँच होता है जो ढालकर या बेलकर बनाया जाता है। ऐसे काँच तीन प्रकार के होते हैं—

(१) बेला हुआ या रूक्ष पट्टिका काँच।

(२) पालिश किया हुआ पट्टिका काँच।

(३) बेला हुआ चित्रित पट्टिका काँच।

(१) बेला हुआ पट्टिका काँच—इस प्रकार के काँचों की सतहों में बेलने और अभितापन के पश्चात् कोई और क्रिया नहीं की जाती। यह सबसे सस्ते प्रकार का पट्टिका काँच है जो आकाशीय वातायनों के उपयोग में आता है जहाँ कि पारदर्शकता का उतना महत्व नहीं होता, क्योंकि यह काँच रूक्ष और पारभासक[2] तक होता है। इसके निर्माण के लिए सस्ता काँच-मिश्रण, जिसमें बालू, चूना पत्थर, साल्ट केक, और निम्न क्षार होता है, प्रयोग में लाते हैं। काँच को कुण्ड भट्ठियों में अविराम द्रवित किया जाता है। द्रुत काँच कुंड से इकट्ठा कर लिया जाता है और ऊपर घर्घरी पर आलम्बित बड़े लोहे की दर्वियों द्वारा, ढालने की मेज पर स्थानान्तरित किया जाता है। उड़ेले हुए काँच से संलग्न, मेज के किनारे दो पटरियों पर आलम्बित एक यंत्र-संचालित बेलन

1. Bait 2. Translucent

होता है। लोह पटरियों की ऊँचाई पर काँच-पट्टिका की मोटाई निर्भर करती है। पट्टिका की चौड़ाई का नियंत्रण करने के लिए दो लोहे के निर्देशक मेज पर आवश्यक दूरी पर स्थित होते हैं। ये निर्देशक ऐसे आकार के होते हैं कि वेलन उसमें बैठ जाता है और जैसे वेलन परिक्रमण करता है, ये भी आगे बढ़ते हैं। निर्देशक द्रुत काँच को पटरियों के ऊपर से बहने से रोकते हैं। वेलने के पश्चात् पट्टिका को कुछ समय तक मेज़ पर रहने दिया जाता है और जैसे ही पट्टिका पर्याप्त ठोस हो जाती है, उसको मेज़ पर से, लोहे के चिपटे फलक[1] द्वारा पृथक् कर लिया जाता है। पट्टिका को चिपटी शिला पर स्थानान्तरित कर अभितापन लेयर में रखा जाता है। अभितापित होने के पश्चात्, यह हीरे द्वारा सम आकार और वांछित माप का काटा जाता है और दोषयुक्त भाग काटकर अलग कर दिये जाते हैं।

(२) **पालिश किया हुआ पट्टिका काँच**—यह सर्वोत्तम पट्टिका काँच है। इसकी सतहें प्रकाशीय समतल और समानान्तर होती हैं।

आजकल पालिश की हुई पट्टिका ४०० वर्ग फुट और भार में ४० मन तक की निर्मित की जाती है। काँच को पुनर्जनन भट्ठियों में द्रवित किया जाता है। इन भट्ठियों में १६ से २० तक खुले पात्र होते हैं और प्रत्येक पात्र लगभग २५ मन समाई का होता है। प्रत्येक पात्र के सामने ऐसा द्वार बनाया जाता है जिसके उठाने पर पात्र निकाला जा सकता है। पात्र सावधानी से बनाये जाते हैं और प्रयोग के पूर्व अभितापित कर लिये जाते हैं। पात्र के निर्माण में उत्तम और शुद्ध पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। पात्र को भट्ठी में रखकर, उसका ताप १४००° सें० तक बढ़ाया जाता है और तब काँच-मिश्रण उसमें भरा जाता है। पात्र में काँच-मिश्रण लम्बे लोहे की दर्वियों द्वारा हाथों से डाला जाता है या विद्युत् नियंत्रित काँच-मिश्रण ले जानेवाली गाड़ी से भरा जाता है। साधारणतः काँच-मिश्रण तीन बार भरा जाता है। द्रवण और शोधन में प्रायः २० घंटे लगते हैं। भट्ठी का ताप अब १४००° सें० से घटाकर १०००° सें० कर दिया जाता है। एक संकुचित कंठ के क्रेन से भट्ठी से एक पाट हटाकर, वाहन कक्ष में तार से चलनेवाली गाड़ी पर रखा जाता है। द्रुत काँच की अशुद्धियाँ सतह से हटा ली जाती हैं। मोटर से ऊपर चलनेवाले क्रेन से आलम्बित संधर[2] पात्र को जकड़ लेता है और उसे ढालनेवाली मेज़ पर एक स्थान में ले जाता है। तब पात्र टेढ़ा किया जाता है और वेलन के सामने काँच मेज़ पर उड़ेला जाता है। काँच उड़ेलते समय,

1. Blade 2. Clamp

पात्र वेलन की समानान्तर दिशा में वढ़ता है और इस प्रकार काँच एकसमान मेज़ पर फैल जाता है।

पालिश की हुई पट्टिका के लिए काँच को जितना सम्भव हो रंगहीन और पत्थर तथा वुलवुले रहित होना चाहिए।

ढालने की मेज़

आधुनिक ढालने की मेज़ ३० फुट लम्वी, १७ फुट चौड़ी और ८ इंच तक मोटी होती है। प्रयोग के पूर्व, इसको घिसकर पूर्ण रूप से चिपटा वनाया जाता है। मध्य में अधिक ऊष्मा के कारण टेढ़ी होने से रोकने के लिए, ऐसी मेजें एक खण्ड की नहीं रखी जाती, परन्तु १० या २० इस्पात की छड़ों से वनायी जाती हैं। ये छड़ें, मेज़ की लम्वाई में होती हैं और परस्पर ऐसी संयोजित होती हैं जिससे लम्वाई के प्रसार में वाधा न पड़े। मेजें अति तप्त न हो जायँ, इसलिए एक मेज़ पर ८ वार से अधिक पट्टिका काँच नहीं वेले जाते। वेलजियम-निवासी, एल. रेमवो ने सुषिर छड़ों की जल-शीतित मेज़ का आविष्कार किया है। ये छड़ें परस्पर संधरित[1] होती हैं और प्रत्येक के खुले मध्य भाग से होकर अनुदैर्घ्य भीत होती है जिससे कि दो नालियाँ वनती हैं।

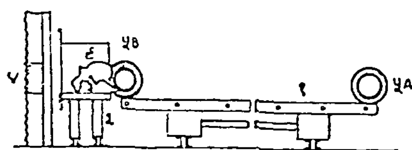
मेज़ के नीचे जल की चार धाराएँ वहती हैं। ये धाराएँ मध्य से आरम्भ होकर किनारे की तरफ टेढ़ी-मेढ़ी राहों से वहती हैं। वहुत से स्थानों में, वायु से ठंडा करने की विधि भी अपनायी गयी है।

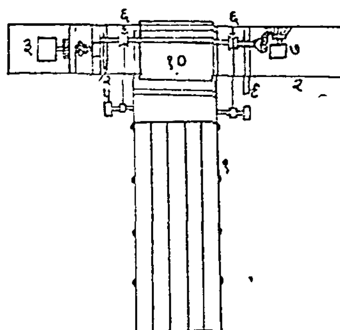
वनरथ की ढालने की मेज़

निस्तापन भट्ठियों के समानान्तर रेल की पटरियों पर एक डिव्वे पर मेज (१) स्थित होती है। एक दूसरा डिव्वा (२), भट्ठी और मेज (१)A के मध्य, पहली पटरी के लम्व कोण, दूसरी पटरी पर स्थित होता है। वेलन (३) ३० इंच व्यास का होता है और उसकी सतह नालीवत् होती है, जिससे कि वह काँच पकड़ सके। वेलन के सामने मेज पर द्रुत काँच उड़ेला जाता है। वेलन, मेज़ के भट्ठी से दूरवाले सिरे पर स्थित होता है। घर्घरी (६), लोहे की रस्सियों द्वारा वेलन को काँच के ऊपर से कर्षण करती है। मोटर (७) घर्घरी को घुमाती है। वेलने में प्रायः १ मिनट लगता है। वेलने के पश्चात्, वेलन तव भुजाओं (८) की ऊपरी सतहों की कुछ चढ़ाई पर चढ़ता है और भुजा (९), वेलन को जकड़ लेती है। जव पट्टिका पर्याप्त ठंडी हो जाती है

1. Clamped

तव हुक पट्टिका को हटाते हैं। वेलन की कर्षणवाली रस्सी को, इन्हीं हुकों द्वारा कर्षण किया जाता है। पट्टिका को आधारित मेज पर से होकर कर्षण वाहन पर स्थानान्तरित किया जाता है। जब काँच-पट्टिका हटायी जाती है तव वह अधिक ठंडी न होनी चाहिए, पर इतनी ठंडी अवश्य होनी चाहिए कि उसमें हुक संयोजित किये जा सकें। इस कारण पट्टिका को हटाने में कई कठिनाइयाँ आती हैं। स्थानान्तरण के समय पट्टिका का ताप प्रायः ९००° सें० होता है। इस प्रणाली से ढला हुआ काँच साधारणतः २६ फुट लम्वा, १४ फुट चौड़ा और .३७५ से १.५ इंच मोटा होता है। पतली काँच-पट्टिका को ढालने के लिए एक वड़ी ढालने की मेज और कुछ अधिक भार के वेलन का प्रयोग किया जाता है। इस प्रणाली से ६०० वर्ग फुट और चौथाई इंच से कम मोटाई की पट्टिका वनायी जा सकती है। ढालने के पश्चात् पट्टिकाएँ उपयुक्त आकारों के टुकड़ों में काटी जाती हैं और फिर ये टुकड़े अभितापन के लिए लेयर में रखे जाते हैं।





[चित्र ४२--वनरथ के ढालने की मेज़]

कुछ कारखानों में छोटी ढालने की मेज़ें (६० से १०० वर्ग फुट की) और छोटे पात्र, पतली काँच-पट्टिका निर्माण के लिए प्रयोग में लायें जाते हैं।

पट्टिका-काँच का घिसना और पालिश करना

इस यंत्र में २७ फुट व्यासवाली ढलवाँ लोहे की वृत्ताकार मेज़ होती है। पटरी पर चलनेवाले पहियों पर स्थापित कर यह मेज़ घर्षण यंत्र से पालिश यंत्र तक लायी जा सकती है। काँच की पट्टिका इस मेज पर रखी जाती है और पट्टिका को मेज से चिपकाने के लिए पैरिस प्लास्टर का प्रयोग किया जाता है। रिक्त स्थानों में छोटी पट्टिकाएँ लगा दी जाती हैं। श्रमिकों के पैरों में रवड़ के जूते होते हैं और काँच की पट्टिका

पैरों से दवाकर दृढ़ता से चिपका दी जाती है। मेज़ क्रम से यहाँ-वहाँ पहुँचायी जाती है।

(१) घर्षण यंत्र—यहाँ एक वृत्ताकार ढाँचा मेज को जकड़कर क्षैतिज समतल में परिक्रमण करता है। मेज़ के ऊपर परिक्रमण करते हुए लोहे के दो वड़े विम्व होते हैं, जिनमें नीचे की तरफ कुछ छोटे विम्व कीलित होते हैं। जव घर्पण होता है, तव ये विम्व नीचे लाये जाते हैं और पट्टिका को स्पर्श करते ही छोटे विम्व भी परिक्रमण करने लगते हैं। आरम्भ में स्थूल वालू और जल तथा वाद में सूक्ष्म वालू, पट्टिका को घिसने के लिए, मेज पर गिरायी जाती हैं। पट्टिका को धोने के पश्चात्, इसी प्रकार के दूसरे यंत्र से गार्नेट या एमरी और जल का प्रयोग कर घर्पण-क्रिया दूसरी वार पुनः की जा सकती है। एक वर्ग फुट के काँच के लिए साधारणतः प्रायः १० पाउंड वालू की आवश्यकता होती है और घर्पण में प्रायः तीन घंटे लगते हैं। घर्पण के पश्चात् मेज़ ढाँचे से मुक्त की जाती है और इसको पालिश कक्ष में ले जाते हैं।

(२) पालिश यंत्र—यहाँ पर फिर से एक वृत्ताकार ढाँचा, जो कि क्षैतिज[1] समतल में परिक्रमण करता है, मेज़ को जकड़ लेता है। पालिश यंत्र में ४ भ्रामक ढाँचे होते हैं और प्रत्येक में यन्त्रचालित विम्व होते हैं जो कि नीचे मेज़ की और ऊपर ढाँचों की गतियों के कारण स्पर्श होने पर निर्वाध रूप से परिक्रमण करते हैं। पट्टिका को पालिश करने के लिए कुंकुमी[2] और जल का प्रयोग किया जाता है। पालिश करने में प्रायः एक घंटा लगता है। पट्टिका को तव मेज़ पर उलटा देते हैं और पहले ही के सदृश इस ओर भी घर्पण तथा पालिश की जाती है।

दोषों का परीक्षण

पालिश करने के पश्चात् पट्टिका को तनु[3] हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से धोकर कुंकुमी से हलकी पालिश की जाती है। दोपों के लिए एक अँधेरे कमरे में पट्टिका का परीक्षण किया जाता है। यहाँ दोप चिह्नित कर, जहाँ तक सम्भव होता है, हटा दिये जाते हैं। जिन भागों में अच्छी पालिश नहीं हुई उन्हें लिख लिया जाता है और जिन पट्टिकाओं में यह दोप होता है, उन्हें फिर से, हाथ या छोटे यंत्र से, पालिश किया जाता है।

1. Horizontal plane 2. Rouge 3. Dilute

पट्टिका-काँच-निर्माण की आधुनिक प्रणालियाँ

आजकल प्रयोग में आनेवाली प्रणालियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

(१) अर्ध अविराम; जैसे बिशरो प्रणाली।

(२) अविराम प्रणालियाँ, जो कि फोर्ड मोटर कम्पनी, पिट्सबर्ग पट्टिका काँच कम्पनी और लिब्बे ओवेन्स-फोर्ड कम्पनी प्रयोग में लाती हैं।

(१) **बिशरो प्रणाली**—इस यंत्र का नाम, मैक्स बिशरो, एक जर्मन के आधार पर रखा गया है। इसने प्रथम यूरोपियन युद्ध के कुछ ही समय पश्चात् एक नये प्रकार के पट्टिका-काँच बेलने के यंत्र का निर्माण किया। काँच, पात्रों में द्रवित किया जाता है और लोह बेलनों के आगे उड़ेला जाता है। यह बेलन परिक्रमण तो करते हैं परन्तु पुरानी प्रणाली के अनुसार, द्रुत काँच पर आगे बढ़ते नहीं हैं। इस यंत्र में पूर्व निश्चित लम्बाई की चादरों का सविराम उत्पादन होता है और इस प्रकार के पट्टिका-काँच का भी पहले की ही तरह घर्पण किया जाता है।

(२) **अविराम स्रोत प्रणाली**—मोटरकार इत्यादि के लिए पट्टिका-काँच के पुंजोत्पादन की यह आधुनिक प्रणाली है। काँच का बड़े अविराम कुण्डों में द्रवण किया जाता है। चादर काँच निर्माण के लिए, कुण्ड के एक सिरे से छिछली धारा में, एक "ओष्ठ" के ऊपर से बहकर, दो बेलनों के मध्य से गमन करता है। जैसे-जैसे काँच की चादर बनती है, वह कई सौ फुट लम्बे अविराम लेयर में अभितापित हो जाती है। चादरों का तब परीक्षण किया जाता है और दोषपूर्ण भागों को काट कर पृथक् कर दिया जाता है। निर्दोष चादर तब लोहे की मेज पर पैरिस प्लास्टर से जमा दी जाती है। लोहे की मेज एक वाहन पर रखी जाती है और पटरी पर चलती है। पट्टिकाएँ क्रम से भ्रामक घर्पण सिरों के सम्पर्क में आती हैं और घर्पण के लिए क्रमिक सूक्ष्म बालू का प्रयोग किया जाता है। धोने के बाद चादर का फिर से घर्पण किया जाता है और इस समय बालू के स्थान में गार्नेट या एमरी का प्रयोग होता है। चादरों को पानी से धोया जाता है। और तब ये पालिश यंत्र के नीचे पहुँचायी जाती हैं। पालिश यंत्र, फेल्ट से ढका होता है और उसमें कुंकुमी और जल पहुँचाया जाता है। अर्ध निर्मित पट्टिकाएँ तब मेज से हटा ली जाती हैं। जब पट्टिकाओं के दोनों तरफ घर्पण और पालिश हो जाती है तब उनको जल से धोया जाता है और उनका फिर से परीक्षण होता है। काँच की पट्टिकाओं का घर्पण करने में बहुत शक्ति क्षय होती है। अति उत्तम पालिश की हुई पट्टिका को "दर्पण गुणी" कहते हैं।

तार जाली पट्टिका काँच—इसके निर्माण के लिए, जब काँच की चादर वेली जाती है उसी समय जस्तायित लोहे का तार उसमें डाल दिया जाता है ।

पट्टिका काँच का अभितापन

सन् १९०० से लेयरों ने किल्न का स्थान ले लिया है। लेयरों में गति छड़ों द्वारा होती है। अतः ये वैसी ही होती हैं जैसी कि चादरी काँच के अभितापन के लिए प्रयोग में आती हैं, परन्तु ये यंत्र-चालित होती हैं। ये लेयरें २६० फुट तक लम्बी होती हैं। अभितापन के पश्चात्, पट्टिका काँच मेज पर रखा जाता है और उपयुक्त मापों में काटा जाता है। कटे हुए खण्डों को ऊपर चालित वक[1], घर्षण कक्ष में ले जाता है।

कोण-प्रवणन यंत्र[2]

दर्पणों और प्रदर्शक पेटियों के लिए, पट्टिका-काँच के किनारे का, एक यंत्र से कोण प्रवणन किया जाता है। पट्टिका को एक वेंच जकड़ लेती है और तब सूक्ष्म मापी पेंचों द्वारा, मिलीमीटर के सौवे भाग का समंजन[3] सम्भव होता है। पट्टिका तब धीरे-धीरे शीघ्रता से परिक्रमण करते हुए घर्षण चक्र के सामने बढ़ती है। यह चक्र कार्बोरण्डम या एमेरी का बना होता है। ४० फुट लम्बे टुकड़े का कोण-प्रवणन करने में प्रायः १ घंटा लगता है। घर्षण बहुत अधिक ऊष्मा उत्पादन करता है। इस कारण कुछ ऐसे यंत्रों का आविष्कार हुआ है जिससे कोण-प्रवणन-क्रिया जल के अन्दर हो सके।

(३) **वेला हुआ चित्रित पट्टिका काँच**—इस प्रकार के पट्टिका काँच में वेलने की प्रक्रिया के समय काँच के एक तरफ कोई चित्र ढालकर बनाया जाता है। इस प्रकार का काँच बनाने की कई प्रणालियाँ हैं।

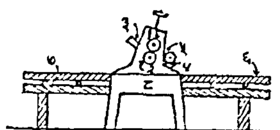
(क) १२ फुट लम्बे और ४ फुट चौड़े माप की छोटी लोहे की मेजें ढालने के लिए प्रयोग में लायी जाती हैं। इन मेजों के मुख्य ऊपरी भाग में चित्र ढले होते हैं। इस प्रक्रिया में खर्च बहुत पड़ता है। पालिश्ड पट्टिका-काँच की ही तरह, ढलवाँ लोहे के वेलन से काँच-पट्टिका वेली जाती है। ढली हुई मेज़ पट्टिका टेढ़ी न हो जाय, इस कारण नीचे उदग्र पाटियाँ होती हैं जो जल की नाँद में डूबी रहती हैं। जिन पर वेलन चलता है, वे पटरियाँ हटायी जा सकती हैं और वेली हुई पूर्ण पट्टिका, मेज पर से लेयर में बगल से हटायी जा सकती है। साफ ढले हुए चित्र काँच-पट्टिका में बनाने के

1. Overhead travelling crane
2. Bevelling machine 3. Adjustment

लिए रंगहीन या रंगीन, चमकदार कोमल काँच का प्रयोग किया जाता है। काँच-पट्टिका, एक तरफ समतल होती है और इससे पट्टिका काटने में सुविधा होती है, क्योंकि दोनों तरफ चित्रित पट्टिका को एक समान चिह्नित करना या काटना कठिन होता है।

(ख) लोहे के जड़े हुए (फिक्स्ड) ढाँचे (८) में दो समंजन योग्य चिकने वेलन (१) और (२) होते हैं। झुकी हुई पट्टिका (३) पर द्रुत काँच पहुँचाया जाता है और यह वेलनों (१) और (२) के मध्य में गमन करता है। इससे जो काँच की चादर बनकर निकलती है, वह फिर वेलन (४) और (५) के मध्य से गमन करती है। वेलन (५) नकासी युक्त होता है, इस कारण चादर ऊपरी सतह पर चित्रित हो जाती है। काँच की चादर, क्षैतिज दिशा में बढ़ती हुई मेज (६) पर पहुँचती है। चादर के पीडन और कर्पण की गति एक समान होती है। सिलिण्डर या वेलन (१) और (२) जल-शीतित होते हैं।

(ग) यह यंत्र वेलन किये हुए चित्रित पट्टिका-काँच बनाता है और इनकी दोनों सतहें चिकनी होती हैं। साधारण प्रणाली से, ढलवाँ लोहे की मेज पर, वेलन द्वारा पतला पट्टिका-काँच बनाया जाता है।



[चित्र ४३—चित्रित पट्टिका काँच का यंत्र]

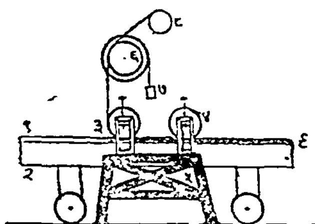
मेज़ के ऊपर दो और वेलन होते हैं जिनमें से होकर एक पतली काँच की चादर वेली जाती है। वेली हुई चादर के नीचे की सतह में नकासी होती है क्योंकि नीचेवाला वेलन नकासीयुक्त होता है। नकासी की हुई चादर झुकी पट्टिका पर से होती हुई, प्रथम वेले हुए पट्टिका काँच के ऊपर आ जाती है, जो वेलनेवाली मेज पर पहले से ही स्थित रहती है। दोनों काँच-पट्टिकाओं पर अब चौथा वेलन चलता है और जब पट्टिकाएं पर्याप्त कोमल होती हैं तब उनको कुछ पीडनकर, एक चित्रित पट्टिका काँच बना दिया जाता है, जिसकी दोनों सतहें चिकनी होती हैं।

तार-जाली काँच

निर्माण कार्यों में तार-जाली काँच का उपयोग बढ़ता ही जा रहा है। इसके लिए

काँच का अविराम कुण्ड भट्ठी में द्रवण किया जाता है और वहाँ से वह ढालनेवाली मेज़ पर स्थानान्तरित किया जाता है ।

(क) दो वेलन (३) और (४) एक स्थापित या जमाये हुए ढाँचे पर स्थित होते हैं । वेलनेवाली पट्टिका (१) एक डिब्बे (२) पर होती है जो पटरी पर चलकर वेलनों (३) और (४) के नीचे आती है । वेलन (३) के ऊपर एक सिलिण्डर (६) होता है जो कि मध्य से किनारों की तरफ कुछ गावदुम होता है । इसकी सतह खुरदरी होती है और इसको रोकने के लिए प्रतिवन्धक की व्यवस्था की जाती है । सिलिण्डर के ऊपर और उसके कुछ एक तरफ तार की जाली के लिए एक वेलन (८) होता है। तार जाली, सिलिण्डर (६) के ऊपर से और वेलन (३) तथा (४) के नीचे से होकर जाती है और मेज़ के सिरे (९) पर ढालनेवाली मेज़ की इतनी ऊँचाई संधरित[1] की जाती है जितनी ऊँचाई पर तार-जाली को काँच के अन्दर रखना होता है । जैसे ही मेज़ दाहिने हाथ की दिशा में आगे वढ़ती है, उसी समय द्रुत काँच मेज़ पर, वेलन (३) के सामने उँड़ेला जाता है। यह वेलन पट्टिका के तले का भाग वेल देता है । काँच की सतह के ऊपर तार-जाली होती है और वह वेलन (३) के दाव तथा सिलिण्डर (६) की प्रतिवन्ध रोक के कारण, दृढ़ता से खिंची रहती है । जब वेली हुई पट्टिका (४) निकट पहुँचती है, तव दूसरे वेलन (४) के सामने तथा पट्टिका काँच के ऊपर, और द्रुत काँच उड़ेला जाता है, और तव तार जाली के ऊपर, काँच की एक और परत वेलने पर, तार-जाली-पट्टिका-काँच पूर्ण वन जाता है। जव पहली परत कोमल होती है तो दोनों परतें संयोजित हो जाती हैं और एक पट्टिका-काँच वन जाता है ।



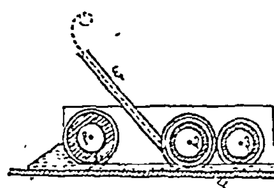
[चित्र ४४—तारजाली काँच यंत्र]

(ख) तीन वेलन (१), (२), (३) एक स्थान पर स्थित होते हैं और ढालने वाली मेज़ पर एक साथ आगे वढ़ते हैं । वेलन (१) और (३) की सतहें चिकनी होती हैं, परन्तु मध्य के वेलन (२) की सतह में वलय सदृश उभार

1. Is clamped

होते हैं। वेलन (१) और (२) के मध्य, पटिया (६) के सहारे तार जाली रख दी जाती है। द्रुत काँच मेज पर उड़ेला जाता है और वेलन (१) काँच को वांछित स्थूलता में वेल देता है। पटिया (२) जो कि वेलन (२) के सामने आगे बढ़ती है, तार-जाली को काँच पर बिछा देती है। वेलन (२) के वलय सदृश उभार, तार जाली को काँच में आवश्यक गहराई तक दबा देते हैं। वेलन (३) जो कि मेज पर वेलन (१) के ही बराबर ऊँचाई पर स्थित होता है, तब पनारीदार[1] चादर को वेलकर चिकना कर देता है।

(ग) एक आधुनिक यंत्र में, तार-जाली मेज़ के ऊपर सही ऊँचाई पर संचरित की जाती है और साधारण प्रणाली से, काँच उड़ेला और वेला जाता है। वेलन द्रुत काँच को तार जाली के अक्षों में होकर दबा देता है और नीचे जाकर काँच संयोजित हो जाता है।



[चित्र ४५—तार जाली काँच यंत्र]

तार-जाली काँच-निर्माण के लिए, पट्टिका-काँच को बहुत सावधानी से वेलना आवश्यक है। काँच और तार-जाली के प्रसार गुणांक में अन्तर होने के कारण, ठंडे होने पर, काँच चटक जा सकता है। हाल में ही तार-जाली, लोह-निकल मिश्र धातु की बनायी गयी है, क्योंकि इसका प्रसार गुणांक काँच ही के सम है। जाली की सतह पर अशुद्धियों और काँच में उपस्थित गैसों से, काँच में वेलने के समय, बुलबुले बनने की प्रवृत्ति होती है और इससे तार-जाली का काँच से पूर्ण रूप से संयोजन नहीं हो पाता। इस प्रकार के काँच की सतहें घिसी और पालिश की जा सकती हैं। तार-जाली का चित्रित, वेला हुआ पट्टिका-काँच भी निर्मित किया जाता है।

अभय काँच या सैण्डविच काँच

दो पतले पालिश किये हुए पट्टिका-काँच, सुघट्य कार्बनिक पदार्थ की परत से संयोजित किये जाते हैं। आरम्भ में, सेलूलोज नाइट्रेट और एसीटेट का सुघट्य परत के लिए प्रयोग किया जाता था, परन्तु अब विनीलाइट रेज़िन उपयोग में लाया जाता है,

1. Corrugated

क्योंकि यह रंगहीन और पारदर्शक बना रहता है और इसमें अच्छी नम्यता होती है। साफ की हुई पट्टिकाओं के मध्य में सुघट्य पदार्थ और कार्बनिक विलयन या "सुघट्यक" रखा जाता है और मामूली गरमी एवं दाब पहुँचाने से संयोजन हो जाता है। इस प्रकार का काँच मोटर वाहनों, वायुयानों और रेलगाड़ी के डिब्बों के वायु-प्रतिरोधक और खिड़कियों के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

इस प्रकार का काँच, यदि दुर्घटना से अचानक टूट भी जाय तो अपने स्थान से हटता नहीं है, क्योंकि सुघट्य पदार्थ काँच के टुकड़ों और खपाचों को दृढ़ता से जकड़े रहता है। इस प्रकार का काँच "सैण्डविच" काँच भी कहा जाता है।

दृढ़ पट्टिका-काँच

शीघ्रतापूर्वक समान रूप से ठण्डा करने पर ऐसा काँच प्राप्त होता है जो कि दृढ़ होता है और जिसमें यांत्रिक शक्ति एवं तापीय प्रतिरोधकता अधिक होती है। पट्टिका काँच को उदग्र आलम्बित कर, कोमल विन्दु से कुछ अधिक ताप तक तप्त किया जाता है और फिर वायु के झोंके से या २३०° सें० के तेल में डुबोकर बड़ी शीघ्रता से ठण्डा किया जाता है। इस विधि से काँच दृढ़ हो जाता है। काँच का बाह्य भाग ठोस हो जाता है और आन्तरिक भाग धीरे-धीरे ठण्डा होता है, जिसके कारण बाह्य भाग पर दबाव प्रतिबल आ जाता है। अन्दर उतनी ही मात्रा में तनाव आता है। इस काँच को भी 'अभंगुर काँच' या 'अभय काँच' कहते हैं।

सोलहवाँ अध्याय

शलाका, नली, चूड़ी इत्यादि काँच-वस्तुओं का निर्माण

काँच की शलाकाओं और नलियों का उपयोग भौतिक एवं रासायनिक परीक्षण जैसे कि परखनलियों, ब्यूरेटों, संघनित्रों और शून्यक पम्पों इत्यादि के निर्माण में होता है। विद्युत बल्बों, बटनों, चूड़ियों, मनकों और काँच-नेत्रों के निर्माण में भी शलाकाओं और नलियों की आवश्यकता होती है। साधारणतः वैज्ञानिक काँच-धमन[1] और साधारण कार्यों के लिए कोमल सोडा चूना युक्त काँच का प्रयोग होता है।

काँच-शलाका का हस्तकर्षण

लोहे के धमनाड पर अधिक मात्रा मे काँच संग्रह किया जाता है और उसको पीडन और बेलकर स्थूल सिलिण्डर के आकार का पेरिज़न बनाया जाता है। एक दूसरा श्रमिक, चिपटे सिरे की लोहे की शलाका पर, कुछ काँच संग्रह कर, उसको चिपटे बिम्ब के आकार का बनाता है। पेरिज़न को पुनः तप्त किया जाता है और जब यह कोमल हो जाता है, तब शलाका पर स्थित काँच के बिम्ब पर, पेरिज़न उदग्र स्थिति में रखा जाता है। पेरिजन कोमल होने के कारण नीचे की दिशा में लटकता है और लटककर शलाका के काँच से संयोजित हो जाता है। संयुक्त होने के पश्चात्, दोनों श्रमिक विपरीत दिशाओं में शीघ्रता से चलते हैं। एक काँच की शलाका कर्षित की जाती है और एक मनुष्य कुछ स्थानों पर उसे पंखे से ठण्डा करता है जिसमें कि वह भाग अधिक श्यान हो जाय और फिर उसका कर्षण न किया जा सके। काँच की शलाका एक लकड़ी की पटरी पर रख दी जाती है। शलाका की स्थूलता, मनुष्यों की गति की दर पर और कर्षित शलाका को पहुँचाये गये ठंडेपन पर निर्भर करती है। जब शलाका ठंडी हो जाती है, तब यह उपयुक्त लम्बाइयों में काट ली जाती है। इसको अभितापन की आवश्यकता नहीं होती।

काँच-नली

काँच का धमनाड पर संग्रह किया जाता है और इसको मुंह से फूंककर स्थूल दीवालवाला सुषिर सिलिण्डर बनाया जाता है। तब पहले की तरह कर्षण कर उसको

1. For lamp working

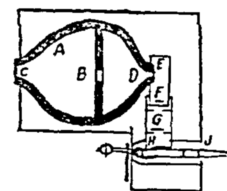
नली के आकार का बनाया जाता है और कर्षण की अवधि में, मह से निरन्तर फूँकना जारी रखा जाता है।

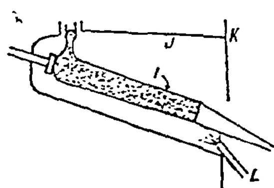
लटकने के कारण, हस्त-निर्मित नलियों तथा शलाकाओं में सदैव कुछ वक्रता होती है और मोटाई भी एक समान नहीं होती। और मध्य भाग का छिद्र भी किनारे की अपेक्षा कुछ संकीर्ण होता है।

विशेष आकारों और रंगों की, तथा जिनकी कम मात्रा में आवश्यकता होती है, ऐसी शलाकाएँ और नलियाँ अब भी ऊपर वर्णित हस्तप्रणाली से निर्मित की जाती हैं।

नली कर्षण करने का डैनर यंत्र

शलाकाओं और नलियों के कर्षण के लिए यह अति कुशल यंत्र है। इसके पेटेन्ट अधिकार 'लिब्बी ओवेन्स संस्था' के पास हैं।





[चित्र ४६—डैनर कर्षण यंत्र]

काँच को पात्र भट्ठी या कुण्ड भट्ठी में द्रवित किया जाता है। द्रुत काँच को दर्वी द्वारा एक विशेष पात्र (A) में, मुख (C) से भरते हैं। यह पात्र एक दूसरी भट्ठी में स्थित होता है। पात्र का अनुप्रस्थ काट अंडाकार होता है और अन्दर एक भीत (B) पात्र को दो भागों में विभाजित करती है। भीत के नीचे एक छिद्र होता है। पात्र के पीछे एक और आयताकार मुख (D) होता है और इस मुख से, स्रोत के रूप में काँच नाँद (E) में गिरता है। नाँद पात्र-मुख (D) से तीन इंच नीचे स्थित होती है। इस प्रकार गिरने से, काँच बहुत कुछ बुलबुलों रहित हो जाता है। नाँद का पेंदा कुछ झुका रहता है और इसके अगले सिरे पर एक आयताकार छिद्र होता है, जिसमें से होकर काँच दूसरी नाँद (G) में गिरता है। यह नाँद १० इंच गहरी और तीन खण्डों में विभक्त होती है। पहले खण्ड के आगे एक भीत होती है जिसके नीचे एक छिद्र रहता है। दूसरे खण्ड के आगे एक समंजनीय[1] कपाट होता है। अन्तिम खण्ड के सिरे पर दो इंच चौड़ी प्रणाली होती है जिससे होकर काँच दो इंच चौड़े और

1. Adjustable

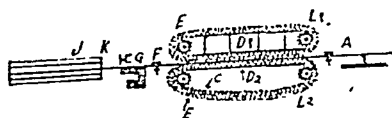
आध इंच स्थूलतावाले फीते के आकार में वहता है। यह धारा ४ या ५ इंच ऊँचाई से परिक्रमण करती हुई तिरछी लोह शलाका (१) के ऊपर अग्नि-मिट्टी के आवरण पर गिरती है। यह लोह शलाका (G) के नीचे और काँच के वहाव की दिशा के लम्ब कोण के समतल में होती है। दोनों नाँदें एक अन्य भट्ठी में स्थित होती हैं, इस कारण वांछित ताप तक तापित की जा सकती हैं।

यह शलाका लोहे की नली होती है और अग्नि-मिट्टी की दूसरी भट्ठी (J) में स्थित होती है, इसको स्वतन्त्र वर्नर.तापित कहते हैं। द्वार (K), इस भट्ठी को वन्द करने के लिए होता है। शलाका का ऊपरी भाग भट्ठी के वाहर निकला होता है और यह दन्तित चक्र तथा शृंखला द्वारा परिक्रमण करता है। शलाका के ऊपर अग्नि-मिट्टी का वेलनाकार आवरण होता है जिसको मिश्र धातु निक्रोम की वनी नासिका थामे रहती है और इसको गैस ज्वाला (L) तप्त करती है। शलाका के अन्दर जल-शीतित लोहे की नली होती है और जव काँच-नली निर्मित करना होता है तव इस नली के अन्दर, वायुमण्डल के दाव से कुछ अधिक दाव की वायु धमित की जाती है। जव काँच शलाका निर्मित करना होता है तो नासिका पर एक टोपी पहना दी जाती है और वायु पर प्रतिवन्ध लग जाने के कारण वायु का आना वन्द हो जाता है। इस भट्ठी का ताप प्रायः ९००° से १०००° सें० तक रखा जाता है।

काँच नली कर्पण के लिए, शलाका से वहनेवाले काँच सिरे को पकड़कर एक लम्वी राह से ऊपर होते हुए, कर्षण यंत्र में लगा दिया जाता है।

तीन चौथाई इंच व्यास की नली के लिए, कर्पण यंत्र, भट्ठी से १०० फुट की दूरी पर होता है।

इस लम्वाई में प्रसीति[1] चक्रों पर काँच नली आधारित होती है और यह अन्त में उदग्र कीलकों पर स्थित दो प्रदर्शक चक्रों (A) के मध्य में से होकर गमन करती है।



[चित्र ४७—डैनर कर्पण यंत्र]

काँच नली के ऊपर और नीचे, कर्पण यंत्र में दो अनन्त दन्तहीन शृंखलाएँ (L_1 और L_2) होती हैं। ये शृंखलाएँ एसवसटस् गद्दी से आवृत होती हैं और दन्तित चक्रों से चलती हैं। एक पेंच ऊपर के चक्रों के वेयरिंग[2] का नियंत्रण करता है और इससे

1. Grooved wheels 2. Bearings

ऊपर और नीचे की शृंखलाओं का अन्तर समंजित होता है। दन्तित शृंखलाओं की प्रत्येक कड़ी में एक वेलन होता है। ये वेलन पट्टिकाओं (D_1 और D_2) को दवाते हैं। नीचे की पट्टिका (D_2) स्थिर होती है, परन्तु ऊपर की पट्टिका (D_1) समंजित की जा सकती है। इस प्रकार दोनों शृंखलाओं की काँच-नली पर दाव समंजित किया जा सकता है और नली कुशलता से जकड़ी रहती है। उसी ईपा से सम्वन्धित एकान्तरण वेलनों में जकड़नेवाली गद्दियाँ होती हैं और यही काँच-नली को जकड़कर कर्पण करती हैं। जव नली कर्पण-यंत्र के वाहर आती है तो नली को प्रदर्शक चक्रों[1] के मध्य में होकर एक छोटी मेज़ (G) के ऊपर से गमन करना पड़ता है। एक कमानी मेज़ (G) का सिरा ऊपर उठाये रहती है और इसलिए काँच की नली काटने के चक्र (H) से दवी रहती है जो कि लम्व रूप से नीचे आकर काँच नली को चिह्नित कर देता है और नली की गति के ही समान आगे वढ़ता है। डाँड़ चक्र[2] (J), नली को पृथक् करता है, इसकी केन्द्रीय ईपा के चतुर्दिक् 'पाकेट' होते हैं और किनारे को वन्द करने के लिए ढक्कन (K) होता है। ढक्कन में काँच-नली के प्रवेश के लिए उपयुक्त छिद्र होता है।

जव प्रायः चिह्न की लम्वाई की नली एक पाकेट के अन्दर पहुँच जाती है, तव ईपा घूमती है जिसमें कि नली टूट जाय और दूसरा संलग्न पाकेट सामने आ जाय। जव ईषा परिक्रमण करता है तो पृथक् की हुई नली गुरुत्व के कारण पाकेट से एक पात्र में गिरती है। ईपा की गति आन्तरायिक होती है और चिह्न के ढक्कन (K) पर पहुँचने से संपतन (कोइंसाइड) करती है।

कर्पण की गति १६ फुट से ९०० फुट प्रति मिनट तक की जा सकती है। $\frac{३}{१६}$ इंच व्यास की नली निर्माण के लिए, १४० फुट प्रति मिनट गति होनी चाहिए।

यंत्र से कर्पण की हुई नली का छिद्र और मोटाई पूर्ण रूप से एक समान होती है, किन्तु हाथ से कर्पण की हुई नली में यह वात नहीं आती।

चूड़ी-निर्माण

(क) एक लम्वी लोह शलाका के सिरे पर कुछ रंगीन द्रुत काँच संग्रह किया जाता है और वह चपटी पटिया पर, लोहे के औजार द्वारा, पैरीजन के आकार का वनाया जाता है। दूसरे पात्रों से रंगीन काँचों की आवश्यक मात्राएँ संगृहीत की जाती हैं और पैरीजन के अनीकों[3] में संवानित की जाती हैं।

1. Guide wheels 2. Paddle wheel 3. Facets

खुली भट्ठी के सामने एक आदमी वैठा रहता है जो कि पैरीजन से धागा कर्पण कर, दूसरी लोहे की शलाका में जोड़ता है। काँच का धागा तव अग्नि के ऊपर से कर्पित किया जाता है और भट्ठी से दूर दूसरी तरफ लोहे के वेलन पर जोड़ा जाता है। यह वेलन इस्पात की ईपा पर स्थित होता है। भट्ठी के दोनों तरफ, लकड़ी के दो खंभों पर यह ईपा अर्धवृत्ताकार कटावों में आधारित होती है। एक कटाव वेयरिंग[1] भ्रमियुक्त[2] होती है और ईपा के सिरे की भ्रमि[3] से संबंधित होती है। एक दूसरा आदमी, वेलन को कर्पर मुठिया द्वारा शीघ्रता से घुमाता है और आधारित खंभों की भ्रमि के कारण वेलन अनुप्रस्थ गति से आगे वढ़ता है। इस प्रकार काँच, वेलन में कुन्तल रूप में[4] लपेट लिया जाता है। कर्पण करते समय, काँच के धागे पर एक समान तनाव रखना पड़ता है। कलात्मक प्रभाव उत्पन्न करने के लिए, जैसे कर्पण होता चलता है वैसे-वैसे पैरीजन को नियमित ढंग से घुमाया जाता है। जव काँच कुन्तल पूर्ण रूप से लपेट लिया जाता है तव काँच के धागे को काट दिया जाता है और कूर्पर मुठिया के दूसरी तरफ के वेयरिंग से ईपा वेलन सहित उठायी जाती है। लोह-शलाका के काँटे से कुन्तल को वेलन से उतारते हैं और कार्वोरण्डम के टुकड़े से कुन्तल की लम्बाई में खरोंच करने से, कुन्तल खुले वलयों में विभाजित हो जाता है। पृथक् किये हुए वलयों के सिरों को वर्नर की ज्वालाओं से कोमल कर और फिर सिरों को पीड़न कर जोड़ने से चूड़ी वन जाती है।

भिन्न मापों की चूड़ियाँ वनाने के लिए भिन्न व्यासों के वेलन प्रयोग में लाये जाते हैं।

सुपिर चूड़ी निर्माण के लिए, साँचे में वोतल के आकार का पैरीज़न धमित किया जाता है और तव सुपिर पैरीज़न को नली के रूप में कर्षण कर सामान्य विधि से वेलन पर लपेट देते हैं। वेलन से हटाने के पश्चात्, काँच के सुपिर कुन्तल का एक सिरा एक धौंकनी से जोड़ा जाता है। कुन्तल जव कुछ तप्त होता है तव ही रंग देनेवाले कुछ पदार्थ, जैसे कि कैडमियम सल्फाइड या ताम्र आक्साइड, कुन्तल में फूँक दिये जाते हैं।

चूड़ियाँ प्राय: अभितापित नहीं की जातीं।

(ख) रंगीन काँच से भरित कुछ छोटे पात्र एक खुली भट्ठी में रखे जाते हैं। लोहे की लम्बी शलाका पर काँच संगृहीत किया जाता है और शिला या लोहे की पटिया पर, दाव और वेल कर, गाजर के रूप का पैरीज़न वनाया जाता है। कुछ रंगीन काँच के टुकड़े तव उस पैरीज़न पर संधानित[5] किये जाते हैं।

1. Notch bearing 2. Is threaded 3. Thread 4. In the form of a spiral
5. Are fused on

कई रंगोंवाला यह पैरीज़न तव भट्ठी में तप्त किया जाता है और उसका कोमल नुकीला सिरा एक लोह-शलाका से जोड़ा जाता है। लोहे की शलाका को घुमाते हुए, काँच की शलाका, जिसमें रंगीन कुन्तल वने रहते हैं, कर्पण की जाती है। शलाका को ६ या ७ फुट की लम्वाई के अंशों में काटा जाता है।

प्रत्येक काँच की छड़ तव फिर से चूड़ी-निर्माण के लिए उपयुक्त लम्वाइयों में काटी जाती है।

काँच की छड़ों के कटे हुए खण्ड, भट्ठी के अन्दर अग्नि-मिट्टी की आलमारी में रखकर, कोमल किये जाते हैं। काँच के खण्डों के कोमल किये हुए सिरे तव सामान्य निहाई पर रखकर वलय के रूप में संधानित किये[1] जाते हैं। जुड़े हुए वलय को तव एक अग्नि-मिट्टी के शंकु पर रखते हैं।

अग्नि-मिट्टी के शंकु की मुठिया को वायें हाथ से पकड़कर शीघ्रतापूर्वक उदग्र स्थिति में परिक्रमण किया जाता है और काँच के वलय को शंकु पर नीचे खिसकाते जाते हैं, इस प्रकार सही व्यास की और पूर्ण वृत्ताकार चूड़ी वन जाती है। जव कि चूड़ी अग्नि-मिट्टी के शंकु पर होती है और कोमल होती है तव इसकी परिधि के चतुर्दिक्, लकड़ी के नकाशी किये हुए साँचे से दवाकर चित्रित किया जाता है। इसके पश्चात्, अग्नि-मिट्टी के शंकु से चूड़ी उतार ली जाती है।

(ग) पात्र से, रंगीन काँच पर्याप्त मात्रा में एक नुकीली लोह शलाका पर रख लिया जाता है। शलाका को उदग्र स्थिति में शीघ्रता से घुमाया जाता है और इससे शलाका की नोंक काँच में प्रवेश कर जाती है। इस प्रकार निर्मित काँच-वलय अग्नि-मिट्टी के शंकु पर स्थानान्तरित किया जाता है और पहले की तरह इससे चूड़ी वनायी जाती है।

चूड़ियों की सतह पर घर्पण चक्र द्वारा काटकर अनीक[2] और चित्र वनाये जाते हैं। काटने के पश्चात् चूड़ियों को तरल स्वर्णिम या सफेद रंग चढ़ाकर और फिर तप्त कर सजाया जाता है।

काँच का धागा[3]

(१) छोटा धागा (स्टेपिल ग्लास)

काँच धागा वनाने के लिए, द्रुत काँच को प्लेटिनम प्यालों के पेंदे के अति सूक्ष्म छिद्रों से निकालने के पश्चात् अधिक दावयुक्त जल-वाष्प या वायु द्वारा अति शीघ्रता

1. Are welded 2. Facets 3. Fibre glass

से लम्बे सूक्ष्म धागों में कर्षित किया जाता है। कर्षण करने की गति ढाई लाख फुट प्रति मिनिट यानी बन्दूक की गोली की गति के बराबर होती है। प्रत्येक धागा प्रायः रंभाकार[1] होता है और उसका व्यास .००००५ से .०००३ इंच तक होता है। लम्बाई ६ से १५ इंच तक होती है। निर्माण के समय घर्षण को न्यूनतम करने के लिए धागों में कुछ स्नेहक[2] वमन कर दिया जाता है। बाद में स्नेहक (उपस्नेह) साबुन और जल से, धो दिया जाता है। गतिशील पेटी पर वमित धागे इसी प्रकार संगृहीत होते हैं जैसे कि पृथ्वी पर बरफ गिरकर बैठ जाती है। चलित पेटी, छिद्रों के नीचे रहती है। प्रति घन फुट धागों का भार डेढ़ पाउंड होता है। पेटी पर संगृहीत धागों को "ऊन" कहकर भी व्यक्त किया जाता है और इस ऊन का कम्बल या ऐसी ही वस्तुएँ पीडन कर बनायी जाती हैं। इस ऊन को काटकर छोटे धागों की "दानेदार ऊन" भी बनायी जाती है। धागों से फीता या कपड़ा बनाने के लिए पहले काँच की गोलियाँ बनायी जाती हैं और वे छोटी विद्युत भट्ठी में पुनः द्रवित की जाती हैं। इन धागों को बिना मरोड़े अन्य धागों के समान संगृहीत किया जाता है जिसमें कि अधिकतम धागे लम्बाई में समानान्तर संगृहीत हों। ये धागे वयन-यंत्रों में[3] जाते हैं। ये यंत्र सूत, रेयन या रेशम बिननेवाले यंत्रों के ही समान होते हैं।

(२) **निरन्त धागा**[4]—इस प्रकार का धागा बनाने के लिए पहले काँच की गोलियाँ बनायी जाती हैं और वे छोटी विद्युत-भट्ठियों में पुनः द्रवित की जाती हैं। यहाँ से सैकड़ों, या और भी अधिक, अति सूक्ष्म छिद्रों से द्रुत काँच निकलता है। इस प्रणाली में जल-वाष्प या वायु का प्रयोग नहीं होता, परन्तु एक एकक या भाग से सम्पूर्ण धागों को एक साथ अति शीघ्रता से बिना किसी मरोड़ के, कर्षण यंत्र के तकुए द्वारा, कर्षित किया जाता है। धागा एक मील प्रति मिनट की गति से तैयार होता है। प्रत्येक धागे का व्यास .०००२२ इंच होता है। संगृहीत धागों की नलियाँ, कर्षण यंत्र से, सूत कातने के यंत्र पर ले जायी जाती हैं। प्रत्येक नली में अधिकतम लम्बाई के निरन्त धागे होते हैं। कातने के यंत्र में कई धागों को मिलाकर उत्तम धागा तैयार किया जाता है। इसके पश्चात् इन धागों को भी मिलाकर विभिन्न प्रकार के धागे बनाये जा सकते हैं। मानवीकृत उपयुक्त प्रामाणिक[5] वयन-यंत्रों में काँच के फीते, वस्त्र इत्यादि, सूत या रेशम की तरह बुने जाते हैं।

काँच के धागे में बहुत अधिक तनाव शक्ति होती है और सिवाय हाइड्रोफ्लोरिक

1. Cylindrical 2. Lubricant 3. Textile machines 4. Continuous filament
5. Standard

अम्ल के, जो सब काँचों का क्षारण करता है, और किसी अम्ल का इस पर प्रभाव नहीं पड़ता। यह ८००° सें. तक ताप सहन कर सकता है और इस ताप पर यह कोमल हो जाता है। बिना कते धागे से कता धागा और कते धागे से वस्त्र अधिक उच्च ताप सहन कर सकता है। इसमें कीड़े नहीं लगते और इसको अम्ल, साबुन या जल से धोकर स्वच्छ किया जा सकता है। इसका रंग छूटकर इधर-उधर नहीं फैलता। गरमी या ठंड रोकने के लिए यह उत्तम पृथक्कारी है। विद्युत् के लिए भी यह उत्तम पृथक्कारी होता है। यह ध्वनि को आगे बढ़ने से एक दम रोक देता है, इसलिए यह उत्तम ध्वनि-संहारक है और इसका प्रयोग ध्वानकी[1] में होता है।

बहुछिद्रीय काँच

इस काँच में बहुत से समान आकार के बुलबुले होते हैं। ये बुलबुले यद्यपि परस्पर अति निकट होते हैं तथापि एक-दूसरे से पूर्ण पृथक् रहते हैं। इस प्रकार का काँच विभिन्न प्रणालियों से निर्मित किया जाता है। चूर्णित काँच को कार्बनीय मिश्रण के साथ, ७००° से ९००° सें. तक ताप पर द्रवित करने की प्रणाली विशेष प्रचलित है। इस क्रिया से कार्बन डाइ आक्साइड गैस का निकास होने पर काँच फूल उठता है, याने पारिभाषिक शब्दों में काँच में 'फेन' आ जाता है। बहुछिद्रीय चादरी काँच निर्माण के लिए बेलन की हुई काँच की चादर जैसे ही निर्मित होती है वैसे ही निर्वात और तप्त कक्ष में पहुँचा दी जाती है जिससे चादर फूल उठती है। बाद में इसका पीडन कर इसे अभितापित किया जाता है। बहुछिद्रीय काँच की घनता ·३ से ·५ तक तथा सरन्ध्रता ८० से ८८ प्रतिशत होती है। ऊष्मीय चालकता, १९° सें. से ६०° सें. तक के ताप के लिए ·१०७ से ·१४० तक होती है।

भवन-निर्माण के लिए यह उपयुक्त पदार्थ है। भवन-शिलाएँ बनाने के लिए, बुलबुलेदार काँच को साँचे में रखा जाता है और इस साँचे को निर्वात पम्प[2] से संयोजित किया जाता है। काँच फूलकर साँचे में भर जाता है।

इसकी दबाव-शक्ति अत्यधिक होती है, इससे बनी ईंटों और शिलाओं को आरी से काटा जा सकता है और बर्मा से इनमें छिद्र भी किया जा सकता है। इन कार्यों से इनमें न तो दरार पड़ती है और न यह टूटते हैं। इनमें कीलें भी जड़ी जा सकती हैं। इनमें पर्याप्त सरन्ध्रता होने पर भी यह अधिक भार भी सहन कर सकते हैं। इनकी सतह

1. Accoustics 2. An exhaust

खुरदरी होने के कारण यह प्लास्टर में अच्छी प्रकार से चिपक जाते हैं। इनमें ध्वानकीय पृथक्करण भी बहुत अधिक है। भवन-निर्माण के लिए, भविष्य में इनके अधिक प्रयोग की आशा की जाती है।

सिलिका काँच या काँचीय[1] सिलिका

यह काँच एक मात्र सिलिका का बना होता है। यह शुद्ध क्वार्ट्ज़ से बनाया जाता है। इसको क्वार्ट्ज़ काँच इसलिए नहीं कहते कि यह क्वार्ट्ज़ के सिवाय और पदार्थों से भी बनाया जा सकता है। इसके बनाने में बहुत व्यय पड़ता है और इसके लिए १७१०° सें. ताप की आवश्यकता होती है। श्यान सिलिका में बुलबुले[2] भी होते हैं जिनको हटाना कठिन होता है। साधारणतः बुलबुलों को दूर करने के लिए निर्वात विद्युत तापन और वायु दाब का उपयोग किया जाता है जिससे वायु के बुलबुले संघनित[3] हो जाते हैं। अधिक श्यानता होने के कारण, इस काँच का कार्यकरण भी अति कठिन होता है। स्थायित्व, ऊष्मसहता, निम्न प्रसरण, यांत्रिक शक्ति, उच्च तापीय सहता, उच्च पृष्ठ, और आयतन विद्युत प्रतिरोध, प्रत्यक्ष और पारजम्बु विकिरण सम्बंधी पारदर्शिकता की दृष्टि से, सिलिका काँच आदर्श होता है। यह शलाकाओं, नलियों, और पट्टिकायों के रूप में तैयार किया जाता है।

मकानों के लिए काँच की ईंटें या शिलाएँ

इनका निर्माण सुषिर आयताकार शिलाओं का पीड़न कर और फिर दो शिलाओं को संधानित[4] कर किया जाता है। शिलाओं के भीतर की ओर उभार होते हैं और वे पारभासक होती हैं। सुषिर होने के कारण शिलाएँ भार में हलकी भी होती हैं और ध्वनि तथा ऊष्मा का पृथक्करण करती हैं। आधुनिक ढंग के मकानों में ये खूब उपयोग में लायी जा रही हैं।

1. Vitreous 2. Seeds 3. Condensed 4. Welding

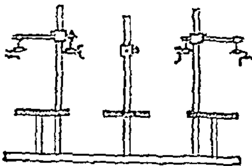
सत्रहवाँ अध्याय

काँच की सजावट

पृथक्करण यंत्र

ये यंत्र सुषिर-काँच वस्तुओं के, जैसे गिलासों इत्यादि के, गुम्बज आकार की टोपियों को पृथक् करने के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं।

(१) एक लोहे के ढाँचे पर, तीन छोटी वृत्ताकार लोहे की मेजों के ऊपर काँच की वस्तु रखी जाती है। इन मेज़ों को उदग्र अक्ष या तकुए के समान ऊँचाई पर आधारित रखते हैं। मध्य की मेज़ हाथ से घुमायी जाती है और बाकी दो मेजें पट्ट और घर्घरी[1] द्वारा परिक्रमण करती हैं। प्रत्येक मेज़ के सामने एक उदग्र स्तम्भ होता है। मध्य के स्तम्भ में काटने का एक औज़ार लगा रहता है और बाहरी दो मेजों पर नुकीली ज्वालाओं-वाले दो क्षैतिज[2] वर्नर होते हैं। ज्वालाएँ मेज़ पर स्थित काँच-वस्तु के ऊपरी भाग को विपरीत दिशाओं से तप्त करती हैं। ज्वालाओं और काटने के औज़ार की ऊँचाई एक-सी होती है। काँच-वस्तु पहले मध्य की मेज़ पर रखी जाती है और उसे घुमाने से, काटने का औज़ार आवश्यक ऊँचाई पर काँच-वस्तु के चतुर्दिक् एक चिह्न बना देता है। काँच-वस्तु तदुपरान्त किसी एक और मेज़ पर रखी जाती है और ज्वालाएँ चिन्ह को तप्त करती हैं। काँच-वस्तु कोतव हटाने और तप्त वलय को जल से आर्द्र करने पर, काँच वस्तु से टोपी पृथक् हो जाती है।



[चित्र ४८—पृथक्करण यंत्र]

(२) एक परिक्रमण करनेवाली मेज़ के किनारे पर क्रम से कई अवलम्बन[3] होते हैं, जो अवलम्बन केन्द्रीय उदग्र अक्षों पर परिक्रमण करते रहते हैं। जैसे-जैसे मेज़ परिक्रमण करती हैं, अवलम्बन क्रम-क्रम से काटने के औज़ार और ज्वालाओं के सम्मुख आते हैं। अवलम्बनों का ऐसा आकार होता है कि उनमें विशिष्ट काँच-वस्तु आलम्बित रह सकती है।

1. Belt and pulley 2. Horizontal 3. Holders

मेज के परिक्रमण की गति, काटने के औजार एवं ज्वालाओं की ऊँचाई समंजित की जा सकती हैं।

(२) चिमनी काटने का यंत्र—धातु के परिक्रमण करते हुए बिम्बों पर संयुक्त चिमनियाँ आलम्बित रहती हैं और ऊपर से गैस ज्वालाएँ इन्हें तप्त करती हैं। कुछ परिक्रमणों के पश्चात्, स्थानीय तापन के कारण चिमनियाँ पृथक् हो जाती हैं।

किनारे चिकनाने का यंत्र

काँच-वस्तुएँ जब चटकाकर पृथक् की जाती हैं तो उनके किनारे असम रहते हैं। किनारे चिकनाने का यंत्र काँच-वस्तुओं के किनारे चिकना करता है।

(१) **मोटी कोर की काँच-वस्तुएँ**—एक क्षैतिज अक्ष के सिरे पर लकड़ी के साँचे में काँच-वस्तु इस प्रकार जकड़ दी जाती है कि किनारा, जिसको चिकना करना है, समतल रहे। एक घर्षण पत्थर एक अन्य अक्ष में स्थित किया जाता है, उसकी चपटी सतह उदग्र रहती है। ये दोनों अक्ष एक ही रेखा में रहते हैं। घर्षण पत्थर को असम किनारों के सामने एक दाब नियंत्रण करनेवाले स्कन्द (कमानी)[1] से दबाया जाता है। काँच-वस्तु और साँचा, पट्टे और घर्घरी द्वारा परिक्रमण करते हैं। घर्षण पत्थर पानी गिराकर गीला रखा जाता है। घर्षण के पश्चात्, किनारे पर इसी प्रकार एक काष्ठ चक्र पालिश करता है। बहुत-से कारखानों में, काँच-वस्तु को हाथ से घर्षण पत्थर के सम्मुख दबाये रहते हैं और तब घर्षण-चक्र अनुप्रस्थ समतल में परिक्रमण करता है। भारत में चिमनी को हाथ से पकड़कर, ढलवाँ लोहे के तीन फुट व्यासवाले घर्षण-पत्थर के सामने दबाकर, चिमनियों के किनारे सम किये जाते हैं। घर्षण-पत्थर पर बालू और जल अविराम टपकते रहते हैं।

पतली-कोरवाली काँच-वस्तुएँ—पतली दीवालों की काँच-वस्तुओं के किनारे एक द्रावण यंत्र से चिकने किये जाते हैं।

एक वलय या निरंत शृंखला अनुप्रस्थ समतल में परिक्रमण करती है और इस पर कई छोटी वृत्ताकार मेज़ें होती हैं जो केन्द्रीय उदग्र अक्षों पर घूमती रहती हैं। इन मेजों पर क्रम से काँच-वस्तुएँ रखी जाती हैं। जैसे-जैसे वलय घूमता है वैसे ही काँच-वस्तुएँ, धातु की बनी छोटी सुरंग में से गमन करती हैं। यह सुरंग काँच की वस्तुओं के ऊपरी भाग को घेरे रहती है। सुरंग के पहले भाग में चौड़ी ज्वालाएँ काँच-वस्तु के किनारों

1. Spring

को पूर्व तापित करती हैं। दूसरे भाग में, तप्त ज्वालाएँ किनारों को सीधे-सीधे (डाइ-रेक्टली) तप्त करती हैं जिससे किनारे कोमल और चिकने हो जाते हैं। सुरंग से निकलने पर काँच-वस्तुएँ चिमटे से हटा ली जाती हैं और किनारा चिकना करने के लिए नयी वस्तुएँ मेज़ पर रखी जाती हैं।

काँच-नकासी

नकासी किया हुआ चमकता काँच बहुमूल्य और सुन्दर होता है। अच्छे गुण के पोटास-सीस युक्त काँच में नकासी करना सहज होता है और इस काँच का वर्तनांक[1] भी उच्च होता है।

काँच-वस्तुओं में नकासी करना आधुनिक शिल्पकारी है और नकासी की पालिश-दार सतहों और कोणों से प्रकाश का वर्तन, बहुत ही चमचमाता प्रभाव उत्पन्न करता है। काँच में नकासी के कई क्रम होते हैं।

(१) चिह्न लगाना—चिपकनेवाली स्याही से काँच पर एक नकशा बनाया जाता है।

(२) प्रथम नकासी—अति शीघ्र घूर्णन करते हुए बिम्ब के ऊपरी किनारे पर काँच-वस्तु थामी जाती है। यह बिम्ब प्राकृतिक बालू-शिला या कृत्रिम बन्धित अप-घर्षक[2] का या इस्पात का चक्र होता है जो कि क्षैतिज अक्ष के लम्ब समतल में स्थित रहता है। बिम्ब के ऊपरी सिरे के ऊपर तीव्र बालूकणों और जल की पतली धार से घर्षण-क्रिया की जाती है।

(३) द्वितीय नकासी—घूर्णन करते हुए पत्थर के बिम्ब के विरुद्ध काँच-वस्तु थामी जाती है और घर्षण माध्यम के लिए सिर्फ़ जल का उपयोग किया जाता है। इससे नकासी गहरी और चौड़ी हो जाती है और कुछ सूक्ष्म रेखाएँ भी बन जाती हैं।

(४) पालिश करना—काँच-वस्तु को घूर्णन करते हुए काठ के बिम्ब के विरुद्ध थामते हैं, पुट्टी चूर्ण[3] और जल का उपयोग किया जाता है। यह चूर्ण सीस आक्साइड एवं वंग आक्साइड का मिश्रण होता है।

(५) ब्रुश करना—काँच-वस्तु को शीघ्रता से घूर्णन करते हुए कठोर बालों के ब्रुश के सामने रखा जाता है और इसमें झामन[4] तथा जल का प्रयोग किया जाता है।

1. Refracting power 2. Bonded abrasive 3. Putty powder
4. Pumice

(६) अन्तिम पालिश—शीघ्रता से घूर्णन करते हुए ब्रुश से, पुट्टी या कुंकुमी[1] और जल का प्रयोग करने से नकासी में अच्छी चमक-दमक आ जाती है।

उत्किरण

काँच की सजावटमें उत्किरण से सुन्दर और सूक्ष्म प्रभाव आता है। यह बहुत प्राचीन कला है, ग्रीक रोमन काल के उत्किरणों के सुन्दर नमूने पाये गये हैं।

यह काटने की नकासी से भिन्न है क्योंकि प्रकाशीय भ्रम के कारण उत्किरण की छिछली चित्र[2] नकासी हलके उभार का भाव देती है।

उत्किरण के कुंदे साधारणतः पैर से चलाये जाते हैं। एक सुपिर नली में, कई अक्ष (तकुए) लगाये जा सकते हैं। इन अक्षों में $\frac{1}{16}$ से $\frac{1}{4}$ इंच व्यास के, कई भिन्न माप के ताम्र चक्र या बिम्ब स्थित किये जा सकते हैं।

जिस वस्तु पर उत्किरण करना होता है उसको विम्ब के नीचे रखा जाता है और वांछित चित्रकारी के लिए वस्तु को इधर-उधर, विम्ब को स्पर्श करते हुए, घुमाया जाता है। ताम्र विम्बों में एमरी का चूर्ण तेल में मिलाकर डाला जाता है।

चमकते काँच पर इस प्रकार की शिल्प-कला को या तो ऐसे ही बगैर पालिश किये छोड़ दिया जाता है या अम्ल विधि या कुंकुमी से फिर से अच्छी पालिश कर दी जाती है।

चित्र नकासी कला

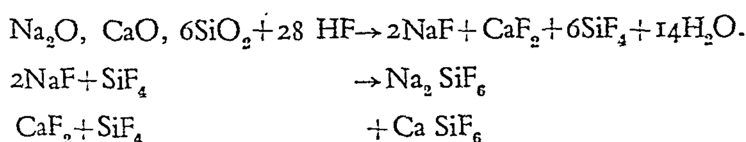
सजावट की यह आधुनिक विधि है जिसमें कुछ तो काटने की और कुछ उत्किरण की प्रणालियों का प्रयोग किया जाता है। एक अनुप्रस्थ अक्ष पर पत्थर के कुछ विम्ब जमा दिये जाते हैं। कुंद बेंच पर स्थित होते हैं और यंत्र द्वारा चलाये जाते हैं। अक्षों पर, बजाय ताम्र विम्बों के, पत्थर के विम्ब होते हैं। इनके ऊपरी सिरे पर, जल गिरता रहता है और काँच-वस्तु, पत्थर के काटनेवाले नीचे के किनारे के सम्मुख थामी जाती है। यह प्रणाली उत्किरण विधि से अधिक शीघ्रता युक्त है। वास्तव में इस विधि से अधिक उभरा काम और कटाई होती है तथा सजावट में अधिक सौन्दर्य आ जाता है।

निरेखण[3]

प्राविधिक काँच–वस्तुओं पर अंकन और व्यवसाय चिह्न बनाने के लिए, बहुधा निरेखण कला प्रयोग में लायी जाती है।

1. Rouge 2. Shallow intaglio 3. Etching

हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल काँच का शीघ्रता से क्षारण करता है। सोडा चूनायुक्त काँच में होनेवाली रासायनिक क्रिया निम्न समीकरण से व्यक्त की जा सकती है—



$$Na_2O,\ CaO,\ 6SiO_2 + 28\ HF \rightarrow 2NaF + CaF_2 + 6SiF_4 + 14H_2O.$$

$$2NaF + SiF_4 \rightarrow Na_2\ SiF_6$$

$$CaF_2 + SiF_4 \quad + Ca\ SiF_6$$

सोडियम सिलिको फ्लोराइड काफी विलेय होता है, परन्तु कैलशियम, पोटेशियम और सीस सिलिको फ्लोराइड अविलेय होते हैं, अतः काँच की सतह पर निक्षेपित रह जाते हैं। इन लवणों के सतहों पर निक्षेपण होने के कारण, अम्ल की क्रिया एक समान नहीं हो पाती, अतः काँच में धुंधलापन-सा आ जाता है। अधिक चूना होने से काँच में यह असमता और बँट जाती है।

हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल से सीस युक्त भारी काँचों का क्षारण शीघ्रता से होता है और पोटाशयुक्त कठोर काँचों का सबसे कम क्षारण होता है।

गंभीर निरेखण

गहराई युक्त निरेखण का प्रयोग उभरी या रेखीय नकासी उत्पन्न करने के लिए या काँच की सतह से रंगीन आवृत काँच को हटाने के लिए किया जाता है। यह इस प्रकार होता है—

(१) गैसीय हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल—सीस-आवृत पेटी के चतुर्दिक् खानों में काँच-वस्तुएँ रखी जाती हैं। पेटी के ढक्कन को रबड़ के जोड़ से संमुद्रित किया जाता है। पेंदे के मध्य में सीस आवृत एक बायलर होता है जिसमें सल्फ्यूरिक अम्ल और फ्लूरस्पार होता है। ढक्कन के मध्य में से एक संकीर्ण सीस नली एक तीव्र वाहित नाली से सम्बन्धित होती है। बायलर नीचे से एक छोटे बर्नर द्वारा इतना तप्त किया जाता है कि वह खूब गरम हो जाय। बर्नर तब हटा लिया जाता है और पेटी दो दिन तक ऐसे ही पड़ी रहती है, तब पेटी के पेंदे में एक नली द्वारा वायु वमन करने से, बचा हुआ धूम दूर हो जाता है।

(२) अम्ल घोल—निम्न विलयन अच्छे बताये गये हैं, जिनमें काँच-वस्तु कुछ समय के लिए डुबोयी जाती है।*

* निरेखण वल्कनीकृत रबड़ या सीसपात्रों में ही करना चाहिए।

रसायन	चूना युक्त काँच			सीस युक्त काँच
	(१)	(२)	(३)	
हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल	१	१	२	१
सल्फ्यूरिक अम्ल	—	१	—	—
नाइट्रिक अम्ल	—	—	—	१
सोडियम कार्बोनेट	—	—	१	—
जल	५	८	५	८

गंभीर स्वच्छ निरेखण के लिए, काँच की सतह पर से निक्षेपित लवणों को हटा लेना चाहिए और यह तभी हो सकता है जब कि निरेखण की अवधि में काँच हिलता-डुलता रहे, या समय-समय पर ब्रुश से काँच सतह को रगड़ना चाहिए। तनु अम्ल के प्रयोग से क्षारण धीरे-धीरे होता है, परन्तु इससे निरेखण में चमक आ जाती है।

तुहिन निरेखण[1]

जब काँच पर हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल का क्षारण एकसमान नहीं होता तब काँच पर साटिन या मैट[2] का प्रभाव आ जाता है। निरेखण की अवधि में, काँच की सतह पर, कुछ मात्रा अविलेय सिलिको हाइड्रोफ्लोराइडों की अवक्षेपित हो जाती है, जिसके कारण निरेखण घोल से एक समान क्षारण होने में रुकावट पैदा होती है। साधारणतः एमोनियम-बाइ-फ्लोराइड और हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल का घोल प्रयोग में लाया जाता है। घोल में उदासीन लवणों की उपस्थिति से क्रिया में शीघ्रता आ जाती है। निरेखण करने के लिए या तो काँच की सतह को घोल से रँगना चाहिए या काँच-वस्तु को उपयुक्त घोल में डुबोना चाहिए।

1. Matt etching 2. Satin finish or matt effect

तुहिन निरेखण घोल

रसायन	(१)	(२)	(३)	(४)	(५)
हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल	—	२	—	—	१
पोटेशियम फ्लोराइड	१०	—	—	—	—
एमोनियम-बाइ-फ्लोराइड	—	५	१०	१	५
एमोनियम सलफेट	—	—	१	१	—
एमोनियम कार्बोनेट	—	—	—	—	३
सोडियम कार्बोनेट	—	—	—	—	१
हाइड्रोक्लोरिक अम्ल	१	—	—	१	—
सलफ्यूरिक अम्ल	—	—	२	—	—
जल	१००	५	१०	—	२

रोध[1]

निरेखण से चित्र बनाने के लिए, काँच की सतह पर कोई एक रोध लगाना चाहिए। रोध, काँच से चिपकनेवाली किसी पदार्थ की परत होती है जिस पर हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल की कोई भी क्रिया नहीं हो सकती। रोध, मधुमक्खी का मोम, मोम या राल होते हैं। सबसे सरल प्रकार के रोध के लिए, काँच की सतह पर मोम की रंगीन परत देनी चाहिए या मोम किये हुए पतले कागज का व्यवहार करना चाहिए।

चित्र बनाने के लिए, काँच की सतह से मोम का आवश्यक भाग हटा लेना चाहिए। निरेखण के पश्चात् काँच-वस्तु को गरम जल से धोने से मोम हटाया जा सकता है।

मोहर-लेपियाँ

(१) हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल में, एमोनियम बाइ फ्लोराइड का तीव्र घोल,
(२) एमोनियम-बाइ-फ्लोराइड १ भाग
हाइड्रोक्लोरिक अम्ल १ ,,

1. Resists

एमोनियम सलफेट	१ ,,
हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल	उपयुक्त मात्रा

लेपी, मोहर के पैड पर लगायी जाती है और रवड़ की मोहर से काँच-वस्तु पर मोहर लागयी जाती है। निरेखण कुछ ही मिनटों में पूर्ण हो जाता है।

निरेखण यंत्र

काँच-वस्तु की रोध–आवृत सतह पर यंत्र रेखीय चित्र वनाता है। तरंगीय प्रभाव, काँच-वस्तु के घूर्णन से और निरेखण औजार की उदग्र व्युत्क्रमीय गति से प्राप्त होता है।

पेंटाग्राफ यंत्र—इस यंत्र से एक समय में कई भिन्न वस्तुओं पर निरेखण के लिए कोई भी वांछित चित्र चिह्नित करना सम्भव होता है। वांछित चित्र की विधि स्थिर कर ली जाती है और वही विधि, पेंटाग्राफ के रोध को हटाने के सावनों की होती है और विधि अनुसार वही चित्र प्रत्येक काँच-वस्तु की सतह पर अंकित हो जाता है।

तुहिनाच्छादित विद्युत दीप

दीप के अन्दर एक सेकण्ड के लिए हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल और एमोनियम-वाइ-फ्लोराइड का घोल या "श्वेत अम्ल" ($H_2F_2–NH_4 HF_2$) सीकरित किया जाता है और फिर पानी छिड़ककर दीप धो लिया जाता है।

तुहिन निरेखण के समय जो छोटी प्रसीताएँ[1] वन जाती हैं उनके कोणीयपन को दूर करने के लिए, शुद्ध हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल, दीप के अन्दर सीकरित किया जाता है और तत्पश्चात् दीप को जल से धोया जाता है। तुहिनाच्छादित दीप अतुहिनाच्छादित दीपों से अधिक मज़बूत होते हैं।

पट्ट निरेखण

फोटो नकासी प्रणाली से, इस्पात के पट्ट पर चित्र वनाया जाता है। तप्त इस्पात पट्ट पर कुछ रोध की मात्रा फैला दी जाती है और पट्ट पर पतला ऊति कागज[2] खूब दवाकर लगाया जाता है। फिर इस कागज को इस्पात पट्ट से हटाकर काँच की सतह पर रखा जाता है। कागज़ को जल या अलकोहल से भिगोकर काँच से हटाया जाता है। इस प्रकार काँच की सतह पर चित्र की रेखाओं को छोड़कर, सब जगहों में रोध लग जाता है। काँच-वस्तु की वाकी सतह पर भी रोध लगाया जाता है और फिर साधारण

1. Grooves 2. Tissue paper

विधि से निरेखण किया जाता है। इस प्रणाली से कई काँचों पर एक ही प्रकार का चित्र निरेखित किया जा सकता है।

अम्ल पालिश

आजकल लकड़ी के चक्र से पालिश करने की पुरानी विधि के स्थान पर अम्ल पालिश की विधि प्रयुक्त होने लगी है। यह विधि शीघ्रतायुक्त है, परन्तु अम्ल पालिश कम स्थायी होती है और ऋतु-क्षारण का इस पर अधिक प्रभाव पड़ता है।

काँच वस्तु को पहले तनु हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और सलफ्यूरिक अम्ल के घोल में साफ किया जाता है। तत्पश्चात् काँच-वस्तु निम्नलिखित घोल में १५ से ४५ सेकण्ड तक डुबायी जाती है।

हाइड्रोफ्लोरिक अम्ल (सान्द्र) १ भाग

सलफ्यूरिक अम्ल (सान्द्र) २ भाग

तत्पश्चात् काँच-वस्तु को गरम पानी में डुबाया जाता है। यह विधि ३ या ४ बार दोहरायी जाती है और अन्त में काँच-वस्तु को गरम स्थान में सुखा लिया जाता है।

वालू अभिधमन निरेखण

द्वारी काँच को पारभासक बनाने के लिए यह शीघ्रता से काम करनेवाली और मितव्ययी विधि है। औद्योगिकी काँच वस्तुओं को चिह्नित करने या उन पर स्थायी लेवलें बनाने के लिए इस प्रणाली का उपयोग किया जाता है। यह विधि तभी मितव्ययी हो सकती है जब कि बहुत-सी वस्तुओं को निरेखित करना होता है। इस विधि में, काँच की सतह पर रुक्ष और गोलकणों की वालू अति वेग से टकरायी जाती है। वायु साधारणतः संपीडक या धौंकनी से धमन की जाती है।

घर्षण से सतह जितनी रुक्ष होती है, उससे अधिक रुक्ष इस विधि से होती है, और अम्ल-निरेखण की तुलना में घर्षण द्वारा भी सतह अधिक रुखी हो जाती है।

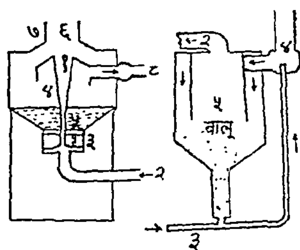
वायुधमन यंत्र

(अ) कक्ष (४) के पेंदे का आकार निवाप-पात्र[1] के समान होता है और कक्ष में तुंड के चतुर्दिक् वालू होती है। तुंड नीचे की नली (२) में संतनित होता है, और इस नली में ६ इंच से २ वायुमण्डल के दाब की संपीडित वायु धमन की जाती है। निवाप-पात्र से वालू, छोटे छिद्रों

1. Hopper

(५) से नीचे की नली (३) में गिरती है। संपीडित वायु, नली (३) के खुले सिरे से वायु को चूषण करती है और इस प्रकार संपीडित वायु में वालू कण उपलब्ध हो जाते हैं। पर, रेखण किये जानेवाले काँच को (६) पर रखा जाता है और काँच पर, वालू मिश्रित वायु वड़े वेग से टकराती है। ढक्कन (७) वदलकर द्वार (६) समंजित किया जा सकता है। इस ढक्कन में उपयुक्त माप का छिद्र होता है, रेचक नली (८) सूक्ष्म वालू धूलि को कर्षित कर लेती है। वायुमण्डल में न्यूनतम धूलि जाय, इसके लिए कुछ नमीवाली वालू का प्रयोग किया जा सकता है या काँच-वस्तु को वंद कक्ष में रखा जा सकता है।

(आ) निवाप-पात्र आकार के पेंदेवाले उपकरण में वालू रखी जाती है। नली (२) से एक उपयुक्त रेचक पंखा, वायु का चूषण करता है। (५) में दाव में कमी आने के कारण, मुड़ी हुई नली (३) में से होकर वायु भीतर वेग से आने लगती है। एक छोटे छिद्र से वालू नली (३) में गिरती है और भीतर जानेवाली वायु से मिश्रित हो जाती है। काँच-वस्तु, छिद्र (४) पर रखी जाती है और वालू, काँच-सतह पर टक्कर मारती है। वाद में वालू कक्ष (५) में फिर से पहुँचती है और व्यवरोधपट्टिकाओं[1] से टकराकर फिर नीचे निवाप-पात्र में गिर पड़ती है। कक्ष और रेचक के मध्य एक जलपात्र होता है जिसके कारण धूलि पंखे में वालू का चूषण नहीं होने पाता। वंद कक्षों के निर्वात यंत्र भी प्रयोग में लाये जा रहे हैं।



[चित्र ४९—वालू अभिधमन यंत्र]

रोध और निक्रन्त[2]

वालू अभिधमन में निक्रन्त द्वारा काँच की सतह की रक्षा की जाती है। निक्रन्त वनाने के लिए साधारणतः जस्ते की पन्नी या कोमल रवड़-जैसे पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। तीव्र चाकू से इन पर सरल नकशे (डिजाइन) काटे जाते हैं। जटिल

1. Baffle plates 2. Stencils

नकशों के लिए, पन्नी का वह भाग, जिसको काटना नहीं होता है, अम्ल निरेखण में उपयोग आनेवाले रोध से रँगा जाता है। तब बिना रँगा भाग तनु नाइट्रिक अम्ल में विलयित कर हटा दिया जाता है। छपे नकशे भी छापने की धातु-पट्टिकाओं द्वारा निकृन्त पर स्थानन्तरित किये जा सकते हैं। रबड़ से तैयार किये हुए रोध भी प्रयोग में लाये जाते हैं और इनको काँच सतह पर रँगा जा सकता है या निकृन्त में से होकर निचोड़ कर लगाया जा सकता है।

रबड़ से रोध बनाने के लिए, रबड़ को सूक्ष्म टुकड़ों में काटकर, एक अच्छी डाट की बंद बोतल में बेंज़ीन में विलय किया जाता है। यह घोल एक दिन में तैयार हो जाता है। इसमें कुछ कज्जल मिलाकर काँच की सतह पर लगाया जाता है।

सरेस निरेखण

काँच की सतह पर सरेस की परत लगायी जाती है। सूखने पर यह कठोर हो जाती है और चिपकने के कारण काँच की सतह से शंखाभीय टुकड़े पृथक् हो जाते हैं, इससे सतह पर बड़ा सुन्दर प्रभाव पड़ता है। इस प्रणाली द्वारा काँच को परान्ध बनाने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। सतह की दरारों में तीव्रता होने के कारण इसका प्रयोग पेय एवं भोज्य पात्रों के लिए नहीं किया जाता। काँच पर बालू निरेखण करने के पश्चात् यदि सरेस की परत लगायी जाती है तो अति आकर्षक प्रभाव देख पड़ता है।

विभासी काँच[1]

तप्त काँच की सतह को कुछ समय के लिए धातु लवणों की वाष्पों के सम्पर्क में लाया जाता है। इस विधि से काँच की बहुत पतली परत पर रासायनिक क्रिया होती है। व्यतिकरण[2] के कारण आपाती प्रकाश[3] के कुछ रंग नष्ट हो जाते हैं और परावर्तित प्रकाश का रंग, नष्ट होनेवाले रंग का पूरक होता है। प्राप्त होनेवाला रंग काँच की क्षारण-सतह की स्थूलता पर निर्भर करता है। इस प्रकार कोई एक विशिष्ट रंग प्राप्त नहीं होता, परन्तु काँच में मनोहर विभासी रूप आ जाता है।

1. Iridescent glass
2. Interference
3. Incident light

विभासी रंग के लिए मिश्रण

सामान्य प्रभाव के लिए—शुद्ध स्टैनस क्लोराइड

नीली आभा के लिए	स्टैनस क्लोराइड	१६	भाग
	स्ट्रान्शियम नाइट्रेट	१	"
	बेरियम क्लोराइड	३	"
लाल आभा के लिए	स्टैनस क्लोराइड	३५	"
	स्ट्रान्शियम नाइट्रेट	३	"
	बेरियम क्लोराइड	२	"
उपलीय आभा के लिए	स्टैनस क्लोराइड	९	"
	बिस्मथ नाइट्रेट	१	"

विभासी प्रभाव लाने की विधि

इसके लिए एक विशेष प्रकार की अवगुंठ भट्ठी[1] का प्रयोग किया जाता है जिसमें गहरा उदग्र गड्ढा-सा होता है जो पेंदी के निकट खुला रहता है। धमनाड या पण्टी[2] पर लगी काँच वस्तु, पृथक् होने के पूर्व, कार्य छिद्र में तप्त की जाती है और फिर अवगुंठ भट्ठी के बन्द कक्ष में रखी जाती है। विभासी मिश्रण, पूर्व तापित लोहे की दर्वी में रखकर, अवगुंठ भट्ठी के नीचे खुले स्थान से प्रविष्ट किया जाता है। लवण वाष्प बनकर काँच सतह का क्षारण करते हैं और अन्त में चिमनी से निकल जाते हैं। इस विधि में कुछ हेर-फेर करने से फावराइल काँच, "मुक्तामाता" काँच[3] इत्यादि बनाये जाते हैं।

विभासिता, क्रिया के ताप और समय पर निर्भर करती है। काँचों में उत्तम विभासी प्रभाव लाने के लिए असीस काँच या गहरे रंग के काँच का प्रयोग करना चाहिए।

काँच में द्युति-उत्पादन

द्युति लाने के लिए काँच वस्तु पर कार्बनिक धातु यौगिक से वार्निश की जाती है, जिससे कि तप्त होने के पश्चात् काँच की सतह पर धातु की अति सूक्ष्म परत रह जाती है। कुछ आकार्बनिक या रंगीन आक्साइड भी कार्बनिक माध्य के साथ मिश्रित किये जा सकते हैं। तप्त होने पर कार्बनिक माध्य (वेहिकिल) उड़ जाता है।

1. Muffle furnace 2. Punty 3. Mother of pearl glass

धातु रेज़िनेट का घोल, ईथरीय तेल, जैसे लेवेण्डर, रोज़मेरी या हलका कर्पूर तेल में वनाया जाता है। काँच-वस्तु के ऊपर घातविक रेजिनेट को रंगकर या काँच-वस्तु को उसमें डुवोकर, सुखाया जाता है। फिर काँच-वस्तु को लेयर में रखकर तप्त करने से सुन्दर द्युति उत्पन्न हो जाती है।

द्युति लानेवाले घोल

	लाल वादामी चमक	भूरी चमक	वादामी चमक
लोह रेज़िनेट	१० भाग	—	—
सीस रेज़िनेट	१० ,,	१० भाग	१० भाग
तेल	२० ,,	२० ,,	२० ,,
कोवाल्ट रेज़ीनेट	—	१० ,,	—
मैंगनीज़ रेज़ीनेट	—	—	१० ,,

अलंकृति चिन्ह

काँच-वस्तु की सतह पर, रवड़ की मोहर से तनु जल-काँच के घोल की मोहर लगायी जाती है और तव उसके ऊपर काँसें के चूर्ण, अल्यूमीनियम के चूर्ण या एगेट को छिड़ककर तप्त किया जाता है, जिससे कि काँसे और रजत का सफेद प्रभाव आता है।

रजतरोपण

अवक्षेपित[1] चाक और अलकोहल से काँच की सतह स्वच्छ की जाती है और तव काँचपट्टिका को समतल सतह पर इस प्रकार रखा जाता है जिससे रोपवाली सतह ऊपर रहे।

रजत नाइट्रेट के जल-विलयन में एमोनिया इतना मिलाया जाता है कि प्रथम अवक्षेप फिर से विलय हो जाय और तव इस विलयन में किसी उपयुक्त अवकारक का विलयन, जैसे राचेस लवण, अंगूर शर्करा, इमली अम्ल या एलडीहाइड[2] मिलाया जाता है।

1. Precipitated 2. Aldehyde

उपयुक्त ताप के मिश्रित विलयन को काँच की सतह पर उँड़ेलकर पूरे ऊपरी भाग में फैलाया जाता है। अवकारक के कारण विलयन से रजत धातु निकल आती है और काँच-सतह पर सूक्ष्म रजत पटल के रूप में रोपित हो जाती है। इस सूक्ष्म पटल को सुरक्षित रखने के लिए इसके ऊपर रंग दिया जा सकता है या इसके ऊपर ताम्र विद्युल्लेपन कर, ताम्र के ऊपर वार्निस लगायी जा सकती है।

निर्वात आसवन द्वारा रजत रोपण

निर्वात आसवन द्वारा भी रजतरोपण किया जा सकता है और काँच की सतह पर अल्यमिनियम धातु का रोपण किया जा सकता है। अल्यूमिनियम के सूक्ष्म पटल के कुछ आक्सीकरण होने के पश्चात् फिर वायु का कोई प्रभाव नहीं होता। इस प्रकार का रोपण, ज्योतिपीय दूरवीनों के लिए अत्यन्त उपयोगी है। इस पर पुन: पालिश भी की जा सकती है।

अभिरंजन[1]

अति सूक्ष्म रजत यौगिक, जैसे कि रजत क्लोराइड या रजत कार्वोनेट का एक भाग और लाल या पीली मिट्टी ५ से १० भाग को जल के साथ मिश्रित कर लेपी वनायी जाती है। यह लेपी काँच सतह पर लगायी जाती है। फिर काँच को अवगुंठ भट्ठी में रखकर तप्त किया जाता है। अभितापन ताप से निम्न ताप पर इसका तापन किया जाता है। इस क्रिया से काँच में पीला रंग या पीत निरेखण देख पड़ने लगता है। लाल निरेखण के लिए, स्वर्ण या ताम्र का प्रयोग किया जाता है। ताम्र की दशा में, ताम्र आक्साइड या सलफेट का प्रयोग होता है और कई वार तप्त करना पड़ता है। अन्तिम तापन अवकारक वातावरण में किया जाता है और तव लाल निरेखण प्राप्त होता है।

आकाचन

आकाचन[2] की विधि

(१) शीत विधि—काँच की सतह पर, सामान्य रंग ब्रुश द्वारा रंग दिये जाते हैं, और शीघ्रतापूर्वक सुखा लिये जाते हैं। इस प्रकार के रंग वहुत ही आसानी से खुरचे जा सकते हैं। ये वास्तव में यथार्थ आकाच नहीं होते। यथार्थ आकाच, निम्न ताप पर द्रवित होनेवाले काँच होते हैं।

1. Staining 2. Enamelling

(२) (क) काँच की सतह पर आकाच से एक नकशा वनाया जाता है। शुष्क होने के पश्चात् काँच को कुछ देर के लिए रक्त ऊष्मा की अवगुंठ भट्ठी में रखा जाता है। काँच में रंग उत्पन्न करनेवाले धातु-आक्साइडों, लवणों या सिर्फ धातुओं और द्रावक का प्रयोग किया जाता है। वालू, लाल सीस और सुहागे के मिश्रण को द्रवित करने से द्रावक वनता है। आकाच चूर्ण को लगाने के लिए अच्छी वार्निश या गोंद माव्य का प्रयोग किया जाता है। अवगुंठ भट्ठी में आकाच द्रवित हो जाता है और काँच की सतह पर वास्तविक काचन वन जाता है।

(ख) काँच की सतह पर ववूल गोंद के विलयन या वार्निश से नकशा वनाया जाता है और उस पर आकाच चूर्ण छिड़क दिया जाता है। शुष्क होने पर काँच-वस्तु अवगुंठ भट्ठी में तप्त की जाती है।

उपयुक्त द्रावक निम्न हैं—

(१) अपारदर्शी आकाच

	(अ)	(आ)
वालू	४० भाग	३० भाग
लाल सीस	७० ,,	८० ,,
सुहागा	२० ,,	१० ,,

(२) पारदर्शी आकाच (एनामेल)

	(अ)	(आ)	(इ)
वालू	१० भाग	१० भाग	१० भाग
लाल सीस	७० ,,	८० ,,	६० ,,
वोरिक अम्ल	२० ,,	—	१० ,,
सुहागा	—	४० ,,	१० ,,

उपयुक्त वर्णक निम्न हैं—

(१) पारदर्शक आकाच

रंग	रसायन	भाग
पीला-हरा	ताम्र आक्साइड	१०
	यूरेनियम आक्साइड	२
नीला	कोवाल्ट आक्साइड	२

(२) अपारदर्शक आकाच

रंग	रसायन	भाग
हरा	पोटेशियम डाइक्रोमेट	२
	ताम्र आक्साइड	२
गहरा नीला	कोवाल्ट आक्साइड	१
काला	कोवाल्ट आक्साइड	४
	ताम्र आक्साइड	२
	लोह आक्साइड	१
	मैंगनीज़ डाइआक्साइड	१

वर्णक को द्रावक के साथ द्रवित किया जाता है और फिर जल में उड़ेल कर ठंडा किया जाता है। फिर उसको सूक्ष्म पीसकर लगाया जाता है। कुछ दशाओं में द्रावक पहले तैयार किया जाता है और तब निम्न अनुपात में, वर्णक के साथ मिश्रित किया जाता है।

वर्ण	द्रावक की मात्रा	वर्णक की मात्रा
हरा	१०० भाग	ताम्र आक्साइड ८ भाग
आसमानी	१०० „	कोवाल्ट आक्साइड १.५ भाग

(ग) महान् धातुओं, जैसे स्वर्ण, रजत और प्लेटिनम को लगाने के लिए अवक्षेपित धातु या उसका अन्य यौगिक चूर्ण तथा निम्न द्रवांकवाली बोरेट द्रावक[1] की कुछ मात्रा का मिश्रण कर, वार्निश या गोंद के साथ काँच सतह पर लगाया जाता है। जब काँच की सतह पर, रजत की तह जम जाती है तब विद्युत्लेपन द्वारा यह और स्थूल की जा सकती है। विद्युत्लेपन द्वारा, अन्य धातुएँ, जैसे क्रोमियम आदि भी रजत परत पर लगायी जा सकती हैं।

1. Flues

अठारहवाँ अध्याय

काँच-वस्तुओं में दोष

काँच-वस्तुओं में दोप दो मुख्य कारणों से आते हैं—

(१) काँच में दोप—पत्थर, धागे, फफोले, वीज और रंग की खरावी।

(२) कारीगरी में दोप—टूट, दरारें, विकृतियाँ, खराव पालिश, साँचे के चिह्न और भद्दा आकार।

(१) पत्थर

पत्थर अकाँचीय पदार्थ है और काँच में तव उत्पन्न होता है जव कि—

(क) किसी 'कच्चे' (अनिर्मित) पदार्थ के कण वहुत वड़े होते हैं,

(ख) काँच में वन्ध मिट्टी के घुलने के कारण, ऊष्मसह पदार्थों की निस्तापित मिट्टी के कण स्वतन्त्र हो जाते हैं,

(ग) भट्ठी की छत से या किसी और स्थान से, ऊष्मा के कारण, ऊष्मसह पदार्थों के टुकड़े द्रुत काँच में गिर पड़ते हैं,

(घ) काँच में विकाचरण होता है।

पत्थर रासायनिक विश्लेपण और सूक्ष्मदर्शी परीक्षण द्वारा अभिज्ञात किये जा सकते हैं।

पत्थरों के साधारण स्रोत

पत्थर	स्रोत
क्वार्ट्ज़	अद्रवित वालू
क्रिसटोवेलाइट	छत और सिलका ईंट; विकाचरण
ट्रिडिमाइट	" "
वोलसटोनाइट	विकाचरण
सियुडो-वोलसटोनाइट	विकाचरण
म्यूलाइट	ऊष्मसह पदार्थ
कोरण्डम	पात्र या कुण्ड पत्थर

डिविट्राइट	विकाचरण
नेफलाइट	ऊष्मसह पदार्थ या विकाचरण
कार्नेगियाइट	,, ,, ,,
डिओपसाइड	विकाचरण

पत्थरों के रोकने का उपाय

निम्न नियमों का पालन करने से, पत्थरों का बनना बहुत हद तक रोका जा सकता है—

(१) काँच-मिश्रण के ऊँचे द्रवण ताप के सब पदार्थों को इतने छोटे आकार का बना लेना चाहिए जिसमें वे २०-अक्ष चालनी से गमन कर सकें।

(२) द्रवण ताप, यथासंभव उच्च और पर्याप्त समय के लिए बनाये रखना चाहिए।

(३) काँच-मिश्रण अच्छी तरह मिश्रित करना चाहिए।

(४) काँच द्रवण पात्र को कम सरन्ध्र, घनी बनावट का तथा पूर्ण काँचीय बनाना चाहिए। काँच-मिश्रण भरने के पूर्व पात्र को काचित (ग्लेज्ड) करना चाहिए। पात्र के पेंदे को कभी खुरचना नहीं चाहिए।

(५) उतरानेवाले वलयों का और अल्प पात्रों का उचित रीति से निर्माण होना चाहिए और उनके साथ वही उपचार करना चाहिए जो पात्र के साथ किया जाता है।

पत्थर काँच के रूप को ही नहीं बिगाड़ते हैं, बल्कि काँच की शक्ति को भी कम करते हैं। क्योंकि पत्थरों और काँच के प्रसार-गुणांकों में अन्तर होने के कारण, पत्थरों से काँच में छोटी दरारें आ जाती हैं।

विकाचरण पत्थर साधारणतया छोटे होते हैं और उनके चतुर्दिक् परिवर्तित रचना का स्थान और धागेदार ऐसा काँच हो सकता है जिससे केलास पृथक् हो गये हों। विकाचरण पत्थर रोकने के लिए, काँच की क्रिया द्रवांक से काफी ऊँचे ताप पर करनी चाहिए। इसको सफल करने के लिए अल्यूमिनियम, बोरन या बेरियम, आक्साइडों की अल्प मात्रा का योग करना चाहिए, इससे द्रवांक कम हो जाता है।

धागे

धागे, काँच की असमांगता के कारण होते हैं, जिनके दो प्रकार हैं—

(१) रचना के धागे

यदि काँच-मिश्रण भली प्रकार मिश्रित नहीं हुआ है तो किसी अनिर्मित पदार्थ के स्थानीय सांद्रण से ऐसा काँच बन सकता है जिसका वर्तनांक बाकी काँच के वर्तनांक से भिन्न हो। उनमें धागे, निम्न दशाओं में उत्पन्न हो सकते हैं—

(क) नयी कुण्ड भट्ठियों में जहाँ ऊष्मसह शिलाओं का शीघ्रता से क्षरण होता है,

(ख) काँच-मिश्रण को ठीक से न मिलाने से,

(ग) अपर्याप्त द्रवित ताप होने से काँच अति श्यान हो जाता है और काँच में असमांगता आ जाती है,

(घ) अत्यधिक अल्यूमिना होने से, काँचों में अधिक श्यानता आ जाती है।

(२) संगृहीत धागे

काँच को कार्यकरण ताप पर ठंडा करने पर, कभी-कभी काँच के ताप में असमानता आ जाती है और संग्रह करने पर, संगृहीत काँच में तप्त और ठंडे काँच की मिलावट हो जाती है, जिससे संगृहीत काँच में धागे आ जाते हैं। ये धागे कई सूक्ष्म और समानान्तर रेखाओं के रूप में होते हैं। संग्रह करते समय कुंतल मरोड़ें आ जाती हैं, परन्तु ये निशान सिर्फ सतह पर रहते हैं।

यदि धागेदार काँच किसी ऐसे तरल पदार्थ में डुबोया जाय जिसका वर्तनांक काँच जैसा ही हो तो संगृहीत धागे अदृश्य हो जायेंगे, परन्तु रचना के धागे दृष्टिगोचर बने रहेंगे। सोडा-चूना युक्त काँच के परीक्षण के लिए सबसे उपयुक्त तरल मोनो क्लोरो-बेन्ज़ीन है जिसमें वर्तनांक को घटाने या बढ़ाने के लिए पेट्रोलियम ईथर या कार्बन-डाइ-सलफाइड क्रम से मिलाया जा सकता है।

ये धागे कारीगरी की अकुशलता के कारण उत्पन्न होते हैं। परन्तु कभी-कभी काँच की सतह और भीतर के द्रुत काँच के ताप में अन्तर होने के कारण, अति सावधानी से संग्रह करने पर भी यह आ ही जाते हैं।

फफोले और बीज

असावधानी से काँच संग्रह करने में जो वायु के बुलबुले काँच में आ जाते हैं, उनको 'फफोले' कहा जाता है। गैस के बुलबुलों को 'बीज' कहा जाता है। द्रवण अवधि में कुछ गैस बनती या विस्थापित होती है और शोधन करने पर भी जो गैस रह जाती है,

वही काँच में "वीज" कहकर व्यक्त की जाती है। वीज, सर्वदा द $\frac{१}{६}$ इंच व्यास से कम होते हैं। फफोले और वीज, काँच में किसी भी रूप में हो सकते हैं। शलाकाएँ, नलियाँ और चादरी काँच में, ये केशों के रूप में कर्षण किये जा सकते हैं। वीज, पात्र से अधिक कुण्ड भट्ठी में पाये जाते हैं। कुण्ड में वीजरहित काँच के लिए आवश्यक है कि द्रवण कक्ष में ऊँचा ताप रखा जाय और काँच भी द्रवण कक्ष में पर्याप्त समय तक रहे, जिसमें सम्पूर्ण वीज ऊपर उठकर निकल जाय। यह तभी सम्भव है जब कि प्रयोग में आनेवाला काँच नियमित रूप से काम में लाया जाय। यदि द्रुत या शोधित काँच का ताप पुनः बढ़ाया जाता है तो विलीन गैसों के निकास के कारण वीज पुनः बन जा सकते हैं।

रंग की खरावी

अच्छे रंगहीन काँच या रंगीन काँच तैयार करने के लिए यह आवश्यक है कि 'कच्चे' (अनिर्मित) पदार्थों में लोहा, ऊष्मसह पदार्थों का क्षारण, भट्ठियों का ताप, वायुमण्डल की प्रकृति, टूटे काँच और भट्ठी में काँच की अवधि पर सावधानी से नियंत्रण रखा जाय। तत्पश्चात् काँच के प्राप्त नमूनों के अनुसार वर्णकों और विरंजन पदार्थों को संलग्न किया जाय। सामान्य काँच वस्तु के लिए विरंजन या वर्णक का नियंत्रण आवश्यक नहीं है, परन्तु उत्तम प्रकार की काँच-वस्तु के लिए यथार्थ नियंत्रण अत्यावश्यक है।

(२) कारीगरी में दोष

कारीगरी में दोष तभी आता है जब कि कारीगर या तो असावधानी से कार्य करता है या उसमें कुशलता की न्यूनता होती है। साँचे और औजारों की खरावी से भी दोष आ जाते हैं। अधिकतर यह दोष तप्त काँच के विशिष्ट गुणों (प्रापर्टीज़) के कारण आते हैं।

कार्य पराधि के निम्न भाग में श्यानता में शीघ्र वृद्धि के कारण काँच अन्तिम आकार में वनने के पूर्व ही, कभी-कभी, ठोस हो जाता है। जब काँच का पीडन किया जाता है तो साँचे के लोह भागों के सम्पर्क में आने से, काँच शीघ्र ठंडा हो जाता है और सतह में सिकुड़नें पड़ जाती हैं। कोमलांक के कुछ निम्न ताप पर जो काँच ठंडा किया जाता है और ठंडी वस्तु के सम्पर्क में आता है तो ताप-परिवर्तन-सहनता में उच्च सुग्राहिता (सेंसिटिविटी) के कारण, काँच में दरारें आ जाती हैं।

पीडन यंत्र के मज्जक में अधिक दाब होने से, सूक्ष्म दरारें बनने के कारण, पीडित वस्तुओं में दरारें या विकृतियाँ आ जाती हैं। ये सूक्ष्म दरारें कभी-कभी अदृश्य होती हैं, परन्तु अभितापन के समय, इनमें विकसित होने की प्रवृत्ति होती है। पीडित काँच-वस्तुओं के किनारों की दरारें उच्च ताप पर, अग्नि पालिश के समय, दूर हो जाती हैं।

पारिभाषिक शब्दावली

अंतर्निमेय interchangeable.
अंशांकित graduated.
अंशित calibrated.
अकाचन enamel. दे० 'आकाचन
अक्रिय invert, जड़
अग्निप्रमार्ज fire-polish.
अधिगम्यता accessibility.
अधिशीतल (अल्पशीतित) under-cooled.
अनीक facets.
अनुदैर्घ्य longitudinally.
अनुप्रस्थ–दे० क्षैतिज
अनुप्रस्थ समतल horizontal plane.
अनुमापन titrate.
अनुत्र्यंकाट cross section.
अनुव्यास पट्टिका diametrical plate.
अपघर्षण abrasion.
अपद्रव्य impurities.
अपवर्तनताप inversion temperature.
अपिंडी कोयला non-cankering coal.
अभय काँच safety glass.
अभितापन (निस्तापन) annealing.
–ताप annealing temperature.
अभिनत inclined
अभिनाल hose.
अभिरंजन staining
अभिलेखन recording.
अलंबन holders.
अलोप्ठन deflocculation
अवकारक reducing agent.
अवकृत reduced
अवक्षेपण precipitation.
अवगुंठन muffle.
अवगुंठ भट्ठी. muffle furnace.
अवतल concave.
अवयव constituent.
अवरक्त infra-red.
अवर्णक achromatic.
अवशोपक absorbing.
अवसाद deposit.
अवसादीय sedimentary, कल्कीय
अवस्थितत्व inertia, जड़ता
अविच्छेदित undecomposed
अवियुत undissociated.
अव्यवहित भट्ठियाँ direct furnances.
असकेन्द्र कील eccentric pin.
आंतरायिक intermittent.
आकाचन enamelling.
आक्षुरित milled.
आग्नेय शिलाएँ igneous rocks.
आतंचन (स्कंदन) coagulation
आत्मग automatic, स्वचालित

आपाती प्रकाश incident light.
आर्द्रताग्राही hygroscopic.
आलंबित suspended.
ईषा shaft.
उत्किरण engraving.
उत्क्रमण reversal व्युत्क्रम
उत्सर्जन emitting. emission.
उत्सर्जित emitted.
उत्तापदीप्त incandescent.
उत्तापमापक pyrometer.
उदग्र vertical
उद्भाव invention, उपज्ञा
उपकरण apparatus.
उपजात byproduct.
उपनेत्र eyepiece.
उपलंभन detection, परिचयन
उपल opal.
उपलीयता opalescent effect, opa-lsescence.
उपस्नेह, दे० स्नेहक
उपादान batch.
उष्मसह refractory.
उष्माशोषक endo-thermic.
उष्मीय calorific.
ऊतिकागज tissue paper.
ऊर्ध्वाधर vertical (उदग्र)
ऊष्मसह–दे० 'उष्मसह'
ऊष्मारसायन thermo-chemistry.
ऊष्माशोषक endothermic
एकवर्णिक mono-chromatic.
एकान्तरण से alternately.
एकान्तरिक रूप में alternately.
एमरी emery.

क

कटाव बेयरिंग notch. bearing.
कपाट valve.
कर्षण drawing.
कलिलमय, कलिलीय colloidal.
कलीचूना quicklime, जीवचूर्णक
काँच-धमन lamp working.
काँच-निर्माता manufacturer.
काँचपिण्ड block glass.
काँच-प्रदाय यन्त्र feeder
काँच-मिश्रण batch.
काँचीय vitreous.
काँटा fork.
काचरण vitrification.
काचन glaze.
काचित glazed.
कीलक wedge, पच्चर, स्फान
कुंकुमी rouge.
कुंडभट्ठी tank furnace.
कुट्यलोह malleable cast iron, घातवर्ध्य लोह
कुन्तल spiral.
कुलक (समूह) set.
कूर्पर उद्याम bell-crank levers.
कूर्पर मूठिया crank handle.
कैम cam.

कोण-प्रवणन-यंत्र bewelling machine.
कोण लोह angle iron.
कोन cone. शंकु
कोमलांक softening point, मृदुकरणांक
क्रियाकरण operation, चालन
क्षय गैस waste gas
गठन (बनावट) texture.
गर्तन pitting.
गलनांक fusion point.
गलनीय fusible.
गाम (कैम) cam.
गुणक factor.
घटक component.
घरिया, घड़िया crucible, मूषा
घर्घरी pulley.
घूर्ण moment.
घोल slurry.
चक्रण circulation.
चतुरनीक tatrahedrous.
चापदीप arc lamp.
चालनी sieve.
चित्रण recording, अभिलेखन
चित्रनकाशी intaglio work
छादनी scum.
जड़ता (दे० अवस्थितत्व)
जतुमय (बिटुमिनी) bituminous.
जलप्रमाप water gauge.
जीर्णक peat.
जीवचूर्णक (बेबुझा चूना), कलीचूना quick-lime
झाँवाँ clinkering coal, clinker.
झामन clinker.
झावाँ clinker pumice.
टूटा काँच cullet.
डक catch.
डाँड paddle.
डोरियापन cordiness and stringiness.
तननशक्ति tensile strength.
तनु diluted.
तनुकारक diluent.
तरलांक liquid temperature, liquidus.
तापदीप्त incandescent, उत्तापदीप्त
तापन ignition; दे० प्रज्वलन
तापन-छिद्र gloryhole.
तापप्रवणता temperature gradient.
तापमापन द्वारा calorimetrically.
तापयुग्म thermocouple.
तापीय thermal.
तापीय सहन शक्ति thermal endurance
तुहिन निरेखण matt etching.
त्रिमय पद्धति ternary system.
त्रिवैम three dimensional.
दंतचक्र gear.
दंतिका pinion.

दंतितचक्र sprochet wheel.
दावप्रनापी pressure gauge.
दाह्य cumbustible.
दीप्तिछड़ glow bars.
दीप्तिनापी photometer.
दीर्घवृत्ताकार elliptical.
देशक indicator.
देशन indication.
दो कोणीय दन्तचक्र bevelled gear wheels.
दोलक—दे० विवध
द्रवांक squatting points.
द्रावक flux.
द्रावण melting.
द्रुत काँच molten glass.
द्वारी काँच window glass.
द्वितीयक वायु secondary air.
द्विनास्तिक, द्वैपीठिक dibasic.
धमनकरण blowing operation.
धमनाड blow-pipe.
धमशीर्ष blow-head.
धातुमल slag.
धारा मापी galvanometer.
धुरा shaft, ईषा, वक्रास
ध्रुवान polaroid.
ध्रुवीयण polarization.
ध्रुवीयित polarized.
ध्रुवीयेक्ष polariscope.
ध्वानिकी accoustics.
नाली flue.
निकृंत stencil.
निक्षेप deposit.
निपीड़ तापक autoclave.
नियतांक constant.
निरन्त दाँते caterpillar feet.
निरन्त पट्टी caterpillar conveyor.
निरस्तक take-out.
निरेखण etching.
निरेखित काँच etched glass.
निर्गमन वर्णक्रम emission spectrum.
निर्जलन dehydration.
निर्वात vacuum.
निर्वात पंप an exhaust.
निवापपात्र hopper.
निष्क्रम outlet.
निस्तापन annealing, (अनितापन), burning, calcination.
निस्तापित calcined; annealed.
निस्तापित मिट्टी grog.
निष्क्रम संगम exit ports.
निस्सादन depositing.
निष्क्रम exit; outlet.
पटिया block, काँच-पिंड
पट्टिका काँच plate glass
पट्टिका slab.
पनारीदार corrugated.
परिक्रमण rotation.
परावप shovel, बेलचा
पराबैंगनी ultraviolet. (दे०पारजम्बु)

परिवर्त्य कपाट reversal valves.
पाट pot, पात्र
पाट भट्ठी pot furnace.
पात्र pot.
पारगमिता transparent.
पारगम्यता permeability.
पारजम्बु (दे० परावैंगनी)
पारदर्शी transparent.
पारभासक translucent.
पाश या पाशी loop.
पिंडी कोयला caking coal.
पीडित pressed.
पीडित वस्तुएँ pressed wares.
पुनरापन recuperation.
पुनराप्त्र recuperative.
पुनर्जनित्र regenerative, regenerator.
पूरक supplementary.
पूर्णक finisher.
पृथक्कारक separator.
पृथक्कारी insulator.
पैठिक (भास्मिक) basic.
प्रकाशकीय संहति optical system.
प्रकाशिकी optics.
प्रकाशीय काँच optical glass.
प्रकेवल ताप absolute temperature.
प्रक्लेद्य deliquescent.
प्रज्वलन ignition.
प्रतिकर्मक reagent.
प्रतिदीप्त fluorescent.
प्रतिदीप्तता fluorescence.
प्रतिनिस्तापन dis-annealling.
प्रतिबंधक brake.
प्रतिबल stress.
प्रतिवर्त्य reversible.
प्रत्यास्थता elasticity.
प्रदर्शक चक्र guide wheels.
प्रवणन, दे० कोण-प्रवणन
प्रसीतिचक्र grooved wheels
प्रसीताएँ grooves
प्रोद्‌वावन eleutriation.
प्लव float.
प्लवक floater.
प्लावी विधि method of floatation.
फलक blade.
फोटोग्राफ पट्टिका photographic plate.
बंधन पदार्थ bonding material.
बक crane.
बनावट texture.
बरा चूना quick lime, कली चूना
बाल्टू bolt.
बिल्लौर पत्थर rock quartz, rock crystal.
बुलबुले seeds.
बेलनाकार cyllindrical रंभाकार
ब्रिटिश उष्मा मात्रक (ब्रि. उ. मा.) British thermal unit.

भट्ठा kiln.
भ्रमि thread.
भास्निक (दे० पैठिक)
मज्जक plunger.
महोपाक्ष goggle.
माक्षिक pyrites.
माध्यम medium.
मानकीकृत standard.
मुक्तामाता काँच mother of pearl glass.
मुरदाशंख litharge.
मृदुलक bloom. आवर
मृदुकरणांक, मृदुलांक softening point.
मृदुतापांक softening temperature.
यवक्षार pearl ash.
योगशील additive
रचना composition.
रजतरोपण silvering.
रम्भाकार cylindrical.
रूज rouge, कुंकुमी
रूपण shaping.
रूपामाखी, दे० माक्षिक
रेखकीय रूप geometric structure.
रेखीय linear.
रोध resist.
लंबरेखा perpendicular.
लिखिज graphic; graphite.
लेखाचित्र graph.
लेपी paste.
लोप्ठन coagulation, स्कंदन
वंग tin.
वक्राक्ष shaft, ईषा, धुरा
वयनयंत्र textile machine.
वर्ण अंध colour blind.
वर्णक colouring agent.
वर्णक्रम परास spectrum range.
वर्ण-विपथन chromatic aberration.
वर्तन refraction.
वर्तनांक refracting index, refracting power.
वर्तिशक्ति candle power.
वल्कनीकृत vulcanised.
वसीय fatty.
वहति (बहाव) draught.
वहतिभट्ठी draft kiln.
वायुचालित pneumatically operated.
विकर्ण स्थिति diagonal position.
विकाचरण devitrification.
विकृति strain.
विक्षेप deflection.
विक्षेपण dispersion.
विघटित disintegrated.
विद्युच्चाप electric arc.
विद्युदग्र electrode.
विद्युद्दीप bulb.
विद्युद्विश्लेष्य electrolytic.
विभासी काँच iridescent glass.

वियुत, वियुक्त dissociated.
विरामपट्ट resting plate.
विवज (बहँगी, दोलक) bracket.
विशाखीय दरार forked fracture.
विसंवाहित insulated.
वेरियक variac.
व्यतिकरण interference.
व्यवरोध पट्टिकाएँ baffle plates.
व्याकुंचन धारामापी deflection galvanometer.
शंकु cone.
शंखाभीय conchoidal.
शल्कन scaling.
शक्यमान विधि potentio-metric method.
शीकरण atomising.
शून्यक—दे० (निर्वर्ति)
शोधक fining agent.
श्यानता परास viscosity range.
संक्षारण corrosive.
संगम port.
संघनित condensed.
संचरण circulation.
संचरण transmission.
संचकित moulded.
संचायक accumulator.
संतत वर्णक्रम continuous spectrum.
संदंश tongs.
संधर fusion (संगलन); clamp.
संधरित clamped.
संधान joint.
संधानित welded; fused on.
संपतन coinciding.
संपीडक compressor.
संमितीय symmetrical.
संमुद्रण sealing.
संरचना composition.
संवादी corresponding.
संसंजन, संसक्ति cohesion.
संहित क्रिया नियम law of mass action.
संपुंजित होना sinter.
समंजन adjustment.
समंजनीय adjustable.
समकालिक synchronised.
समवेद्य ऊष्मा sensible heat
समांग homogeneous.
समावरण enclosure.
समाई capacity.
सरंध्र porous.
सांद्रण concentration.
सीसा आक्साइड lead oxide.
सुग्राहिता sensitivity.
सुघट्यक plasticizer.
सुघट्यता plasticity.
सुद्रवणातु eutectics.
सुषव alcohol, एलकोहल
सुषिर hollow.
सुषिर अरीय भुजा hollow radial

arm.
सूत्र grain.
सेतुभित्ति bridge-wall.
सेलखडी काँच alabaster glass.
स्कंद spring, कमानी
स्कंदन coagulation, आतंचन
स्कन्द शीर्ष springhead.
स्नेहक lubricant.
स्फान (कीलक) wedge.
स्फारी भाग flange.
स्रोत source.
हरसोठ (जिप्सम) gypsum.
हस्तक lever, उद्याम

अनुक्रमणिका